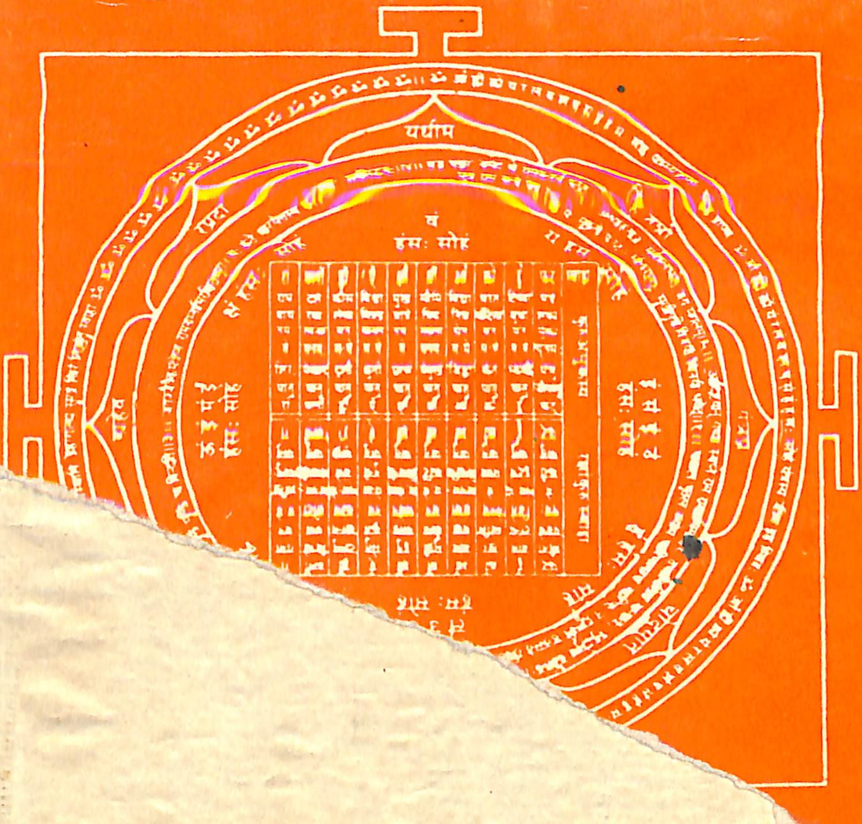
मंत्रशास्त्र
साधना तथा सिद्धियाँ



मंत्रशास्त्र : साधना तथा सिद्धियाँ

★

लेखक :—

आचार्य भास्करानन्द लोहनी

भू० पू० निदेशक—अखिल भारतीय ज्योतिर्विज्ञान तथा सांस्कृतिक-शोध परिषद

★

आग्रहायण प्रकाशन लखनऊ,

MANTRA SHASTRA SADHANA TATHA SIDDHIYAN
BY ACHARYA BHASKARANAND LOHNI

* प्रथम संस्करण : २०५४ वि. (१९९७ ई.)

* मूल्य : सूचीपत्रानुसार।

* मुद्रक : चेतना प्रिंटिंग प्रेस, २२ कैसरबाग, लखनऊ

* प्रकाशक : आग्रहायण प्रकाशन, १५ चाँदगंज गार्डन, लखनऊ-२२६०२४

अधिकृत विक्रेता

१—रंजन पब्लिकेशन्स, १६ अंसारी रोड, दिल्ली

२—के. के. गोयल एण्ड कं., २१४, दरीबा कला, दिल्ली

३—यूनिवर्सल बुकसेलर्स, हजरतगंज, लखनऊ

४—प्रकाश बुक डीपो, श्रीरामरोड, अमीनाबाद, लखनऊ

५—टण्डन जनरल एवं बुक स्टोर, श्रीराम रोड, अमीनाबाद, लखनऊ

६—सरदार सोहन सिंह बुक्सेलर, ३४ वक्षीगली, इन्दौर

७—लायल बुकडीपो, मोतियापार्क, सुलतानियाँ रोड, भोपाल-४६२००१

८—प्रेम ग्रंथ भनार, निकट पीलीभीत चुंगी, टनकपुर (नैनीताल)

९—उत्तराखण्ड बुक डीपो, खान मार्केट, हल्द्वानी (नैनीताल)

१०—ज्ञानगंगा, युगनिर्माण साहित्य भंडार, उजालाभवन, स्टेशन रोड, दुर्ग (म. प्र.)

११—नाथ पुस्तक भंडार, १९४ दरीबाकलाँ, दिल्ली-११०००६

१२—हिन्द पुस्तक भंडार, एफ २/१६ दरियागंज, नई दिल्ली-२

विषय-सूची

विधि-विधान खण्ड

तंत्रशास्त्र परिचय ... ९
तांत्रिक साधना के पंच मकार ... २१
वाममार्गी उपासना और अभिचार कर्म .. २६
गुरु महिमा व दीक्षा ग्रहण विधि ... ३५
तंत्रशास्त्र और योग साधना ... ४१
मंत्र शोधन ... ४८
दीक्षा ग्रहण का मुहूर्त ... ५६
मंत्र की परिभाषा तथा महत्व ... ६०
दीप स्थापन और उसके लक्षण ... ७०
तांत्रिक उपासना में आत्मरक्षा विधान ... ७२
मंत्रों के दस संस्कार ... ७६
जप माला का स्वरूप ... ८४
जप माला के संस्कार ... ८९
कलश स्थापना का महत्व व विधि ... ९२
पूजा सम्बन्धी सामान्य नियम ... ९७
पूजा के उपचार व उनका क्रम ... १०५
मंत्र जप विधि ... ११२
देव स्थापन विधि व पार्षद ... १२१
अभीष्ट देवी देवता का चयन ... १२६
मंत्र सिद्धि एवं पुरश्चरण विधान ... १३०
मंत्र जप अनुष्ठान पाठ की सामान्य विधि ... १३७

मंत्र खण्ड

वेदोक्त तांत्रिक अनुष्ठान ... १४२
आदि शक्ति दुर्गा और शाक्त मंत्र ... १६१

दश महाविद्या और उनके सिद्ध मंत्र	...	१७६
तुरी श्यामा गौरी कामेश्वरी तथा अन्नपूर्णा के सिद्ध मंत्र	...	१९९
बगलामुखी	...	२०३
'दुर्गा सप्तशती' तथा 'अर्गला' के सिद्ध प्रयोग	...	२०७
कात्यायनी तंत्र में वर्णित सिद्ध प्रयोग	...	२१४
शिव और उनके सिद्ध मंत्र	...	२२०
महामंत्र गायत्री	...	२२७
वैष्णव मंत्र	...	२३५
सात कुमार देवताओं के सिद्ध मंत्र	...	२४१
नव ग्रहों के तंत्रोक्त सिद्ध मंत्र	...	२५१
मतान्तर से ग्रहों के तांत्रिक मंत्र	...	२५५
बीज पल्लव सहित वेदोक्त नव ग्रह मंत्र	...	२६३
श्री मृत्युंजय जप प्रयोग	...	२७४
वन्दा के विविध प्रयोग	...	२७८
षट्कर्म प्रयोग	...	२८१
गोरखपंथी सिद्ध मंत्र	...	२९४
स्वप्न साधना	...	३१३
यक्षिणी साधन	...	३१५
तंत्र के बहुमूल्य सुगम प्रयोग	...	३२०
लोकोपकारी विविध यंत्र	...	३२७
कतिपय वाममार्गी क्षुद्र साधनायें	...	३४४
जैन सम्प्रदाय में तंत्र साहित्य	...	8
देव पूजा के विषय में कुछ आवश्यक तथ्य	...	29

सहायक ग्रंथसूची

विष्णुधर्मोत्तर
महाभारत
कर्पूर मंजरी
भारतीय संस्कृति : गौतम से गाँधी तक
महानिपात
शंखजातक
भक्तामर तंत्र
भैरव यामल
महानिर्बाण तंत्र
मंत्र साधना
शक्तितत्व दर्शन
गन्धर्वतंत्र
गायत्रीतंत्र
बामकेश्वर तंत्र
मेरुतंत्र
तंत्र तत्व प्रकाश
पुरश्चर्यार्णव
मनुस्मृति
आग्रहायण (मासिक)
अग्नि महापुराण
ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद
शिवमहापुराण
कुलार्णव तंत्र
दुर्गार्चन स्मृति
गीता
गीता का तात्विक विवेचन
मंत्रशोधन विधि (पाण्डुलिपि)
वृहद्दैवज्ञ रंजन
पिंगलामत
रुद्रयामल तंत्र
ब्रह्मसूत्र-शांकरभाष्य
मत्स्यपुराण
बगलामुखी रहस्यम्
तंत्रसार
वाचस्पत्यवृहदभिधानम्
मंत्र महोदधि
संध्यादर्पण
तैत्तरीय आरण्यक
डामर तंत्र
शारदा तिलक
तोडल तंत्र
शाक्तानन्द तरंगिणी
सनातन वाणी (पाक्षिक)
शैवागम तंत्र
कामरत्न तंत्र
'स्वतंत्र भारत' (हिन्दी दैनिक)
मातृका विलास
मुण्डमाला तंत्र
सिद्धान्त शेखर

त्रिस्कंध ज्योतिषम् ४/११
नारद पुरण
योगिनी तंत्र
पद्म महापुराण
नारद भक्ति सूत्र
गायत्री भाष्य (व्यासकृत)
अह्निक पंचाशिका
विश्वसार तंत्र
वाराही तंत्र
मंत्र जप विधि (पाण्डुलिपि)
मंत्र मुक्ता (,,)
पुरश्चरण विधि (,,)
आह्निक कर्म सूत्रावली
मंत्र योग संहिता
शुक्र नीति
जातक पारिजात
सुगम ज्योतिष
आसुरी तंत्र कल्प
महेश्वर तंत्र
गोरखनाथ जी के सिद्धमंत्र (हस्तलिखित)
गोरक्ष तंत्र संग्रह (,,)
नाथ सम्प्रदाय के अनुभूत मंत्र (,,)
गुरु पुस्तिका (,,)
यक्ष-यक्षिणी साधना (,,)
कर्ण पिशाच-कर्णपिशाचिनी साधना (,,)
स्वप्न साधना (,,)
गुप्त साधन तंत्र
कुण्डली संग्रह
नील तंत्र
वार्षिक व्रतोत्सव पूजा विधान
निरुत्तर तंत्र

दुर्गा रहस्य
श्यामारहस्य
निर्णय सिन्धु
कालिका पुराण
रुद्रकल्प
वैदिक साहित्य और संस्कृति
पुराण मंथन
एतरेय ब्राह्मण
सांख्यायन ब्राह्मण
शतपथ ब्राह्मण
तैत्तरेय ब्राह्मण
ताण्ड्य ब्राह्मण
गोपथ ब्राह्मण (भूमिका ?)
मार्कण्डेय महापुराण
देवी भागवत
भगवद्गीता
दाक्षायणीतंत्र
तंत्र चूड़ामणि
श्रीमतोत्तर तंत्र
शक्ति संगम तंत्र
महाकौल ज्ञान निर्णय
प्रपंचसार तंत्र
आनन्द लहरी
तारा प्रदीप
वरिवस्या रहस्य
पदार्थादर्श
तारा रहस्य
दशकर्म पद्धति
कालरात्री कल्प
कामरत्न
शारदापटल

ब्रह्मवैवर्त पुराण
भैरव संहिता
कुब्जिका सर्वस्व
तारा कर्पूरादिस्तोत्र
कुलसिद्ध सनातन तंत्र
छिन्ना शिरोमणि तंत्र
त्रिपुर शिरोमणि तंत्र
श्यामा तंत्र
कुल चूड़ामणि तंत्र
शारदा टीका
तुरी तंत्र
आगम लहरी
कामेश्वरी तंत्र
वाराही तंत्र
कात्यायनी तंत्र
रुद्राभिषेक भास्कर

गायत्री तंत्र
भागवत महापुराण
नारद पंचरात्र
भैरवी तंत्र
आगम शिरोमणि
लोमश संहिता
विश्वनाथ सारोद्धार तंत्र
कालीपटल
शारदा टीका
स्वतंत्र तंत्र
त्रिपुरा तिलक
आगम शिरोमणि
नवग्रह जप विधान (पाण्डुलिपि)
तंत्र मुक्तावली
विश्व पचांग
मृत्युंजय पुरश्चरण (पाण्डुलिपि)

शुद्धिपत्र

इस ग्रंथ में अशुद्धियों पर विशेष ध्यान दिया गया है, तथापि यह ऐसी काजल की कोठरी है कि कुछ अशुद्धियाँ छपाई में रह जाती हैं।

लेकिन हमारा यही प्रयास है कि अन्यत्र भले ही अशुद्धियाँ रह जाय, लेकिन 'मंत्रों' में कहीं कोई अशुद्धि न रहे। मंत्र अशुद्ध होने से अर्थ का अनर्थ हो सकता है।

पाठक गण ग्रथ क्रय करने के बाद निम्नांकित विशेष अशुद्धियों को शुद्ध कर लें। तदुपरान्त ही ग्रंथ को प्रयोग में लायें।

पृष्ठ—	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३७	१७	एतद्वश	एतदृश
१४४	१	अथर्बवेदीब	अथर्व वेदीय
		अनूष्ठाय	अनुष्ठान
१८६	१४	नैऋन्यां	नैऋत्यां
२०१	२२	कन्याथी	कन्यार्थी
२०५	५	सब दुष्टानां	सर्वं दुष्टानां
२०५	१६	अंगुऽठाभ्यां	अंगुष्ठाभ्यां
३१६	१	दुगस्मृता	दुर्गस्मृता
17	यंत्र ३/३	'श्री' जैसा केन्द्र में है वैसा ही घुमाव के अन्त में नहीं है।	'श्रीश्री' [घुमाव के अन्त में भी 'श्री' लगेगा]
३४३	१	चक्षुपते जो	चक्षुषतेजो
३४३	६	हिरमण्यं	हिरण्मयं

समर्पण

यथा नाम तथा गुण, देवतुल्य,

मनुष्य रूप में पृथ्वी पर अवतरित, साक्षात्

पु

रु

पु रु षो त्त म

त्त

म

को सादर समर्पित है यह पुष्प।

—भास्करानन्द लोहनी

कामनानुसार मंत्रों का वर्गीकरण

अल्पमृत्यु से रक्षा

अथर्ववेदीय अनुष्ठान (१)	—	पृष्ठ १४४
,, ,, (१३)	—	,, १४४
ऋग्वेदीय अनुष्ठान (२)	—	,, १४४
,, ,, (६)	—	,, १४५
रक्षाकारी वेदोक्त महाकवच	—	,, १५८
प्रयोग सं० ३	—	,, २१४
गायत्री प्रयोग ४	—	,, २२६
,, ७	—	,, २३०
हीरे का लिंगार्चन	—	२२४ (अ)
दूर्वा-गुरुच लिंगार्चन	—	२२४ (आ)
अरिष्ट निवारण प्रयोग	—	३२१
सर्वारिष्ट शान्ति	—	३२४
अपराजिता मंत्र (३ प्रयोग)	—	३२४
अपमृत्यु निवारक यंत्र (२१)	—	3
,, ,, (३४)	—	4

मनोकामना पूर्ण

अथर्ववेदीय अनुष्ठान (२)	—	पृष्ठ १४४
ऋग्वेदीय अनुष्ठान (८)	—	१४५
,, ,, (१०)	—	१४५
प्रयोग सख्या १	—	२ ७
,, १२	—	२०७
,, १३	—	२१५
,, ३०	—	२१७
,, ३१	—	२१८

गायत्री प्रयोग ८	—	२३०
स्फटिक लिंगार्चन	—	२२४ (अ)
मृन्मय लिंगार्चन	—	२२४ (आ)
सर्वसिद्धि यंत्र (१/१)	—	16
भयंकर संकट निवारक		
प्रयोग संख्या ११	—	२०७
,, ७	—	२१२
,, १२	—	२१२
,, ७	—	२१५
,, ८	—	२१५
,, १४	—	२१५
,, १८	—	२१६
,, २३	—	२१७
,, २४	—	२१७
,, २५	—	२१७
यंत्र २२/४१	—	26
दुःस्वप्ननाशक		
अथर्ववेदीय अनुष्ठान (३)	—	पृष्ठ १४४
ऋग्वेदीय अनुष्ठान (१३)	—	१४५
वज्रपात से रक्षा	—	३२६
पापों से मुक्ति/प्रायश्चित्त		
गायत्री प्रयोग १०	—	२३०
व्यवसाय में उन्नति		
अथर्ववेदीय अनुष्ठान (४)	—	पृष्ठ १४४
,, ,, (१)	—	१५१
गोरखपंथी प्रयोग	—	२६६
काम सुख		
तिलपिष्ट लिंगार्चन	—	२२४ (अ)

सौभाग्य वृद्धि

अथर्ववेदीय अनुष्ठान (५) — पृष्ठ १४४
प्रयोग १० — २१२
प्रयोग २९ — २१७
लवण लिंगार्चन — २२४ (आ)

विभिन्न प्रश्नों का उत्तर ज्ञान — ३०८
गृह गोधिका साधन — १४४

विद्या-बुद्धिवर्धक/परीक्षा में सफलता

अथर्ववेदीय अनुष्ठान (६) — पृष्ठ १४४
,, ,, (१०) — ,,
ऋग्वेदीय अनुष्ठान (१) — ,,
सरस्वती/वाग्देवी मंत्र — १८६
कुलवागीश्वरी मंत्र — ,,
नील सरस्वती मंत्र — १८७
सरस्वती कवच — १८८
सरस्वती मंत्र — १८९
सरस्वती त्र्यक्षर मंत्र — ,,
सरस्वती गायत्री (२) — १९०
प्रयोग संख्या १३ — २१२
,, २१ — २१६
,, २२ — ,,
गायत्री प्रयोग ६ — २२९
तण्डुल पिष्ट लिंगार्चन — २२४ (आ)
दुग्धाभिषेक — २२६
यंत्र संख्या ५।६ — 18

पदलाभ-स्थान लाभ

अथर्ववेदीय अनुष्ठान (७) — १४४
ऋग्वेदीय अनुष्ठान (१५) — १४५
गायत्री प्रयोग ५ — २२९

चोर का पता लगाना	—	३०६
सतीत्व की रक्षा	—	३२३
कृषि सम्पदा-अन्न वृद्धि		
अथर्ववेदीय अनुष्ठान (८)	—	१४४
भस्मीय लिंगार्चन	—	२२४ (आ)
चोर भय निवारण		
प्रयोग संख्या २	—	२११
कीलन/रक्षा मंत्र	—	३०३
चोर भय से रक्षा	—	३२१
यंत्र ६/१३	—	20
शत्रु नाशक/विजयप्रद		
अथर्ववेदीय अनष्ठान (६)	—	पृष्ठ १४४
ऋग्वेदीय अनुष्ठान (३)	—	१४५
,, ,, (२०)	—	१४६
सामवेदीय अनुष्ठान (४)	—	१४६
अथर्ववेदीय अनुष्ठान (१,२, ३, ४, ५, ६)	—	१४७
काली मंत्र (४ मंत्र)	—	१८१।१८३
वगलामुखी प्रयोग	—	२०३
प्रयोग सख्या ५	—	२०७
काली कवच प्रयोग	—	२०६
प्रयोग संख्या ३	—	२११
,, ५	—	२१२
,, ११	—	,,
,, १८	—	२१६
माणिक्य लिंगार्चन	—	२२४ (अ)
अस्थि लिंगार्चन	—	२२४ (आ)
शिव तैलाभिषेक	—	२२६
वन्दा प्रयोग (१)	—	२७८
जयदायक प्रयोग	—	३२०

दांत का प्रयोग (ई)	—	३२३
शत्रु वन्धनकारी यंत्र	—	1
रामभद्र यंत्र (३७)	—	5
यंत्र २।२	—	16
यंत्र ३।३	—	17
यंत्र १६।२७	—	23
यशवर्धक		
अथर्ववेदीय अनुष्ठान (१०)	—	१४४
प्रयोग संख्या १३	—	२१२
नीलमणि लिंगार्चन	—	२२४ (अ)
चन्दनपिष्ट लिंगार्चन	—	२२४ (आ)
सर्प भय निवारण		
सर्पभय निवारण	—	३०६
साँप के काटे का मंत्र	—	३११
यंत्र २२।४१	—	26
सन्तान प्राप्ति, वंश वृद्धि		
अथर्ववेदीय अनुष्ठान (११)	—	१४४
,, ,, (१२)	—	,,
सामवेदीय अनुष्ठान (२)	—	१४६
बंध्यादोष निवारणपूर्वक पुत्रेष्टि प्रयोग (१,२)	—	१५४
शारिका मंत्र	—	१६५
प्रयोग संख्या ६	—	२१५
बंशांकुर लिंगार्चन	—	२२४ (आ)
दधि शिवाभिषेक	—	२२५
दुग्धाभिषेक	—	,,
घृताभिषेक	—	२२६
वन्दा प्रयोग ७	—	२८०
,, १०	—	,,
बालक नाल प्रयोग (अ)	—	३२३
दांत का प्रयोग	—	३२३

सन्तान प्राप्ति (४ प्रयोग)	—	३२५।३२६
यंत्र संख्या (१८, १६, २५)	—	2 और 3
यंत्र १३।२०	—	९१
सकुशल यात्रा		
ऋग्वेदीय अनुष्ठान (४)	—	१४५
,, ,, (६)	—	,,
कुमति निवारण		
यंत्र २।२	—	16
राज सम्मान की प्राप्ति		
प्रयोग ४	—	२१२
दीर्घायुकारक		
ऋग्वेदीय अनुष्ठान (५)	—	१४५
,, ,, (१६)	—	१४६
अथर्ववेदीय अनुष्ठान (१, २, ३, ४)	—	१४७
पद्मराज लिंगार्चन	—	२२४ (अ)
धात्रीपिष्ट लिंगार्चन	—	२२४ (आ)
मोहन प्रयोग		
प्रयोग संख्या १६	—	११६
षट्कर्म प्रयोग (१० प्रयोग)	—	२८३
मोहनकारी सिन्दूर	—	२६६
शत्रु मोहन मंत्र	—	३०२
स्त्री मोहन प्रयोग	—	,,
बाल रक्षा मंत्र	—	२६४
बाल रक्षा के दो प्रयोग	—	३११
बच्चे का रोना बन्द हो (यंत्र ३०)	—	4
विष बाधा निवारक		
ऋग्वेदीय अनुष्ठान (११)	—	१४५

गायत्री प्रयोग ३	—	२२९
यंत्र संख्या ६।७	—	18
कुत्ते के विष की शान्ति (७।१०)	—	19
आँधी व अग्नि भय से रक्षा		
गायत्री प्रयोग १	—	२२९
शत्रु बन्धन		
यंत्र २।२	—	16
धन प्राप्ति		
ऋग्वेदीय अनुष्ठान (१२)	—	१४५
,, ,, (१८)	—	१४६
सामवेदीय अनुष्ठान (३)	—	१४६
कमला/महालक्ष्मी के १० मंत्र	—	१७८/१८०
ज्वालामुखी मंत्र	—	१६६
पुष्पराग लिंगार्चन	—	२२४ (अ)
शर्कराभिषेक	—	२२५
घृत + मधु अभिषेक	—	,,
मधु अभिषेक	—	२२६
यंत्र १०/१४	—	20
वर्षाकारक		
ऋग्वेदीय अनुष्ठान (१४)	—	१४५
प्रयोग सं० २०	—	२१३
प्रयोग सं० २६	—	२१७
प्रयोग २७	—	,,
शिव जलाभिषेक	—	२२५
वर्षाकारी प्रयोग	—	३३२
कार्यसिद्धि कारक		
प्रयोग सं १७	—	२१३
,, २	—	२१४

प्रयोग ४	—	२१४
,, ५	—	,,
गायत्री प्रयोग ६	—	३३०
कार्यसिद्धि प्रयोग	—	३३२
पशु समृद्धि		
ऋग्वेदीय अनुष्ठान (१६)	—	१४५
युद्ध में जय		
ऋग्वेदीय अनुष्ठान (१७)	—	,,
बगलामुखी प्रयोग	—	२०३
युद्ध विवादादि में विजय (३ प्रयोग)	—	३२४
यंत्र २५/४७	—	28
दिव्यास्त्रों का प्रयोग		
ब्रह्मास्त्र	—	२३१
ब्रह्मदण्ड	—	२३२
ब्रह्मशिर	—	,,
पाशुपतास्त्र	—	२३३
वायवास्त्र	—	,,
आग्नेयास्त्र	—	,,
नारसिंहास्त्र	—	,,
भय निवारक		
ऋग्वेदीय अनुष्ठान (२१)	—	१४६
मातंगी मंत्र	—	१६२
भेडा मंत्र	—	१६६
प्रयोग संख्या ३	—	२०७
यंत्र २३/४५	—	27
पुरुष वशीकरण		
गोरखपंथी प्रयोग	—	२६६
स्त्री वशीकरण		
गोरखपंथी मंत्र	—	३०२
श्री हनुमान मंत्र	—	३०५

स्त्री-पुरुष वशीकरण	—	३०३
स्त्री वशीकरण मंत्र	—	३०९
स्त्री वशीकरण तैल	—	,,
स्त्री वशीकरण सिन्दूर	—	३१०
पत्नी प्राप्ति / विवाह		
सामवेदीय अनुष्ठान (१)	—	१४६
अथर्ववेदीय ,, (२)	—	१४९
,, ,, (३)	—	१५०
,, ,, (४)	—	,,
कामेश्वरी मंत्र	—	२०२
प्रयोग संख्या १६	—	२१२
कारागार से मुक्ति		
प्रयोग संख्या १०	—	२०७
गायत्री प्रयोग २	—	२२९
यंत्र ११।१६	—	21
यंत्र २४/४६	—	27
विवाह/पति प्राप्ति		
अथर्ववेदीय अनुष्ठान (१, २)	—	१४८, १४९
गौरी मंत्र	—	२०१
पति सुख प्राप्ति (प्रयोग १८)	—	२१३
प्रयोग संख्या ६	—	२१४
बेटी ससुराल में सुखी रहे	—	३००
पत्थर बर्षा हो	—	३००
सौत बाधा निवारण		
वेदोक्त अनुष्ठान	—	१५४
प्रेम वृद्धि		
गुड़ लिंगार्चन	—	२२४ (आ)
पति पत्नि में प्रेम (यंत्र २७)	—	4
,, ,, (३६)	—	4

नपुंसकता का निवारण
वेदोक्त अनुष्ठान (३) — १५४
यंत्र संख्या (यंत्र २६) — 4
सभा स्तम्भन (वन्दा प्रयोग २) — २७६

गर्भ रक्षा
वेदोक्त अनुष्ठान — १५५

आत्म रक्षा
कीलन रक्षा मंत्र — ३०१
रक्षा मंत्र — ''
रक्षाकारी औषधियाँ — ३२४
रामभद्र यंत्र (३७) — 5
रक्षा यंत्र (३८) — ''
यंत्र १६।३४ — 25

उच्चाटन शान्ति
शिव दुग्धाभिषेक — २२६

गर्भ में पुत्र ही हो
वेदोक्त प्रयोग — १५५

सुख प्रसव
वेदोक्त प्रयोग (१-५) — १५६, १५७

वाणी सिद्धि
बचन सिद्धि यंत्र (२८) — 4
भविष्यबाणी सिद्धि (प्रयोग-३) — २७६

गुप्त दृष्टि सिद्धि
प्रयोग ११ — २८०
प्रयोग ४ — २७६

अभिचार शान्ति
वेदोक्त प्रयोग (१-७) — १५७।१५८
श्री नृसिंह मंत्र — ३०४
जादू आदि उलटा फिराना — २६६
तंत्र मंत्र का निराकरण — ३१०

भूत-प्रेत बाधा शान्ति

वेदोक्त प्रयोग	—	पृष्ठ १५८
नजर/कुदृष्टि/भूतप्रेत बाधाहर (प्र० १२)	—	२१५
गायत्री मंत्र ३	—	२२६
रखवाली मंत्र	—	३०१
रक्षा मंत्र	—	३०३
श्री नृसिंह मंत्र	—	३०४
भूत आदि उतारने का मंत्र	—	३०६
यंत्र सख्या १५।२२	—	23

अतिवृष्टि, ओलावृष्टि रोकना

प्रयोग २८	—	२१७

जीववत्सा

जीववत्सा यंत्र	—	3

पति वशीकरण

वेदोक्त प्रयोग	—	१५८
षटकर्म प्रयोग	—	२६१
पति वशीकरण प्रयोग	—	२६५
दांत का प्रयोग	—	३३३

पशु, पक्षियों, कीड़ों से रक्षा

(१० प्रयोग)	—	३२१।३२२

घर के प्रति आकर्षण

बालक नाभि प्रयोग	—	३२३

पत्नी वशीकरण

वेदोक्त प्रयोग (१-२)	—	१५८
प्रयोग संख्या ६	—	२ ७
षट्कर्म प्रयोग (२ प्रयोग)	—	२६१
दांत का प्रयोग	—	३३३

सिद्ध काजल

सिद्ध काजल श्री हनुमान जी	—	२६७
सिद्ध काजल वैसा की खोपड़ी	—	२६८
स्त्री वशीकरण काजल	—	३४४

अग्नि स्तम्भन	—	२८४
शत्रु मुख स्तम्भन	—	२८४।२८६
आसन स्तम्भन	—	२८५
बुद्धि स्तम्भन	—	,,
गर्भ स्तम्भन	—	,,
निद्रा स्तम्भन	—	,,
चौर गति स्तम्भन	—	२८६
क्लेश निवारण		
तारा मंत्र	—	१६०
वशीकरण		
राई के प्रयोग	—	२८६
वशीकरण प्रयोग (६ प्रयोग)	—	२८८
षटकर्म प्रयोग (८ प्रयोग)	—	२६०।२६१
वशीकरण सिन्दूर	—	२६५
वशीकरण मंत्र	—	३०४
शत्रु वशीकरण यंत्र (३२)	—	4
सर्वजन वशीकरण (यंत्र ३/३)	—	17
सर्वजन वशीकरण यंत्र (१४।२१)	—	22
यंत्र २६।४८	—	28
राज्य लाभ/राज्य से लाभ		
भुवनेश्वरी मंत्र	—	१६१
विद्वेषण		
षट्कर्म प्रयोग (४ प्रयोग)	—	२८८।२८६
स्त्री पुरुष में विद्वेषण	—	३०५
सुख-शान्ति		
शारिका मंत्र	—	१६५
प्रयोग ६	—	२१२
प्रयोग १०	—	,,
प्रयोग १२	—	,,

गर्भ स्थापन न हो

दांत का प्रयोग (इ)	—	३२३

ऋण मुक्ति

वेदोक्त प्रयोग	—	१५८
प्रयोग १५	—	२१६
प्रयोग १६	—	,,

स्वप्न सिद्धि

स्वप्न पिशाचिनी (यंत्र ३५)	—	4
बगलामुखी स्वप्न साधना	—	३४४

मारण प्रयोग

प्रयोग संख्या १७	—	२१६
तुष लिंगार्चन	—	२२४ (आ)
षटकर्म प्रयोग (४ प्रयोग)	—	२८२
शत्रु पीड़ाकारी प्रयोग	—	३०७
शत्रु मारण का महा प्रयोग	—	,,

बिछुड़े / वैरी पति-पत्नी का मिलाप

वेदोक्त अनुष्ठान	—	१५८
प्रयोग २८	—	२१७

माँ (भगवती) से साक्षात्कार

प्रयोग ३१	—	२१८

मुक्त (मोक्ष) हेतु

त्रिपुरा सुन्दरी मंत्र	—	१८४
छिन्नमस्ता मंत्र	—	१६४
प्रयोग संख्या १३	—	२०७
प्रयोग संख्या १५	—	२१२
तीर्थ जलाभिषेक	—	२२५
परब्रह्म यंत्र	—	3

स्तम्भन प्रयोग

हरिद्रा लिंगार्चन	—	२२४ (आ)
षट्कर्म प्रयोग	—	२८५
शत्रु स्तम्भन (यंत्र ३३)	—	4

गजमुक्ता लिंगार्चन — २२४ (आ)
शर्करा लिंगार्चन — ,, (आ)

विवाद (मुकद्दमा) व चुनाव में विजय

प्रयोग संख्या १४ — २१२

राज वशीकरण

राज्ञी मंत्र — १६५
प्रयोग संख्या ४ — २०७
प्रयोग संख्या १, २ — २६२
यंत्र १७।३१ — 24

आकर्षण प्रयोग

प्रयोग संख्या १, २, ३ — २६३
यंत्र संख्या ३१ — 4
आकर्षण यंत्र ४४ — 6
यंत्र संख्या (८।११) — 19

धन-धान्य में वृद्धि

अन्नपूर्णामंत्र — २००
वरदान्नपूर्णामंत्र — २०१
प्रयोग सं० ७ — २०७
आर्थिक सुधार (प्रयोग ७) — २१५
गायत्री प्रयोग ७ — २३०
वन्दा प्रयोग—५ — २७६
वन्दा प्रयोग—८ — २८०
बिल्ली के नाल का प्रयोग — ३२३

उपद्रवों से शान्ति

प्रयोग सं० २ — पृ० २०७
प्रयोग सं० १ — २११
दैवी आपदाओं की शान्ति — ३१०
आंधी से रक्षा यंत्र १०/१४ — 20
दुर्भिक्ष, महामारी शान्ति यं० २१/३५ — 26

स्त्रीपुत्रादि सुख

प्रयोग सं० ७ — पृ० २०७
प्रयोग सं० १२ — २१२

राजभय निवारण

प्रयोग सं० ८ — पृ० २०७
प्रयोग २ — २११
यंत्र (२१/३५) — 26

शत्रु उच्चाटन

प्रयोग सं० ८ — २०७
षटकर्म प्रयोग (६ प्रयोग) — २८९/२९०
गोरखपंथी मंत्र — ३०८

रोग निवारण

व्रण रोग की शान्ति (प्रयोग ९) — पृ० २०७
संक्रामक/महामारी शान्ति (प्र० १) — २११
प्रयोग सं० ६ — २१२
प्रयोग सं० ८ — २१२
मानसिक रोग शान्ति (प्र० १८) — २१३
जलोदर रोग शान्ति (प्रयोग १९) — २१३
प्रयोग सं० ३ — २१४
प्रयोग सं० १० — २१५
प्रयोग सं० २० — २१६
गायत्री प्रयोग–३ — २२९
मोती के लिंगार्चन — २२४ (अ)
गोमय लिंगार्चन — २२४ (आ)
यंत्र २३/४५ — 27
दांत पीड़ा का मंत्र — ३१२
दांत पीड़ा का मंत्र (१) — २९७
,, ,, ,, (२) — ३०६
कमलवायु (पीलीया) का मंत्र — ३०५

हूक का मंत्र	—	३०६
मृगी रोगशामक यंत्र	—	2
ज्वर शामक यंत्र	—	2
नेत्र रोग शान्ति (यंत्र ४/५)	—	17
उदरपीड़ा यंत्र १२/१७	—	21
संग्रहणी यंत्र १८/३२	·	24
ज्वरशान्ति यं० २०/३३	—	25
नेत्र दोष हर नेत्रोपनिषद	—	३४२

निलम्बन समाप्ति + आरोपों से मुक्ति

प्रयोग ११	—	२१५
नारिकेल जलाभिषेक	—	२२६
आम्ररसाभिषेक	—	२२६
आरोग्य प्राप्ति (४ प्रयोग)	—	३२०/३२१
अदृश्य सिद्धि (प्रयोग ६)	—	२७६
बिल्ली की नाल का प्रयोग (आ)	—	३२३

स्वर्ण निर्माण

स्वर्ण सिद्धि (प्रयोग ६)	—	२८०
गोरखपंथी प्रयोग	—	३००

विषयानुक्रमणिका

तंत्रशास्त्र का परिचय	९
[illegible]	
[illegible]	१३
वैष्णवागम	१५
शैवागम	१६
शाक्तागम	१६
मिश्रागम	१७
आधुनिक तंत्र	१७
तंत्रशास्त्र के तीन भाग	
(मंत्र-यंत्र-तंत्र)	१८
दश महाविद्या	२०
तांत्रिक साधना के पंचमकार	२१
पंच मकारों का आध्यात्मिक रूप	२१
वाममार्गी साधना और	
अभिचार कर्म	२६
ब्राह्मणों के लिये वाममार्गी	
साधना वर्जित	२८
कठोर साधना	२९
शत्रुकृत अभिचार से कैसे बचें	३३
गुरु महिमा और दीक्षाग्रहण	३५
गुरु शिष्य सम्बन्ध	३७
गुरु ही देवता है	३७
शिव पुराण के अनुसार	
दीक्षा ग्रहण विधि	४०
तंत्रशास्त्र और योग साधना	४१
योग से सिद्धियाँ	४१
तंत्र और योग	४२
अष्टांग योग क्या है	४३
कुण्डलिनी जागरण और समाधि	४५
षट्चक्र	४७
मंत्रशोधन	४८
मंत्रमेलन	४८
सिद्ध साध्यादि शोधन	५१
जन्मराशि या नामराशि	५२
मंत्र शोधन की आवश्यकता नहीं	५३
षटपद् चक्र	५३
ऋण शोधन चक्र	५४
दीक्षा ग्रहण का मुहूर्त	५६
दीक्षा ग्रहण को विशिष्ट दिन	५८
ग्रहण के बारे में विशेष	५८
कुछ अन्य दिव्य पर्व	५९
स्थान	५९
मंत्र की परिभाषा तथा महत्व	६१
मंत्रों का वर्गीकरण	६३
मंत्र सिद्धि हेतु जप	६६
बीज पल्लवों का प्रयोग	६६
वैदिक मंत्रों में न्यास	
आवश्यक नहीं	६८
मंत्र के षट् रहस्य	६९
दीपस्थापन और उसके लक्षण	७०
दीप का प्रमाण और तैल विचार	७०
बत्ती	७०

मुख ७१
दीप द्वारा प्राप्त शुभाशुभ लक्षण ७१
अशुभ लक्षणों की शान्ति ७१
तांत्रिक साधना में आत्मरक्षा
विधान ७२
क्षेत्र कीलन ७२
भूतोत्सादन ७४
तांत्रिक रक्षा ७४
स्थान शोधन ७४
आसन स्थापन ७५
मंत्रों के दश संस्कार ७६
मंत्र साधन के पूर्व की क्रियायें ७८
मंत्र चैतन्य विधि ७८
भूतशुद्धि ७९
सेतु ७९
महासेतु ७९
मुखशोधन-जिह्वा शोधन ७९
कुल्लुका ८०
शापोद्धार संजीवन उत्कीलन ८०
प्राणयोग ८०
दीपन ८०
निर्वाण ८०
योनिमुद्रा प्रदर्शन एवं आसन ८०
सूतक मोचन ८१
न्यास ८१
प्राणायाम ८१
जनन चक्र ८३
जपमाला का स्वरूप ८४
तीन प्रकार की माला ८५
वर्णमाला ८६
मनकों की संख्या ८७
जपमाला के संस्कार ८९
कलश स्थापना का महत्व
और विधि ९२
विशेष द्रव्य ९४
कृषि उत्पादन के बारे में पूर्व संकेत ९६
पूजा सम्बन्धी सामान्य नियम ९७
पुष्प विवरण ९७
वर्जित पुष्प ९८
तुलसी और विष्णु ९९
देव प्रतिमा परिमाण १०१
आरती १०१
प्रदक्षिणा १०१
पूजन सामग्री की स्थिति १०३
ओंकार का प्रयोग १०३
पूजा के उपचार और उनका क्रम १०५
२८ उपचार १०५
१८ उपचार १०५
१६ उपचार १०५
१० उपचार १०५
५ उपचार १०६
पूजा के पाँच अँग १०६
नवधा भक्ति १०७
मंत्र जप विधि ११२
जप के पाँच प्रकार ११२
माला के घटकों का महत्व ११३
जप करने का स्थान ११३
दिशा ११३
सावधानी ११३
सदाचार का पालन आवश्यक ११४
जप [illegible] ११४
जप सम्बन्धी कुछ और नियम ११५

साधना को दीपावली का महत्व	११६
कुंजी आवश्यक	११६
शुद्ध उच्चारण	११७
सूतक में जप के नियम	११८
दिशा का विचार	१२०
जप संख्या का नियम	१२०
माला संचालन	१२०
देवस्थापन विधि व पार्षद	१२१
गणेशपंचायतन	१२३
शिव पंचायतन	१२३
विष्णु पंचायतन	१२३
देवी पंचायतन	१२३
सूर्य पचायतन	१२३
देवों के पार्षद	१२४
अभीष्ट देवी देवता का चयन	१२६
पंचमभाव से उपासना की प्रकृति	१२६
उपास्य देवता का लिंग	१२७
कुछ विशिष्ट योग	१२८
मंत्रसिद्धि एवं पुरश्चरण विधान	१३०
ग्रहण में मंत्र सिद्धि	१३२
पुरश्चरण की प्रक्रिया	१३३
मंत्र जप पाठ अनुष्ठान विधि	१३७
षडंग न्यास विधि	१३९
वेदोक्त तांत्रिक अनुष्ठान	१४२
विविध मंत्र संग्रह	१४२/३१२
शिवसाधना	३१३
स्वप्नवाराही साधना	३१३
सरस्वती साधना	३१४
यक्षिणी साधन	३१५
धनदा यक्षिणी मंत्र	३१७
,, ,, कवच	३१८
कर्णपिशाचिनी साधन	३१९
कर्णपिशाच साधन	३१९
बगला स्वप्न साधना	३४४
गृहगोधिका साधन	३४४
विविध यंत्र	३२७/28
संकल्पविधि	29
प्रतिष्ठा-प्राणप्रतिष्ठाविधि	32
अग्न्युत्तारण	32
पंचदश संस्कार	33
बलिदान	34
नारिकेल/कूष्माण्ड बलि	34
षोडशोपचार पूजा	35
सर्वदेव पूजामंत्र	35
सर्व देवी पूजा मंत्र	36
पंचगव्य विधि	38
पंचामृत विधि	39
करमाला के रूप	40
षडंगन्यास विधि	41
विभिन्न मुद्राओं के लक्षण	41
व चित्र-	42, 43
बीज मंत्र रहस्य	44
अक्षरबीज	45
संयुक्ताक्षर बीज	49

★

देवी-देवतानुसार मंत्रो का वर्गीकरण

देवी (दुर्गा) मंत्र
दुर्गा गायत्री पृ० १६८
नवार्ण मंत्र के ५ रूप १६६
अष्टाक्षरी मंत्र १६६
शिवमंत्र
षडक्षर (पंचाक्षर मंत्र) २२२
दशाक्षर मंत्र २२३
दशाक्षर मंत्र--२ २२३
कमला/लक्ष्मीमंत्र
लक्ष्मी/कमला के १० सिद्धमंत्र १८०
वैष्णवमंत्र
द्वादशाक्षरमंत्र २३६
दशाक्षरमंत्र २३६
विष्णुमंत्र २३७
राममंत्र (३ मंत्र) २३८/२३९
काली मंत्र
दक्षिणकाली मंत्र १८१
कालरात्री मंत्र १८१
महाकाली का बीज मंत्र १८२
काली कवच १८३
महामंत्र गायत्री २२७
त्रिपुरासुन्दरी मंत्र १८४
ब्रह्मा जी का मंत्र २३७
वराह मंत्र २३७
नार्रसिंह मंत्र २३७
सीतामंत्र (२) २३९
राधा मंत्र (२) २३९
सन्तान गोपालमंत्र २४०
सरस्वती मंत्र
सरस्वतीमंत्र (शारदापटल) १८६
सरस्वीमंत्र (कुलवागीश्वरी) १८६
,, (नीलसरस्वती) १८७
,, (द्वयक्षर मंत्र) १८८
सरस्वती कवच १८८
सरस्वती 'मंत्रराज' १८९
,, (एक अन्य द्वयक्षर मंत्र १८९
,, (देवी भागवत) १९०
,, गायत्री १९०
तारामंत्र
तारामंत्र १९०
तारा लघुमंत्र १९०
भुवनेश्वरी मंत्र
भुवनेश्वरी १९१
भुवनेश्वरी लघुमंत्र १९१
उच्छिष्ट चांडालिनी मातंगी मंत्र
'कुल [illegible] मंत्र' के अनुसार १९२
एक अन्यमंत्र १९३
छिन्नमस्ता मंत्र १९३
शारिका मंत्र १९५
राज्ञीमंत्र १९५
भेड़ा मंत्र १९६
ज्वालामुखी मंत्र १९६

भैरवी (त्रिपुर भैरवी) मंत्र १६६
धूमावती मंत्र १६७
तुरीमंत्र
'तुरीतंत्र' के अनुसार १६६
'आगम लहरी' के अनुसार १६६
श्यामामंत्र १६६
अन्नपूर्णामंत्र
अन्नपूर्णामंत्र २००
प्रसन्न पारिजाता नरदान्नपूर्णामंत्र २०१
गणेशमंत्र (१३ मंत्र) २४२–२४४
कार्तिकेय मंत्र २४५
कार्तवीर्यार्जुन मंत्र २४५
श्री हनुमान मंत्र २४६
भैरवमंत्र (२ मंत्र) २४७
सुग्रीव मंत्र २५०
गौरीमंत्र २०१
कामेश्वरी मंत्र २०२
बगलामुखी मंत्र २०३
सूर्यमंत्र
तंत्रोक्त सिद्ध मंत्र २५२
मतान्तर से तंत्रोक्त मंत्र २५५
बीजमंत्र २६२
वेदोक्त मंत्र २६३
चन्द्रमा मंत्र
तंत्रोक्त सिद्ध २५२
तंत्रोक्त संक्षिप्त २५६
बीज मंत्र २६२
वेदोक्त २६४
मंगल मंत्र
तंत्रोक्त सिद्ध २५२
तंत्रोक्त संक्षिप्त २५७
बीज मंत्र २६२
वेदोक्त २६५
बुध मंत्र
तंत्रोक्त सिद्ध २५२
तंत्रोक्त संक्षिप्त २५७
बीज मंत्र २६२
वेदोक्त मंत्र २६६
बृहस्पति मंत्र
तंत्रोक्त सिद्धमंत्र २५३
तंत्रोक्त संक्षिप्त २५८
बीज मंत्र २६२
वेदोक्त २६८
शुक्रमंत्र
तंत्रोक्त सिद्ध २५३
तंत्रोक्त संक्षिप्त २५६
बीज मंत्र २६२
वेदोक्त २६६
शनिमंत्र
तंत्रोक्त सिद्ध २५३
तंत्रोक्त संक्षिप्त २६०
बीज मंत्र २६२
वेदोक्त २७०
राहुमंत्र
तंत्रोक्त सिद्धमंत्र २५४
तंत्रोक्त संक्षिप्त २६०
बीज मंत्र २६२
वेदोक्त २७१
केतुमंत्र
तंत्रोक्त सिद्ध २५४
तंत्रोक्त संक्षिप्त २६१
बीज मंत्र २६२
वेदोक्त २७२
श्री मृत्युंजयमंत्र
त्र्यक्षर (लघु) मंत्र २७४
वैदिक (सामान्य) मंत्र २७७
बीजपल्लव सहित वेदोक्त मंत्र २७५
तंत्रोक्त सिद्ध मंत्र २५०

यंत्र सूची

रुद्रबीसा यंत्र (यंत्र ८) 1
सूर्य यंत्र ( ) ,,
चन्द्र यंत्र (३) ,,
मंगल यंत्र (४) ,,
बुध यंत्र (५) ,,
गुरु यंत्र (६) ,,
शुक्र यंत्र (७) ,,
शनि (९) ,,
राहु (१०) ,,
केतु (११) 2
शत्रु बंधनकारी यंत्र (१) 1
मिर्गी रोग का यंत्र (१२) 2
ज्वर शामक यंत्र (१३, १४, १५) ,,
चौंतीसा यंत्र (१६) ,,
,, (१७) ,,
सन्तान यंत्र (१८) ,,
,, (१९) 3
,, (२५) ,,
पंचदशी यंत्र (२) 1
,, (२०) 3
अपमृत्यु निवारक (२१) ,,
बीसा यंत्र (२२) ,,
,, (२३) ,,
,, (३९) 6
,, (४०) ,,
,, (४१) ,,
,, (४५) 7
,, (४२) 6
,, (४३) ,,
परब्रह्म यंत्र (२४) 3
जीवत्सा यंत्र (२६) ,,
पति पत्नी प्रेमकारक यंत्र (२७) 4
,, ,, (३६) ,,
वचन सिद्धि (२८) ,,
नपुंसकत्व नाशक (२९) ,,
शिशुरोदन शान्ति (३०) ,,
आकर्षण यंत्र (३१) ,,
शत्रु वशीकरण (३२) ,,
शत्रु स्तम्भन (३३) ,,
अपमृत्यु निवारक (३४) ,,
स्वप्न पिशाचनी (३५) ,,
जगविजय रक्षाकारी रामभद्र यंत्र (३७) 5
रक्षा यंत्र (३८) ,,
आकर्षण यंत्र (४४) 6
दुर्गा यंत्र 7
सर्वसिद्धि यंत्र (१/१) 16
कुमति निवारण/शत्रुवंध (२/२) ,,
शत्रु पराजय/सर्वजनवश (३/३) 17
नेत्र रोग शान्ति (४/५) ,,
विद्या लाभ/परीक्षा सफलता (५।६) 18

विष भय निवारक (७।६) ,,
कुत्ते का विष शान्ति (७।१०) 19
चोर भय न हो (९।१३) 20
आकर्षण (८।११) 19
धन प्राप्ति/आंधीसे रक्षा(१०।१४)20
राजद्वार में जय बंधन मुक्ति
(११।१६) 21
उदर पीड़ा शान्ति (१२।१७) ,,
सन्तान सुख (१३।२०) 22
सर्वजन वशीकरण (१४।२१) ,,
भूतप्रेत बाधा शान्ति (१५।२२) 23
शत्रुनाशक (१६।२७) ,,
शासक वशीकरण शासन में
प्रतिष्ठा (१७।३१) 24
संग्रहणी नाशक (१८।३२) 24
गर्भपात रक्षा (१९।३४) 25
ज्वर शान्ति (२०।३३) ,,
दुर्भिक्ष, महामारी राजभय से
रक्षा (२१।३५) 26
इच्छा पूर्ण, विजय सर्प विष
निवारण (२२।४१) ,,
भयनाशक/रोगशान्ति (२३।४५) 27
बंधन मोचन/राज भय शान्ति
(२४।४६) ,,
युद्ध में जय/शस्त्र भय शान्ति
(२५।४७) 28
कार्यसिद्धि/वशीकरण
(२६।४८) ,,

दिशा निर्देश

विविध प्रकार के 'त्रास' अर्थात् भय से रक्षा करते हुए जो 'त्राण' अर्थात् रक्षा करे, वही तंत्र है—'त्रासात् त्राणणात् तंत्रः' अतः तंत्र किसी प्रकार का अहितकारी है ही नहीं और तंत्र शास्त्र की उत्पत्ति भी मनुष्य को विभिन्न प्रकार के भयों (रोग भय, शत्रु भय, राज भय, उत्पात भय आदि) से सुरक्षित रखने हेतु विशेष उपासना पद्धति से ही हुआ है, जो विभिन्न लौकिक सुख-समृद्धिदायक व रक्षाकारक होने के साथ ही पारलौकिक मुक्ति का, ईश्वरीय साक्षात्कार का भी उत्तम साधन है। लेकिन कालान्तर में कुछ व्यक्तियों ने व्यक्तिगत स्वार्थ हेतु तंत्र का दुरुपयोग कर दूसरों को हानि पहुँचाने वाले अभिचार कर्मों को भी जन्म दिया है जो पापमूलक व निन्दनीय है। किसी भी तंत्रवेत्ता को जब तक जीवन पर आसन्न संकट न हो तंत्र के दुरुपयोग करने का निषेध है केवल जीवन पर संकट उपस्थित होने और रक्षा का कोई साधन न बचने पर ही 'अभिचार' कृत्य की आज्ञा है। इसी कारण आज 'तंत्र' व 'तांत्रिक' भय का एक पर्याय बन गया है जब कि वास्तव में वह 'साधना' और 'रक्षा' का पर्याय है। तंत्र तथा तांत्रिक के नाम पर लोग जटा व दाढ़ी बढ़ाये ऐसे कुत्सित रूप की कल्पना कर लेते हैं जो श्मशान में जाकर शवों का भक्षण कर रहा हो, अनर्गल हवन कर रहा हो, मुण्डधारी आदि भयानक वेशभूषा में हो। जब कि ऐसा कुछ भी नहीं है। यह एक विशुद्ध सात्विक उपासना है और एक सामान्य सांसारिक व्यक्ति इस उपासना को कर सकता है। यही कारण है कि अनादिकाल से वैदिक युग से ही तंत्रशास्त्र की मान्यता है, चारों वेदों में भी इससे कोई अछूता नहीं है।

हाँ, तांत्रिक उपासना में विधि विधान का पूर्ण ज्ञान आवश्यक है, विधि रहित व त्रुटिपूर्ण उपासना लाभ करने के स्थान पर अशुभकारी भी हो सकती है अतः तंत्रशास्त्र की दीक्षा लेने के साथ ही सर्वप्रथम इसके सम्पूर्ण विधि विधान का ज्ञान होना आवश्यक है। अभी तक ऐसा कोई ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है जिसमें क्रमशः सभी विधि विधान का संकलन हो और विधिपूर्वक साधना न होने से साधना सफल भी नहीं हो सकती और असफलता के कारण तंत्र विद्या पर

अविश्वास होना स्वाभाविक है। इसी प्रयोजन से समस्त विधि-विधान का ज्ञान आवश्यक है। जो अत्यन्त जटिल व समय साध्य है। किसी भी प्रयोग को सिद्ध करने से पहले साधक को इन सभी क्रियाओं एवं विधियों का पालन करना होगा तभी सिद्धि सम्भव है।

साधना कोई भी हो कठिन होती है, कहा गया है कि 'क्षुरस्यधारा निहिता दुरत्यया दुर्गं पथं तत् कवयो वदन्ति' अर्थात् साधना तलवार की धार पर चलने के समान है, सभी के लिये सम्भव नहीं। लाखों व्यक्तियों में एक-दो व्यक्ति ऐसी चेष्टा करते हैं और प्रयत्नशील ऐसे लाखों लोगों में से कोई एक सिद्धि प्राप्त कर पाता है।

मेरे एक मित्र परम धार्मिक व श्रद्धालु हैं और साधना का प्रयास करते रहते हैं, अभी तक कुछ सफलता प्राप्त नहीं हो सकी। एक दिन (अन्तरंग मित्र होने के नाते) मैं उनके घर पर साधना स्थल पर ही पहुँच गया, देखा कमीज और पैजामा पहन कर साधना में बैठे हैं। ज्ञातव्य है कि साधना में अन सिला एक वस्त्र (धोती या उसके समान ही चादर इत्यादि जैसा बगैर सिला) पहना जाता है। इस प्रकार साधना नियमानुकूल न होने से साधना सफल कैसे हो ?

साधना में अनसिला वस्त्र पहनने का विधान इस्लाम में भी दृष्टिगोचर होता है। समस्त हज यात्री पवित्र काबा तीर्थ में चादर के समान बिना सिले सफेद एक वस्त्र पहन कर ही उपासना में भाग लेते हैं। इस प्रकार एक छोटी सी त्रुटि भी असफलता का कारण बन सकती है।

तंत्र साधना के निमित्त मन तथा इन्द्रियों पर संयम अनिवार्य है, जिसका मन तथा इन्द्रियों पर संयम न हो वह इस साधना के योग्य नहीं है। अतः तंत्र साधना के निमित्त योग साधना आवश्यक है। साधक को सर्वप्रथम अष्टांग योग की साधना (यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान तथा समाधि) करके मन तथा इन्द्रियों पर संयम करना सीखना चाहिए।

आत्म संयम, इन्द्रिय संयम एवं मनोनिग्रह का स्वरूप यह है कि व्यक्ति विषम परिस्थितियों में भी काम के वशीभूत न हो सके। यदि साधक पुरुष है तो सभी नारी मात्र को माँ के रूप में और साधक स्त्री है तो पुरुष मात्र को पुत्र के रूप में देखें। रामकृष्ण परमहंस जैसे सिद्ध व्यक्ति अपनी पत्नी को भी मातृ रूप में ही देखते थे। एक साधक का कथन है कि रूप गर्विता, नवयौवनान्विता युवती के समक्ष भी जिस व्यक्ति में काम-वासना जागृत न हो, उसमें भी मातृ-

भाव की ही दृष्टि हो, इसी प्रकार महिला साधक के हृदय में भी पुरुष मात्र के प्रति पुत्रवत् वात्सल्य हो, ऐसे साधक ही तंत्रविद्या के अधिकारी हैं। वाममार्गी साधना में भी जहाँ नग्न स्त्री के समक्ष साधना होती है, यह साधक के इन्द्रिय सयम की कठोर परीक्षा भी है।

मूलभूत 'तंत्रशास्त्र' की पुस्तकें आज अलभ्य हैं और उनकी बिक्री न होने से भविष्य में उनके पुनः प्रकाशित होने की सम्भावना भी नहीं है। अतः वास्तविक एवं प्रामाणिक पुरातन तंत्र ग्रन्थ किसी विशेष संस्कृत पुस्तकालय में ही देखने को उपलब्ध हो सकते हैं। तन्त्र के नाम पर आजकल बाजारों में जो विभिन्न पुस्तकें उपलब्ध हैं वे अधिकांशतः अशुद्ध व अप्रमाणिक हैं। ऐसी पुस्तकों के चक्कर में पड़कर समय व धन का दुरुपयोग न करें।

वर्तमान में जो पुस्तकें पुस्तकालयों आदि में कहीं उपलब्ध भी हैं वे कालान्तर में कहाँ तक उपलब्ध रहेंगी, यह भी विचारणीय विषय है। मैंने देखा है कि नेपाल तथा उत्तराखण्ड में लाखों की संख्या में अति महत्वपूर्ण दुर्लभ हस्त लिखित ग्रन्थ आज भी प्राप्त होते हैं लेकिन उनका उपयोग नहीं हो रहा है, विषय के ज्ञाता नहीं रह गये हैं। यह हस्तलिखित ग्रन्थ नष्ट-भ्रष्ट हो रहे हैं, दीमक खा रही है और कूड़े में फेंकी जा रही हैं। इस प्रकार कालान्तर में बिशुद्ध एवं प्रामाणिक तन्त्र साहित्य दुर्लभ हो सकता है।

वैसे तो तन्त्र साहित्य अपार है, इस पर सैकड़ों ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं। विशेष उपासना करनी हो तो जिस देवता की उपासना करनी हो उसके पचांगों (पटल, पद्धति, कवच, नाम सहस्त्र और स्तोत्र) के माध्यम से उपासना होती है और हमारी संस्कृति में तैंतीस करोड़ देवी देवताओं की मान्यता है, इस प्रकार प्रत्येक देवी-देवता के पंचांग का संग्रह किया जाय तो एक-एक देवी या एक-एक देवता पर एक-एक ग्रन्थ तैयार होगा। अतः किसी एक ग्रन्थ में समस्त तन्त्र-बिद्या का समावेश नहीं हो सकता। लेकिन इन सबमें मुख्य है 'मंत्र' और मंत्र तभी फलदायक हो सकता है जब कि वह शास्त्र सम्मत प्रामाणिक तथा सिद्धमत्र हो। अपने जीवन के ६५ वर्षों के शोध व अनुभव के आधार पर मैंने सप्रमाण सभी मुख्य देवी-देवताओं, ग्रहों के प्रामाणिक व सिद्ध मंत्रों का संकलन कर तथा विभिन्न उद्देश्यों को लेकर विविध प्रयोगों, अनुष्ठानों का समावेश करने का प्रयास किया है। नेपाल तथा उत्तराखण्ड से प्राप्त दुर्लभ हस्तलिखित ग्रन्थों पर आधारित वे प्रयोग व अनुष्ठान जिन्हें कोई व्यक्ति किसी भी मूल्य पर बतलाने

को तैयार नहीं होता, निःसंकोच देने का प्रयास किया है ताकि यह विद्या नष्ट न हो। अन्यथा ऐसी विद्याओं को गुप्त रखने के कारण साधक के साथ ही विद्या का भी अन्त हो जाता है। मैं यही कह सकता हूँ कि लगभग ३०० से अधिक ग्रन्थों के महत्वपूर्ण सार का यह संकलन उपलब्ध कराने की चेष्टा मैंने की है।

एक उल्लेखनीय बात यह है कि एक-एक मंत्र को सिद्ध करने में ही काफी समय लगता है, ऐसी स्थिति में व्यक्ति जीवन पर्यन्त कुछ ही मंत्र सिद्ध कर सकता है, यदि लोकहित की कामना से अनेक मंत्र सिद्ध करना चाहें तो उसके निमित्त ग्रहणकाल में मंत्र सिद्ध करने की सरल विधि है, उसे प्रयोग में ला सकते हैं।

शुद्ध मंत्र व उसकी विधि आप किसी ग्रन्थ से ले सकते हैं, लेकिन इसके बावजूद किसी योग्य व्यक्ति को गुरू बनाकर उससे विधिवत मंत्र की दीक्षा लेना आवश्यक है। किसी ग्रन्थ से मंत्र लेकर बिना गुरू से विधिवत दीक्षा लिये मंत्र का प्रयोग करना उचित नहीं है, जैसा कि 'सांख्यायन तंत्र' में कहा है—

पुस्तके लिखिता मंत्रानवलोक्य जपेत्तुवा ।
स जीवन्नेव चाण्डालो मृतः श्वाचाभि जायते ।।

अनुष्ठान करने से पहले मंत्र को कण्ठस्थ भी कर लेना चाहिए।

सफलता की दृष्टि से यह भी आवश्यक है कि तान्त्रिक प्रयोगों हेतु जिन वस्तुओं (वनौषधियों आदि) की आवश्यकता होती है वह भी प्रामाणिक हों। या तो व्यक्ति स्वयँ उनका ज्ञाता हो और स्वयँ संग्रह करे, अन्यथा बाजार से क्रय करने पर वास्तव में वह वस्तु शुद्ध है या नहीं? इसे ध्यान में रखें। अन्यथा प्रयोग असफल व व्यर्थ होगा। वनौषधि आदि को विधिपूर्वक निमंत्रण देकर ग्रहण करना चाहिए।

तांत्रिक को चाहिए कि द्वेषवश भयवश, लोभवश कभी भी मंत्र का दुरुपयोग न करे। इसका व्यावसायिक उपयोग भी कदापि न करे, अन्यथा सिद्धि समाप्त होने के साथ ही अपना भी लोक-परलोक नष्ट होगा। केवल लोकहित की कामना से जन-मानस के कष्टों का निराकरण हेतु ही इस विद्या का सदुपयोग करे। इसका दुरुपयोग न करें।

कुछ स्वार्थी साधकों द्वारा लोभवश, द्वेषवश या स्वार्थवश तंत्र का दुरुपयोग (मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण आदि षट्कर्म एवं अभिचार कर्म) होता है अत: जन साधारण को भी सावधान रहना चाहिए। व्यक्ति इन अभिचारों से कैसे बच सकता है? इसका वर्णन भी इसमें किया गया है।

कोई भी मंत्र तभी सफल हो सकता है जब कि पहले पुरश्चरण करके विधि पूर्वक उसे सिद्ध कर लिया जाय, बिना मंत्र सिद्ध किये वह प्रभावी नहीं हो सकता। अत: बिना सिद्ध किये किसी मंत्र का प्रयोग करने की चेष्टा न करें, व्यर्थ होगा।

एक और बात उल्लेखनीय है। राजनेताओं उच्च अधिकारियों, प्रतिष्ठित-जनों के सम्पर्क में अनेक ऐसे स्वार्थी व्यक्ति आते रहते हैं जो अपने को परायोगी, सिद्ध, त्रिकालदर्शी तांत्रिक आदि नाम देकर अपने व्यक्तिगत स्वार्थ (कार्य) वश सम्पर्क करते हैं। भविष्य की जिज्ञासा, पदोन्नति एवं धन की लिप्सा आदि मानव की दुर्बलता स्वाभाविक है और बड़े-बड़े शिक्षित व्यक्ति भी इनके क्षुद्र चमत्कारों के प्रभावित होकर इनके चक्र में फंस जाते हैं, और कालान्तर में यही अनिष्ट का कारण बनते हैं। अत: किसी को भी गुरु बनाने या किसी से परामर्श लेने से पहले उसका पूर्ण परिचय ज्ञात कर लें, उसकी शिक्षा, आचरण, ज्ञान आदि का भी आकलन कर लें।

बहुधा लोग अनेक व्यक्तियों से परामर्श लेते रहते हैं यह एक भ्रान्ति है कि विभिन्न लोगों से परामर्श करने से सही मार्गदर्शन होगा। ऐसा करने से और भ्रान्ति ही बढ़ेगी। यह उचित नहीं है। सोच विचार कर किसी एक को गुरु बनायें, उसी पर पूर्ण श्रद्धा और विश्वास रखें। वाममार्गी साधक प्राय: लोगों को अपने क्षुद्र चमत्कारों से वशीभूत कर लेते हैं, उनसे लाभ उठाते हैं और कालान्तर में अपने हितसाधन या स्वार्थ वश उसी का अनिष्ट करने में भी नहीं चूकते। जिस प्रकार कोई व्यक्ति अपने कार्य सम्पादन हेतु किसी अपराधिक व्यक्ति का आश्रय लेता है तो उसका वह कार्य तो वह कर देगा, किन्तु बाद में वही व्यक्ति स्वयं उसका भी उत्पीड़न करने में नहीं चूकेगा।

उदाहरण स्वरूप शत्रु के मारण प्रयोग हेतु शत्रु के बाल, पैर की धूल (मिट्टी) वस्त्र आदि की आवश्यकता होती है। जो सीधे या सुलभता से मिल नहीं सकते। ऐसे में वह व्यक्ति अपने शत्रु के पास किसी माध्यम से किसी ऐसे व्यक्ति को भेजता है जो आपको प्रभावित कर सके और आप उस पर विश्वास

कर सकें। कालान्तर में उसके प्रति आपका पूर्ण विश्वास हो जाने पर वह व्यक्ति आपके शत्रु के पास वह सामग्री प्राप्त कर पहुँचा सकता है और आपका विश्वस्त बना वही व्यक्ति आपके प्रति ही अभिचार (अनिष्टकारी प्रयोग) कर सकता है।

इस सन्दर्भ में एक प्रसंग आज भी याद आ रहा है. स्व० जगमोहन सिंह नेगी उत्तर प्रदेश शासन में वरिष्ठ मंत्री थे, सन् १९५६ से मैं उनके सम्पर्क में रहा, उन्होंने मुझसे गुरुदीक्षा ली। उनके निधन के बाद उनके पुत्र स्व० चन्द्र मोहन सिंह नेगी भी उ० प्र० शासन में मंत्री बने, उन्होंने भी मुझसे दीक्षा ली, लेकिन दुर्भाग्य है कि अपने मंत्रित्वकाल में वे कुछ वाममार्गी तांत्रिकों के चक्र में फंस गये, एक दिन उन्होंने मुझसे कहा—"मेरे सम्पर्क में ऐसे तांत्रिक हैं जो मुझे एक रात में प्रधानमंत्री या मुख्यमंत्री बनाने में समर्थ हैं" जब मैंने देखा कि वे किसी चक्रव्यूह में पूरी तरह फंस चुके हैं, इन्हें उपदेश देना व्यर्थ है, तब से मेरा सम्पर्क उनसे टूट गया। कालान्तर में तंत्र का यह चक्र ही विनाश का कारण बना। उनकी युवा पुत्री, पुत्र, पत्नी और स्वयं अपना भी एक-एक करके बगैर किसी रोग के बैठे बिठाये अपमृत्यु के ग्रास बन गये। इस प्रकार उनके अपने परिवार में कोई नहीं बचा।

मेरे एक और मित्र हैं बहुत ही ज्ञानी, सज्जन, लेकिन वे भी अनेकों से परामर्श लेने की अपनी प्रकृति के कारण तांत्रिकों से पीड़ित रहे हैं। उनके द्वारा तांत्रिकों को तो निश्चित लाभ पहुंचा (तांत्रिकों ने उनसे लाभ उठाया) लेकिन उन्हें उलटे अवसाद ही मिला। अब स्थिति सांप-छछूंदर की सी है, चाहते हुए भी यह सम्बन्ध छोड़ नहीं पा रहे हैं।

कतिपय ऐसे वाममार्गी चमत्कार दिखाने वाले तथा कथित तांत्रिकों को मैं व्यक्तिगत रूप से जानता हूँ उनका जीवन इतना कलंकित, पापी और अपवित्र है कि उन घटनाओं का स्मरण करते ही मन थराथराने लगता है उनके ऐसे दुष्कर्मों का वर्णन करते भी लज्जा आती है।

वास्तविक सिद्ध साधकों को जन समुदाय में आकर अपने को विज्ञापित करने की आवश्यकता नहीं होती, वे तो जनता से दूर गिरि-कन्दराओं में साधना रत होते हैं। अतः कल्याण के अभिलाषी व्यक्ति को इन अमंगलकारी जादूगरों से दूर ही रहना चाहिए।

'एकै साधे सब सधै' किसी एक को ही गुरु बनायें, किन्तु बहुत सोच समझकर और गुरु बनाने के बाद 'गुरुर्देवो महेश्वरः' उन्हें साक्षात् ईश्वर का रूप

मानकर उनके प्रति पूर्ण श्रद्धा और विश्वास रखें। कदाचित् उन पर विश्वास न रहे, उनमें दोष दृष्टिगोचर होने पर उनका परित्याग कर किसी दूसरे को गुरु बना सकते हैं, परन्तु एक साथ अनेक गुरु बनाना उचित नहीं है।

कोई चमत्मार दिखाना, भभूत आदि उत्पन्न करना, हाथ उठाकर हवा में कोई वस्तु प्रकट करना, आपका चिंतित कार्य छाप देना, बीती हुई घटनायें बता देना आदि भूतप्रेत साधना, जादू अथवा रसायनिक क्रियायें हैं यह उत्कृष्ट साधना नहीं है। जब कि तांत्रिक उपासना का लक्ष्य पुरुषार्थ चतुष्टय (धर्म, अर्थ काम तथा मोक्ष) साधना है। विशिष्ट तांत्रिक साधना से ही अष्टधा सिद्धियों की उपलब्धि होती है—

अणिमा महिमा चैव गरिमा लघिमा तथा।
प्राप्ति काम्यावशीत्वं च इशित्वं चाष्टसिद्धय: ।।

अर्थात् अपने शरीर या किसी वस्तु को अतिसूक्ष्मकण एवं अणुरूप में घटित करना, गुरुतर बना देना, बड़ा बना देना, हलका बना देना, दूर की वस्तु प्राप्त करना अथवा दूरस्थ समाचारादि ज्ञात कर लेना, उत्पन्न इच्छा की पूर्ति होना, समस्त इन्द्रियों व प्राणिमात्र पर नियंत्रण व ईश्वर के समान किसी कार्य को पूर्ण करने की शक्ति। अत: उच्चतर साधना से, उससे प्राप्त सिद्धि से व्यक्ति में एक ईश्वरीय शक्ति का प्रादुर्भाव होता है—यह शक्ति असंभव को संभव कर सकती है। ऐसा सिद्ध व्यक्ति जो वरदान व आशीर्वाद देता है वह निश्चित रूप से पूर्ण होता है—भले ही असंभव क्यों न हो। परन्तु ऐसे सिद्ध का मिलना हिमालय की एकान्त गुफाओं में ही संभव है।

वशीकरण आदि कई क्रियायें ऐसी हैं, पाठकों को उसका भाव समझना चाहिए। किसी राह चलते या अनजान व्यक्ति (स्त्री या पुरुष अथवा सभा राजद्वार आदि में) पर वशीकरण या मोहन आदि प्रयोग सफल नहीं होगा। पहले सम्बन्धित व्यक्ति से परिचय हो, उठना-बैठना, मित्रता हो, तदुपरान्त यदि वह वश में नहीं होता है तो तब चतुरता से प्रयोग किया जा सकता है। राह चलते किसी अनजान स्त्री पुरुष को मंत्रित पुष्प सुंघा देने, शिर में तेल या सिन्दूर डालने से प्रयोग सफल नहीं होगा। इसी प्रकार प्रत्येक प्रयोग के उपयोग के बारे में विवेक व स्थिति के अनुसार बिचार करना होगा।

सिद्ध मंत्र होते भी किसी भी प्रयोग के सफल न होने के अनेक कारण हो सकते हैं। आत्मसंयम का अभाव शुद्धि का अभाव, विधि का अभाव, एकाग्रता का अभाव आदि तो हैं ही परपीडन तथा किसी प्रलोभन या स्वार्थवश की जाने वाली साधना में अनेक विघ्न उपस्थित होते रहते हैं पुराण आदि हमारे सांस्कृतिक साहित्य में ऐसे सैकड़ों कथानक हैं कि साधना में दैवी शक्तियाँ भी विघ्न डालती हैं। इसके अलावा श्रद्धा तथा विश्वास भाव भी आवश्यक है :—

मंत्रे तीर्थे द्विजे दैवे भैषज्ये देवते गुरौ: ।
यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी ।।

अत: मंत्र पर, अपने गुरु पर, साधना पर पूर्ण विश्वास व श्रद्धा होनी चाहिए। संत तुलसी दास जी ने 'विश्वास' को 'शिव' और 'श्रद्धा' को ही 'पार्वती' का रूप माना है—

'भवानी शंकरौ वन्दे श्रद्धा विश्वास रूपिणौ'

कोई भी प्रामाणिक व सिद्ध मंत्र का प्रयोग असफल नहीं होता। यदि असफल होता है तो अपने दोष वश ही हो सकता है।

एक प्रश्न और उठता है, भारतीय संस्कृति में तैंतीस करोड़ देवी-देवता और उनके असंख्य मंत्र, क्यों न एक ही देवता के एक मंत्र बिशेष की साधना करके समस्त सिद्धियाँ प्राप्त कर लें? यहाँ पर 'एकै साधे सब सधै' यह चरितार्थ नहीं होगी। दवा कितनी ही प्रभावशाली क्यों न हो, सभी रोगों की एक दवा नहीं हो सकती। विभिन्न रोगों में विभिन्न दवायें ही प्रभावी होंगी। अत: विभिन्न कामना के अनुसार विभिन्न देवी-देवताओं एवं उनके विभिन्न रूपों, विभिन्न मंत्रों की साधना करनी पड़ेगी। हाँ यदि कोई सांसारिक कामना न हो, केवल परमार्थ (मोक्ष) की कामना हो तो एक ही देवी या देवता और एक ही मंत्र का पुरश्चरण निश्चित ही सफल होगा, लेकिन यदि सांसारिक कामना है तो तदनुसार ही देवी-देवता और मंत्र का चयन आवश्यक है। एक सामान्य उदाहरण लें—

व्यावहारिक दृष्टि से संसार के सभी काम शासन द्वारा होते हैं, लेकिन प्रत्येक कार्य हेतु विभिन्न विभाग हैं, आपका जिस विभाग से सम्बन्धित कार्य हो उसी विभाग के अधिकारी या मंत्री के माध्यम से ही वह कार्य हो पायगा। भवन का मानचित्र वन बिभाग से स्वीकृत नहीं होगा। जल संयोजन लोक निर्माण बिभाग से नहीं होगा। आवश्यकतानुसार आपको बिभिन्न विभागों से ही सम्पर्क

करना पड़ेगा। उसी प्रकार विभिन्न देवी-देवताओं के भी कार्यक्षेत्र नियत हैं और भिन्न-भिन्न मंत्र भी नियत हैं। परमार्थिक रूप में माँ दुर्गा की उपासना किसी भी रूप में कर सकते हैं लेकिन कामनावश उपासना करनी हो तो विभिन्न कामनाओं के अनुसार माँ दुर्गा के विभिन्न रूपों की कल्पना की गयी है, तदनुसार वांछित प्रयोग और रूप की उपासना ही सार्थक होगी। जैसा कि कहा है—

मुक्ति ददाति त्रिपुरा लक्ष्मी लक्ष्मी ददाति च।
विद्याददाति बाग्देवी— ॥
तारातारयति क्लेशाद्राज्यं तु भुवनेश्वरी।
राज्ञी राज्ये राजवश्य भेडा भय विनाशिनी॥

इत्यादि।

इस प्रकार कामना के अनुसार अभीष्ट देवता या देवी और उसके अभीष्ट मंत्र (कार्यानुसार) का चयन आवश्यक है।

किसी भी प्रयोग के प्रभाव का विश्वास और धैर्य पूर्वक प्रतीक्षा करें। यदि विधि पूर्वक प्रयोग किया गया है तो निश्चित फलीभूत होगा, समय लग सकता है। विलम्ब के कारण अविश्वास न करें। कुछ व्यक्ति मंत्र का प्रभाव एवं फल तत्काल देखना चाहते हैं, कुछ मामलों में ऐसा संभव भी है लेकिन सभी मंत्र तत्काल फलदायक नहीं हो सकते—इस कारण वे मंत्रशास्त्र के प्रति विश्वास नहीं रखते। एक सामान्य बात है कि किसी भी कार्य में समय लगता है, ऐसा संभव नहीं कि आज बीज बोयें और तत्काल पेड़ उगकर उसमें फल लग जाँयें। बीज बोने से वृक्ष उगने और उसमें फल लगने में जिस प्रकार समय लगता है उसी प्रकार मंत्र का अनुष्ठान एवं प्रयोग करने से उसके फलीभूत होने में यथा-स्थिति समय लगता है। मंत्र अनुष्ठान का यह अर्थ है कि आपने बीज बो दिया—तदुपरान्त उसके अंकुरित होने, बढ़ने और फलीभूत होने की प्रतीक्षा करें। इस बीच कुछ ऐसी परिस्थितियाँ स्वतः उत्पन्न होंगी जो कार्य के फलीभूत होने में सहायक होंगी। यहाँ एक दो उदाहरण देना पर्य्याप्त होगा।

मेरे एक मित्र के पुत्र के किसी लड़की के साथ अनैतिक सम्बन्ध हो गये थे, साम-दाम-दण्ड-भेद से जब कुछ परिणाम न निकला तो उन्होंने अपनी व्यथा

मुझसे कही। मैंने एक प्रयोग उन्हें बताया, जटिल एवं कठिन होते भी उन्होंने वह प्रयोग किया प्रयोग के बाद इन दोनों के मध्य धीरे-धीरे खटास उत्पन्न हुई और अठारह महिने बाद अनैतिक सम्बन्ध सर्वथा टूट गये और कुछ समय बाद उस लड़की का कहीं अन्यत्र स्थानान्तरण भी हो गया। आप ऐसा भी कह सकते हैं कि उस लड़की का स्थानान्तरण स्वतः हो गया, परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है, क्योंकि यह स्थानान्तरण असंभाविव व अबांछित था।

अतः इसमें प्रयोग का ही प्रभाव रहा। यह विश्वास करना पड़ेगा। क्योंकि स्थानान्तरण न होता तब भी सम्बन्ध समाप्त हो ही चुके थे। मेरे एक अन्य मित्र की विवाहिता कन्या ससुराल में पति द्वारा प्रताड़ित व तिरस्कार को प्राप्त थी और स्थिति इतनी जटिल थी कि सम्बन्ध विच्छेद अथवा जीवन के प्रति आसन्न संकट था। मैंने उसे एक प्रयोग बतलाया जो उसे स्वयं करना था। इसके बाद स्थिति कभी भी इतनी गंभीर नहीं हुई और उस प्रयोग को करने के बाद धीरे-धीरे उत्तरोत्तर सुधार होता गया ४/५ वर्ष बाद आज के दिन स्थिति सामान्य है, इस प्रकार प्रयोग के पूर्ण रूप से फलीभूत होने मे इतना समय लग गया, इसबीच प्रयोग के प्रभाव से उक्त कन्या के पति का धीरे-धीरे हृदय परिवर्तन हुआ।

अतः यह उचित है कि किसी आसन्न संकट की आशंका होने पर समय रहते पहले से ही प्रयोग करें। घर में आग लगने पर कुवाँ खोदना जिस प्रकार व्यर्थ एवं हास्यास्प्रद है उसी प्रकार संकट आने पर उपाय करना प्रभावी नहीं है। अथवा अधिक प्रभावी नहीं होगा। जैसे किसी कर्मचारी पर कोई अभियोग लग जाने पर उपाय करना उतना प्रभावकारी नहीं होगा क्योंकि अभियोग लग जाने पर उसका शमन होने में (कार्यवाही में ही) ही पर्याप्त समय लग जायगा, अतः यदि अभियोग की आशंका को देखते हुए पहले से ही प्रयोग किया जाय तो संभव है अभियोग ही न लगे अथवा अभियोग गंभीर न हो ?

इस विषय पर लिखने की प्रेरणा मुझे चि० नीरज तिवारी ने दी। इस बालक के मन में तंत्रशास्त्र के प्रति बड़ी जिज्ञासा थी और बहुतेरे प्रश्न थे, मौखिक रूप में इन बहुतेरे प्रश्नों का समाधान करना संभव न था। ऐसे ही और भी न जाने कितने व्यक्ति होंगे जिनके मन में इस विषय के प्रति जिज्ञासा, प्रश्न व शंकायें होंगी। उन सभी को इस साहित्य से निश्चय ही मार्गदर्शन प्राप्त हो सकेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

इस संदर्भ में जिन प्रकाशित व अप्रकाशित ग्रंथों का आधार लिया गया है उन सभी ग्रंथों तथा उनके लेखकों का हार्दिक आभारी हूँ।

अपने प्रयास में, मैं कहाँ तक सफल हुआ हूँ इसका निर्णय तो विद्वज्जन ही करेंगे। यदि मेरे इस प्रयास से समाज को लाभ पहुँच सके तो मैं अपना श्रम सफल समझूंगा।

अभी भी मेरे ज्ञान भण्डार में बहुत सी सामग्री है, लेकिन ग्रंथ का आकार बढ़ जाने से कुछ सामग्री नहीं दे पा रहा हूँ। इसका खेद है। ईश्वर ने चाहा तो कालान्तर में इसको भी प्रकाशित करने की चेष्टा करूँगा।

मार्गशीर्ष कृष्ण १२, २०५४ वि०
[दिनांक २७-११-९७]

भास्करानन्द लोहनी

तंत्रशास्त्र परिचय

ज्ञानकाण्ड, यज्ञकाण्ड के साथ ही तांत्रिक उपासना की परम्परा भी आदि-काल से सभी सम्प्रदायों में प्रचलित रही है। क्या शैव, क्या वैष्णव, क्या शाक्त यहाँ तक पीछे बौद्ध धर्म में भी तांत्रिक उपासना ग्राह्य हो गई। आरम्भ में तांत्रिक उपासना का लक्ष्य इष्ट सिद्धि, परमार्थिक सुधार तथा लोक कल्याण मात्र था, किन्तु बाद में स्वार्थपरक वृत्तियों के कारण तांत्रिक उपासना अभिचार का साधन बन गई। यही एकमात्र कारण है कि 'तांत्रिक' शब्द से आज भी जन साधारण डरता है, स्वार्थपरक दुष्प्रवृत्तियों के कारण जन साधारण में यह बिश्वास हो गया है कि तांत्रिक का अर्थ ही अभिचार है और कुछ नहीं।

'तांत्रिक' शब्द श्रवण से ही यह जिज्ञासा होती है 'तन्त्र' क्या पदार्थ है। तन्त्र, यन्त्र, मन्त्र यह तीनों शब्द बास्तव में आशु सफलता के द्योतक हैं। जिस प्रकार कोई कार्य सामान्य मानव से अकरणीय होते भी यांत्रिक पद्धति से सहज हो जाते हैं, वैसे ही परमार्थिक साधना में तन्त्रों का स्थान है, जिसकी सहायता से ब्रह्म ज्ञानादि परमार्थिक साधना अपेक्षाकृत सहज हो जाती है। आधुनिक युग में जैसे यन्त्रों की कार्य प्रणाली को 'टेकनिकल' कहा जाता है, ऐसे ही आधुनिक लोक व्यवहार में तान्त्रिक शब्द के अर्थ 'टेकनिक' करें तो ठीक रहेगा। यह 'टेकनिक' अभिचार की नहीं, अपितु परमार्थिक उन्नति की है। जिस प्रकार उपनिषद्, योगवासिष्ठ, दर्शनशास्त्र ज्ञान एवं उपासना के आधार हैं, वैसे ही तन्त्र भी दर्शन और उपासना के स्तम्भ हैं तान्त्रिक शब्द 'यथा नामा तथा गुणाः, ठीक ही हैं अर्थात् 'छोटा मन्त्र बड़ा काम' दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि जैसे आधुनिक शस्त्रों में आणविक आयुध सर्वाधिक प्रभावकारी हैं उसी प्रकार मन्त्रों में तान्त्रिक मन्त्र अधिक प्रभावकारी व छोटे हैं। उदाहरणार्थ वैदिक उपासना में विष्णु की प्रसन्नतार्थ जपनीय मन्त्र है—

ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।

स भूमिं सर्वतः स्पृष्ट्वात्यतिष्ठ द्दशांगुलम्॥

तान्त्रिक उपासना में इसी विशद एवं दुरूह मन्त्र का रूप इतना लघु और सरल हो गया है—

'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय'

अथवा

'ॐ नमो नारायणाय'

किन्तु प्रभाव दोनों का समान है। जिस प्रकार राष्ट्र की औद्योगिक उन्नति यंत्रीकरण पर निर्भर है ऐसे ही परमार्थिक उन्नति तंत्रीकरण पर निर्भर है।

तांत्रिक उपासना का आदर वैदिक परम्परा से होता आया है और भारतीय संस्कृति में यह सदैव ग्राह्य रही है—

सांख्यं योगः पन्चरात्रवेदाः पाशुपतं तथा।
अतिप्रमाणान्येतानि हेतुभिर्न विरोधयेत् ॥
(याज्ञवल्क्य)

सांख्यं योगः पंचरात्रं वेदाः पाशुपतं तथा।
कृतान्त पन्चकं विद्धि ब्रह्मणः परिमार्गले ॥
(विष्णु धर्मोत्तर)

उमापतिर्भूतपतिः श्रीकन्ठो ब्रह्मणः सुतः।
उक्तवानिदमव्यग्रो ज्ञानं पाशुपतं शिवः ॥
पन्चरात्रस्यकृत्नस्य वक्ता तु भगवान स्वयं ॥
(महाभारत)

इस प्रकार बहुत से परमार्थिक तंत्रों की गणना आदर से की गई है। नारद पंचरात्र, शिवसूत्र, परशुराम सूत्र चतुः षष्टि तंत्र महामायातंत्र शम्बर तंत्र, योगिनी तंत्र जालशम्बर तंत्र, तत्त्व शम्बर तंत्र, भैरवाष्टक, बहुरूपाष्टक (दुष्कतंत्र) यामलाष्टक (ब्रह्मयामल, विष्णु, रुद्र, लक्ष्मी, उमा, स्कद, गणेश, जाद्रथ यामल), चन्द्रज्ञान तंत्र, वासुकी तंत्र, महासम्मोहन तंत्र, महोच्छुष्मतंत्र, वातुलतंत्र, वातुलोत्तर तंत्र हृद्भेदतंत्र, भेदतंत्र गुह्यतंत्र, कामिककलावाद तंत्र, कलासार तंत्र कुब्जिकामत, ततोत्तरतंत्र, वीणा तंत्र, ओतल तंत्र, त्रोतलोत्तर तंत्र, पन्चामृत तंत्र, रूपभेद तंत्र भूतोड्डामर तंत्र, कुलसार तंत्र, कुलोड्डीश तंत्र, कुलचूड़ामणि तंत्र, सर्वज्ञानोत्तर तंत्र, महाकाली मत, महालक्ष्मीमत, सिद्धयोगेश्वरीमत, देवरूपिकामत, सर्ववीरमत, बिमलामत, पूर्व तंत्र, पश्चिमतंत्र, दक्षतंत्र, उत्तर तंत्र, निरुत्तर तंत्र, वैशेषिक तंत्र, ज्ञानतंत्र, वीरावलि तंत्र, अरुणेश तंत्र, मोहिनीश तंत्र, विशुद्धेश्वर तंत्र, दक्षिणामूर्ति संहिता, सनत्कुमार संहिता इत्यादि

को विशुद्ध माना है। इनमें से तो कुछ ग्रन्थ आज प्राप्य भी नहीं हैं। यह ग्रन्थ विशुद्ध परमार्थिक साधना के हैं।

इनके अलावा भी महोग्रताराकल्प, वाराहीमहामाया तंत्र, शारदा तिलक, गुप्त साधन तंत्र, कुलार्णव तंत्र सिद्धान्तशेखर, कौलावली तंत्र, निरुत्तर तंत्र, दुर्गारहस्य, श्यामारहस्य, योगिनी तंत्र, पिंगलामत, तोडलतंत्र, गन्धर्व तंत्र, फेत्कारिणी तंत्र शाक्तानन्द तरंगिणी, वामकेश्वर तंत्र, मंत्रमहोदधि, मंत्र महार्णव, कालोत्तर तंत्र, यंत्रचिन्तामणि, कामरत्न, हरिभक्तिविलास डामर तंत्र नील तंत्र, हरगौरी तंत्र शैवागम तंत्र, मुण्डमाला तंत्र, लक्ष्मी तंत्र आदि सैकड़ों प्रामाणिक तंत्र ग्रन्थ हैं।

मूल रूप में तंत्र शास्त्र की उत्पत्ति वेदों से है चारों वेद तंत्र विद्या से ओत-प्रोत हैं और अथर्ववेद तो पूर्णतः तंत्र विद्या का ग्रन्थ है लेकिन इसकी कुंजी उपलब्ध न होने से व्यावहारिक नहीं रह गया है। फिर भी यह तंत्र विद्या का आदि ग्रन्थ अनेक सिद्धियों से पूर्ण है।

इसी प्रकार पुराण भी तंत्र से अछूते नहीं हैं। शिव पुराण, ब्रह्मवैवर्त पुराण, देवी पुराण, कालिका पुराण, मार्कण्डेय पुराण, अग्नि पुराण इनमें मुख्य है।

यह स्वीकार्य है कि तंत्रों का कुछ अंश परमार्थिक साधना एवं उपासना से पृथक् अभिचार से भी सम्बन्धित है, किन्तु तंत्रशास्त्र में यह भाग केवल आपत्काल के हेतु व्यवहार्य था। परन्तु आत्मसंयम के अभाव तथा स्वार्थपरक वृत्तियों के कारण धीरे-धीरे परमार्थिक तंत्र का महत्व कम होता गया और उपासकों ने वाम मार्ग अथवा अभिचार (मारण, मोहन, वश्य, स्तंभन, उच्चाटन, आकर्षण यह ६ कर्म अभिचार या अष्टकर्म हैं) मूलक तंत्र को ही सर्वस्व मान लिया। इसी हेतु तंत्र शास्त्रों का यह अंश वेद विरुद्ध एवं त्याज्य कहा है—

वामंपाशुपतं सोमं लांगलं चैव भैरवं।
न सेव्यमेतत्कथितं वेदवाह्य तथेतरम्॥
कपालं पंचरात्रं च यामलं वाम मार्हतम्।
एवं विधानिचान्यानि मोहनार्थानि तानितु॥
पञ्चरात्रं भागवतं तथा वैखानशाभिधम्।
वेदभ्रष्टान् समुद्दिश्य कमलापतिरुक्तवान्॥

इसी कारण आचार्य शंकर ने ब्रह्मसूत्र भाष्य में पाँचरात्र प्रक्रिया और पाशुपत प्रक्रिया का खण्डन किया है, किन्तु परमार्थिक प्रक्रिया (जो नृसिंहतापिनी उपनिषद, गोपाल तापिनी, राम तापिनी, आदि में है) का नहीं।

तंत्र शास्त्रों में सरल उपासना की क्रियाओं, उपास्यदेव का स्वरूप और आचरण, ध्यान का वर्णन है। साकारोपासना में जहाँ मूर्ति अथवा प्रतिमा में उपास्य का पूजन होता है, वहाँ तंत्र में उपास्य की पूजा यंत्र चित्रों में होती है, यह यंत्र ज्यामिति के आधार पर होते हैं और यह यंत्र एक देवता का एक ही नहीं, अपितु कामना भेद से प्रत्येक उपास्य देव के सहस्रों प्रकार के यंत्र बनते हैं।

तांत्रिक उपासना पद्धति से स्वामी रामकृष्ण आदि अनेकों सिद्धों को चमत्कारिक योग्यता प्राप्त हुई, उसका वर्णन यहाँ करना निरर्थक है। कहा जाता है कि सुविख्यात बौद्ध विश्वविद्यालय नालन्दा में तांत्रिक (तंत्रशास्त्र) शास्त्र का अध्ययन अध्यापन पाठ्यक्रम के अन्तर्गत एक प्रमुख अंग था। बाद में बौद्ध लोगों के तांत्रिक कार्यों का इतिहास साक्षी है।

संस्कृत ग्रंथों की तरह ही विदेशियों के आक्रमण काल में बौद्ध तथा जैन तंत्र ग्रंथों का भी लोप हो गया। प्राकृत भाषा में होने के कारण भी इन ग्रंथों का प्रचार कम हुआ और कुछ ग्रंथ तिब्बत चीन आदि विदेशों में चले गये। भारत सरकार की 'दुर्लभ बौद्ध ग्रंथ शोध योजना' सारनाथ, वाराणसी ने कुछ बौद्धतंत्र ग्रंथ अब प्रकाशित किये हैं, इनमें अनेकों बौद्ध तांत्रिक स्तोत्रों के अलावा मनुत्तरतंत्र, कालचक्र तंत्र, कृष्णयमारितंत्र, चण्डमहारोषणतंत्र आदि का पता चलता है।

तंत्रशास्त्रोक पंच मकार (मीन, मांस, मद्य, मुद्रा और मैथुन) सम्प्रति परमार्थिक उपासना में ग्राह्य नहीं हैं। कुछ लोगों का कथन है कि इन्हें भौतिक अर्थ में न लेकर आध्यात्मिक रूप में लेना चाहिए, किन्तु वस्तुतः इनका प्रयोग वाम मार्ग में ही होता है जिसने तांत्रिक उपासना को कुत्सित बना दिया है, और जन साधारण की तो बात ही क्या, शिक्षित लोगों में भी ''तंत्र'' के नाम पर भ्रान्ति उत्पन्न कर दी है। यह सब तंत्रों की उदात्त पद्धति और विशुद्ध आचार को न जानने का परिणाम है। यद्यपि तांत्रिक उपासना प्रत्येक देवता की है, किन्तु भारत में शाक्त, वैष्णव और शैव धर्मों की प्रधानता से इन तीन प्रकार के तंत्रशास्त्रों का ही बाहुल्य है। पश्चिम भारत, काश्मीर और दक्षिण भारत में शैव तंत्रों की, पूर्व भारत में शक्ति तंत्रों की, उत्तर और दक्षिण भारत में वैष्णव

तंत्रों की धूम रही। शक्ति तंत्रों में भी कौलाचार (उग्र) और समयाचार (सौम्य) दो मुख्य सम्प्रदाय हैं।

तंत्रों में भी द्वैत, अद्वैत तथा द्वैताद्वैत मत के ग्रन्थ हैं, शक्ति उपासक अधिकांशतः अद्वैतवादी हैं, इस मत से आराध्या देवी से एकता स्थापित करने पर ही पूजा का अधिकार प्राप्त होता है। कोई द्वैतवादी शक्ति (प्रकृति) और शिव (आत्मा) दो रूप मानते हैं, शिव काली के पैरों के नीचे दबे हुए दिखाये जाते हैं। यह इस बात का संकेत है कि पुरुष (आत्मा) रूप उदासीन होता है, और प्रकृति (शक्ति) ही सक्रिय होती है।

न शिवेन विना देवि न देव्या च विना शिवः ।
नानयोरन्तरं किन्चित् चन्द्र चन्द्रिकयोरिवः ॥

अद्वैत वादी कुछ उपासक तंत्रोक्त शिव शक्ति सम्वाद को स्वयं शिव द्वारा दो रूपों में (गुरु शिष्य) विभक्त होना मानते हैं—

गुरु शिष्यपदे स्थित्वा स्वयमेव सदाशिवः ।
प्रश्नोत्तर परैर्वाक्यैस्तंत्रं समवतारयत् ॥

जो भी हो निष्कर्ष एक ही है। गुरु (शक्ति) शिष्य (शिव) का समैक्य मानें या प्रकृति (शक्ति) आत्मा (शिव) का समैक्य मानें बिना गुरु के शिष्य का और बिना शिष्य के गुरु का, ऐसे ही बिना प्रकृति के पुरुष का और बिना पुरुष के प्रकृति का कोई अस्तित्व नहीं है। उसे द्वैत कहें या अद्वैत भाव एक ही है। इस सम्बन्ध में श्री शंकराचार्य का यह कथन यथार्थ है कि निष्कल, निर्गुण रूपी ब्रह्म (शिव) प्रकृति रूपा शक्ति के साथ संयुक्त होकर ही सृष्टि, स्थिति और लयात्मक कार्य में समर्थ होता है, यदि प्रकृति (शक्ति) का सहयोग न हो तो वह ब्रह्म स्वयं हिलडुल या स्वांस लेने की सामर्थ्य भी नहीं रखता—

शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं ।
न चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि ॥

ऐसे ही शक्ति से रहित मानव "शव" और शक्ति से युक्त मानव "शिव (ब्रह्म)" है क्योंकि शक्ति ही सृजनात्मक प्रकृतिरूपा है।

शैवमत में मुख्यतः आगमी और पाशुपत दो धारायें हैं। आगे चलकर आगमी मत शैवसिद्धान्त, प्रत्यभिज्ञा, वीरशैव और तामिल इन चार भागों में

विभक्त है। इसी प्रकार पाशुपत में भी पाशुपत, नकुलीश, कापालिक रसेश्वर व गोरखनाथी यह पांच उपमत हैं। इनमें कापालिक एक उग्रतांत्रिक सम्प्रदाय है। इस सम्प्रदाय के लोग माला, अलंकार, कुण्डल, चूड़ामणि, भस्म और जनेऊ यह ६ वस्तु धारण करते हैं। भवभूति के काव्य 'मालती माधव' के अनुसार इस मत का केन्द्र दक्षिण (श्रीशैल पर्वत) भारत में था। मद्य, मैथुन आदि पंच मकारों का सेवन, मुण्ड माला धारण, मृतक के कपाल (खोपड़ी) में भोजन, श्मशानवास आदि ही इस सम्प्रदाय का आदर्श है। एक कापालिक कहता है—

"मैं न मंत्र जानता हूं न तंत्र और न ज्ञान। मुझे केवल गुरु की कृपा चाहिए बस। हम मद्य पीते हैं, मैथुन का मजा लेते हैं, यही मोक्ष का हमारा सरल उपाय है।"

—राजशेखर कृत कर्पूरमंजरी १/२२

यह शैवतंत्र का विकृत रूप है।

वीरशिवाद्वैत या वीर शैव मत भी एक उग्र सम्प्रदाय है लेकिन इसमें वामाचार की विकृति नहीं है।

शैवमत के तांत्रिकों में 'गोरखनाथी' मुख्य हैं। गोरखनाथ जी के गुरु मत्स्येन्द्रनाथ शाक्त थे। गुरु श्री गोरखनाथ जी, निवृत्तिनाथ, ज्ञानेश्वर, त्र्यम्बकनाथ, गैनीनाथ आदि इस मत में अनेक तांत्रिक हुए हैं। लोकभाषा में गोरखनाथ जी के तंत्र-मंत्रों का आज भी व्यापक प्रचलन है।

वैष्णव मत के पांचों सम्प्रदाय तंत्र मत विशुद्ध परमार्थमूलक व दक्षिणाचारी हैं।*

तैंतीस करोड़ देवी देवता और भूत प्रेत

भारतीय उपासना में प्रमुख रूप से मान्य पंच देवताओं (शाक्त, वैष्णव, शैव, गाणपत्य और सूर्योपासक) से सम्बन्धित पांच सम्प्रदायों के अलावा भी अनेक मत एवं उपास्यदेव हैं। शिव, देवी, गणेश, सूर्य, विष्णु, के अनेक नाम, अनेक अवतार, अनेक रूप हैं। इस प्रकार इनके विभिन्न रूपों एवं नामों से तो उपासना होती ही है, इनके अलावा भी लाखों करोड़ों देवी देवता हैं। यजुर्वेद

---

* अधिक जानकारी हेतु देखें लेखक की रचना—'भारतीय संस्कृति गौतम से गांधी' तक।

में तैंतीस करोड़ तैंतीस लाख, तैंतीस हजार, तीन सौ तैंतीस देवी देवताओं का वर्णन है (३३/७), इन वैदिक साहित्य में मान्य देवताओं के अलावा भी अनेक लौकिक देवताओं का अस्तित्व और मान्यता समाज में है। दूसरी ओर देवी देवताओं से परे भूत, प्रेत, पिशाच, डाकिनी, शाकिनी, यक्षिणी, छल, खबीस, जिन्न, आदि की पैशाचिक उपासना भी तंत्र शास्त्र में है। यह साधक की श्रद्धा विश्वास व चरित्र पर निर्भर है कि कब कौन देवी देवता या भूत प्रेत सिद्ध कर ले।

भारतीय वाङ्मय में तैंतीस करोड़ देवी-देवताओं की मान्यता होते भी तंत्र शास्त्र का मुख्य साहित्य देवी (शाक्त) विष्णु (वैष्णव) और शिव (शैव) से सम्बन्धित है। इसमें शक्ति (देवी) तो विष्णु के साथ भी है और शिव के साथ भी है अतः यदि देखा जाय तो तांत्रिक साधना में मुख्य दो ही हैं :—

(अ) शक्ति + विष्णु (यह वैष्णव उपासना विशुद्ध दक्षिण मार्गी है, इसमें वामाचार की कोई प्रक्रिया या साधना नहीं है अतः यह लोककल्याणकारी व परमार्थिक साधना है।

(आ) शक्ति + शिव (इसमें दक्षिणमार्गी व वाममार्गी दोनों प्रकार की साधनायें हैं)।

मुख्य सम्प्रदायों (वैष्णव, शैव, शाक्त) से सम्बन्धित तांत्रिक साधना (आगम) के मुख्य ग्रंथ इस प्रकार है :—

वेदों से लेकर निबन्ध ग्रन्थों तक की परम्परा को निगम कहा जाता है। इसी के समान जो दूसरी आदि परम्परा है उसे आगम कहा जाता है। आगम के दो भाग हैं। दक्षिणागम, (समयमत) और वामागम (कौलमत) सनातन धर्म में निगम तथा आगम (दक्षिणागम) दोनों का प्रमाण माना जाता है। श्रुतियों में ही दक्षिणागम का मूल है और पुराणों में उसका विस्तार हुआ है। इस आगम-शास्त्र का विषय है—उपासना।

वैष्णवागम

देवता का स्वरूप, गुण, कर्म, उनके मन्त्रों का उच्चारण, मन्त्र, ध्यान, पूजाविधि का विवेचन आगम ग्रंथों में होता है। वैष्णवागम स्मृति के समान प्रमाण माना जाता है। वैष्णवागम में पांचरात्र तथा वैखानस—आगम ये दो प्रकार के ग्रंथ मिलते हैं।

पांचरात्र संहिताओं में से केवल तेरह संहिताएं मिलती हैं—

१—अहिर्बुध्न्य संहिता, २—ईश्वरसंहिता, ३—कपिन्जल संहिता, ४—जयाख्य संहिता, ५—पराशरसंहिता, ६—पाद्म तन्त्र, ७—बृहद्ब्रह्मसंहिता, ८—भारद्वाज-संहिता, ९—लक्ष्मी तंत्र, १०—विष्णु तिलक, ११—प्रश्नसंहिता, १२—विष्णु संहिता १३—सारस्वत संहिता।

शैवागम

भगवान शंकर के मुख से अट्‌ठाईस तन्त्र प्रकट हुए, ऐसा कहा जाता है। उपतन्त्रों को मिलाकर इनकी संख्या २०८ होती है। इनमें भी ६४ मुख्य माने गये हैं। किन्तु ये सब उपलब्ध नहीं हैं। शिवाचार्य के प्रमाणिक ग्रन्थ ये हैं—पाशुपतसूत्र, नरेश्वरपरीक्षा, तत्वसंग्रह, तत्वत्रय, भोगकारिका, मोक्ष कारिका, परमोक्षनिराशकारिका, श्रुतिसूक्तिमाला, चतुर्वेद—तात्पर्यसंग्रह, तत्वप्रकाशिका, सुतसंहिता, नादकारिका और रत्नत्रय।

वीरशैव—मत का प्रमाणिक ग्रंथ सिद्धान्तशिखामणि है।

प्रत्यभिज्ञामार्ग में ९२ आगम प्रमाण माने जाते हैं। उनमें से मुख्य तीन हैं—सिद्धान्ततन्त्र, नामकतन्त्र एवं मालिनीतन्त्र। इन तीनों को त्रिक कहते हैं। ये शिवसूत्र पर आधारित हैं। इनके अतिरिक्त स्पन्द सर्वस्व, शिवदृष्टि, परात्रिंशिका, त्रिवृत्ति, ईश्वरप्रत्यभिज्ञाकारिका, सिद्धित्रयी, शिवस्तोत्रावली, तन्त्रलोक आदि इस मत के प्रधान ग्रंथ हैं।

शक्तागम

इसमें सात्विक ग्रन्थों को तन्त्र या आगम, राजस को यामल तथा तामस को डामर कहा जाता है। सृष्टि के प्रारम्भ से ही राजस, तामस स्वभाव के प्राणी रहे हैं। दैत्य, दानव, असुर अथवा उनके समान स्वभाव के मनुष्यों को भी साधन तो मिलना ही चाहिए। अतः उनके लिए इन राजस-तामस ग्रन्थों का निर्माण हुआ। असुरों की परम्परा का मुख्य शास्त्र वामागम है।

शक्तागम में भी ६४ ग्रन्थ मुख्य माने जाते हैं। ये सब प्राप्त नहीं होते। कौलोपनिषद, अरुणोपनिषद, अद्वैतभावोपनिषद, कालिकोपनिषद, भावनोपनिषद, बह्वृचोपनिषद, त्रिपुरोपनिषद, तथा तारोपनिषद तन्त्रमत के प्रतिपादक माने जाते हैं। इनकी भी भाष्य-टीकाएं हैं।

मिश्र मार्ग के आठ ग्रन्थ हैं—चन्द्रक, ज्योत्स्नावती, कलानिधि, कुलार्णव, कुलेश्वरी, भुवनेश्वरी, बार्हस्पत्य दुर्वासस। समयाचार में "शुभागमपञ्चक" नाम से वशिष्ठ, सनक, शुक, सनन्दन एवं सनत्कुमार संहिताएं प्रमाण मानी जाती हैं।

वैसे तो शाक्ततन्त्रों की संख्या सहस्त्र से भी अधिक है, किन्तु उपलब्ध ग्रंथों में मुख्य ये हैं—कुलार्णव, कुल-चूड़ामणि, तन्त्रराज, शक्तिसंगमतन्त्र, काली-बिलास, ज्ञानार्णव, नामकेश्वर, महानिर्वाण, रुद्रयामल, त्रिपुरारहस्य एवं दक्षिणामूर्तिसंहिता, प्रपन्चसार। शारदातिलक में तांत्रिक रहस्यों का अच्छा संग्रह है। मन्त्रमहार्णव ग्रन्थ तो तन्त्र का विश्वकोष ही है।

श्री विद्या की दो संतान परम्परा में लोपामुद्रा—संतान परम्परा लुप्त हो गई।

इन आगम ग्रन्थों में भी बहुतों पर भाष्य, टीका कारिका तथा सार—संक्षिप्त ग्रन्थ हैं। तन्त्र ग्रन्थों में सूक्ष्म विद्याओं का बड़ा भारी भण्डार है। कहा जाता है कि इन उपलब्ध ग्रन्थों के अतिरिक्त कई सौ तन्त्र ग्रन्थ नेपाल में सुरक्षित हैं।

मिथ्याग्रंथ

पिछली शताब्दियों में कुछ चतुर विद्वानों (संस्कृत में रचना करने में सक्षम), प्रकाशकों ने कुछ ऐसे नये ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं जिनमें कहा गया है कि पुराने समस्त तंत्र तो कीलित हैं लेकिन इन ग्रंथों की सामग्री कीलित नहीं है, ऐसे ग्रन्थों में 'साबरतंत्र' आदि हैं, लेकिन यह ग्रन्थ प्रामाणिक नहीं हैं। अत: इन तन्त्रों के द्वारा सिद्धि की खोज धन और समय को नष्ट करना है।

आधुनिक तंत्र

आधुनिक तंत्र वह है जिनके द्वारा साधक वर्तमान काल में लाभ उठा रहे हैं और फलप्रद सिद्ध हुए हैं, इन तंत्रों का गढ़ नेपाल, आसाम तथा गढ़वाल मुख्य हैं। इन तंत्रों की सामग्री अभी तक कहीं प्रकाशित नहीं है। किसी साधक की सेवा से यदि वह प्रसन्न हो जाय तो शिष्य परम्परा में मौखिक रूप से ही यह ज्ञान प्राप्त हो सकता है। इतिहास के अनुसार महाभारत के बाद बौद्ध-कालीन भारत में तंत्रों की बड़ी धूम रही। भगवान महावीर बुद्ध के समकालीन थे, अत: उस युगानुसार जैन धर्म भी तंत्र से अछूता नहीं है। स्वयं भगवान

महावीर के जीवन चरित्र में ऐसी अलौकिक सिद्धियों का वर्णन है, जिन्हें आज का मानव असम्भव मानता है। उस युग में अनेक जैन तांत्रिकाचार्य हुए। इसी युग में हिन्दू सम्प्रदाय में भी कुछ तांत्रिकाचार्य सिद्ध पुरुष हुए, जिनमें गुरु मच्छेन्द्रनाथ और गुरु गोरखनाथ के नाम से एवं इनकी सिद्धियों से प्रत्येक जन साधारण परिचित है। नेपाल एवं गढ़वाल, कामाक्ष्या में जो तंत्र गुरु परम्परा से मौखिक रूप में अब तक प्रचलित हैं वे या तो गुरु गोरखनाथ से चले आ रहे हैं या भगवान महावीर के समय से, यह उन तंत्रों, मंत्रों से स्पष्ट हो जाता है। इस प्रकार के मौखिक, अप्रकाशित तंत्र कीलन से बचे हुये हैं, और इनमें सिद्धि विद्यमान है।

तंत्रशास्त्र के तीन भाग

मुख्य रूप से तंत्रशास्त्र तीन भागों में (तंत्र, यंत्र, मंत्र) विभक्त है। वैदिक सनातन, आगम, बौद्ध, जैन आदि सभी मत के तंत्रशास्त्रों में यह तीन रूप मिलते हैं।

(अ) मंत्र

इसका अर्थ स्पष्ट है। किसी मंत्र का जप या पुरश्चरण करके कोई सिद्धि प्राप्त करना अथवा किसी कामना के उद्देश्य से सफलता हेतु तथा अभिचार आदि कर्मों में किसी को हानि पहुँचाने के उद्देश्य से भी मंत्रों का प्रयोग होता है। तंत्रशास्त्र में मंत्र की मुख्य भूमिका है क्योंकि शेष तंत्र या यंत्र में भी मंत्र का उपयोग होता है केवल तंत्र या यंत्र सार्थक नहीं है। तात्पर्य यह है कि मंत्र से ही सभी तांत्रिक क्रियायें सम्पन्न होती हैं। उपासना होती है।

(आ) यंत्र

यंत्र दो प्रकार के होते हैं—

(१) वह यंत्र जो देवता या उपास्य के प्रतीक रूप में बनते हैं और जिनका पूजन किया जाता है। सामान्य रूप से जहाँ मूर्ति अथवा प्रतिमा में उपास्य का पूजन होता है, वहां तंत्र में उपास्य की पूजा यंत्र चित्रों में होती है, यह यंत्र ज्यामिति के आधार पर होते हैं और यह यंत्र एक देवता का एक ही नहीं, अपितु कामना भेद से प्रत्येक उपास्य देव के सहस्त्रों प्रकार के यंत्र बनते हैं। शक्ति उपासना का एक यंत्र यह है—

"मध्ये विन्दु विलिख्य, तद्वहि त्रिकोण, षट्कोण, वृत्त, अष्टपत्र, पुनः वृत्त, चतुर्विशतिदलं विलिख्य भूपुरेण वेष्टयेत्"

(२) दूसरे यंत्र वे हैं जो विभिन्न कामनाओं (रोग शान्ति, ग्रह शान्ति, धन लाभ, आत्म रक्षा, विजय आदि) के निमित्त कवच (ताबीज) में स्थापित कर गले में पहने जाते हैं अथवा भुजा, नाभि आदि पर बाँध दिये जाते हैं। ये यंत्र भोजपत्र आदि विभिन्न पत्रों में अष्टगंध गोरोचन आदि द्रव्यों से लिखकर, विभिन्न तांत्रिक द्रव्यों के साथ कवच में स्थापित कर प्रतिष्ठा प्राण प्रतिष्ठा आदि संस्कार करके पहने जाते हैं। इन यंत्रों में विभिन्न मंत्र भी लिखे जाते हैं. ज्यामितीय आधार पर रेखाचित्र खींचे जाते हैं, निर्दिष्ट स्थान पर निर्दिष्ट मंत्र या अंक लिखे जाते हैं (जैसे पन्द्रह का यंत्र बीसा यंत्र साबर यंत्र आदि)।

कुछ यंत्र टांगने के प्रयोग में भी आते हैं। विभिन्न यन्त्रों को सिद्ध करने की विभिन्न पद्धतियाँ हैं, नियमानुसार यंत्रों का निर्माण होने पर ही वे सफलतादायक होते हैं।

(इ) तंत्र

तंत्र में विभिन्न द्रव्यों, घटकों का प्रयोग कर मंत्र के द्वारा अभिमंत्रित किया जाता है और उन वस्तुओं का तंत्रशास्त्र की विधि से प्रयोग किया जाता है। जैसे -तेल, गुड़ या पानी मंत्र से अभिमंत्रित कर पिलाने से गर्भवती स्त्री को प्रसव काल में बिना कष्ट के सुख से प्रसव हो जाता है।

अथवा सरसों के बीज अभिमंत्रित कर कमर में बाँधने से गर्भपात का भय नहीं रहता।

अथवा विशेष तांत्रिक द्रव्यों से, विशेष मंत्रों के द्वारा हवन कर हुतशेष (होम से बचा हुआ शेष) खाने से वंध्या स्त्री पुत्रवती (पुत्रेष्टि यज्ञ) हो। इत्यादि।

भोज विद्या अर्थात् इन्द्रजाल भी इसी तंत्र के अन्तर्गत आता है।

कुछ कार्य केवल मंत्र से सिद्ध होते हैं, कुछ मंत्र तथा यंत्र से, कुछ मंत्र तथा तंत्र से और कुछ कार्यों में मंत्र-यंत्र-तंत्र तीनों का प्रयोग होता है।

बौद्ध तंत्रों में ओंकार (ॐ) को 'तार' कहा जाता है। बौद्ध तंत्र में शाक्त उपासना की भी व्यापक मान्यता है। तारादेवी (उग्रतारा, अर्थात् दश महाविद्याओं में एक) से सम्बन्धित विपुल साहित्य विद्यमान है। लंका श्याम आदि देशों में यह 'समुद्रदेवी' के रूप में पूज्य है। जिसका वर्णन महानिपात (महाजन जातक), शंखजातक (दश निपात) आदि में है।

जैन तंत्रों में भी 'भक्तामरतंत्र' नामक एक अच्छा तंत्र ग्रंथ है जो संभवत: प्रकाशित नहीं है, इसकी पाण्डुलिपि मैंने देखी है और अध्ययन किया है।

जैन तंत्र में परम उपास्य 'अरिहन्त' हैं, चौबीसों तीर्थ करों के साथ देवी रूप में प्रत्येक तीर्थंकर की शासना देवता (देवी) मानी जाती है श्वेताम्बर मतानुसार चौवीस तीर्थंकरों की देवियाँ इस प्रकार हैं :—

चक्रेश्वरी, अजीतबला, दुरितारि, काली, महाकाली, श्यामा, शान्ता, ज्वाला, सुतारका, अशोका, श्रीवत्सा, चण्डा, बिजया, अंकुशा, पन्नगा, निर्वाणी, बला, धारिणी, धरणप्रिया, नरदत्ता, गान्धारी, अम्बिका, पद्मावती और सिद्धाथिका।

सरस्वती के सोलह व्यूह माने गये हैं। यक्ष, यक्षिणी योगिनी, शासन देवी आदि की भी उपासना प्रचलित है।

दश महाविद्या

शाक्त उपासना में दशमहाविद्याओं के नाम से देवी के विभिन्न रूपों की उपासना होती है। उग्रतारा, धूमावती, छिन्नमस्ता, भुवनेश्वरी, मातंगी, त्रिपुरा, (त्रिपुर सुन्दरी या षोडशी) भैरवी, महाकाली, लक्ष्मी या कमला और दुर्गा या बगलामुखी यह दश महाविद्यायें या देवी के दश रूप हैं। तोड़लतंत्र (दशम उल्लास) के अनुसार यह दशदेवियाँ दश अवतारों की दश शक्तियाँ हैं—

तारा (कूर्म), धूमावती (वराह), छिन्नमस्ता (नृसिंह), भुवनेश्वरी (वामन), मातंगी (राम), त्रिपुरा (परशुराम), भैरवी (बलभद्र), काली (कृष्ण), लक्ष्मी (बुद्ध), और दुर्गा (कल्कि)। यह दश अवतार भारतीय वाङ्मय में मुख्य हैं।

इन दस महाविद्याओं के साथ पर तत्व के रूप में दस आराध्य रूपों की भी उपासना होती है। महाकाली + महाकाल, उग्रतारा + अक्षोभ्य, षोडशी या त्रिपुरा त्रिपुर सुन्दरी + पुरुष, भुवनेश्वरी + पंचवक्त्र, छिन्नमस्ता + त्र्यम्बक, भैरवी + कबन्ध, धूमावती + दक्षिणामूर्ति, बगलामुखी + एकवक्त्ररुद्र, मातंगी + मतंग, लक्ष्मी या कमला + विष्णु।

तांत्रिक साधना के पंचमकार

तांत्रिक उपासना में 'पंचमकार' का प्रयोग वाम मार्ग तथा दक्षिण मार्ग में भी होता है, केवल इनके स्वरूप एवं व्याख्या में भेद है। यथा—

मद्यं मांसंच मीनं च मुद्रा मैथुन मेवच।
मकार पंचक प्राहुर्योगिनां मुक्तिदायकम् ॥

अर्थात् मद्य, मांस, मीन, मुद्रा और मैथुन—यह पंच मकार साधना में सफलता व मुक्तिदायक हैं।

कतिपय उग्र एवं तामसिक (भैरवी, यक्षिणी आदि) उपासक इन पंचमकारों को इसी रूप से ग्रहण करते हैं। मद्यपान, मांस भक्षण तथा मांस (पशु) वलिदान, मीन (मछली) भक्षण, विभिन्न मुद्राओं का प्रदर्शन और मैथुन (संभोग) क्रिया इस साधना का अभिन्न अँग है। कतिपय साधनाओं में उपास्य के रूप में किसी महिला/कुंआरी कन्या को प्रत्यक्ष स्थापित कर उसके भग (जननेन्द्रिय) का ही देवी के रूप से पूजन और उसके साथ सम्भोग क्रिया करते हुए साधना की जाती है। ऐसे ही कुछ घोर तांत्रिक साधनाओं में व्यक्ति को स्वयं अपना मल' खाने व शरीर में धारण करने की क्रिया भी है। यहाँ पर पंचमकारों में मीन के स्थान पर 'मल' ग्राह्य है। लेकिन यह सभी साधनायें घृणित तथा अनिष्टकारी हैं। सामान्य सी त्रुटि (उपासना में अथवा नियम पालन में) होने पर इसमें साधक का जीवन एक क्षण में समाप्त हो सकता है। इस प्रकार की उपासना में जीवनचर्या के अति कठोर नियम हैं।

पंचमकारों का आध्यात्मिक स्वरूप

दक्षिण मार्गी तांत्रिक उपासना में भी 'पंचमकार' प्रयुक्त तो होते हैं लेकिन इन पंचमकारों का तात्विक अर्थ है, इसी तात्विक रूप में इन्हें ग्रहण किया जाता है।

(अ) मद्य—सामान्यत: इसका अर्थ मदिरा होता है, लेकिन आध्यात्मिक दृष्टि से कुण्डलिनी शक्ति जागृत कर ब्रह्मरन्ध्र ग्रन्थि से जो रस प्रवाहित

होता है, उस सुधारस को पीना ही मद्यपान है (न कि मद्य पीना या उपास्य को मद्य समर्पित करना)—

व्योमपंकज निष्पन्द सुधापान रतो भवेत् ।
मद्यपान मिदप्रोक्तमितरे मद्यपायिनः ।।

× × ×

यदुक्तं परमं ब्रह्म निर्विकार निरन्जनं ।
तस्मिन् प्रमदन ज्ञानं तन्मद्यं परिकीर्तितम् ।।

× × ×

ब्रह्म स्थान सरोजपात्र लसिता ब्रह्माण्ड तृप्तिप्रदा ।
या शुभ्रांशुकला सुधा विगलिता सा पाद योग्यासुरा ।।

इस प्रकार यह सिद्ध है कि ब्रह्मरन्ध्र के सहस्त्रार कमल से जो सुधारस प्रवाहित होता है, वही मद्य है ।

(आ) मांस—अज्ञान पशुता का प्रतीक है. अज्ञानी व्यक्ति को भी इसी कारण पशु कहा जाता है । पुण्य तथा पाप की परिभाषा करके ज्ञान रूपी शस्त्र से पाप रूपी पशु का संहार ही मांस भक्षण या (पशु) का बलिदान है । अर्थात् पाप रूपी पशु का ज्ञानरूपी शस्त्र से बध कर उपास्य में लीन होना ही मांसाहार या (बलि) है । एक मत यह भी है कि काम, क्रोध, लोभ और मोह यह पशु रूप हैं । जब तक साधक में काम, क्रोध, लोभ और मोह का भाव रहता है तब तक साधना में सफलता सम्भव नहीं है अतः ज्ञान एवं विवेक रूपी शस्त्र से पहले इन पशुओं का संहार करे, तभी सिद्धि सम्भव है और इन पशुओं का संहार ही मांसाहार, मांस बलिदान है :—

काम क्रोध सुलोभ मोह पशुकांश्छित्वा विवेकासिना ।
मांसं निर्विषयं परात्म सुखदं मुंचन्ति तेषां बुधाः ।।
—भैरव यामल

× ×

काम क्रोधो पशु तुल्यौ बलि दत्वा जपं चरेत् ।
—महानिर्वाण तंत्र

× ×

पुण्यापुण्य पशुंहत्वा ज्ञान खड्गेन योगवित्।
परे लयं नयेत् चित्तं मांसाशी स निगद्यते ।।

इस प्रकार सिद्ध है कि काम, क्रोध, लोभ, मोह का परित्याग (बलि देकर) कर साधना करना ही मांसाहार है।

विभिन्न ग्रंथों में इसकी अनेकधा व्याख्या मिलती है, तदनुसार मौन धारण, अपने सभी कर्मों को उपास्य को अर्पित करना ही मांसाहार है :—

मा सनोतिहि यत्कर्म तन्मांसं परिकीर्तितम्।
न च काम प्रतीकं तु योगिभिर्मांस मुच्यते ।।

× ×

मा शब्दाद्रसनाज्ञेया तदंशान् रसनाप्रिये।
सदायो भक्षयेद्देवि स एव मांस साधकः ।।

(इ) मीन—आध्यात्मिक दृष्टि से द्वेष, मद, मान, दम्भ, ईर्ष्या (मत्सर) और पैशुन्य—यह छह मछलियाँ साधक को विचलित करती हैं अतः साधना में सिद्धि मिलना सम्भव नहीं होता। साधक को चाहिए कि वह इन मछलियों को ज्ञान वैराग्य रूपी जाल से पकड़कर विद्या रूपी अग्नि में पकाकर भक्षण करे—

अहंकारो दम्भो मदपिशुनतामत्सर द्विषः।
षडेतान् मीनान्वै विषय हरजालेन विधृतान ।।
पचन् सद्विद्याग्नौ नियमित कृतिर्धीवर कृतिः।

इसके अतिरिक्त एक और भी व्याख्या है—मानव शरीर में इडा और पिंगला नामक दो नाड़ियाँ हैं जो गंगा और यमुना स्वरूप हैं। इन नाड़ियों में निरन्तर प्रवाहित श्वास—प्रश्वास ही दो मछलियाँ हैं। प्राणायाम क्रिया के द्वारा इस श्वास-प्रश्वास का भक्षण (रोकना) ही मत्स्य भक्षण है।

एक तीसरी व्याख्या भी है—

मत्समानं सर्वमूले सुख दुःखमिदं प्रिये।
इति यत्सात्विकं ज्ञानं तन्मत्स्यः परिकीर्तितः ।।

अर्थात् सुख तथा दुख में समान भाव रहना ही मत्स्य साधन है। गीता में इसी स्थिति को 'स्थितप्रज्ञ' होना कहा है। साधना का एक अंग है।

(ई) मुद्रा—आशा, तृष्णा, भय, घृणा, मान, लज्जा, कोप और जुगुप्सा यह आठ दोष तात्त्विक रूप में मुद्रा हैं। हिंसा से विरक्त रहकर इन आठ दोषों से मुक्त रहकर उपास्य के दिव्य भाव का चिंतन ही मुद्रा है। जब तक मनुष्य में यह आठ दोष विद्यमान रहेंगे, तब तक उसे सिद्धि या उपास्य का साक्षात्कार होना सम्भव नहीं है अतः साधक को चाहिए कि वह इन दुर्बलताओं पर विजय प्राप्त कर साधना करे—

आशा तृष्णा जुगुप्सा भय विषय घृणा, मान लज्जा प्रकोपाः।
ब्रह्माग्नावष्टमुद्राः पर सुकृतिजनः, पच्यमानः समन्तात् ॥
—भैरव यामल

एक अन्य मत के अनुसार कुसंग का त्याग करना ही मुद्रा है—

सत्संगेन भवेन्मुक्ति रसत्संगेषु वन्धनम्।
असत्संगमुद्रणं यत्तु तन्मुद्रा परिकीर्तिताः ॥

इसके अलावा ध्यानयोग द्वारा ब्रह्मरन्ध्र में उपास्य के चिंतन से कुण्डलिनी जागृत होने पर जो ज्ञान प्राप्त होता है—वही मुद्रा है।

सहस्रारे महापद्मे कर्णिका मुद्रितश्चरेत्।
अतीव कमनीयश्च महाकुण्डलिनी युतः ॥
यस्य ज्ञानोदयस्तत्र मुद्रासाधक मुच्यते ॥

(उ) मैथुन—इसी प्रकार मैथुन के भी तात्त्विक अर्थ हैं। उपास्य और उपासक का एकाकार होना (अर्थात् अपने में तथा उपास्य देवता में भेद न मानना) ही मैथुन है—

कुल कुण्डलिनी शक्तिः देहिणी देहधारणी।
तया शिवस्य संयोगो मैथुनं परिकीर्तितम् ॥

इसी की स्पष्ट व्याख्या करते हुए 'भैरव यामल' में कहा गया है कि मैथुन किसी स्त्री से सम्भोग नहीं अपितु सुषुम्णा नाड़ी का सहस्रदल ब्रह्मरन्ध्र में परमात्मा से मिलन का नाम है :—

या नाड़ी सूक्ष्म रूपा परमपदगता सेवनीया सुषुम्णा।
साकान्तालिंगनार्हा न मनुज रमणी वारयोषित् ॥
कुर्याच्चन्द्रार्क योगे युगपवनगते मैथुनं नैव यौनौ।
योगीन्द्रो विश्ववंद्यः सुखमयभवने तां परिष्वज्यनित्यं ॥

इस प्रकार पंचमकारों का तात्पर्य (मद्य, मांस, मीन, मुद्रा और मैथुन) अत्यन्त गूढ़ है। इनका अभिप्राय कदाचार से नहीं अपितु सदाचार और यौगिक क्रियाओं से है। प्राणायाम आदि क्रियाओं द्वारा चित्त पर नियंत्रण रखना, कुण्डलिनी जागृत करना, सुख-दुख आदि सभी अनुकूल तथा प्रतिकूल परिस्थितियों में समभाव रहने की क्षमता प्राप्त करना और साधना में बाधक दुर्गणों, दोषों, दुर्भावनाओं (अज्ञान, काम, क्रोध, लोभ, मोह द्वेष, मद, मत्सर, अभिमान, दम्भ, ईर्ष्या, पैशुन्य) पर विजय प्राप्त कर मौन साधना (व्यर्थ की वकवास न करना), कुसंग का परित्याग कर कुण्डलिनी द्वारा परमात्मा से साक्षात्कार का प्रयास करना ही पंचमकारों का उद्देश्य है।

वाममार्गी उपासना और अभिचार कर्म

दक्षिणमार्गी पारमार्थिक उपासना में जहाँ पंचमकारों का गूढ़ एवं आध्यात्मिक अर्थ है, वहीं वाममार्गी साधना में पंचमकारों को व्यवहारिक रूप में ही लिया जाता है। यथा—

(अ) मद्य—स्वयं मद्य पीना और उपास्य को मद्य अर्पित करना।

(आ) मांस—स्वयं मांसाहार करना तथा उपास्य को भी मांस (पशुबलि आदि) अर्पित करना। अपने शरीर से रक्त निकाल अर्पित करना।

(इ) मत्स्य—मछली खाना व उपास्य को अर्पित करना (कुछ अघोरपंथी कापालिक व यक्षिणी साधन आदि में 'मत्स्य' के स्थान पर 'मल' का भी प्रयोग होता है। यक्षिणी व भूत-प्रेतादि साधक कान आदि किसी स्थान में अपना मल रखते हैं और यह मल ही साधित आत्मा (भूत) और साधक के मध्य सेतु (एरियल) अर्थात् सन्देश सूत्र का काम करता है। मल ग्रहण भी किया जाता है।

(ई) मैथुन—इसका अर्थ स्पष्ट है। प्राय: साधक जिस वर्ण का हो, अपने से निम्न वर्ण की किसी महिला को वशीभूत कर यह क्रिया करता है। कुछ क्रियाओं में सम्भोग करते हुए साधना एवं जप का भी विधान है। ऐसी स्त्री के जननेन्द्रिय को ही देवी का रूप मानकर स्त्री की योनि का पूजन किया जाता है।

(उ) मुद्रा—विभिन्न प्रकार की मुद्रायें उपास्य को प्रदर्शित की जाती हैं. यह साधना एवं उपासना का एक अंग है। यह उपासना गर्हित कही जाती है। वाममार्गी साधना शाक्त सम्प्रदाय में विशेष रूप से प्रचलित है। दश महाविद्याओं में से कमला (लक्ष्मी) आदि कुछेक को छोड़कर शेष में वामाचार की उपासना ही मुख्यत: प्रचलित है। शैवों में भी कापालिक आदि अनेक सम्प्रदाय वाममार्गी उपासक हैं। इसके अलावा भूत, प्रेत, यक्ष, यक्षिणी, जिन्न आदि अनेक साधनायें सभी वाममार्गी ही होती हैं।

तंत्र सात्विक, राजस व तापस तीन प्रकार के हैं, इनमें तामसिक तंत्र ही वाम मार्ग है—

यतुक्तं मे मया तंत्रं त्रिविधं त्रिगुणात्मकं।
सात्विक तंत्र सम्प्रोक्तं राजसश्चापि कुत्रचित्॥
तामसंचापि सम्प्रोक्तं धीमांस्तस्मात्समुद्धरेत्।

—गन्धर्व तंत्र

वाममार्गी साधना में भी कौलिक, वाम, चीन, सिद्धान्त और शाबर यह पाँच मत हैं कौलिक के भी उत्तम, मध्यम व कनिष्ठ तीन भेद हैं—

कौलिकोऽगुष्ठतां प्राप्तो वामः स्यात्तर्जनी समः।
चीनः क्रमो मध्यमः स्यात् सिद्धांतीयोऽवरोभवेत्।
कनिष्ठ शावरो मार्गं इति वामस्तु पंचधा॥

पंचमकारों में मद्य, मांस, मत्स्य या मल तो स्पष्ट है। मैथुन के बारे में शाक्त अपने को पुरुष रूप (देव) और स्त्री को देवी (शक्ति) का रूप मानते हैं। इसी प्रकार शैव भी स्वयं को शिव और स्त्री को शक्ति रूप में मानते हैं। स्त्री को उपास्य देवी के रूप में मानते हुए उसके जननेन्द्रिय की पूजा करते हैं। इस साधना को 'श्यामापीठ' कहते हैं। इनका सम्बन्ध पति-पत्नी का नहीं अपितु शक्ति + ईश्वर या शक्ति + शिव का होता है। स्त्री को ही शक्ति रूप मानते हुए 'माँ' कहा जाता है क्योंकि 'शक्ति' ही माँ है लेकिन व्यवहारिक रूप में ऐसा नहीं होता है।

मुद्राओं की रचना हाथ की अँगुलियों के द्वारा की जाती है, और उपासना के समय इन क्रियाओं को करते हुए यह मुद्रायें प्रदर्शित की जाती हैं जैसे नैवेद्य अर्पित करते समय 'धेनुमुद्रा' का प्रदर्शन होता है। मुख्यतः चौबीस मुद्रायें होती हैं—सन्मुख, सम्पुट, वितत, विस्तृत, द्विमुख, त्रिमुख, चतुर्मुख, पंचमुख, षट्मुख, अधोमुख, व्यापकान्जलि, शकट, यमपाश, ग्रथित, सन्मुखोन्मुख, विलम्ब, मुष्टिक, मत्स्य, कूर्म, वराह, सिंहाक्रान्त, महाक्रान्त, मुद्गर और पल्लव, इनके अलावा वेनुमुद्रा, ज्ञान मुद्रा, योनि मुद्रा भी मुख्य हैं, धेनु मुद्रा को ही 'सुरभि मुद्रा' भी कहा जाता है।*

---

* मुद्राओं का ज्ञान लिखने या ग्रंथ पढ़ने से नहीं हो सकता, इन्हें गुरु के द्वारा ही सीखा जा सकता है। देखें—गायत्री तंत्र, वामकेश्वर तंत्र, गायत्री पंचांग आदि।

तंत्रशास्त्रों में उपरोक्त के अलावा भी सैकड़ों मुद्राओं का वर्णन मिलता है—अक्षमाला, परशु, गदा, बाण कुलिश, (वज्र), पद्म, धनु, कुण्डिका, दण्ड, शक्ति, असि, चर्म (ढाल), शंख, घंटा, कुम्भ, शूल पाश, चक्र, मूसल, शिरः, मुण्ड भुशुण्डी परिघ, आवाहन, लोकपाल, लिंग, निर्वाण आदि। जब कि सामान्य तथा वैदिक उपासना में मुद्रा आवश्यक नहीं है. केवल पाँच मुद्रा इस प्रकार प्रदर्शित करने को कहा गया है (गायत्री व्याख्या)—

(१) कनिष्ठा अनामिका अंगुष्ठ।
(२) अंगुष्ठ तर्जनी।
(३) अंगुष्ठ मध्यमा।
(४) अंगुष्ठ अनामिका।
(५) अंगुष्ठ कनिष्ठा।

ब्राह्मणों के लिये वाममार्गी साधना वर्जित

वाममार्गी साधना में पंचमकारों की ग्राह्यता के यह अर्थ नहीं हैं कि उसमें दुराचार या स्वच्छन्दाचार हो, अपितु इसमें अत्यन्त कठोर नियम हैं उन नियमों का पालन नितांत आवश्यक व अनिवार्य है। ब्राह्मणों के लिये तो पंचमकारों का व्यावहारिक उपयोग और वाममार्गी साधना सर्वथा वर्जित है।—

ब्राह्मणो मदिरां दत्वा ब्राह्मण्यादेवहीयते।
स्वगात्र रुधिरं दत्वा ब्रह्महत्या मवाप्नुयात्॥
—भैरव तंत्र

अर्थात् ब्राह्मण यदि उपासना में मदिरा का प्रयोग करता है तो वह ब्राह्मणत्व से च्युत हो जाता है और मांस या अपने शरीर से रक्त देने से ब्रह्म हत्या का दोषी होता है। इसी प्रकार 'मैथुन' का भी निषेध है, कहा गया है कि अपनी स्वकीय या परकीय किसी स्त्री का वशीकरण आकर्षण करके 'मैथुन' हेतु उपयोग न करे—

'स्वकीयां परकीयां वा नाकृष्य ब्राह्मणो यजेत' अपनी या किसी परस्त्री को पूजा का साधन कदापि न बनायें—

नर्तव्य न कर्तव्यं न कर्तव्यं कदाचन।
इदंतु साहसं देवि न कर्तव्यं कदाचन॥
—मेरुतंत्र

भाँग, धतूरा आदि मादक द्रव्यों का सेवन भी सर्वथा वर्जित है केवल सात्विक भाव से ही उपासना का आदेश है—

मादकं सकलं वस्तु वर्जयेत् कनकादिकं ।
द्रव्येण सात्विकेनैव ब्राह्मणः पूजयेच्छिवाम् ।*

कठोर साधना

वाममार्गी साधना वास्तव में अत्यन्त कठिन है जो शान्त एवं सौम्य स्वभाव ब्राह्मण के लिये अत्यन्त जटिल है वाममार्गी साधना में निडरता, संयम, योग आदि अत्यावश्यक है। इन्द्रिय लोलुप अजितेन्द्रिय के लिये वाममार्गी साधना सम्भव नहीं है, अतः कहा है—

वामो मार्गः परम गहनो योगिनामप्यगम्यः ।

मेरुतंत्र' में कहा है—

परद्रव्येषु योन्धश्च परस्त्रीषु नपुंसकः ।
परापवादे यो मूकः सर्वदा विजितेन्द्रियः ।
तस्यैव ब्रह्मणास्यात्र वामेस्यादधिकारिता ।।

× ×

अयं सर्वोत्तमोधर्मः शिवोक्त सर्वसिद्धिदः ।
जितेन्द्रियस्य सुलभो नान्यस्यानन्त जन्मभिः ।।

—पुरश्चर्यार्णव

तात्पर्य यह है कि जो व्यक्ति पराये धन, परस्त्री, परापवाद से रहित और जितेन्द्रिय हो, उन्हीं के निमित्त वाममार्गी साधना सफल होती है अन्यथा अनेकों जन्मों में भी सिद्धि सम्भव नहीं।

अधिकांश वाममार्गी साधनाओ, अभिचार कर्मों में रात्रि के मध्य में श्मशान में जाकर अकेले साधना की जाती है और यदि साधना में किसी कारण से कोई विघ्न हो गया, किसी प्रकार भय हो गया तो साधना तो भंग होती ही है इसके अलावा साधक की मृत्यु या उसके विक्षिप्त होने का भय होता है, जो सामान्य व्यक्ति से सम्भव नहीं।

---

* विस्तृत जानकारी हेतु देखें—तंत्र तत्व प्रकाश (स्वामी ताराचन्द जी तीर्थ कृत)।

इसी प्रकार इन्द्रिय संयम की बात है। जैसे कि वाममार्गी साधना में षोडशी या त्रिपुर सुन्दरी की साधना में षोडशी युवा कन्या के जननांग का पूजन कर उसके साथ संभोग करते हुए साधना की जाती है—लेकिन प्रतिबन्ध यह है कि यदि साधना में संभोग करते हुए वीर्य का क्षरण हो गया तो पूर्ववत् मृत्यु या विक्षिप्त होने का भय है। ऐसी क्रिया योगसाधक एवं जितेन्द्रिय व्यक्ति से ही संभव है।

जितेन्द्रिय होने के अनेकधा अर्थ है। पंचमकारों का व्यावहारिक सेवन करते हुए भी इस सम्बन्ध में विधिवत् नियम हैं। हर किसी स्त्री से, हर समय, स्वच्छन्द रूप से कामाचार सर्वथा वर्जित है, इसकी सीमा है। दूसरे इन्द्रिय संयम का अर्थ दशों इन्द्रियों के संयम से है। अभिचार कर्मों में [मारण, मोहन, वशीकरण, स्तंभन, उच्चाटन, आकर्षण] षटकर्मों को करते समय भी इन्द्रिय संयम परमावश्यक है। किसी व्यक्ति को अकारण हानि पहुँचाने, अपने स्वार्थ की सिद्धि हेतु अथवा किसी व्यक्ति से धन आदि लेकर दूसरे के निमित्त अभिचार कर्म करना गर्हित है। इसी हेतु संयम आवश्यक है अन्यथा तंत्र का दुरुपयोग होता है। अभिचार कर्म केवल ऐसी स्थिति में करने की आज्ञा है जब अपने शरीर पर आसन्न संकट आ पड़े और रक्षा का कोई साधन न बने, इस तरह की अनिवार्य एवं अपरिहार्य स्थिति में ही अभिचार की आज्ञा है। यद्यपि महाराज मनु का कथन है कि ब्राह्मण मंत्रशक्ति के द्वारा ही अपने शत्रुओं का विनाश करे—

श्रुतीरथर्वांगिरसि कुर्यादित्य विचारयन् ।
वाक्शस्त्रं व्र ह्मणस्यैव तेनहन्यादरिन् द्विज: ।।

परन्तु इसके यह अर्थ नहीं कि व्यक्ति अपने स्वार्थवश साधारण सी बातों पर अभिचार कर्म करे। अभिचार कर्म की निन्दा करते हुए कहा गया है—

न कुर्यादभिचारेच्छां वध्यादि कुहुक क्रियाम् ।
लक्ष्मणेनेन्द्रजित्कृत्याभिचार समये हतः ।।

अर्थात् साधक कभी भी अभिचार कर्म करने की इच्छा न रखे। एक तो यह पापमूलक कर्म है साथ ही अभिचार कर्म में कोई विघ्न हो जाने, कोई त्रुटि हो जाने पर स्वयं अपनी ही मृत्यु निश्चित है। इन्द्रजित [मेघनाद] ने लक्ष्मण को मारने की इच्छा से अभिचार कर्म [यज्ञ] प्रारंभ किया था और इस यज्ञ के भंग हो जाने से स्वयं मेघनाद को अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा। ऐसा ही

बृत्रासुर का भी हुआ। मेरे गुरु जी को तंत्रशास्त्र में असाधारण सिद्धियाँ प्राप्त थीं, लोग उनके पास आते थे और अपने व्यक्तिगत स्वार्थ एवं कार्यसिद्धि हेतु मारण, वशीकरण, आकर्षण आदि अभिचार कर्म करके उनका कार्य करा देने का आग्रह करते थे। अन्ततः गुरु जी ने अपना समस्त तांत्रिक साहित्य गंगा जी में जाकर बहा दिया, और तांत्रिक क्रिया से संन्यास ले लिया।

वाममार्ग में यद्यपि शक्ति, दश महाविद्यादि तथा शिव की उपासना भी प्रचलित है लेकिन इस साधना से कोई पारमार्थिक सिद्धि सम्भव नहीं है, सांसारिक सिद्धियाँ भले ही मिलें। वर्तमान में तो भूत पिशाच, जिन्न यक्ष, यक्षिणी, भैरवी आदि की उपासना मुख्यतः देखने को मिलती है और इस सिद्धि के द्वारा चमत्कार दिखलाकर जनता को प्रभावित कर अपने को सिद्ध तांत्रिक या स्वयं भगवान बताकर अपनी प्रतिष्ठापना ही मुख्य उद्देश्य है। इस प्रकार के कुछ साधक अभी भी मिल जाते हैं—

[अ] धनदा यक्षिणी साधन—इस साधना से साधक हवा में हाथ लहराकर इच्छानुसार रुपये उत्पन्न कर चमत्कार दिखा सकता है। यह रुपये वास्तविक होंगे। लेकिन साधक इस धन को निर्धन व उपस्थित लोगों में बांट तो सकता है, स्वयं इस प्रकार धन मंगाकर उपयोग नहीं कर सकता। लगभग तीस वर्ष पूर्व एक ऐसा ही साधक कुछ महिनों लखनऊ में रहा था।

[आ] कर्ण पिशाचिनी साधन—इस साधना में साधक को अपना मल कान या शिर में रखना होता है। साधना हेतु तीन माह तक रात्रि में श्मशान जाकर क्रिया करनी होती है। सिद्धि मिलने पर यही मल संदेश वाहक (एरियल) का काम करता है और सामने स्थित व्यक्ति के बारे में सम्पूर्ण भूत-कालिक एवं वर्तमान का बखान कर देता है।

[इ] हवा में हाथ लहराने पर जो वस्तु कहे [लौंग, इलायची, या जो कुछ माँगें] वह मंगा सकता है। जो वास्तविक होती है और खा सकते हैं। यहां भी अपने व्यक्तिगत प्रयोग हेतु इसका उपभोग नहीं होता।

[ई] आप कोई भी विचार या प्रश्न मन में सोचे—वह आपके हाथ में या किसी अन्य वस्तु पर छपकर स्वतः आ जायगा। प्रश्न का उत्तर भी यद्यपि छपकर आ सकता है परन्तु उसकी शत-प्रतिशत सत्यता सम्भव नहीं है, पचास प्रतिशत प्रश्न सत्य हो सकते हैं।

इसके अलावा और भी अनेक प्रकार की सिद्धियाँ हैं, जिनके द्वारा चमत्कृत कर जनसामान्य में अपने प्रति आस्था उत्पन्न की जा सकती है।

इस प्रकार की सिद्धियों में श्मशान से किसी भटकती आत्मा को अपने वश में करना होता है। अथवा किसी 'शव' के ऊपर आसन लगाकर साधना की जाती है। यह 'श्मशानपीठ' 'शवपीठ' कहा जाती हैं साधना के समय साधक तथा इस आत्मा [या यक्षिणी आदि के साथ] के मध्य कुछ अनुबन्ध होते हैं और इन अनुबंधों का पालन दोनों को करना होता है। यदि साधक कभी किसी कारण से इन नियमों का उल्लंघन करे तो उसकी मृत्यु भी सम्भव है। साधक भी आत्मा से जो चाहे ऐसा कार्य नहीं करवा सकता। साधना के समय जो अनुबन्ध हो जाता है केवल वही कार्य करेगा।

होता क्या है ? जब आपको हाथ हवा में लहराकर कोई वस्तु या रुपये मंगाने होते हैं तो साधक अपने अधीनस्थ उस 'आत्मा' का आवाहन करता है और आदेश देता है तदनुसार वह आत्मा वह वस्तु पलक झपकते ले आती है। क्योंकि 'आत्मा' प्रकाश की गति (१,८६,००० मील प्रति सेकिण्ड) से चलती है। उदाहरण के रूप में कोई साधक अपने भक्त से पूछता है—क्या खाना चाहते हो ? और भक्त कहे 'आगरा का पेठा' तो आत्मा साधक के हाथ उठाने तक आगरा के किसी दूकान से एक पेठे का टुकड़ा लाकर साधक के हाथ में रख देगा। यह वास्तविक होगा, लेकिन आगरा में किसी दूकान में एक पेठा कम हो जायगा।

इसी प्रकार कहीं से रुपये भी ला सकता है। जहाँ तक कर्णपिशाची द्वारा व्यक्ति के भूत व वर्तमान की घटनाओं का वर्णन है, यहाँ भी 'आत्मा' सभी के भूत व वर्तमान की घटनाओं से अवगत होती है। इसी प्रकार आपके वर्तमान विचार व प्रश्न से भी 'आत्मा' अवगत होती है।

ऐसे साधक जीवन या प्रश्न के भविष्य के बारे में भी बताते हैं लेकिन वह अक्षरशः सत्य नहीं होता। इसके बारे में मेरे सामने प्रत्यक्ष अनेक उदाहरण हैं। उन सबका यहाँ वर्णन करना संभव नहीं है। एक घटना १९७२ की है, एक उच्च-प्रशासनिक अधिकारी अवकाश प्राप्ति के पश्चात पुनः कहीं सेवा योजन के प्रति प्रयत्नशील थे। एक सिद्ध तांत्रिक के यहाँ पहुँचे। भूतकाल व वर्तमान की घटनाओं का सत्य वर्णन करते हुए तांत्रिक जी ने कहा—"आदेश होने को है, एक सप्ताह में सेवा का आदेश मिल जायगा।" लेकिन वह आदेश आज १९९४ तक

नहीं पहुँचा है संयोग से वह सज्जन ८० वर्ष की आयु में आज भी जीवित हैं। वर्तमान स्थिति का आकलन करते हुए वर्तमान प्रगति (सम्बन्धित कार्य की) को देखते हुए आत्मा जो संकेत देती है तदनुसार भविष्य के बारे में बताने की चेष्टा की जाती है। यह सत्य भी हो सकती है।

यदि वाममार्गी साधक के समक्ष कोई परमार्थसाधक उपस्थित हो तो तब यह 'आत्मा' प्रभावहीन हो जाती है और कार्य नहीं करती है।

तंत्रशास्त्र में दक्षिणाचार व वामाचार दो मार्ग हैं। दक्षिणाचार की साधना तो परमार्थिक व लोककल्याण की भावना से शुद्ध है लेकिन वाममार्गी साधना में मारण, मोहन, स्तंभन, वशीकरण, उच्चाटन, विद्वेषण—यह षटकर्म होते हैं और इस साधना में शत्रु के अनिष्ट के निमित्त तंत्र-मंत्रों का प्रयोग किया जाता है।

किसी पर तांत्रिक क्रिया की गयी है या नहीं यह प्रत्यक्ष देखने पर अथवा जन्मपत्री के आधार पर ज्ञात किया जा सकता है।

शत्रु के अभिचार से कैसे बचें ?

ध्यान रखने योग्य बात यह है कि इस प्रकार के हानि पहुँचाने वाले अभिचार में शत्रु का मल मूत्र, बाल, नाखून, पादतल की धूल, पहने हुए वस्त्र आदि प्रयुक्त होते हैं अतः कोई शत्रु आपके प्रति कोई तांत्रिक क्रिया न कर सके एतदर्थ आवश्यक है कि आप उपरोक्त मामलों में सावधान रहें और शत्रु को आपका मल, मूत्र, बाल, नाखून, पादतल की धूल, वस्त्र आदि प्राप्त न हो सकें अपना राशिनाम भी गुप्त रखें। यथा—

(अ) मलमूत्र किसी शौचालय में ही करें, ताकि उसे कोई प्राप्त न कर सके (ऐसे शौचालय में जहाँ मल उठाने की व्यवस्था न हो)।

(आ) अपने बाल घर में किसी अन्य व्यक्ति की उपस्थिति में ही कटवायें, ताकि आपके बाल किसी के हाथ न पड़ें (प्रायः शत्रुगण आपके नाई से सम्पर्क कर बाल प्राप्त कर सकते हैं)।

(इ) नाखून काटकर ऐसी जगह डालें जहाँ से कोई प्रयोग न कर सके।

(ई) यदि वस्त्र धोने को धोबी को या लाण्ड्री में देते हैं तो पहले घर में खाली पानी से धोकर दें ताकि पहने हुए (पसीना लगे) वस्त्र किसी को प्राप्त

न हो सके। यहाँ भी विरोधी आपकी लाण्ड्री या धोबी से सम्पर्क कर आपका अहित कर सकते हैं।

(उ) घर से बाहर निकलें तो नंगे पांव न निकलें, ताकि पांव की धूल कोई प्राप्त न कर सके, अन्यथा नंगे पाव जहाँ पैर रखेंगे, वहाँ की मिट्टी उठाकर अभिचार हो सकता है।

(ऊ) आपका जन्मकुण्डली का राशिनाम गुप्त रहना चाहिए। तंत्र-मंत्र राशिनाम पर अधिक चलते हैं, अतः राशि नाम गुप्त रखकर प्रचलित नाम भिन्न रखना चाहिए। बहुत से व्यक्ति यत्र-तत्र कुण्डली दिखलाते फिरते है जो उचित नहीं है। जन्मपत्री हमेशा अपने विश्वस्त व्यक्ति को तथा एक ही व्यक्ति को दिखलानी चाहिए। यत्र-तत्र जन्मपत्री दिखलाने से आपका राशिनाम शत्रु तक पहुँच सकता है। प्रायः इसका लोग लाभ उठाते हैं। एक सत्य घटना है, किसी का राशिनाम पता करना था, सुदूर दूसरे नगर से वह लखनऊ पहुँचा और बहुत ही चतुरता से पहले उसने ज्ञात किया कि उस व्यक्ति के यहाँ किस पण्डित का आना जाना है? एक दिन एक बड़ा सा मिष्ठान्न का डिब्बा व फलों की टोकरी लेकर पण्डित जी के यहाँ पहुँच गया और बात-बात में बहाने से उसका राशिनाम पता कर लिया।

अतः अपने तथा अपने पारिवारिक जनों के बारे में उपरोक्त सावधानियां रखने से शत्रुकृत अभिचार से बचा जा सकता है।

गुरु महिमा और दीक्षा ग्रहण विधि

गुरु का स्थान सदैव, सर्वथा आदरणीय एवं महत्वपूर्ण रहा है, यहाँ तक कि यदि ईश्वर और गुरु के महत्व एवं प्राथमिकता पर विचार किया जाय तो गुरु को ही प्राथमिकता प्राप्त है, क्योंकि 'गुरु' के द्वारा ही ईश्वर की प्राप्ति होती है ऐसे ही भाव को जो ज्ञान के उच्च आयाम में स्थित हो संत कबीर ने इस प्रकार व्यक्त किया है—

गुरु गोविन्द दोनों खड़े काके लागूं पाँव।
बलिहारी गुरु आपने जो गोविन्द दियो बताय ॥

वास्तव में गुरु जो ज्ञान देता है उससे लोक-परलोक दोनों सुधरते हैं। शिक्षा एवं ज्ञान के अभाव में मनुष्य पशु के समान है, शिक्षा एवं ज्ञान ही एक ऐसा माध्यम है जिससे मनुष्य पशुता से मानवत्व को प्राप्त करता है। यह ज्ञान सांसारिक व्यवहार, आजीविका की दृष्टि से तो अत्यावश्यक एवं अनिवार्य है ही साथ ही पारलौकिक दृष्टि से आध्यात्मिक उन्नति एवं मोक्ष का साधन भी ज्ञान ही है।

केवल शिक्षक या गुरुमंत्र देने वाला व्यक्ति ही गुरु नहीं है, अपितु जिस किसी से भी प्रत्यक्ष या परोक्ष किसी भी प्रकार का ज्ञान या प्रेरणा प्राप्त होती हैं, वे सभी गुरु हैं। ज्ञान के चार माध्यम माने गये हैं—देखना, सुनना, लिखना और पढ़ना। अतः लिखने-पढ़ने के अलावा भी हम जो कुछ देख या सुनकर ज्ञान प्राप्त करते हैं, अनुभव करते हैं, इन सबका जो भी माध्यम है, वह 'गुरु' पद की गरिमा रखता है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए भारतीय आचार्यों ने कहा है कि प्रेरणा देने वाला, सूचित करने वाला, वाचक, दर्शक, शिक्षक और बोधक— छह प्रकार के गुरु होते हैं लेकिन उपरोक्त पद गुरुओं मे बोध कराने वाला गुरु ही सर्वप्रथम है, अन्य पाँच मात्र कार्यभूत हैं—

प्रेरकः सूचकश्चैव वाचको दर्शकस्तथा।
शिक्षको बोधकश्चैव षड़ेते गुरवः स्मृता ॥

क्योंकि बोध कराने वाले गुरु से ही आत्म साक्षात्कार, मोक्षएवं ईश्वर की प्राप्ति होती है, अत: आचार्यों का कथन है कि गुरु मंत्र और ईश्वर यह एक ही के पर्यायवाची नाम हैं, यह तीनों एक हैं—

यथा घटश्च कलश कुम्भश्चैकार्य वाचका: ।
तथा मंत्रो देवताश्च गुरुश्चैकार्य वाचक: ॥

वास्तव मे गुरु ज्ञान का साकार रूप होता है गुरु ऐसा तेजपुंज है जिससे शिष्य का सभी पाप संशय और अज्ञान दग्ध हो जाता है। गुरु को ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों का स्वरूप माना गया है—

गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु: गुरुदेवो महेश्वर: ।
गुरु: साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नम: ॥

गुरु में निश्चय ही यह तीनों भाव रहते हैं। सर्वप्रथम ब्रह्मा रूप में गुरु शिष्य का निर्माण करता है, तदन्तर विष्णु रूप में शिष्य का भरण पोषण करता है और अन्त में शिव रूप में शिष्य के समस्त अज्ञान को नष्ट कर देता है।

गुरु शब्द ही अत्यन्त महत्वपूर्ण है इसकी विद्वानों ने विशद व्याख्या की है कुल चूड़ामणि ग्रन्थ के अनेसार 'गु' यह अन्धकार का प्रतीक है और 'रु' अन्धकार का निरोधक है, अत: जो अन्धकार और अज्ञान से बचाता है, वही गुरु है।

एक अन्य व्याख्या के अनुसार 'ग' यह ज्ञान भण्डार का प्रतीक है और 'र' यह अज्ञान व पाप का नाशक है, 'उ' इन दोनों में प्रयुक्त होता है जो शुभ एवं कल्याण का प्रतीक है।

गु शब्दस्त्वन्धकार स्यात् रु शब्द स्तन्निरोधक. ।
अन्धकार: निरोधत्वात्, गुरु इत्यभिधीयते: ।
गकारात् ज्ञान सम्पत्ति रेफ़: पापस्य दाहक: ।
उकारात् शिव तादात्म्यं दद्यादिति गुरु स्मृत: ॥

यामल तंत्र के अनुसार 'ग' सिद्धि एवं सफलता का, 'उ' शक्ति का और 'र' अज्ञान एवं पाप के विनाश का प्रतीक है। अत: जिस सिद्धि और सफलता से अज्ञान एवं पाप का नाश होता है, उस शक्ति का नाम गुरु है—

ग कार: सिद्धिद: प्रोक्तो रेफ़: पापस्य दाहक: ।
उ कार: शक्ति इत्युक्त स्त्रितयात्मा गुरु स्मृत: ॥

इसके अलावा भी गुरु शब्द की अनेक व्याख्यायें हैं। उन सबका आशय यही है कि 'गुरु' ज्ञान का प्रतीक एवं अज्ञान का निरोधक है।

गुरु-शिष्य सम्बन्ध

गुरु तथा शिष्य के परस्पर सम्बन्धों एवं योग्यता पर ध्यान देना आवश्यक है। न तो हर कोई गुरु बनने का अधिकारी है और न हर कोई व्यक्ति शिष्य बनने योग्य ही होता है।

मंत्र देने तथा मंत्र देने के बारे में तंत्रशास्त्र में कठोर नियम हैं। यदि शिष्य शान्त क्रोधहीन जितेन्द्रिय न हो तो कभी बिषम स्थिति में धैर्य से बिचलित होकर क्रोध से, अथवा लोभ के कारण अपनी स्वार्थ सिद्धि के हेतु वह मंत्र का दुरुपयोग कर दूसरे को हानि भी पहुँचा सकता है, मारण आदि कुप्रयोग कर सकता है, विषयों, वासनाओं की तृप्ति हेतु दुःप्रयोग कर सकता है, अतः शिष्य को गीता मे वर्णित 'स्थितप्रज्ञ' होना आवश्यक है—

सुखे-दुःखे समेकृत्वा लाभो-लाभो जयाजयो इत्यादि।

शिष्य की परीक्षा गुरु को एक वर्ष तक अपने पास रखकर करने का आदेश है, एक साल की परीक्षा के बाद यदि शिष्य को योग्य समझा जाय, तभी उसे मंत्र देने का आदेश है—

गुरुत्वा शिष्यता वापि तयोर्वत्सर वासतः।*
सद्गुरुः स्वाश्रमे शिष्यं बर्षं मेकंपरीक्षयेत्॥
(सार संग्रह)

गुरु ही देवता है

शिष्य को चाहिए कि वह गुरु को एक मनुष्य के रूप में न देखकर देवता के रूप में ही देखे और देवता के रूप में ही श्रद्धापूर्वक गुरु की सेवा करे। तंत्र-शास्त्र में ही क्या सभी विद्याओं तथा सभी शास्त्रों में ऐसी ही मान्यता है कि मंत्र के प्रति, तीर्थ के प्रति, ब्राह्मण या विद्वान के प्रति, देवता के प्रति, वैद्य के प्रति, गुरु के प्रति, ज्योतिष के प्रति जिस व्यक्ति की जैसी भावना होती है, वैसी ही सिद्धि मिलती है—

---

* ऐसा ही शिवपुराण में भी कहा गया है।

जेहि की रही भावना जैसी।
तिन्ह प्रभु मूरत देखी तैसी ।।

मंत्रे तीर्थे द्विजे दैवे दैवज्ञे भेषजे गुरौ ।
यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी ।।

जो व्यक्ति गुरु को मनुष्य, मंत्र को मात्र अक्षर, मूर्ति को पत्थर रूप में देखता है, उसे सिद्धि प्राप्त नहीं होती—

गुरौ मनुष्यं बुद्धिं च मंत्रे चाक्षर वाचिताम् ।
प्रतिमासु शिल बुद्धिं कुर्वाणो नरकं व्रजेत् ।।

गुरु कौन हो ?

शिष्य की ही तरह गुरु में भी उपरोक्त 'स्थितप्रज्ञ' के गुण होने ही चाहिए। इसके अतिरिक्त जो विचारणीय बात है वह यह है कि क्या किसी को भी गुरु बनाया जा सकता है ? या नहीं बनाया जा सकता।

शिष्य का कर्तव्य है कि नित्यप्रति देव पूजा के समान ही गुरुपूजा भी करे। गुरु के प्रत्यक्ष न होने पर मानसिक रूप से गुरुपूजा करे। विद्याध्ययन के बाद विद्यालय या गुरु गृह त्यागने के बाद भी जीवन पर्यन्त नित्य मानसिक रूप से गुरु का ध्यान एवं पूजा करता रहे। गुरु पूर्णिमा आदि पर्वों पर गुरु के दर्शन कर पुष्प वस्त्रादि से गुरु का सत्कार कर आशीर्वाद लेता रहे। तभी उपासना सफल होती है।

गृहस्थ को दीक्षा अपने ही वर्ण के या अपने से उच्च वर्ण के गृहस्थ विद्वान से ही लेनी चाहिए। गृहस्थ का सन्यासी से दीक्षा लेना अशुभ है, इससे परिवार में कलह एवं हानि, मृत्यु, धनक्षय आदि होकर घर सन्यासाश्रम ही हो जाता है—किन्तु क्या कहा जाय, आज का अनभिज्ञ समाज सन्यासियों से दीक्षा लेने और विषयासक्त लोभी, झूठे भस्म पोते सन्यासी गृहस्थों को शिष्य बनाने में तत्पर हैं।

गुरु का कर्तव्य है कि धन आदि किसी कामना से रहित होकर योग्य शिष्य का परीक्षण कर उसे ज्ञान की, मंत्र की, दीक्षा दे लेकिन इसके पूर्व अपना और शिष्य का हित अवश्य देखे।

पूर्वमात्महितं ज्ञात्वा सूरिणा गुरुसूरिणा ।
शिष्यस्यापि हितं चिन्त्यं दातुकामेनकांचनम् ।।

गुरु को विषय का निष्णात तो होना ही चाहिए लेकिन यदि गुरु गृहस्थ हो तो उत्तम है—

'सर्वशास्त्रार्थ वेत्ता च गृहस्थो गुरु रुच्यते'
—कुलार्णव तंत्रे

अर्थात् सम्पूर्ण शास्त्रों का ज्ञाता गृहस्थ ही सर्वोत्तम गुरु है। अन्यथा—सन्यासियों का सन्यासी, गृहस्थों का गृहस्थ, वैष्णवों का वैष्णव, शैवों का शैव गुरु हो सकता है। शाक्त मंत्र की दीक्षा तीनों दे सकते हैं। गृहस्थ व्यक्ति को सन्यासी से दीक्षा लेना (पुत्रहानि आदिकारक) शुभ नहीं है।

यतीनां च यती प्रोक्तो गृहस्थानां गुरुर्गृही।
वैष्णवे वैष्णवो ग्राह्यः शैवे शैवस्तथा पुनः।
शाक्तके त्रितयं विद्याद्दीक्षा स्वामी न संशयः॥

\+ \+

यतीदीक्षा गृही प्राप्य पुत्र पौत्रादि नाशनं।
पुत्रारोग्यं तथैश्वर्यं गृही दीक्षां च ब्राह्मणः॥

अतः गृहस्थ व्यक्ति को गृहस्थ ब्राह्मण से दीक्षा लेना शुभ कहा गया है।

अपने से उच्च वर्ण को दीक्षा देना निषिद्ध है। अपने से निम्न वर्ण को दीक्षा दी जाती है और अपने समान या उच्च वर्ण से दीक्षा ली जाती है। क्षत्रिय द्वारा ब्राह्मण को दीक्षा देना, वैश्य द्वारा क्षत्रिय को दीक्षा देना, अन्त्य वर्ण द्वारा वैश्य को दीक्षा देने का निषेध है—

क्षत्रियो ब्राह्मणे दद्यात्कुष्ठव्याधिः प्रजायते।
वैश्यस्तु क्षत्रियोदद्यात् क्रियाहानिः प्रजायते॥
शूद्रो वैश्याययोदद्यात् सर्वहानिर्भवे ध्रुवम्।

शिष्य को चतुर, बुद्धिमान जितेंद्रिय, शान्त, क्रोध रहित, सत्यवादी, निर्लोभी, विषयावासना एवं माया सें रहित, सन्तोषी, ईर्ष्या मद अहँकार अभिमान छल कपट आदि से रहित, दयालु, परस्त्री से विमुख होना चाहिए—

दक्षोजितेन्द्रियो धीमान् कोपानलजलोपमः।
सत्यवादी विलोभश्च मायामद विवर्जितः॥
मानत्यागी दयायुक्तः परनारी सहोदरः। इत्यादि।

शिव पुराण के अनुसार दीक्षा विधि—

साधक को चाहिए कि वह पहले तत्ववेत्ता आचार्य, जपशील, सद्‌गुण सम्पन्न, ध्यान योग परायण एवं ब्राह्मण गुरु की सेवा में उपस्थित हो, मन में शुद्ध भाव रखते हुए प्रयत्नपूर्वक उन्हें संतुष्ट करे। साधक अपने मन, वाणी, शरीर और धन से आचार्य का पूजन करे।

यथाशक्ति निश्छल भाव से गुरु की विधिवत पूजा करके गुरु से मंत्र एवं ज्ञान का उपदेश क्रमशः ग्रहण करे। इस तरह संतुष्ट हुए गुरु अपने साधक को जो एक वर्ष तक उनकी सेवा में रह चुका हो, गुरु की सेवा में उत्साह रखने वाला हो, अहँकार रहित हो और उपवासपूर्वक स्नान करके शुद्ध हो गया हो। पुनः विशेष शुद्धि के लिए पूर्ण कलश में रखे हुए पवित्र द्रव्ययुक्त मंत्र जल से नहला कर चन्दन, पुष्प माला, वस्त्र और आभूषणों द्वारा अलंकृत करके उसे सुन्दर वेशभूषा से विभूषित करे। तत्पश्चात पुण्याहवाचन और पूजा करवाकर समुद्र तट पर, नदी के किनारे, गोशाला में, किसी पवित्र स्थान में अथवा घर में सिद्धिदायक काल आने पर शुभ तिथि, शुभ नक्षत्र एवं सर्वदोष रहित शुभ योग में गुरु अपने उस शिष्य को अनुग्रहपूर्वक विधि के अनुसार ज्ञान दे। एकान्त स्थान में अत्यन्त प्रसन्नचित हो उच्च स्वर से उत्तम मंत्र का शिष्य से भली-भाँति उच्चारण कराये। बार-बार उच्चारण कराकर साधक को इस प्रकार आशीर्वाद दे—तुम्हारा कल्याण हो, मंगल हो शोभन हो, प्रिय हो' इस तरह गुरु मंत्र और आज्ञा प्रदान करे। इस प्रकार गुरु से मंत्र और आज्ञा पाकर एकाग्रचित हो संकल्प करके पुरश्चरणपूर्वक प्रतिदिन उस मंत्र का जप करता रहे। वह जब तक जीये, तब तक अनन्य भाव से तत्परतापूर्वक नित्य जप किया करे।*

---

* जो मंत्र ग्रहण किया जाता है उसे ग्रहण करने के बाद जीवनपर्य्यन्त (ज्वर ग्रस्त रोग ग्रस्त होने पर, सूतक आदि में भी) नित्यप्रति जप करना चाहिए। भले ही कम संख्या में हो। अन्यथा मंत्र शक्तिहीन हो जाता है।

तंत्र शास्त्र और योग साधना

'योग' शब्द के अर्थ व्यापक हैं। भारतीय षट्दर्शनों में योग भी एक दर्शन है जो ईश्वर से साक्षात्कार का एक साधन है। इसमें यम-नियम, आसन, प्राणायाम, धारणा, ध्यान आदि अष्टांग योग का अभ्यास करते हुए ईश्वर का साक्षात्कार होता है। योग सुस्वास्थ्य, नीरोगता, दीर्घायुदायक तो है ही परन्तु इसकी मुख्य क्रिया मानसिक चित्तवृत्ति को, विचारों को स्थिर कर किसी एक ही विषय पर लगाना है। योगशास्त्र के आदि प्रणेता महर्षि पतंजलि ने कहा है :—

"योगश्चित्त वृत्तिनिरोधः"

मन को नियन्त्रित करना ही योग है। वे कहते हैं 'ईश्वर और जीवात्मा में स्वरूप से कोई भेद नहीं है किन्तु जीवात्मा में जिस प्रकार अविद्या रागद्वेष आदि दोष हैं वह परमात्मा में नहीं हैं (१-२४)"।

अष्टाँग योग की यौगिक क्रियाओं द्वारा चित्तवृत्ति को नियन्त्रित करके उसे एक लक्ष्य पर केन्द्रित करना और अन्त में समाधि अवस्था को प्राप्त कर मोक्ष प्राप्त करना ही योगशास्त्र का चरम लक्ष्य है।

योग से सिद्धियाँ

योगदर्शन के अनुसार अष्टांग योग की क्रियाओं के साधन से अनेक प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं और इस प्रकार की लगभग तीस सिद्धियों का उल्लेख विभूतिपाद में किया है जैसे भूत भविष्य वर्तमान तीनों कालों की घटनाओं को देख पाने की क्षमता दिव्यदृष्टि, दिव्यश्रवण आदि अलौकिक दैवी शक्तियाँ जो असम्भव को सम्भव कर सके चमत्कार दिखा सके। किन्तु साथ भी यह भी सचेत किया गया है कि यह सिद्धियाँ वास्तविक लक्ष्य अर्थात् मोक्ष प्राप्ति में बाधक हो सकती हैं क्योंकि सिद्धियाँ प्राप्त होने पर यदि साधक जनता में (लौकिक प्रसिद्धि हेतु) इन सिद्धियों का चमत्कार दिखाने लगे तो मूल लक्ष्य को भूलकर पथभ्रष्ट होने का भय है। ऐसे में सिद्धियों का दुरुपयोग करने से सिद्धियाँ नष्ट भी हो सकती हैं। अतः परोपकार की दृष्टि से किसी अत्यन्त दुखी व पीड़ित व्यक्ति के दुख निवारण हेतु अनिवार्य परिस्थितियों में ही इन सिद्धियों का प्रयोग करे।

गीता के अनुसार 'समत्वं योग उच्यते (२।४८)' अर्थात् सुख-दुख, हानि-लाभ, यश-अपयश आदि में विचलित न होना, सभी अवस्थाओं में मन पर नियंत्रण रखते हुए समभाव स्थापित करना ही योग है।

तंत्र और योग

तंत्र शास्त्र और योग शास्त्र दो भिन्न शास्त्र होते भी दोनों परस्पर एक दूसरे के पूरक हैं। क्योंकि चमत्कारिक एवं दिव्य दैवी सिद्धियाँ तभी प्राप्त हो सकती हैं जब योग और तंत्र का सामंजस्य हो। यही कारण है कि महर्षि अरविन्द, रामकृष्ण परमहंस, गुरु मच्छेन्द्रनाथ, गुरु गोरखनाथ आदि सभी सिद्ध पुरुष तांत्रिक साधक होने के साथ ही सिद्ध योगी भी थे। क्योंकि बिना तंत्र-मंत्र साधना के यौगिक क्रियाओं को करने से यह सिद्धि प्राप्त नहीं हो सकती और बिना यौगिक क्रियाओं के मंत्र भी सिद्ध नहीं हो सकता।

पुरश्चरण तथा मंत्रसिद्धि में चित्त की एकाग्रता परमावश्यक है। मुख से मंत्र का उच्चारण करते हुए हृदय में मंत्र का भावार्थ चिन्तन कर भ्रुकुटि में उपास्य देवता का ध्यान करते हुए नासाग्र में दृष्टि स्थिर रखकर जप करना एक कठोर साधना है।

मुखे मंत्रा भ्रुवौ ध्यानं हृदि भावार्थ चिन्तनं।
नासाग्रे स्थिर दृष्टिश्च इतिसाधक लक्षणं॥

थोड़ा सा मन विचलित होते ही सारा क्रम विखण्डित हो जायगा। साधना भंग हो जायगी।

जिस प्रकार सरकस का एक खिलाड़ी अपने मन, शरीर पर नियन्त्रण रखते हुए व वाद्यंत्रों की धुन पर थिरक कर अपना संतुलन बनाये रखते कौतुक दिखाता है ठीक उसी प्रकार मंत्र साधना भी है। फिर मंत्र चैतन्य तभी होता है जब यौगिक क्रियाओं के द्वारा कुण्डलिनी जागृत कर ब्रह्मरंध्र में उसे चैतन्य किया जाय। सामान्यतः मन पर नियंत्रण पाना एक कठिन कार्य है, जैसा कि अर्जुन ने कहा था—इस चंचल मन पर नियंत्रण पाना अत्यन्त दुष्कर है जैसे कि वायु को रोकना—

चंचलं हि मनः कृष्ण प्रमाथिवलवद्दृढं।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्॥

मन स्थिर निरन्तर प्रयास एवं साधना से होता है, जिस प्रकार हवा रहित स्थान में दीपक की लौ स्थिर रहती है उसी प्रकार साधना में मन की एकाग्रता

आवश्यक है। यही कारण है कि योग और तांत्रिक साधना के प्रति लाखों में कोई एक व्यक्ति प्रयास करता है और ऐसे लाखों प्रयासकर्ताओं में से कहीं कोई एक-दो व्यक्ति सिद्धि को प्राप्त कर सकते हैं। अतः ऐसे सिद्ध व्यक्ति का मिलना अत्यन्त कठिन व दुर्लभ है—

"सः महात्मा सुदुर्लभः"

ऐसा सिद्ध संत जन कोलाहल से दूर शान्त एकान्त में साधनारत होगा, न कि 'सिद्ध तांत्रिक' के नाम से गली कूचे में बोर्ड लगाये, समाचार पत्रों में विज्ञापन छपाते फिरेगा। तंत्र के प्रति जन साधारण में बड़ी भ्रान्तियाँ हैं। ऐसे तथाकथित तांत्रिकों, धूर्तों से जनसाधारण को सावधान रहना चाहिए।

अष्टांग योग क्या है ?

यम नियम आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान तथा समाधि—योग के आठ अंग हैं।

१—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह यम है।

२—शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय तथा ईश्वर की शरणागति—नियम है।

३—स्थिरता और सुखपूर्वक देर तक बैठना—आसन है।

४—श्वास-प्रश्वास की क्रिया—प्राणायाम है।

५—इन्द्रियों का आहार विषय है, उनका त्याग करना—प्रत्याहार है।

६—शरीर के भीतर या बाहर मन को ठहराने का कोई आलंबन (आधार बनाना)—धारणा है।

७—निर्धारित धारणा में चित्त का लग जाना—ध्यान है।

८—जब चित्त अपने ध्येय में एवं धारणा में लीन हो जाय तब यही समाधि है।

अष्टांग योग में पहला और दूसरा यम और नियम हैं जो सदाचार और सद्‌गुण हैं, इनके बिना न चित्त शुद्ध होगा और न योग में मन प्रवेश करेगा। आज के कितने ही तथाकथित योगी एवं ईश्वर-दर्शन कराने के ठेकेदार यम-नियमादि के नाम भी नहीं लेते। वे साधक को सीधे समाधि में पहुँचा देने का षडयन्त्र करते हैं। परन्तु यम-नियमादि का पालन किये बिना योग-मार्ग में प्रगति होने की सम्भावना ही नहीं है।

यम में अहिंसा प्रथम है। महर्षि पतंजलि कहते हैं कि साधक में अहिंसा की पूर्ण प्रतिष्ठा हो जाने पर उसके प्रति दूसरे जीव भी बैर त्याग देते हैं। जो

सर्वदेश तथा सर्वकाल में मन, वाणी तथा शरीर से दूसरे को पीड़ा नहीं पहुँचाता, उसके द्वारा दूसरे उद्वेगित नहीं होते, अतएव दूसरे प्राणी भी उससे वैर नहीं करते।

जो सत्य बोलता है उसकी बात अर्थगर्भित और प्रामाणिक होती है। जो अस्तेय का पालन करता है, अर्थात जो किसी प्रकार की चोरी नहीं करता, उसके सामने मानो सभी रत्न उपस्थित हो जाते हैं। इसका अर्थ है कि जो लोभ छोड़ देता है उसको संतोष का अचल खजाना मिल जाता है, तो मानो उसके सामने सभी रत्न उपस्थित हो गये। ब्रह्मचर्य पालन करने से मन और शरीर में शक्ति आती है। परिग्रह एवं संग्रह का त्याग करने से पदार्थ पार दृष्टि होती है। अर्थात यह जड़ पदार्थों की आसक्ति से ऊपर उठ जाता है।

जब साधक पूर्णतया शौच अर्थात शुद्धता का पालन करता है, तब उसे अपने शरीर के अँगों से वैराग्य होता है और दूसरे के संसर्ग से अलग रहने का विचार जगता है। इसके अलावा शुद्धता के पालन से अंतःकरण शुद्ध होता है, मन प्रसन्न एवं एकाग्र होता है, इन्द्रियाँ वश में हो जाती हैं और स्वरूपसाक्षात्कार की योग्यता प्राप्त होती है।

जब पूर्ण संतोष की प्रतिष्ठा हो जाती है तब आत्यंतिक सुख प्राप्त होता है। आत्मशोधन रूपी तप से इन्द्रियाँ और शरीर शुद्ध हो जाते हैं। स्वाध्याय से आत्मदेव का बोध होता है।

नियम में ईश्वर की शरणागति बताई गई है। इससे समाधि-लाभ में सरलता बताई गई है। किन्तु योग-दर्शन में कहीं भी साधक का उद्देश्य न ईश्वर की प्राप्ति है तथा न ईश्वर प्राप्ति के उपाय की कोई चर्चा है। योग दर्शन का विषय ईश्वर है भी नहीं। उसका विषय तो है प्रकृति-पुरुष-विवेक तथा प्रकृति का त्याग करके पुरुष का अपने स्वरूप में स्थिति हो जाना। विद्वानों की राय है कि ईश्वरवादियों को प्रसन्न करने के लिए महर्षि पतंजलि ने योगशास्त्र में ईश्वर को पीछे से जोड़ दिया है। इसीलिए योग दर्शन का ईश्वर न सृष्टि रचता है, न जीवों को कर्मफल देता है। वह केवल मुक्त पुरुष है और मुक्ति की तरफ अग्रसर होने वाले साधकों का आदर्श मात्र है। यह अलग बात है कि आदर्श काल्पनिक है। वस्तुतः साधकों के आदर्श देहधारी वैराग्यवान संत पुरुष हैं।

अष्टाँगयोग में यम, नियम, आसन, प्राणायाम तथा प्रत्याहार—ये पाँच बहिरंग हैं और धारणा, ध्यान तथा समाधि अंतरंग हैं।

किसी एक आलंबन में मन ठहराना धारणा है, उसी धारणा में मन का एक तार चलते रहना ध्यान तथा अन्य सब कुछ भूलकर केवल धारणा में ही चित्त का लीन हो जाना समाधि है।

उक्त तीनों-धारणा-ध्यान-समाधि का एक विषय में होना 'संयम' कहलाता है। जब साधक में यह शक्ति आ जाती है कि वह जब चाहे तब किसी भी ध्येय में संयम कर ले, अर्थात वह जिसमें चाहे धारणा-ध्यान-समाधि कर ले यह 'संयम' पर विजय है। तब उसकी बुद्धि का प्रकाश हो जाता है। उसकी प्रज्ञा आलोकित हो जाती है। इसी को ऋतंभरा प्रज्ञा कहा जाता है।

यम, नियम, आसन, प्राणायाम तथा प्रत्याहार के पीछे के तीनों—धारणा, ध्यान तथा समाधि अंतरंग अवश्य हैं, परन्तु निर्बीज समाधि के ख्याल से ये भी वहिरंग ही हैं। क्योंकि उनमें सभी वृत्तियों की परिसमाप्ति होती है। वहाँ किसी भी आलंबन में चित्त को स्थिर करने का अभ्यास न करके चित्तवृत्ति का ही अंत कर दिया जाता है।

कुण्डलिनी जागरण और समाधि

योग साधना की परम सिद्धि समाधि अवस्था को प्राप्त होना तथा कुण्डलिनी जागृति है, इसी के साथ साधक को समस्त सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं। विधिपूर्वक अभ्यास करते-करते प्राणायाम क्रिया द्वारा यह सफलता प्राप्त होती है।*

कुण्डलिनी के बारे में कहा गया है—

ध्यायेत्कुण्डलिनीं शक्तिं विषतन्तु स्वरूपिणीम्।
प्रसुप्त भुजगाकारां सार्द्धत्रिवलयान्विताम् ॥
मुखे मुखं तु संयोज्य स्वयं भूलिंगवेष्टिनीम्।
वह्नीन्द्वर्कतडित्पुंजप्रभां चैतन्य रूपिणीम् ॥

अर्थात् एक सोये हुए साँप की आकार की कुण्डलिनी साढ़े तीन वलय की पलथी मारे मूत्रेन्द्रिय तथा गुदाद्वार के मध्य मूलाधार पर स्थित रहती है जो

---

* प्राणायाम की विधि तथा महत्व के बारे में देखें—'गीता का तात्विक विवेचन' —आचार्य भास्करानन्द लोहनी

सुषुम्ना नाड़ी का द्वार अवरुद्ध किये होती है। प्राणायाम क्रिया के द्वारा यह अवरोध हटाकर सुषुम्ना को गतिशील बनाना होता है।

इडानाड़ी स्थिता वामे पिंगला दक्षिणा मता।
तयोर्मध्यगता नाड़ी सुषुम्णा वंशमास्थिता: ॥
(मेरुदण्डे स्थिता)

दूसरे शब्दों में शिव (ब्रह्म या परमात्मा) का स्थान ब्रह्मरन्ध्र में है और शक्ति (कुण्डलिनी) का स्थान मूलाधार में है। शिव और शक्ति का मिलन अर्थात् कुण्डलिनी को जागृत कर सुषुम्णा नाड़ी द्वारा उसे ब्रह्मरन्ध्र तक ले जाना ही कुण्डलिनी जागृत करना और समाधि प्राप्त करना है।

स्वामी विवेकानन्द जी के अनुसार कुण्डलिनी का स्थान "गुदाद्वार के ऊपर पेडू के पास एक त्रिकोणाकार तंतुजाल (मूलाधार चक्र) तीन ग्रंथियों का है, इन ग्रंथियों से सुषुम्णा नाड़ी अवरुद्ध रहती है। इस ग्रंथि का भेदन कठिन है और इस क्रिया मे अत्यन्त पीड़ा तथा अन्य उपसर्ग भी सम्भव हैं।"

इन ग्रंथियों से सुषुम्णा नाड़ी को खोलना ही योग साधना का प्रमुख लक्ष्य है। प्राणायाम के द्वारा वायु खींचकर शरीर के ऊर्ध्वभाग को सिकोड़े और वायु को नीचे की ओर धकेले। नीचे की ओर (अपान वायु) जाती हुई वायु को भी अधोभागों को भी सिकोड़कर रोके रहे। इस प्रकार वायु को मूलाधार की ओर केन्द्रित करे, इस प्रकार की क्रिया से प्राण और अपान वायु के संघर्ष से, दबाव से जो ताप उत्पन्न होगा उससे प्रसुप्त कुण्डलिनी के आवेष्टन ढीले पड़ जायेंगे और वह सक्रिय तथा जागृत हो उठेगी तथा सुषुम्णा का मुख खुल जायगा और सुषुम्णा के माध्यम से चित्रिणी नाड़ी के सहारे कुण्डलिनी ऊपर को गतिमान होकर ब्रह्मरन्ध्र में जा पहुंचेगी। यह साधना अत्यन्त दुष्कर है, सहसा इसमें सफलता मिलना सम्भव नहीं है। इस क्रिया में प्राण वायु को इडा, पिंगला नाड़ियों से हटाकर सुषुम्णा नाड़ी के माध्यम से (जो मेरुदण्ड में है) ब्रह्मरन्ध्र तक ले जाना होता है। इस क्रिया में 'जलंधर' और 'मूलबन्ध' आसनों का प्रयोग होता है। तात्पर्य यह है कि प्राण और अपान वायु के मिलने से जो आन्तरिक ताप बनता है उससे ठीक ऐसी स्थिति बनती है जैसे कि खाली नली में नीचे ऊपर दोनों ओर से पम्प किया जाय और मध्यस्थ वायु को निकलने न दिया जाय, यह वायु गरम होकर कहीं भी बाहर निकलने का प्रयास करेगी और पम्प में कोई छोटा सा छिद्र होगा तो उसी पर दबाव पड़ेगा। इसी प्रकार प्राण व

अपान वायु रोकने से कुण्डलिनी पर दबाव पड़ने से उसके बन्धन ढीले पढ़कर सुषुम्णा का द्वार खुल सकेगा।

अथवा ऐसा समझें कि जिस प्रकार रक्तचाप मापक यंत्र की पेटी हाथ में बांधकर गुब्बारे से पम्प करने पर यंत्र का पारा ऊपर को चढ़ने लगता है उसी प्रकार प्राणायाम क्रिया द्वारा कुण्डलिनी जागृत होने पर सुषुम्णा नाड़ी के द्वारा प्राणवायु ब्रह्मरन्ध्र की ओर चढ़ने लगता है।

षटचक्र

मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक षट् (६) चक्र हैं जो एक बन्द कमल पुष्प के आकार के हैं। कुण्डलिनी जागृत होने पर जब सुषुम्णा द्वारा प्राणवायु ऊपर को गतिमान होता है तो उसे क्रमश: इन ६ चक्रों का भेदन करना होता है—

(१) मूलाधार में मूलाधार चक्र—मेरुदण्ड में सबसे नीचे स्थित पृथ्वीतत्व से सम्बन्धित है।

(२) लिंगमूल में स्वाधिष्ठान चक्र—जल तत्व से सम्बन्धित है।

(३) नाभि में मणिपूरक चक्र—यह प्रकाश और तेज का प्रतीक है।

(४) हृदय में अनाहत चक्र—यह वायु तत्व का प्रतीक है।

(५) कण्ठ में विशुद्ध चक्र या शून्य चक्र—आकाश तत्व का प्रतीक है।

(६) भौंहों के मध्य आज्ञा चक्र—यह मन का प्रतीक है।

इन षटचक्रों के बाद अन्त में हजार पखुड़ियों वाला 'सहस्त्रार चक्र' ब्रह्नरन्ध्र में स्थित है।*

इस प्रकार साततत्व (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन और आत्मा) का समावेश है, यही साततत्व सृष्टि के कारण हैं।

स्वामी विवेकानन्द जी ने कहा है—

"प्राणायाम का निरन्तर अभ्यास करने पर कुण्डलिनी जागृत हो उठती है। कुण्डलिनी के जागृत हो उठने से सम्पूर्ण स्वभाव ही बदल जाता है और ज्ञान का भण्डार खुल जाता है।"

इस प्रकार योग का आश्रय लेते हुए तांत्रिक साधना करने से शीघ्र सफलता प्राप्त होती हैं और असाधारण दैवी सिद्धियाँ भी प्राप्त होती हैं। क्योंकि दैवी सिद्धियाँ या तो योग से प्राप्त होती हैं या तंत्र से। जहाँ योग व तंत्र का संयोग हो वहाँ सिद्धि प्राप्त होना सुलभ होगा।

---

* मूलाधारे लिंगमूले नाभौ च हृदि कण्ठके।
भ्रुवोर्मध्ये ब्रह्मरन्ध्रे क्रमाच्चक्राणि चिन्तयेत्॥

मंत्र-शोधन

तंत्रशास्त्रों में मंत्रग्रहण का बड़ा विधान है, भले ही कितना ही सिद्ध मंत्र क्यों न हो—वह प्रत्येक के हेतु प्रयोग में नहीं लाया जा सकता। क्योंकि जो मंत्र अपने हेतु अनुकूल न हो वह कितना ही शुभ एवं सिद्ध क्यों न हो विपरीत कुफल, मृत्यु तक देता है। अतः किसी मंत्र की दीक्षा लेने या पुरश्चरण करने से पहले यह जानना आवश्यक है कि वह मंत्र अनुकूल है या नहीं। यद्यपि तंत्रशास्त्रों में इसका वर्णन है किन्तु वह जन सामान्य के हेतु सुलभ एवं सुबोध नहीं है। कई एक साधक तथा पुरश्चरणकर्ता विद्वान भी इस क्रिया की अनभिज्ञता से सिद्धि के स्थान पर विक्षिप्त (पागल) या मृत्यु को भी प्राप्त हो जाते हैं—कुछ ऐसी घटनायें मेरे समक्ष में हुई हैं।

मन्त्र मेलन

सर्व प्रथम नक्षत्रों के ध्रुवांक और वर्ण ज्ञान करना चाहिए।

नक्षत्र	अश्वि	भ.	कृ.	रो.	मृ.	आ.	पुन.
क्रमांक	१	२	३	४	५	६	७
वर्णाक्षर	अ, आ	इ	ई, उ, ऊ	ऋ, ॡ	ए	ऐ	ओ, औ
गण	देव	मनु	राक्षस	मनु	देव	मनु	देव
ध्रुवांक	२	१	३	४	१	१	२

नक्षत्र	पुष्य	अश.	म.	पूफा	उफा	ह	चि
क्रमांक	८	९	१०	११	१२	१३	१४
वर्णाक्षर	क	ख, ग	घ, ङ	च	छ, ज	झ, ञ	ट, ठ
गण	देव	राक्षस	राक्षस	मनु.	मनु.	देव	राक्षस
ध्रुवांक	१	२	२	१	२	२	२

स्वा	वि.	अ.	ज्ये.	मू.	पूषा	उषा	श्र.	ध.	श.	पू.	उ.	रे,
१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२१	२३	२४	२५	२६	२७
ड	ढ ण	त थ	ध	न प	ब	भ	म	य र	ल	व श	ष स	क्षत्र
		द		फ							ह	ज्ञ
देव	रा.	देव	रा.	रा.	म.	म.	दे	रा.	रा.	म.	म.	दे.
१	२	३	१	३	१	१	१	२	१	२	३	४

(१) इसके बाद यह विधि है कि अपने (दीक्षालेने वाले) नाम का प्रथम अक्षर किस नक्षत्र के कोष्ठक में है ? उस नक्षत्र को 'साधक का नक्षत्र' मानना चाहिए।

फिर यह देखना चाहिए कि मंत्र (जिस मंत्र को ग्रहण या जिसका पुरश्चरण करना हो) का पहला अक्षर किस नक्षत्र में है ? साधक नक्षत्र को अपना जन्म नक्षत्र कल्पित कर उससे मंत्र के नक्षत्र तक गिने। यह संख्या ९ से अधिक हो तो ९ से भाग देना चाहिए। शेष—

१—हो तो मृत्यु कारक।

२—शुभ

३—आयुनाश

४—शुभ

५—मृत्यु कारक।

६—शुभ

७—घातक।

८—शुभ।

९—शुभ।

इस प्रकार देखना चाहिए। यदि मंत्र अपने लिये शुभ हो तभी उसको ग्रहण या पुरश्चरण करना चाहिए।

एक उदाहरण :—किसी का नाम 'रघुनन्दन' है, और वह 'ऐं ...' मंत्र का पुरश्चरण करना चाहता है—कैसा रहेगा। चक्र में 'र' का धनिष्ठा नक्षत्र है।

अतः धनिष्ठा को साधक नक्षत्र, और 'ऐं' आर्द्रा में होने से आर्द्रा मंत्रनक्षत्र मानना होगा। अब धनिष्ठा को रघुनन्दन का जन्म नक्षत्र कल्पित कर धनिष्ठा को एक मानकर आर्द्रा पर्यन्त ११ संख्या हुई इसमें ९ का भाग देने पर शेष २ बचा, यह शुभ है। अतः इस मंत्र का ग्रहण या पुरश्चरण रघुनन्दन को शुभ है।

(२) इसके बाद दोनों नक्षत्रों का गण देखना चाहिए। दोनों का एक गण श्रेष्ठ, देव—मनुष्य मध्यम, देव—राक्षस अधम, और मनुष्य—राक्षस होना मृत्युकारक अशुभ है। जैसे यहां पर धनिष्ठा राक्षस, और आर्द्रा मनुष्यगण है, अतः इस रीति से रघुनन्दन को यह मंत्र शुभ नहीं हुआ।

(३) तीसरी विधि है, राशि चक्र का विचार।

मेष—अ, आ, इ, ई।

वृष– उ, ऊ ऋ।

मिथुन—ऌ।

कर्क—ए, ऐ।

सिंह—ओ, औ।

कन्या—अं, अः, श, ष, स, ह।

तुला—क, ख, ग, घ, ङ।

वृश्चिक—च, छ, ज, झ, ञ।

धन—ट, ठ, ड, ढ ण।

मकर—त, थ, द ध, न।

कुम्भ—प, फ, ब भ, म।

मीन—य, र, ल, व।

यह राशियों के वर्ण हैं। पहले यह देखें कि अपने नाम का प्रथम अक्षर किस राशि में है, उस राशि से वहाँ तक गिनें, जिस राशि में मंत्र का प्रथम अक्षर हो। यदि यह संख्या १, ५, ९, १०, २, ६, ११, ३, ७ हो तो शुभ, और ४, ८, १२ हो तो घातक फलसूचक अशुभ जानना चाहिए।

यहाँ पर 'रघुनन्दन' की मीन राशि, और 'ऐं........' मंत्र की कर्क राशि हुई, मीन से कर्क तक गिनने पर ५ संख्या हुई, अतः शुभ हुआ।

(४) कर्क, वृश्चिक, मीन—राशियाँ ब्राह्मण वर्ण हैं। मेष, सिंह, धन—क्षत्रिय। वृष, कन्या, मकर–वैश्य, और मिथुन। तुला, कुम्भ शूद्र हैं।

अपने वर्ण से मंत्र का वर्ण कम होना चाहिए, एवं मंत्र के वर्ण से साधक का वर्ण उच्च होना शुभ है। जैसे यहाँ मीन और कर्क दोनों राशियाँ एक ही वर्ण की हैं, अतः यह भी शुभ है।

(५) पांचभौतिक शोधन—

वायु	अ	आ	ए	क	च	ट	त	प	य	ष
अग्नि	इ	ई	ऐ	ख	छ	ठ	थ	फ	र	स
पृथ्वी	उ	ऊ	ओ	ग	ज	ड	द	ब	ल	ह
जल	ऋ	ॠ	औ	घ	झ	ढ	ध	भ	व	क्ष
आकाश	ऌ	ॡ	अं	ङ	ञ	ण	न	म	श	ज्ञ

यह देखें कि अपने नाम का प्रथमाक्षर किस तत्व में है ? जिसमें अपना नामाक्षर हो उसी में मंत्र का भी प्रथमाक्षर हो तो-दोनों का एक तत्व होने से शुभ जानना। यदि भिन्न हों तो—

(अ) पृथ्वी और जल—शुभ।

(आ) वायु और जल—सामान्य।

(इ) अग्नि और भूमि—सामान्य।

(ई) अग्नि और वायु—शुभ।

(उ) आकाश और जो भी हो-शुभ।

(ऊ) इनके अतिरिक्त शेष—अशुभ।

यहां पर यह उल्लेखनीय है कि शुभ या सामान्य हो तो ग्रहण करने योग्य है। अशुभ सूचक योग हो तो यह मंत्र शुभ नहीं।

उदाहरणार्थ यहाँ 'रघुनन्दन' अग्नितत्व और 'ऐं ......' भी अग्नितत्व है अत: दोनों एक तत्व के होने से शुभ है।

जो मंत्र इन पांचों प्रणालियों से अपने लिये शुद्ध शुभफल सूचक निकले, उसे ग्रहण करना चाहिए।

सिद्धसाध्यादि शोधन

इस प्रकार यह जान लेने पर कि यह मंत्र शुभ है, यह देखना भी आवश्यक है कि हमें इस मंत्र को सिद्ध करने में सफलता मिल सकेगी ? या यह हमारे वंश से बाहर की बात है ? और हमें यह मंत्र सिद्ध न हो सकेगा। इसको जानने के हेतु 'अकडम' चक्र प्रयोग में आता है।

अकडम चक्र

१२ ज्ञ अः ठ भ	१ अ क ड म	२ आ ढ ख य
११ त्र ब अं ट		३ र ण इ ग
१० क्ष फ औ ञ		४ ई त घ ल
९ ह ओ झ प	७ व ए छ ध	५ उ ङ थ व
८ ऐ न ज स		६ ऊ च द श

जिस कोष्टक में अपने नाम का पहला अक्षर हो, उस कोष्ठक से लेकर मंत्र का पहला अक्षर जिस कोष्ठक में हो वहां तक गिने। यह संख्या—

१, ५, ९ हो तो (सिद्ध) यह बड़े दीर्घकाल में सिद्ध होगा।

२, १०, ६ हो तो (साध्य) इसके सिद्ध होने में संदेह है।

३, ७, ११ हो तो (सुसिद्ध) शीघ्र एवं अवश्य सिद्ध हो।

४, ८, १२ हो तो (शत्रु) मृत्युकारक, अशुभ।

यह फल जानना चाहिए।

उदाहरणार्थ 'रघुनन्दन' ३ में है, और 'ऐं ......' ८ में, ३ से ८ तक गिनने पर ६ आया, अतः रघुनन्दन को यह मंत्र सिद्ध होने की आशा कम है। इत्यादि।

(२) अकथह चक्र।

कुछ ग्रन्थों में इसको जानने की एक दूसरी विधि है—

अ क थ ह	उ ङ प	आ ख द क्ष	ऊ च फ
ओ ड व	लृ झ म	औ ढ श	लॄ ज य
ई घ न	ऋ ज भ	इ ग ध	ॠ छ व
अः त स	ऐ ठ ल	अं ण ष	ए ट र

इस चक्र में सूक्ष्मरूप से विशद विचार है, जिसमें इन सोलह कोष्ठकों द्वारा विशेष विचार होता है विस्तृत जानकारी हेतु 'तंत्रसार' नामक ग्रंथ देखें। सामान्य रूप से इसमें भी ४।४ कोष्ठक का एक कोष्ठक लेकर चार खाने हैं साधक और मंत्र का प्रथमाक्षर एक ही कोष्ठक में हो तो सिद्ध, २ में साध्य, ३ में सुसिद्ध, ४ में शत्रु के पूर्ववत् फल हैं। जो मंत्र 'शत्रु' सूचक हो—ऐसे घातक मंत्र को कभी ग्रहण न करें—

नास्ति मंत्र समं मित्रं, नास्ति मंत्र समो रिपुः।

शंका समाधान : जन्मराशि या नामराशि

यहां यह शंका होती है कि उपर्युक्त विचार किस नाम से किया जाय? राशिनाम से या प्रसिद्ध नाम से? शास्त्रकारों ने इसका विचार प्रसिद्ध नाम से ही करने को कहा है, जिस नाम से पुकारने पर सोया हुआ मनुष्य जाग उठता है—

सिद्ध साध्यादि योगेषु मंत्रदाने विशेषतः।
प्रसिद्ध नाम गृह्णीयाद् प्रसिद्धो येन जागृवान्॥

मंत्र शोधन की आवश्यकता नहीं

कुछ मंत्रों का पूर्वोक्त प्रकार से शोधन करने की आवश्यकता नहीं है, कुलार्णव, सोमसिद्धान्त, रत्नसार, रुद्रयामल कुलमूलावतार आदि ग्रंथों में नृसिंह, वाराह, सूर्य; त्रिपुरा, कार्तिकेय, मृत्युंजय, नवार्ण, पंचाक्षर, पंचदशाक्षर त्र्यक्षर, द्व्यक्षर, एकाक्षर, द्वात्रिंशाक्षर मंत्रों के जो विद्वत्समाज में सामान्य रूप से खुले तौर पर प्रचलित एवं दैनिक व्यवहार में प्रयोग होते हैं—उनमें विचार आवश्यक नहीं माना है। किसी प्रयोजन विशेष से, जब किसी मंत्र की दीक्षा या पुरश्चरण करना हो तो तभी विचार की आवश्यकता होती है।

किन्तु फिर भी सामान्य मंत्रों का भी यदि विचार किया जाय तो अच्छा ही है।

स्वप्न में कोई आदेश मिले तो उस मंत्र का भी विचार नहीं होता।

षट्पद चक्र

साधक के हेतु यह मंत्र कैसा रहेगा;

इसको जानने के हेतु 'कुलमूलावतार तंत्र' में षट्पद चक्र का विधान है—

प्रथमपद—अ, ए, क, छ, ड, ध, म, ष,

द्वितीयपद—आ, ऐ, ख, ज, ढ, न, य, स,

त्रितीयपद—इ, ओ, ग, झ, ण, प, र, ह

चतुर्थपद—ई, औ, घ, ञ, त, फ, ल,

पंचमपद—उ, अं, ङ, ट, थ, ब, ब,

षष्ठपद—ऊ, अः, च, ठ, द, भ, श,

इसमें यह देखे कि अपने नाम का प्रथमाक्षर किस पद में है ? और मंत्र का प्रथमाक्षर किस पद में है ? अपने पद से मंत्र का पद कितनी संख्या में है—

एक में—सम्पदा दायक।

दो में—सम्पत्ति नाशक।

तीन में—धनलाभ।

चौथे में—पारिवारिक कलह।

पांचवें में—अशुभ फल सूचक।

छठे में—सर्वनाशकारी महा अशुभ।

उदाहरणार्थ—'रघुनन्दन' का नाम ३ पद में है, और 'ऐ..............' दूसरे पद में है। ३, ४, ५, ६, १, २ क्रमशः तीसरे से दूसरे पद तक छठा हुआ-अतः ठीक नहीं हुआ।

ऋण शोधन चक्र

मंत्रगुणक	१४	२९	२	१२	१५	६	४	३	८	८	९
स्वर	अ आ	इ ई	उ ऊ	ऋ	लृ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अ:
वर्ण	क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
वर्ण	ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ
वर्ण	ब	भ	म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह
शिष्यगुणक	१०	१	७	४	८	३	७	५	४	६	३

पहले मंत्राक्षरों को स्वर वर्ण विन्दु विसर्ग भेद से विभक्त करे तदनन्तर चक्र में प्रत्येक स्वर और वर्ण के जो मंत्रगुणक हैं (पहली पंक्ति में) उन सब का योगकर ८ का। भाग देकर शेष ज्ञान करे।

जैसे गं गणपतये नम:' यह मंत्र है।

=ग (२)+अं (८)+ग (२)+अ (१४)+ग (२)+अ (१४)+प (८)+अ (१४)+न (१५)+अ (१४)+य (१२)+ए (६)+न (८)+अ (१४)+म (२)+अ: (९)=कुल १४४ हुआ। इसमें ८ का भाग देने पर शेष ० मिला।

संयुक्ताक्षरों में भी इसी प्रकार क्रिया करे, जैसे ह्रीं' में (ह+र+ई+अं) आदि।

इसके बाद साधक (मंत्रग्रहण करने वाले) के नामाक्षरों की भी क्रिया करे, यहां स्वर तथा वर्णों का योग चक्र में प्रत्येक स्वर और वर्ण के नीचे लिखे शिष्यगुणकों का करे। जैसे मानलें कि साधक 'कैलास' नामक व्यक्ति है।

क (१०)+ऐ (७)+ल (३)+आ (१०)+स (८)+अ (१०) =४८ हुआ। इसमें ८ का भाग दिया तो शेष ८ ही (अर्थात् पूरा भाग गया) शून्य बचा।

इसमें विचार यह है कि जिसका शेष अधिक हो वह 'ऋणी' और जिसका शेष कम हो वह 'धनी' कहलाते हैं। इसके विपरीत मंत्रधनी और साधक ऋणी हो तो ठीक नहीं है ऐसा मंत्र नहीं लेना चाहिए।

यहाँ पर मंत्र का शेष और साधक का शेष एक ही है अत: कैलाश को यह मंत्र लाभप्रद नहीं है। इत्यादि,

उपर्युक्त सभी क्रियाओं से जो मंत्रशुभ हो वही सर्वथा ग्रहण करने योग्य है। कुछ विद्वानों का यह कथन भी है कि साधक जितनी सख्या से ऋणी हो उतने ही लाख मंत्र जप से सिद्धि होती है।

कुछ तांत्रिकाचार्यों का मत है कि जब अनेक बार शोधन करने पर भी शुद्धमंत्र न मिलता हो तो प्रस्तावित मंत्र के आदि में उपास्य देवता के अनुरूप मायाबीज (ह्रीं) श्रीबीज (श्रीं) या कामबीज (क्लीं) लगा लेना चाहिए।

एक मत यह भी है कि ऐसी स्थिति में प्रणव (ॐ) द्वारा मंत्र को संपुटित करने से मंत्र दोषमुक्त हो जाता है अर्थात् मंत्र के आदि और अन्त में ॐ का प्रयोग करें।

दीक्षा ग्रहण का मुहूर्त

सुयोग्य गुरु मिल जाने पर विधिवत् किसी मंत्र का ज्ञान प्राप्त करना 'दीक्षा ग्रहण' है और किसी भी मंत्र का जप करने से पहले दीक्षा ग्रहण करना और मंत्र के रहस्य विधि व उपयोग का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। छपी हुई पुस्तकों को देखकर स्वेच्छा से अथवा किसी अयोग्य अज्ञानी व्यक्ति से दीक्षा लेना अथवा मंत्र का जप करना पत्थर पर अन्न बोने के समान व्यर्थ है—

जप पूजादिकं सर्वं कार्यं दीक्षान्वितं नरैः।
अदीक्षिता ये कुर्वन्ति जप पूजादिका क्रियाः।।
फलं नैव भवेत्तेषां शिलायामुप्त बीजवत ।(वृ. दै)

क्योंकि दीक्षा के द्वारा ऐसे ज्ञान की प्राप्ति होती है। जिससे मानव के समस्त मलों का प्रक्षालन पूर्वक दिव्य ज्ञान की प्राप्ति होती है अतः किसी मंत्र या पूजा विधि के रहस्य का ज्ञान प्राप्त करने को 'दीक्षा' कहा गया है—

दिव्यज्ञान यतो दद्यात्कुर्यात्तापस्यसंक्षयम्।
तस्माद्दीक्षेति सा प्रोक्ता मुनिभिस्तत्त्ववेदिभिः।।
—यामले

दीक्षा ग्रहण हेतु शुभ समय का ज्ञान आवश्यक है, शुभ एवं शास्त्रोक्त समय में दीक्षा ग्रहण करने से ही शीघ्र सिद्धि प्राप्त होती है।

ऋतु विचार— ब्राह्मण को वसन्त में, क्षत्रिय को ग्रीष्म में, वैश्य को शरद ऋतु में तथा शेष को शिशिर ऋतु में दीक्षा लेना शुभ है। वसन्त ऋतु में पूर्वाह्न में, ग्रीष्म ऋतु में मध्याह्न में, शरदऋतु में संध्या समय और शिशिर ऋतु में अर्धरात्रि के समय दीक्षा ग्रहण करना शुभ है।

अथवा प्रत्येक ऋतु में मध्याह्न में दीक्षा ग्रहण कर सकते हैं।

मास विचार—वैशाख, श्रावण, आश्विन, कार्तिक, पौष, माघ और फाल्गुन मास दीक्षा ग्रहण को शुभ हैं। शेष चैत्र (अनिष्टकारक) ज्येष्ठ (मृत्युभय), आषाढ़ (बन्धुबान्धवों को कष्ट) भाद्रपद (दीनता) मार्गशीर्ष (असफलता) मास शुभ नहीं कहे गये हैं।

कुछ आचार्य चैत्र तथा मार्गशीर्ष मास भी शुभ मानते हैं और पौष को अशुभ। युक्ति संगत नहीं है।

शुभ तिथि—तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी और पौर्णमासी शुभ हैं। तृतीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी और पूर्णिमा विशेष शुभ हैं।

अमावास्या वर्जित है।

पक्ष—शुक्लपक्ष तृतीया से कृष्णपक्ष पंचमी तक शुभ है।

वार—सोम, शुक्र, गुरु और शनिवार शुभ हैं।

मतान्तर से रवि, सोम, बुध, शुक्र तथा गुरुवार शुभ होते हैं। इस प्रकार मंगलवार वर्जित है। रवि व शनि मध्यम हैं।

नक्षत्र—अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, मूल, पूर्वाषाढ़, उत्तराषाढ़, शतभिषा, पूर्वाभाद्र, उत्तराभाद्र तथा रेवती नक्षत्र शुभ हैं।

योग—प्रीति, सौभाग्य, ध्रुव, आयुष्मान, शुभ, सिद्धि, वृद्धि और हर्षण योग शुभ हैं।

करण—वव, वालव, कौलव और तैतिल करण शुभ हैं। इस प्रकार पंचांग (तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण) शुद्धि देखकर अर्थात् जिस दिन पाँचों का शुभ संयोग हो वह दिन दीक्षाग्रहण हेतु निर्धारित करे।

शुभ लग्न—वृष, सिंह, कन्या, तुला, धनु या मीन लग्न में दीक्षा ग्रहण शुभ है।

विष्णु मंत्र स्थिर (वृष, सिंह) लग्न में, देवी मंत्र द्विस्वभाव लग्न (कन्या, धनु, मीन) में और शिव मंत्र चर लग्न (तुला) में लेना शुभ है।

तारा शुद्धि—अपने जन्म नक्षत्र और प्रचलित नाम नक्षत्र के अनुसार (जन्म नक्षत्र ज्ञात न होने पर केवल नामानुसार नक्षत्र से) ताराशुद्धि देखना भी आवश्यक है। सम्पत्, क्षेम, साधक, मैत्र तथा अतिमैत्र तारा में दीक्षा ग्रहण करना शुभ है।

दीक्षा ग्रहण को विशिष्ट दिन

यदि उपरोक्त प्रकार से पंचांग शुद्धि या समय शुद्धि न मिल रही हो तो निम्न तिथियों में कभी भी मंत्र की दीक्षा ली जाती है। निम्न तिथियां विशिष्ट हैं, जिनमें पंचाँग आदि उपरोक्त शुद्धि न होने पर भी दीक्षा ले तथा दे सकते हैं। इन तिथियों को करोड़ों तीर्थों के समान देव पर्व कहा गया है: रामनवमी, निर्जला एकादशी, अक्षयानवमी (कार्तिक शुक्ल) मार्गशीर्ष शुक्ल तृतीया, पौष शुक्ल नवमी, चैत्र शुक्ल चतुर्दशी, अक्षय तृतीया, गंगा दशहरा, आषाढ़ शुक्ल पंचमी, श्रावण कृष्ण पंचमी, चैत्र शुक्ल त्रयोदशी, वैशाख शुक्ल एकादशी, ज्येष्ठ शुक्ल चतुर्दशी, श्रावण शुक्ल एकादशी, श्री कृष्ण जन्माष्टमी (रोहिणी युक्त) आश्विन शुक्ल अष्टमी फाल्गुन शुक्ल अष्टमी तथा ग्रहण के समय—

कार्तिके नवमी शुक्ला मार्गशीर्षे तृतीयकाः।
पौषे च नवमी शुक्ला चैत्रे काम चतुर्दशी॥
वैशाखे त्वक्षयाशस्ता ज्येष्ठे दशहरा तिथिः।
आषाढ़े पंचमी शुक्ला श्रावणे कृष्ण पंचमी॥
चैत्रे त्रयोदशी शुक्ला, वैशाखेकादशीसिता।
ज्येष्ठे चतुर्दशी शुक्ला आषाढ़े पंचमीसिता॥
श्रावणेकादशी भाद्रे रोहिणी संयुताष्टमी।
आश्विने च महाष्टम्यां कार्तिके नवमी शुभा॥
मार्गशीर्षे तृतीयायां फाल्गुनस्य सिताष्टमी।
एतानि देवपर्वाणि तीर्थ कोटि शतानि वै॥

* * * *

'ग्रहणे सर्वकाले च दीक्षादानं विधीयते'

ग्रहण के बारे में विशेष—सूर्यग्रहण में देवीमंत्र की दीक्षा और चन्द्रग्रहण में विष्णु मंत्र की दीक्षा वर्जित है। देवी रूप होते भी 'श्रीविद्यामंत्र' की दीक्षा सूर्यग्रहण में और विष्णु रूप होते भी 'सन्तानगोपाल' मंत्र की दीक्षा चन्द्रग्रहण में दे या ले सकते हैं—

न कुर्याच्छाक्तिकीं दीक्षामुपरक्ते विभावसौ।
न कुर्याद्वैष्णवीं दीक्षां यदि चन्द्रमसौग्रहः॥

श्रीविद्या मंत्र दीक्षा तु शस्ता सूर्यग्रहेपि च ।
दीक्षा गोपाल मंत्रणां चन्द्रस्य ग्रहेणेपि च ।

कुछ अन्य दिव्य पर्व—उपरोक्त दिव्य पर्वों के अलावा निम्न तिथियों में भी बिना पंचांग शुद्धि आदि देखे ही दीक्षा ग्रहण कर सकते हैं—

मन्वन्तरासु तिथिपु युगाद्यासु तथैव च ।
रवि संक्रमणे चैव दीक्षाकर्म प्रचक्षते ।।

अयने विषुवे चैव ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः ।
अमावास्यां सोमवारे भौमवारे चतुर्दशी ।।

सप्तमी रविवारे च सूर्यग्रह शतैः समाः ।

अर्थात् मन्वन्तरा तिथियों में, युगादि तिथियों में, सूर्य संक्रान्ति के दिन, सोमवती अमावास्या, मंगलवारी चतुर्दशी और रविवारी सप्तमी पुण्य तिथियाँ हैं। मन्वन्तरा तिथि यह हैं—चैत्र शुक्ल तृतीया और पौर्णिमा, ज्येष्ठ शुक्ल १४, आषाढ़ शुक्ल १०, १५, श्रावण कृष्ण ८, ३०, भाद्र शुक्ल ३, आश्विन शुक्ल ६, कार्तिक शुक्ल १२, १५, मार्गशीर्ष शुक्ल ७, पौष शुक्ल ११ और फाल्गुन शुक्ल १५।

युगादि तिथि हैं—वैशाख शुक्ल ३, भाद्रपद कृष्ण १३, कार्तिक शुक्ल ६ और माघ कृष्ण अमावास्या।

स्थान

गौशाला, गुरु के घर में, देव मन्दिर में एकान्त वन में, उद्यान में, नदी के तट पर आवला या वेलवृक्ष के नीचे, पर्वत शिखर पर अथवा गुफा दीक्षा लेने को उत्तम है।

०—०

मंत्र की परिभाषा तथा महत्व

विभिन्न स्वरों, व्यंजनों, शब्दों से विभिन्न सुर निकलते हैं, इन सुरों से एक नादशक्ति बनती है। विभिन्न नाद शक्तियों का पृथक-पृथक प्रभाव होता है उससे एक वातावरण बनता है जिससे शरीर, मन, मस्तिष्क तथा वाणी आदि पर प्रभाव पड़ता है। अतः विभिन्न कामनाओं, कार्यों के निमित्त विभिन्न प्रकार के मंत्रों का सृजन किया जाता है। जैसे रेडियो टी० वी० आदि से हास्यजनक प्रसारणों को देख व सुनकर मन प्रफुल्लित एवं आनन्दित होता है और वीभत्स एवं भयकारक शब्दों के निरन्तर प्रसारण व सुनने से भय का वातावरण बनता है, इसी प्रकार विभिन्न मंत्रों के निरन्तर पाठ व जप से एक शक्ति का निर्माण होता है।

मंत्र क्या है ? विभिन्न तंत्र ग्रंथों में इसकी व्याख्या इस प्रकार है :—

> मननं विश्व विज्ञानं त्राणं संसार बंधनात्।
> यतः करोति संसिद्धो मंत्र इत्युच्यते ततः॥
>
> —पिंगलामते।
>
> मननात्त्राणणाच्चैवमद्रूपस्याववोधनात्।
> मंत्र इत्युच्यते सम्यक् मदधिष्ठानतः प्रिये।
>
> —रुद्रयामले।
>
> गुप्तोपदेशतो मंत्री मननात्त्राणनादपि।
>
> —तन्त्रान्तरे।

अर्थात् समस्त ज्ञान को देने वाला और सांसारिक बन्धनों से मुक्त करने वाला, उपास्य देव के रूप में निरन्तर मनन एवं स्मरण करने योग्य शब्द ही मंत्र है। अर्थात् मकार से मनन, त्रकार से त्राण अर्थात रक्षा। तात्पर्य यह कि जिसके मनन (जप) से कार्य सिद्धि और रक्षा होती है वही मंत्र है।

वास्तव में 'मंत्र' की ध्वनि का कंपन रेडियो तरंगों के समान है, जिससे निरन्तर उच्चारण से एक दिव्यशक्ति का निर्माण होता है जो साधक और उपास्य में परस्पर सम्पर्क स्थापित करने में सहायक होती है। यही दिव्य शक्ति साधक के मस्तिष्क में अतीन्द्रिय शक्तियों का द्वार खोलने में सहायक है। पातंजल

योगसूत्र के अनुसार विभिन्न मंत्रों का विधि पूर्वक जप करने से देवता (उपास्य) के साथ वार्तालापादि व्यवहार की सिद्धि व साक्षात्कार होता है—

'स्वाध्यायादिष्ट देवतासं प्रयोगः (२/४४)'

इसी प्रकार 'ब्रह्मसूत्र' के 'भावंतु बादरायणोऽस्ति' की व्याख्या करते हुए शंकराचार्य (शांकरभाष्य) जी ने भी ऐसी सिद्धि की तुलना व्यास आदि के उस सामर्थ्य एवं दिव्य दृष्टि से की है—वे उपास्य देवों से प्रत्यक्ष व्यवहार करते थे जिसके कारण वे भूत भविष्य और वर्तमान (त्रिकाल) की घटनाओं से परिचित थे।

श्री हेमचन्द्राचार्य का कथन है —

तन्मन्त्राद्यषडक्षीणं यत्तृतीयाद्यगोचरम् ।
रहस्यालोचनंमंत्रोरहश्छन्नमुपह्वरम् ॥

अर्थात् जैसे राजनीति में विचारों को गुप्त रखकर शासन चलाया जाता है इसीकारण सत्ता संचालक को 'मंत्री' कहा जाता है।

तंत्र शास्त्र में प्रत्येक स्वर और वर्ण का गूढार्थ होता है, यदि तंत्रशास्त्र को देखा जाय तो इसका एक अलग ही शब्दकोश (डिक्शनरी) है, एक-एक स्वर और वर्ण में बड़े-बड़े शब्दों का अभिप्राय निहित होता है। जैसे सामान्य लेखन में बड़े-बड़े शब्द होते हैं और आशुलिपि (शार्ट हैण्ड) में एक शब्द मात्र एक रेखा के रूप में अंकित होता है। क्योंकि मंत्रों का अर्थ जन सामान्य से गूढ रहे और उसका आकार कम से कम हो ताकि मंत्रसाधना एवं जप—में कम समय लगे। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :—

श्रीं = पद्मा लक्ष्मीर्हरिण्याक्षी सरोरुह निवासिनी ।
कमला रुक्मिणी चैव नारायणप्रियाऽपि च ॥
ह्रीं = पराभूतिस्तथा लज्जा माया ऽपि सकला कृशा ।
समस्तापि तथा क्षामा कृत्रिमाण्यपराणितु ॥
ॐ = प्रणवं च तथा तारं त्यक्षंतोऽपि त्र्यम्बकः ।
त्रासतारव एतानि बीजानि प्रणवस्य च ॥

× × ×

ठः = पयोजं पंकजं पद्ममंवुजं नीरजं तथा ।
ठकारे पंच बीजानिह्यसत्यपराणि च ॥

अ = मानसं च मनोबीजं पैतामहमितिस्मृतं ।
अपरमनृतं ज्ञेयमकारस्य सुरेश्वरि ॥
कं = ककारं च शिरोबीज मूर्ध्वबीजं च वारुणम् ।
वेधोबीजं विधिर्ब्रह्मास्वयंभूवीज मेवच ॥
ओं = मोक्षबीज तथा मुक्तिर्ज्ञानं निर्वाण बीजकम् ।
कु = कुः पृथ्वी कुः कुचः कूलं कू कृत्याभूरपिप्रहिः ।
लं = तमो बीजं तथा ध्वान्तं मोह तिमिर मेवच ।
शं = कल्याणं चैव शर्मापि शं शुभं च चतुष्टयं ।
ञ = ञस्तु नासिकया भाषी वह्निरूपोभयानकः ।
स्वरभेदक रोगश्च वा जरा राशिरेवच ॥

इस प्रकार प्रत्येक स्वर, वर्ण संयुक्ताक्षर आदि का गूढ अर्थ निहित है। स्वरों के चार भेद तंत्रशास्त्र में वर्णित हैं—

चतुर्धामातृकाप्रोक्ता केवला विन्दुसंयुता ।
सविसर्गा सोभया च रहस्यं शृणु कथ्यते ।
विद्याकरी केवला च सोभया वृद्धिकारिणी ।
सविसर्गापुत्रदा च सविन्दुर्वित्तदायिनी ।

—तंत्रसार

अर्थात् केवल स्वर, विन्दुयुक्त, विसर्गयुक्त और विन्दु तथा विसर्ग दोनों से सहित। कामनाओं के अनुसार मंत्रों की रचना करते समय इनका विचार किया जाता है।

केवल स्वर विद्यादायक, विन्दु अर्थात् अंकार युक्त धनदायक, विसर्गयुक्त पुत्रदायक और बिन्दु तथा विसर्ग दोनों से युक्त स्वर वृद्धिकारक होता है। जैसे लक्ष्मी का बीजमंत्र 'श्री' है, इसमें बिन्दु लगादेने से (श्रीं) यह वित्तदायक अधिक प्रभावकारी हो जायगा। इसी प्रकार इसमें विन्दु व विसर्ग दोनों लगाकर (श्रीं:) धन में वृद्धिकारी रूप में भी जपा जा सकता है। यथा श्री = लक्ष्मी, श्रीं = लक्ष्मी की प्राप्ति, श्रीं: = लक्ष्मी की प्राप्ति और उसमें वृद्धि।

सच कहें तो 'मंत्र' अनन्त शक्ति के भंडार हैं। विभिन्न मंत्रों में विभिन्न देवताओं की शक्तियाँ गूढ़रूप से सन्निहित रहती हैं। जिस प्रकार किसी भी बीज में सूक्ष्मरूप से वृक्ष का सर्वांग (तना, शाखा, पत्ते, पुष्प, फल) छिपा रहता है जो प्रत्यक्ष देखने में नहीं आता लेकिन बीज बोने पर पूरा वृक्ष प्रकट हो जाता

है। इसी प्रकार प्रत्येक मंत्र में उपास्य देवता बीज रूप में अदृश्य रूप से विद्यमान रहता है और उसके जप से उसके विराट रूप का साक्षात्कार हो जाता है। इसी कारण यह 'बीजमंत्र' (ऐं, ह्रीं, क्लीं, श्रीं, इत्यादि) भी कहलाते हैं।

मंत्रों का वर्गीकरण

मंत्रों का वर्गीकरण विभिन्न प्रकार से किया जाता है। कामना विशेष के अनुसार तथा अन्य दृष्टियों से भी यह ज्ञान आवश्यक है।

मुख्यरूप से मंत्रों द्वारा नौ प्रकार के प्रयोग होते हैं—मारण, मोहन, वशीकरण, स्तंभन, उच्चाटन, आकर्षण, जृम्भण, और शान्तिक-पौष्टिक।

(अ) **कामनानुसार**—

(१) परमार्थ मूलक मंत्र—इस श्रेणी में वे मंत्र आते हैं जिसमें साधक की कोई सांसारिक कामना नहीं होती। साधक केवल अपने उपास्य का साक्षात्कार या मोक्ष की कामना रखता है और मंत्र के द्वारा केवल वन्दना मात्र करता है।

जैसे षडक्षर मंत्र, द्वादशाक्षर मंत्र आदि—

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय (भगवान वासुदेव को प्रणाम)।

ॐ नमः शिवाय (भगवान शिव को प्रणाम)।

'ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे'

(महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती रूपी त्रिगुणात्मक शक्ति रूपा दुर्गा को प्रणाम)।

गायत्रीमंत्र आदि।

(२) कामना मूलक मंत्र—मनुष्य एक साँसारिक प्राणी है और उनकी विभिन्न कामनायें होती हैं, इन कामनाओं की पूर्ति हेतु जिन मंत्रों से उपासना की जाती है वह कामनामूलक मंत्र हैं। वेदों, पुराणों तथा तंत्रशास्त्रों बौद्ध व जैन तंत्रों में भी इस प्रकार के मंत्रों का ही बाहुल्य है। जैसे—विघ्न-निवारण, दीर्घायुकारक, दुःस्वप्न का कुप्रभाव नाशक, व्यवसाय में उन्नति, धन की प्राप्ति, सन्तान प्राप्ति, सुखपूर्वक प्रसव, गर्भपात से रक्षा, बुद्धि में सुधार, परीक्षा में सफलता, पदलाभ, कृषिसम्पदा में वृद्धि, शत्रुपराजय, न्यायालय में विजय, अल्पमृत्यु से रक्षा, चोरों से रक्षा, दुर्घटनादि से रक्षा, पशुओं से रक्षा रोगशान्ति आदि सैकड़ों कामनायें हैं। यह मंत्र शांतिक-पौष्टिक कहे जाते हैं।

(३) अभिचार मूलक कर्म --ऐसे मंत्र जो किसी को हानि पहुँचाने या किसी का अहित करने के उद्देश्य से किये जाते हैं। प्रायः तामसिक एवं वाममार्गी साधना में ही ऐसे मंत्र अधिक हैं। यह प्रयोग 'षट्कर्म' के नाम से प्रसिद्ध हैं।

मारण --किसी व्यक्ति की मृत्यु की कामना से अनुष्ठान करना मारणकर्म है।

मोहन -- किसी की बुद्धि को मोहित (भ्रमित) कर, उसे शारीरिक कष्ट, मानसिक कष्ट, आर्थिक कष्ट देना या उसकी भ्रमित बुद्धि से अनुचित लाभ उठाना।

वशीकरण--किसी व्यक्ति को मंत्र से वश में करके अनुचित लाभ उठाना, किसी स्त्री को वश में कर व्यभिचार करना आदि।

स्तंभन--किसी वस्तु को रोकने के हेतु मंत्र का प्रयोग। जैसे शत्रु सेना को रोकना, बादलों को रोकना, चोर डाकू शत्रु आदि को रोकना इत्यादि।

उच्चाटन--मंत्र शक्ति के द्वारा किसी की मानसिक व मस्तिष्क की शान्ति भंग करना। विक्षिप्त करना।

आकर्षण--मंत्र शक्ति के द्वारा किसी वस्तु या व्यक्ति का आवाहन। अर्थात् ऐसी क्रिया जिससे व्यक्ति स्वयं खींचता चला आय।

विद्वेषण--परस्पर द्वेष उत्पन्न करना। मंत्र के द्वारा कोई दो व्यक्तियों, मित्रों, स्त्री-पुरुष, पुत्र-पिता आदि में शत्रुता का भाव उत्पन्न करा देना।

जंृभण--भय उत्पन्न कर किसी की वस्तु छीन लेना, हरण कर लेना, भयभीत करना जंृभण है।

वैसे तो यह षट्कर्म तामसी तथा निंद्य हैं, लेकिन कभी-कभी इनका उपयोग समाज के हित में भी होता है। जैसे--किसी कारणवश पारिवारिकजनों में मतभेद एवं वैमनस्य हो तो वशीकरण द्वारा शान्ति एवं सुखमय वातावरण की स्थापना। अथवा क्रोध में या किसी कारणवश कोई व्यक्ति कहीं चला गया हो (बिना सूचना के) उसे वापस बुलाने में आकर्षण मंत्र का प्रयोग। अतिवर्षा आदि के समय बादलों का स्तंभन। सूखा पड़ने पर बादलों का आकर्षण आदि। क्योंकि पूजा और उपासना भावना प्रधान है, तदनुसार ही उसका फल भी है अतः यदि जनहित की भावना से षट् कर्मों का प्रयोग करना पड़े तो वह तामसिक उपासना होते भी निन्दित नहीं कही जायगी--

"भाव मिच्छति देवता:"

'मंत्रेतीर्थे द्विजे दैवे दैवज्ञे भेषजे गुरौ ।
यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी ।।'

(आ) शास्त्रीय पद्धतियों के अनुसार

(१) वैदिक एवं पौराणिक—वे प्रयोग जो वेदों एवं पुराणों में उपलब्ध हैं। भगवान मनु ने वेदोक्त मंत्रों को श्रेष्ठ माना है ।

(२) तांत्रिक मंत्र—वे मंत्र जो विभिन्न आगम ग्रंथों (तंत्र शास्त्रों) में वर्णित हैं ।

(३) लौकिक—इसमें वे मंत्र हैं जो सामान्य लोकभाषा में प्रचलित हैं। इनमें साबर मंत्र, गुरु गोरखनाथी व अन्यान्य मंत्र समाज में प्रचलित हैं ।

(इ) **लिंग भेदानुसार**—मंत्रों को भी पुरुष मंत्र, स्त्री मंत्र और नपुंसक मंत्रों के रूप में वर्णित किया गया है । इस सम्बन्ध में अनेक मतमतान्तर हैं—

(१) मंत्र के अन्त में 'फट्' या 'वषट्' हो तो पुरुष, 'वौषट्' या 'स्वाहा' लगा हो तो स्त्री और 'हुं' या 'नमः' हो तो नपुंसक मंत्र कहा जायगा ।

(ई) अक्षर संख्यानुसार

(१) जिस मंत्र में एक अक्षर हो 'पिण्ड'

(२) जिस मंत्र में दो अक्षर हों 'कर्तरी'

(३) जिसमें तीन अक्षर हों 'बीज मंत्र' जैसे ऐं, ह्रीं, क्लीं, श्रीं आदि तीन अक्षरों के संयोग से बनते हैं। तीन से नौ अक्षरों तक जिसमें हो वह भी 'बीज मंत्र' कहे जाते हैं ।

(४) जिस मंत्र में दस से लेकर बीस तक अक्षर हों वह 'मंत्र' कहा जाता है ।

(५) यदि बीस से अधिक अक्षर हों तो वह 'माला मंत्र' कहा जाता है ।

(उ) मंत्र और विद्या

जिस मंत्र का अधिष्ठाता पुरुष देवता हो अर्थात् पुलिंग वाचक देवता से सम्बन्धित मंत्र को 'मंत्र' और किसी देवी से सम्बन्धित मंत्र को 'विद्या' कहा जाता है ।

मंत्र सिद्धि हेतु जप

प्रत्येक मंत्र कितनी संख्या में जप करने से सिद्ध होता है, यह मंत्र के साथ ही दिया रहता है 'कलौः संख्या चतुष्टयं' के अनुसार निर्धारित जप संख्या से कलियुग में चौगुना करना चाहिए।

एक मत यह भी है कि जितने अक्षर का मंत्र हो उतने ही लाख जपने से मंत्र सिद्ध होता है, यह मत तांत्रिक (आगमोक्त) मंत्रों, बीज मंत्रों के बारे में हो सकता है। लेकिन वैदिक मंत्रों के बारे में यह मत युक्ति संगत नहीं है।

मंत्रों के साथ बीज पल्लवों का प्रयोग

केवल मंत्र विशेष प्रभावी नहीं होते और प्रत्येक मंत्र के प्रारम्भ में शिर (ॐ) और मंत्र के अन्त में पल्लव (नमः, स्वाहा, वौषट्, फट्, हुम् आदि) लगाकर जप या अनुष्ठान करने से यह अधिक प्रभावी होते हैं और कामधेनु के अनुसार फलदायक होते हैं —

मंत्रणां पल्लवो वासो मंत्राणां प्रणवः शिरः।
शिरः पल्लव संयुक्तो मंत्र कामदुधोभवेत्॥

लेकिन वैदिक मंत्रों में बीज पल्लव लगाना आवश्यक नहीं है। वैदिक मंत्रों में मंत्र के ऋषि, छन्द, देवता तथा विनियोग का ज्ञान आवश्यक होता है—

आर्षं छन्दश्च दैवत्यं, विनियोगस्तथैवच।
वेदितव्यः प्रयत्नेन, ब्राह्मणेन विपश्चितः॥

तंत्रशास्त्र में विभिन्न मंत्रों में तथा वैदिक तांत्रिक न्यासों, मंत्रों में भी नमः, स्वाहा, वौषट्, हुम् और फट् का प्रयोग होता है।* विभिन्न कामना के अनुसार भी मंत्र के अन्त में इन शब्दों का प्रयोग होता है। मंत्र जप से पहले न्यास किये जाते हैं। इनका भावार्थ इस प्रकार है :—

नमः = झुकना, नमस्कार करना।

स्वाहा = के अनेक अर्थ हैं। यह ह्वे तथा स्वाद धातु से बना है। बुलाना, आवाहन करना, स्वाद लेना आदि अभिप्राय है।

वषट या वौषट् = पहुँचाना।

---

* देखें—वाचस्पत्य बृहदभिधानम्।

हुम् =देना, खाना यह सामान्य अर्थ है। यह शब्द प्रश्न, संदेह, सम्मति, क्रोध, भय, निन्द्रा, अनादर आदि हेतु प्रयुक्त होता है।

फट् =इसका सामान्य अर्थ तोड़ना, खण्डित करना, भगाना, अनुकरण करना, विघ्नबाधा हटाना, पापों को भगाने आदि में प्रयुक्त होता है।*

न्यासों में इनका अर्थ इस प्रकार है :—

(१) हृदयायनमः/अंगुष्ठाभ्यां नमः (हृदय को नमस्कार, हृदय में विराजमान परमात्मा को नमस्कार, अंगुष्टरूप परमात्मा को नमस्कार, देखें गीता—'अंगुष्ठमात्र पुरुषः', जीवात्मा का स्वरूप अंगुष्ठ के बराबर है।)

(२) शिरसे स्वाहा (उपास्य देवता का आवाहन करना और शिर में प्रतिष्ठापित करना)।

(३) शिखायै वषट् (शिखा संदेश वाहक है, उपास्य देवता को संदेश देना)।

(४) कवचाय हुम् (प्रश्न, तर्क-वितर्क, भय, अवज्ञा, निन्दा आदि से रक्षार्थ। जिस प्रकार कवच धारण करने से शस्त्रों से रक्षा होती है, वैसे ही इस न्यास से रक्षा होती है)।

(५) नेत्र त्रयाय वौषट् (तीनों नेत्रों द्वारा उपास्य देवता तक अपना अभिप्राय संदेश पहुँचाना, उपास्य देवता का साक्षात्कार करना। ज्ञातव्य है कि दो नेत्रों के बीच में तीसरे दिव्य नेत्र की कल्पना भारतीय उपासना में है। सिद्धि मिलने पर इसी तीसरे नेत्र से साधक तीनों कालों की घटनाओं को देख सकता है। दिव्य दृष्टि प्राप्त होती है।**

(६) अस्त्रायफट् (शारीरिक तथा मानसिक पापों का स्मरण करते हुए, अस्त्र मुद्रा से उनका निराकरण। पापों को, विघ्नबाधाओं, भूत-प्रेतों को प्रताड़ित कराना, भगाना)।

खट्, फट्, जहि, छिन्धि, भिन्धि, हन्धी, कट्, यह क्रूर वचन हैं जो मारण आदि में प्रयुक्त होते हैं। दूसरे को डराने, मारने, काटने, तोड़ने के अर्थ प्रयुक्त होते हैं।***

---

*देखें--महानिर्वाण तंत्र, मंत्र महोदधि।

**हे देवि तेरे लिये वषटकार (कृष्णयजुर्वेद, काण्ड ४)। वज्ररूप वषटकार करने से राक्षस अनुष्ठान में विघ्न नहीं करते (माधवाचार्यः, संध्यादर्पण)।

***देखें -तैतरीय आरण्यक, ४ प्रपा० २७ अनु० और सायणाचार्य।

इस प्रकार सामान्य उपासना में न्यास के द्वारा इन शब्दों से उपास्य की बन्दना, आवाहन, सन्देश वाहन, विघ्नबाधाओं से रक्षा और उनका प्रताड़न करना ही है।

तांत्रिक प्रयोगों में विभिन्न कामना के अनुसार विभिन्न मंत्रों में इनका प्रयोग निम्नवत् होता है :—

वश्याकर्षण सन्तापे होमे 'स्वाहा' प्रयोजयेत्।
क्रोधोपशमने शान्तौ पूजने च 'नमो' बदेत्॥
'वौषट' सम्मोहनोद्दीप पुष्टि मृत्युजयेत् च।
'हुंकार' प्रीतिनाशे च छेदने मारणे तथा॥
उच्चाटने च विद्वेषे तथाऽधिविकृतौ च 'फट'।
विघ्नग्रह विनाशे च हुँफट्कारं प्रयोजयेत्॥
मंत्रोद्दीपन कार्ये च लाभालाभे वषट् स्मृतं।
एवं कर्मानुरूपेण तत्तन्मंत्रं प्रयोजयेत्॥
नमोन्तमंत्रे देवेशि न नमो योजयेद्बुधः।
स्वाहान्तेऽपि तथा मंत्रे न दद्याद् वह्निवल्लभां॥

अर्थात् वशीकरण, आकर्षण, किसी को सन्तापदेने, के उद्देश्य से जो मंत्रानुष्ठान किया जाय उनके अन्त में, तथा हवन करते समय मंत्र के अन्त में 'स्वाहा' शब्द प्रयोग करे (लेकिन जिस मंत्र के अन्त में पहले से स्वाहा शब्द लगा हो, होम करते समय उसमें दुबारा स्वाहा न लगायें)। क्रोध आदि की शान्ति तथा अन्य कोई शान्तिकर्म, पूजन, आदि में 'नमः' जोड़ना चाहिए (लेकिन जिस मंत्र के अन्त में पहले से नमः लगा हो, पुनः नमः न जोड़े)।

सम्मोहन, उद्दीपन तथा पुष्टिकार्यों सम्बन्धी मंत्रों के अन्त में 'वौषट्' का प्रयोग करे।

विद्वेषण, छेदन, मारण आदि में 'हुँ' प्रयोग करे। उच्चाटन, विद्वेषण, मानसिक विकृति के कर्मों में 'फट्' प्रयोग करे।

विघ्नबाधाओं की शान्ति, ग्रहशान्ति आदि में 'हुँ फट्' प्रयोग करे।

मंत्र की जागृति एवं उद्दीपन, लाभ आदि कर्मों में 'वषट्' प्रयोग करे।

वैदिक मंत्रों में न्यास आवश्यक नहीं

वैदिक मंत्रों में चाहें तो षडंग आदि न्यास कर भी सकते हैं, न चाहें तो आवश्यक भी नहीं हैं, क्योंकि वेदोक्त मंत्रों में यह अनिवार्य नहीं है, यह बात

'गृह्य परिशिष्ट' में स्पष्ट है। अक्षरन्यास, पाद न्यास, मुद्राप्रदर्शन, शापमोचन आदि विविध नियम तंत्रशास्त्रोक्त हैं।*

मंत्र के षट् रहस्य

किसी भी मंत्र का पाठ, जप या पुरश्चरण करने से पहले मंत्र के ६ रहस्यों का ज्ञान करना, जानना आवश्यक है। बिना इनके ज्ञान के जो कोई जप, यज्ञ, पाठ आदि किया जाता है वह निष्फल तथा आसुर भाव को प्राप्त होता है—

अविदित्वा ऋषिं छन्दो दैवतं विनियोगकं।
योऽध्यापयेज्जपेद्वापि पापीयाज्जायते तु सः।
ऋषिर्छन्दो दैवतानि ब्राह्मणार्थं स्वराद्यपि।
अविदित्वा प्रयुंजानो मंत्रकष्टकमुच्यते ॥ इत्यादि

मंत्र के ६ अंग इस प्रकार हैं:—

(१) ऋषि—मंत्रद्रष्टा, मंत्र निर्माणकर्ता ऋषि का नाम।

(२) छन्द—मंत्र किस छन्द में है, छन्द का ज्ञान।

(३) देवता—मंत्र किस देवता की उपासना से सम्बन्धित है।

(४) विनियोग—मंत्र का प्रयोग किस कार्य हेतु किया जाता है।

(५) शक्ति—मंत्र की मूल शक्ति क्या है, अर्थात् बीजमंत्र क्या है।

(६) कीलक—मंत्र कीलित है तो उसका उत्कीलन क्या है?

जैसे श्री बटुक भैरव का मंत्र है—'ॐ' ह्रींवंवटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु-कुरु बटुकाय ह्रीं''

इस मंत्र के वृहद्वारण्यक मंत्रद्रष्टा ऋषि हैं, मंत्र का अनुष्टुप छन्द है, श्री बटुक भैरव देवता हैं, ह्रीं बीजमंत्र है, प्रणव (ॐ) कीलक है, 'वटुकाय' यह शक्ति है और आपदाओं के निवारण हेतु इस मंत्र का प्रयोग (विनियोग) होता है।

---

* देखें—धर्मसिन्धु सा० प० ३, पूर्वार्धं।

दीप स्थापन और उसके लक्षण

दीपक कर्म का साक्षी होता है, प्रकाश ज्ञान का परिचायक है, दीप के द्वारा ही अज्ञान से ज्ञान और सिद्धि की ओर प्रवृत्ति होती है, अतः सभी शुभ कर्मों, यज्ञमंत्रानुष्ठानादि कार्यों में सर्वप्रथम दीप की स्थापना की जाती है।

दीप स्थापन हेतु भूमि पर विन्दु, त्रिकोण, षट्कोण, चतुरस्त्र (क्रमशः) मण्डल बनाकर अथवा घटार्गल यंत्र बनाकर उसके ऊपर अन्न स्थापित कर तदन्तर दीप को स्थापित करना चाहिए (घटार्गल यंत्र का वर्णन 'शारदा तिलक' नवम पटल में देखें) दीपक सुवर्ण, चाँदी, ताँबा, काँसी, लोहा, मिट्टी अथवा गेहूँ के आटे या मूंग, उड़द के आटे से बना हो। कार्यसिद्धि हेतु सोने का, वशीकरण हेतु चाँदी का या ताँबे का, विद्वेषण में काँसे का, मारण में लोहे का, उच्चाटन में मिट्टी का, विवाद में जय हेतु गेहूँ के आटे का, उड़द के आटे का शत्रु स्तम्भन हेतु तथा शान्ति हेतु मूंग के आटे का उत्तम है। सन्धि की कामना से नदी के दोनों तटों की मिट्टी लेकर दीप बनाये। सामान्यतः ताँबे या मिट्टी का दीपक किसी भी कार्य में प्रयोग कर सकते हैं।*

दीप का प्रमाण और तेल का विचार

मूल में ६ अंगुल चौड़ा, ऊपरी व्यास १६ अंगुल और ऊँचाई में भी ६ अंगुल हो, ऐसा दीपक उत्तम होता है। गाय के घी का दीपक सभी कार्यों में सफलतादायक श्रेष्ठ है। मारण में भैंस के घी का, विद्वेषण में ऊँट के घी, उच्चाटन में बकरी के घी का दीपक अच्छा माना गया है। मारण में भैंस के घी के स्थान पर सरसों के तेल का दीपक भी ग्राह्य है। गाय के घी की तरह ही तिल के तेल का दीपक भी सभी कार्यों में सफलतादायक उत्तम होता है।

बत्ती

दीपक में बत्तियाँ एक अथवा ३, ५ आदि विषम संख्या में होनी चाहिए, अधिक से अधिक १०१ तक ग्राह्य हैं। सफेद कपड़े की बत्ती सभी कामों में शुभ

---

*देखें—डामरतंत्र।

होती है। चित्र-विचित्र (छींट) या काले वस्त्र की बत्तियाँ अभिचार कर्म में ग्राह्य हैं।

बत्ती आगे बढ़ाने हेतु सोना, चाँदी अथवा उदुम्बर (गूलर) की लकड़ी की १६ अंगुल की शलाका (डण्डी) रखनी चाहिए।

मुख

पूर्व या उत्तर मुख का दीपक सर्वथा शुभ होता है, लेकिन विद्वेषण में पश्चिमाभिमुख और मारण में दक्षिणमुख दीपक शुभ होता है।

दीप द्वारा प्राप्त शुभाशुभ लक्षण

दीप जलाते समय कोई अशुभ या कुशब्द न बोले। यदि दीप जलाते समय कोई लाल वस्त्र पहने अथवा लाल माला आदि पहने (अंगहीन न हो) ब्राह्मण आता है तो सफलता सूचक है। यदि कोई निम्नवर्ण का व्यक्ति उपस्थित होता है तो सामान्य फल है। किसी नीचवर्ण के व्यक्ति का आगमन शुभ नहीं है। बिल्ली या चूहे का दर्शन सामान्य है।

यदि दीपक की बत्ती सुन्दर जलती है तो सिद्धि का संकेत है। यदि दीपक की लौ टेढ़ी, खण्डित आदि हो या काले वर्ण की आभा हो तो यह विघ्न बाधा व असफलता कष्ट आदि का परिचायक अशुभ लक्षण है।

किसी समय, किसी भी कारण से अखण्ड दीपक का बुझ जाना, गिरजाना, या टूट जाना महा अशुभ लक्षण है। यदि दीपक से घी तेल आदि टपकता है, चूता है, या दीपक की बत्ती से चट्-चट् ऐसा शब्द होता है तो भी असफलता का संकेत है।

यदि दीपक को कोई अपवित्र व्यक्ति स्पर्श करे अथवा कुत्ता, बिल्ली, चूहा आदि दीपक का स्पर्श करे यह भी शुभ लक्षण नहीं हैं।

अतः दीपक की सुरक्षा का निरन्तर ध्यान रखें।

अशुभ लक्षणों में शान्ति

यदि दीपक से अशुभ संकेत मिलें तो तिल, चावल, शक्कर, घी से हवन करने के बाद पुनः कार्य प्रारम्भ करे, ऐसा विधान तंत्रशास्त्रों में कहा गया है।

तांत्रिक उपासना में आत्मरक्षा विधान

साधना एवं पुरश्चरण से पूर्व आत्मरक्षा और विघ्नबाधाओं से रक्षा हेतु कुछ प्रयोग वांछित है। प्रायः किसी भी साधना में दैवी तथा आसुरी शक्तियाँ विघ्नबाधा डालने का प्रयास करती रहती हैं ताकि साधना भंग हो जाय। कभी-कभी साधना तो भंग होती ही है साथ ही साधक को शारीरिक कष्ट व मानसिक वेदना भी (मृत्युभय, विक्षिप्त होने का भय) होती है। इसके अलावा आध्यात्मिक (शारीरिक एवं मानसिक उत्पात यथा रोगादि शारीरिक तथा काम क्रोध, लोभ मोह ईर्ष्या विषादादि मानसिक) अधिभौतिक (मनुष्य, पशु पक्षी, कीट, वृक्ष आदि कारणों से) और अधिदैविक (भूत प्रेतादि जनित) उत्पात भी संभव हैं।

अतः सर्व प्रथम साधना स्थल को झाड़ पोछ कर लीप लेना चाहिए। तदनन्तर पंचगव्य* से उस स्थल को (छिड़ककर) शुद्ध करना चाहिए। तदनन्तर :—

(१) **क्षेत्रकीलन**—भूमि का स्पर्श करते हुए निम्न मंत्र का पाठ करे—

गृहीतस्यास्यमंत्रस्य पुरश्चरण सिद्धये ।
मयेयं गृह्यते भूमिमंत्रोऽयं सिद्धिमाप्नुयात ॥

इसके उपरान्त किसी भी यज्ञीय वृक्ष (पीपल, गूलर आम आदि) की हरी लकड़ी की दस कीलें, जो बारह अंगुल लम्बी हों, इन्हें तैयार करके "ॐनमः सुदर्शनाय अस्त्रायफट्" इस मंत्र से इन्हें १०८ बार मंत्रित करे। तदनन्तर निम्न मंत्रों का पाठ करते हुए दशों दिशाओं में इन कीलों को गाढ़ दें—

ॐ ये चात्र विघ्नकर्तारोभुविदिव्यंतरिक्षगाः ।
विघ्नभूताश्च ये चान्ये मम मंत्रस्य सिद्धिषु ।
मयैतत्कीलितं क्षेत्रं परित्यज्य विदूरतः ।
अपसर्पन्तु ते सर्वे निर्विघ्रा सिद्धिरस्तुमे ॥

इसके बाद इन कीलों के ऊपर "ॐनमः सुदर्शनाय अस्त्राय फट्" इस मंत्र से पूजन करे।

---

* पंचगव्य विधि अन्यत्र देखें।

इसके उपरान्त (इन कीलों से बाहर की ओर) दश दिग्पालों (दशों दिशाओं में), क्षेत्रपाल, गणपति के नाम से माषभक्त (उड़द + चावल + दही मिलाकर) इसके बाहर पंचमहाभूतों (अग्नि, वायु, पृथ्वी, जल और आकाश— पंचतत्वों के नाम से भी बलि दे। वटुक भैरव, योगिनी, सर्वभूतों के नाम से भी बलि दे।* बलि देने के स्थान पर (प्रत्येक स्थान पर) एक-एक दीपक भी प्रज्वलित करे। बलि देने के मंत्र संक्षेप में इस प्रकार हैं—

जैसे इन्द्र को बलि देनी है तो

"ॐ भो भो इन्द्र बलिं भक्ष भक्ष दिशं रक्ष रक्ष मम सपरिवारस्य आयुकर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता तुष्टिकर्ता भव"

इसी प्रकार अन्य देवताओं को भी बलि दे। अथवा—

ये रौद्राः रौद्रकर्माणो रौद्रस्थान निवासिनः।
मातरो प्युग्ररूपाश्च गणाधिपतयश्च ये ॥

भूचराः खेचराश्चैव तथा चैवान्तरिक्षगाः।
ते सर्वे प्रीति मनसाः प्रतिगृह्णन्त्विमंबलिम् ॥

इन्द्र, अग्नि, यम, निऋति, वरुण, वायु, कुबेर, ईश, ब्रह्मा और अनन्त यह दस दिग्पाल पूर्वादि क्रम से होते हैं।

तदनन्तर बायें हाथ की अँगुलियों से जल छिड़क कर पुष्पाँजलि दे—

ॐ भूतानि यानीह वसन्ति भूतले,
बलिं गृहीत्वा विधिवत्प्रयुक्तम् ।
संतोषमासाद्य व्रजन्तु सर्वे क्षमन्तुतान्यत्र नमोस्तुतेभ्यः ।

प्रणाम करके हाथ और मुख धोकर आचमन करे।**

भूताये विघ्न कर्तारा: दिविभूम्यन्तरिक्षगाः।
पातालतल संस्थाश्च शिवयोगेन भाविताः ॥
क्रूराद्याः शतसंख्याकाः पाखण्डाद्या व्यवस्थिताः।

---

* पूर्व में वटुक भैरव, दक्षिण दिशा में योगिनी, गणेश उत्तर में, क्षेत्रपाल की बलि पश्चिम में तथा उत्तर दिशा में ही सर्वभूत बलि दे।

**बलिदान की विस्तृत विधि तंत्रग्रंथों में देख सकते हैं।

ध्रुवाद्याः सत्यसंख्याश्चइन्द्राद्याशा व्यवस्थिताः ।
तृप्यन्तु प्रीतिमनसो भूतागृह्णन्त्विमं बलिं ।
नगरेवाथ संग्रामेअटव्यां वै सरित्तटे ॥
वापीकूपेषु वृक्षेषु श्मशाने थ चतुष्पथे ।
नानारूपधरा ये च बहुरूपधराश्च ये ।
ते सर्वे चैव संतुष्टा बलिगृह्णन्तु सर्वदा ॥

(२) **भूतोत्सादन**—पीली सरसों व चावल हाथ में लेकर 'अपसर्पन्तु ये भूताः' इत्यादि मंत्रों का पाठ करते हुए दशों दिशाओं में छोड़े ।*

(३) **तांत्रिक रक्षा**—उपासना स्थल की भूमि को स्पर्श करते हुए दशों दिशाओं को प्रणाम करना—

"ॐ सूर्य सोमो यमः कालसंध्येभूतात्यहक्षणः ।
पवनो दिग्पतिर्भूमिराकाशं खचरा मरा ।
ब्राह्म्यं शासनमास्थाय कल्पध्वमिह संनिधिं ॥

निम्न मंत्र का पाठ करते हुए भूमि पर जल छिड़के—

"ॐ रक्ष रक्ष हुँ फट् स्वाहा"

निम्न मंत्र का पाठ करते हुए भूमि स्पर्श करे—

"ॐ पवित्र हूँ हूँ फट् स्वाहा"

निम्न मंत्र का पाठ करते हुए साधना स्थल के बाहर एक त्रिकोण रेखा खींचे—

"ॐ आसुरेखे वज्ररेखे हुँ फट् स्वाहा"

इस त्रिकोण रेखा का गंधाक्षत पुष्प से निम्न मंत्रों से पूजन करे—

ॐ ह्रीं आधार शक्ति कमलासनाय नमः ।

ॐ कूर्मासनाय नमः ।

ॐ पृथिव्यैनमः ।

(साधना स्थल व साधक का आसन इस रेखा के अन्तर्गत होगा) ।

(४) **स्थान शोधन**—

भूमि की शुद्धि व रक्षा हेतु उपासना स्थल पर कामबीज (क्लीं) अंकित करे—

---

* भूतोत्सादन के मंत्र अन्यत्र देखें ।

मेदिनो सर्वदा पूजा शुद्धासुर सुसर्वतः ।
तस्य दोषस्य मोक्षाय कामबीजंक्षितौ लिखेत् ॥

—गन्धर्व तंत्रे

आसन स्थापन

उपरोक्त क्रियाओं को सम्पन्न करने के उपरान्त छन्द (हाथ में जल लेकर छोड़ना) लें—

ॐ पृथ्वीत्वीति मेरु पृष्ठ ऋषिः सुतलं छन्दः,
कूर्मोदेवता आसनोपवेशने विनियोगः ।

निम्न मंत्र का पाठ करते हुए कनिष्ठिका अँगुली से भूमि का स्पर्श करते हुए अपना आसन स्थापित करे—

ॐ पृथ्वी त्वयाधृता लोका देवित्वं विष्णूनाधृता ।
त्वं च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरुचासनम् ॥

"ॐ ह्रीं हूँ फट्"—का उच्चारण करते हुए पूजन सामग्री का अवलोकन करे और अँगुष्ठ तथा तर्जनी से तीन बार नाराच मुद्रा (चुटकी बजायें) प्रदर्शित करे।

'रं' उच्चारण कर दीपशिखा का स्पर्श करे। "ॐ रक्ष रक्षहुं फट्" उच्चारण कर हृदय स्पर्श करे। तदन्तर चन्दन मिले पुष्प हाथ में लेकर दोनों हाथों से मले, फिर उन्हें बायें हाथ में लेकर निम्न मंत्रों का पाठ करते हुए दूर ईशान दिशा में फेंक दे—

ते सर्वे विलयं यान्तु ये मां हिंसन्ति हिंसकाः ।
मृत्यु रोग भय क्लेशाः पतन्तु रिपु मस्तके ॥

आसन स्थापन की विधि इस प्रकार है—

सर्वप्रथम कुशासन, उसके ऊपर विष्टर, इसके ऊपर काले मृग का चर्मासन, इसके ऊपर विष्टर, इसके ऊपर कम्बल का आसन और अन्त में पुनः विष्टर स्थापित करे (इस प्रकार तीन आसन स्थापित करने का विधान है)। निम्न मंत्रों के द्वारा गन्धाक्षत पुष्पादि से आसन का पूजन करे—

ॐ अनन्ताशनाय नमः, ॐ विमलासनाय नमः,
ॐ पद्मासनाय नमः ।

इस आसन पर बैठकर उपासना करे।

---

* विष्टर कुश के २५ पत्तियों से बनता है।

मंत्रों के दस-संस्कार

किसी भी मंत्र को सिद्ध करने के हेतु जप या पुरश्चरण करने से पहले मंत्र के दस संस्कार करना आवश्यक हैं, तभी मंत्र प्रभावी होता है, यह दस संकार इस प्रकार हैं :—

जनन, दीपन, बोधन, ताड़न, अभिषेचन, विमलीकरण, जीवन, तर्पण, गोपन और अध्यापन। इनकी विधि इस प्रकार है—

१—भोजपत्र पर गोरोचन, कुंकुम, चन्दनादि से आत्माभिमुख त्रिकोण लिखे, फिर तीनों कोणों में छः-छः समान रेखाएँ खींचे ऐसा करने पर ४६ त्रिकोण कोष्ठ बनेंगे। उनमें ईशान कोण से प्रारम्भ कर १६ स्वरों और ३३ व्यंजनों को क्रम से लिखे। इसी प्रकार भोजपत्र पर या किसी पात्र पर ऐसा ही ४६ कोष्ठक का एक त्रिकोण और बनाये। इस त्रिकोण में मंत्र में जो-जो स्वर और व्यंजन हैं, उन्हें यथा स्थान लिखें। इसके बाद इन दोनों यंत्रों (त्रिकोणों) में देवता का आवाहन पूजन करके मंत्र का एक-एक वर्ण उद्धार करके अलग पत्र पर लिखे अर्थात् मंत्र में जितने स्वर और व्यंजन प्रयोग हुए हैं, उतने त्रिकोण (४६ कोष्ठक के) बनाकर एक-एक भोजपत्र पर एक-एक स्वर—व्यंजन लिखे। अन्त में इन सबको मिटाकर सभी भोजपत्रों पर पूरे मंत्र को लिखें। ऐसा करने पर 'जनन' नाम का प्रथम संस्कार होगा।

२—हँस मंत्र का सम्पुट करने से एक हजार जप द्वारा मंत्र का दूसरा 'दीपन' संस्कार होता है। अर्थात् जो मूल मंत्र हो उसके प्रारम्भ में "हँसः' और अन्त में "सोऽहं" जोड़कर एक हजार जप करे। उदाहरणार्थ मूल मंत्र "ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे" है, दीपन संस्कार हेतु इसे "हँसः ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे सोऽहं" इस प्रकार एक हजार जपना होगा।

३—बीज सम्पुटित मंत्र का पाँच हजार जप करने से 'बोधन' नामक तीसरा संस्कार होता है। इसमें मंत्र के प्रारम्भ और अन्त में 'ह्रूं" जोड़कर मंत्र का पाँच हजार जप वांछित है, जैसे—"ह्रूं ऐं विच्चे ह्रूं"।

४—फट् सम्पुटित मंत्र का एक हजार जप करने से 'ताड़न' नामक चतुर्थ संस्कार होता है। अर्थात् मंत्र के प्रारम्भ और अन्त में "फट्" शब्द जोड़कर एक हजार जप करे। जैसे—"फट् ऐं विच्चे फट्"।

५—भूर्ज पत्र पर मंत्र लिखकर "ऐं हँसः ॐ" इस मंत्र से जल को एक हजार बार अभिमंत्रित करे और उस अभिमंत्रित जल से अश्वत्थ पत्रादि द्वारा उपरोक्त जनन संस्कार में भोजपत्र पर लिखे मंत्र का अभिषेक करे। ऐसा करने पर 'अभिषेक' नामक पाँचवां संस्कार होता है।

६—ॐ त्रों वौषट् इन वर्णों से सम्पुटित मंत्र का एक हजार जप करने से 'विमलीकरण' नामक छठा संस्कार होता है। अर्थात् मंत्र के प्रारम्भ में "ॐ त्रों वौषट्" तथा अन्त में विपरीत क्रम से "वौषट् त्रों ॐ" जोड़कर जप करे। उदाहरणार्थ—"ॐ ऐं वौषट् ऐं ··विच्चे वौषट् त्रों ॐ"।

७ - स्वधा वौषट् सम्पुटित मूल मंत्र का एक हजार जप करने से 'जीवन' नामक सातवाँ संस्कार होता है। यहाँ मंत्र के प्रारम्भ में "स्वधा वौषट्" और अन्त में "वौषट् स्वधा" लगाकर जप किया जाता है, जैसे— "स्वधा वौषट् ऐं ·· विच्चे वौषट् स्वधा"।

८—दुग्ध, जल एवं घी के द्वारा मूल मंत्र से सौ बार तर्पण करना ही 'तर्पण' संस्कार है। 'जनन संस्कार' में भोजपत्र पर लिखे मंत्र के ऊपर तर्पण होता है।

९—ह्रीं बीज सम्पुटित एक हजार जप करने से 'गोपन' नामक नवम संस्कार होता है। मंत्र के आदि तथा अन्त में 'ह्रीं' लगाकर जप करे।

१०—ह्रौं बीज सम्पुटित एक हजार जप करने से 'अध्यापन' नामक दसवाँ संस्कार होता है। मंत्र के आदि तथा अन्त में "ह्रौं" लगाकर एक हजार जप का विधान है। कुछ विद्वान 'ह्रौं' के स्थान पर "हसौः" बताते हैं।

इस प्रकार संस्कृत किया हुआ मंत्र शीघ्र सिद्धिप्रद होता है।

मंत्रों में उपरोक्त दस संस्कार करने की विधि "शारदा तिलक, पटल २" में और इसी के आधार पर "मंत्र महोदधि" में वर्णित है।

'मंत्र महोदधि' के अनुसार मंत्रों में पचास से अधिक दोष विद्यमान रहते हैं—

छिन्नत्वादिकदोषाये पंचाशन्मंत्रसंस्थिताः ।
तैर्दोषैः सकला व्याप्ता मनवः सप्तकोटयः ।।

यह छिन्न, शक्तिहीन, वधिर, अन्ध, दग्ध, त्रस्त, कीलित, स्तंभित, तिरस्कृत, मूर्छित, सुप्त, वृद्ध, निर्बीज, शक्तिहीन, अंगहीन, सिद्धिहीन आदि दोष हैं। अतः मंत्र जप से पहले दशसंस्कारों द्वारा मंत्रों की शुद्धि करना आवश्यक है ।

मंत्र साधना के पूर्व की क्रियायें

जप प्रारम्भ करने से पहले 'मंत्र शोधन' द्वारा अपने अनुकूल अभीष्ट मंत्र का चयन हो जाने पर सर्व प्रथम मंत्र को चैतन्य करना चाहिए और मंत्र का अर्थ जानते हुए मंत्र के भावों पर ध्यान देना आवश्यक है । सर्वप्रथम गुरुदेव का ध्यान, तदनन्तर उपास्य देवता का ध्यान करे । इसके बाद भूतशुद्धि, सेतु, महासेतु, मुखशोधन, जिह्वाशोधन, कुल्लुका, शापोद्धार, संजीवन, उत्कीलन, निर्मलीकरण, कवचसेतु, प्राणयोग, निर्वाण, वन्धन, योनिमुद्राप्रदर्शन, करन्यास, अंगन्यास, प्राणायाम, दीपन, सूतकद्वय मोचन करके दोनों भौहों के मध्य दृष्टि स्थिर करके (किंचित् आँखें खुली रहें) मूलमंत्र का जप करे । 'अ' कारादि से 'क्ष' कारान्त तक बिन्दु मातृकाक्षर से अनुलोम विलोम कल्पित वर्णमाला करते हुए पुनः सेतु, प्राणायाम तथा उतरन्यास से (जिस प्रकार मंत्र जपने के पूर्व न्यास होते हैं, उसी प्रकार मंत्र का जप समाप्त होने पर पुनः न्यास किये जाते हैं, उसी प्रकार से (जप के अन्त में न्यास करना ही उत्तर न्यास है) ।

इन सब क्रियाओं को इसके रहस्य को गुरु के द्वारा जानना और समझना चाहिए । यह क्रियायें लिखने या पढ़ने से नहीं आती हैं ।

अंगन्यास तथा करन्यास तो मुख्य हैं । इनके अलावा भी सर्वांगन्यास, अन्तरमातृकान्यास, बहिर्मातृकान्यास, स्थितिन्यास, सृष्टिन्यास, संहारन्यास, शुद्धमातृका न्यास, आदि विविध न्यास तंत्रशास्त्र में प्रयुक्त होते हैं । सामान्य उपासना में यह आवश्यक नहीं हैं । इन न्यासों से सम्बन्धित सामग्री प्राचीन तंत्रग्रंथों में उपलब्ध होती है ।

उपरोक्त में से जो आवश्यक क्रियायें हैं । उनमें कुछ का विवरण इस प्रकार है—

(१) **मंत्र चैतन्य विधि**—इसके सम्बन्ध में कहा गया है कि प्राणायाम

एवं योग द्वारा कुण्डलिनी* जागृत करके नासिका के अग्रभाग में दृष्टि स्थिर रखकर जब गुरु तथा उपास्य देवता के स्वरूप का दर्शन होता है, यही मंत्र चैतन्य है—

कुण्डलिनिसमुत्थाथ हंसेन मनुना सुधीः ।
नासाग्रे या स्थिरादृष्टिर्जायते परमेश्वरी ।।
तदैव मंत्र चैतन्यं कुण्डली चक्रगंभवेत ।
सहस्त्रारे महापद्मे कुण्डल्या सहितं गुरुं ।।
भावयेत सर्व मंत्राणां चैतन्यं जायते प्रिये ।
—तोडलतंत्रे

जब साधक मंत्र को एक सामान्य शब्द न समझकर मंत्र को ही उपास्य देवता के रूप में समझने लगे, यह अनुभूति होना ही मंत्र चैतन्य होने के लक्षण हैं ।

(२) **भूतशुद्धि**—भूतशुद्धि की विस्तृत क्रिया का वर्णन तंत्रग्रंथों में है जो जटिल है । सामान्य रूप से "ॐ ह्रौं" का १०८ बार जप करने से भूतशुद्धि हो जाती है ।

(३) **सेतु**—किसी भी निर्धारित मंत्र का जप करने से पहले सेतुमंत्र, (ॐ) का १०८ जप करना चाहिए । साधक और मंत्र के मध्य परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने वाला होने से इसे 'सेतु' कहा जाता है ।

(४) **महासेतु**—महासेतु मंत्र (स्त्रीं) का १०८ जप करने से महासेतु होता है ।

(५) **मुखशोधन जिह्वाशोधन**—कठोरवाणी बोलने, असत्य बोलने तथा भोजन आदि से मुख तथा जिह्वादूषित होती है । मुख धोना आदि बाह्य क्रियायें हैं, बाह्यशुद्धि के साधन हैं । आन्तरिक एवं मानसिक शुद्धि हेतु प्रणव (ॐ) का १०८ बार जप करना होता है । किसी भी मंत्र का जाप हो, प्रणव (ॐ) के जाप से मुखशोधन हो जाता है ।

कुछ देवताओं देवियों के अलग से मुखशोधन मंत्र भी हैं । जिस देवी या देवता की उपासना हो उनके मंत्रों से भी मुखशोधन कर सकते है । यथा—

---

* इसका वर्णन 'योग एवं तंत्र' शीर्षक से देखें ।

गणेश जी का (ॐ गं), लक्ष्मी का (ॐ श्रीं), दुर्गा जी का (ऐं ऐं ऐं), विष्णु का (ॐ हं) इत्यादि। अन्य देवताओं का भी ओंकार के साथ उस देवता का बीजमंत्र जोड़कर जप कर सकते हैं।

(६) **कुल्लुका** कुल्लुका के बारे में रुद्रयामल, वाराहीतंत्र, सरस्वतीतंत्र, नीलतंत्र आदि में विस्तार से चर्चा है। जिस उपास्य देवता का मंत्र जाप करना हो, उसके मंत्र का उच्चारण कर शिर (शिखा) पर न्यास करे, अथवा मंत्र को भूर्जपत्र पर लिखकर शिर में धारण करे। इससे साधना निर्विघ्नसिद्ध होती है। विभिन्न देवी-देवताओं के कुल्लुकामंत्र इस प्रकार हैं—

शिव (ॐ ह्रौं), विष्णु (ॐ नमोनारायणाय), काली (ॐ क्रीं, हूं, स्त्रीं, ह्रीं फट्) सरस्वती (ॐ ऐं), लक्ष्मी (ॐ श्रीं), धूमावती (ॐ ह्रीं), मातंगी (ॐ ॐ), अन्नपूर्णा (ॐ क्लीं), षोडशी (ॐ स्त्रीं), भैरवी (ॐ हसरैं), भुवनेश्वरी (ॐ ह्रीं), तारा (ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं), त्रिपुरसुन्दरी (क्लीं) और छिन्नमस्ता (ॐ ह्रीं ह्रीं ऐं ह्रीं ह्रीं स्वाहा हूं)। अन्य देवी देवताओं का उनका स्वयं का मंत्र ही कुल्लुका मंत्र भी होता है।

(७) **शापोद्धार संजीवन एवं उत्कीलन इत्यादि**—अनेक मंत्र शापित मृत या कीलित होते हैं। इनके शापोद्धार, संजीवन व उत्कीलन की विधि इन मंत्रों के साथ ही तंत्रशास्त्रों में मिलती है। जैसे 'दुर्गासप्तशती' के शापोद्धार, व उत्कीलन क्रिया का वर्णन इसी में हैं। यदि मंत्र कीलित मृत या शापित हो तो तदनुसार क्रिया करना वांछित है।

(८) **प्राणयोग**—प्राणयुक्त मन्त्र विशेष फलदायक होते हैं। वाराही तन्त्र के अनुसार मूलमँत्र को मातृबीज (ऐं) से सम्पुटित कर सात बार जपने से वह मँत्र प्राणयुक्त हो जाता है।

(९) **दीपन**—मँत्रानुष्ठान प्रारम्भ करने से पूर्व जपनीय अपने अभीष्ट मँत्र को ॐ कार से सम्पुठित करके सातबार जपने से मँत्र प्रज्वलित (प्रभावशाली) हो जाता है।

(१०) **निर्वाण**—इस क्रिया से मँत्र जागृत होता है। अभीष्ट मँत्र को प्रणव (ॐ) तथा मातृकाओं से सम्पुटित कर जप करना चाहिए।

(११) **योनिमुद्रा प्रदर्शन एवं आसन**—योनिमुद्रा प्रदर्शन वाममार्गी साधना में है। सामान्य उपासना में 'योनिमुद्रा आसन' में बैठकर जाप करना है। दाहिने पैर की ऐड़ी को जननेन्द्रिय पर तथा बायें पैर की ऐड़ी को गुदा

पर रखने से 'योनिमुद्राबँध आसन' होता है। इस आसन में बैठकर जाप करने से सफलता मिलती है।

(१२) **सूतक मोचन**—जाप आरम्भ करने से पहले १०८ बार अथवा ७ बार तीन बार प्रणव (ॐ ॐ ॐ) का जाप करे। अभीष्ट मँत्र के जाप के बाद भी पुनः इसी प्रकार १०८ या ७ बार सम्पुटित प्रणव का जाप करने से मँत्र दोषरहित होता है।

(१३) **प्राणायाम**—प्राणायाम अनेक प्रकार का होता है, पूरक, कुँभक व रेचक यह तीन क्रियायें सभी में समान हैं। मँत्र जाप से पूर्व जो प्राणायाम किया जाता है वह इस प्रकार है—

दाहिने अँगूठे से दाहिनी नासिका बन्द करके ओंकार सहित अभीष्ठ मँत्र/ अथवा ओंकार पूर्वक उपास्य देव का बीज मँत्र का सोलह बार जाप करते हुए वायें नासिका से श्वास अन्दर ले। तदनन्तर कनिष्ठा-अनामिका से वायी नाक भी बन्द करके चौंसठ बार उपरोक्त मँत्र जाप करते हुए वायु रोके रहे। तदनन्तर उपरोक्त मँत्र का बत्तीसबार जाप करते हुए दाहिने नासिका से हवा बाहर छोड़े। पुनः दूसरी बार विपरीत क्रम से इसी प्रकार प्राणायाम करे—दाहिने नाक से श्वास लेकर बायें से छोड़े। पुनः तीसरी बार पहले की तरह वायें से श्वास खींचकर दाहिने से छोड़े। इस तरह तीनबार करने से प्राणायाम होता है।

(१४) **न्यास**—अंगन्यास, करन्यास का सामान्य वर्णन मँत्रों के साथ ही प्राप्त होता है। अन्य वर्णमातृका न्यास आदि बहुविध न्यासों की विधि तंत्र-ग्रंथों में वर्णित है। शिवमहापुराण में भी इन न्यासों क्रियाओं का वर्णन हुआ है।

षडंगन्यास, अक्षरन्यास, पदन्यास, मुद्रा, तथा शापमोचन आदि वैदिक मंत्रों तथा सामान्य दक्षिणमार्गी साधना में आवश्यक नहीं हैं, ऐसा उल्लेख गृह्य परिशिष्ट में है (धर्मसिन्धुः सा० प० ३ पू०)।

यदि किसी मंत्र के न्यास ज्ञात न हों तो षडंगन्यास (अंगन्यास व करन्यास) औंकार से कर सकते हैं। जैसे—

ॐ अंगुष्ठकाभ्यां नमः ॐ तर्जनीभ्यां नमः, ॐ मध्यमाभ्यां नमः, ॐ अनामिकाभ्यां नमः ॐ कनिष्ठिकाभ्यां नमः, ॐ करतल करपृष्ठाभ्यां नमः ।

इसी प्रकार ॐ हृदयायनमः, ॐ शिरसे स्वाहा, इत्यादि ।

अथवा जिस देवता से सम्बन्धित मंत्र हो, उस देवता के आद्याक्षर में 'अं' के साथ क्रमशः आ, ई, ऊ, ऐ, औ, अः की मात्रा जोड़कर न्यास कर सकते हैं। जैसे श्री गणेश जी का मंत्र है, आदि अक्षर 'ग' है, इसमें 'अं' जोड़ने से 'गं' हुआ । इसमें न्यास इस प्रकार होंगे—

ॐ गां	—	अंगुष्टकाभ्यां नमः	(हृदयायनमः)
ॐ गीं	—	तर्जनीभ्यां नमः	(शिरसेस्वाहा)
ॐ गूं	—	मध्यमाभ्यां नमः	(शिखायै वौषट्)
ॐ गैं	—	अनामिकाभ्यां नमः	(कवचायहुम्)
ॐ गौं	—	कनिष्टिकाभ्यां नमः	(नेत्र त्रयाय वौषट)
ॐ गः	—	करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः	(अस्त्रायफट्)

श्री तारानाथ तर्क वाचस्पति महोदय ने गायत्री व्याख्या में कहा है कि षडंग न्यास इस प्रकार भी किये जा सकते हैं—

ॐ ब्रह्मणेनमः	—	अंगुष्ठ०	—	हृदयाय०
ॐ विष्णवेनमः	—	तर्जनी०	—	शिरसे०
ॐ रुद्रायनमः	—	मध्यमा०	—	शिखायै०
ॐ ईश्वरायनमः	—	आनामिका०	—	कवचायहुम् ।
ॐ सदाशिवायनमः	—	कनिष्ठिका०	—	नेत्रत्रयाय०
ॐ सर्वात्मने नमः	—	करतल०	—	अस्त्रायफट् ।

ब्रह्मणे हृदये प्रोक्तं विष्णवेशिर ईरितम् ।
शिखारुद्राय कवचमीश्वराय समीरितम् ।।
नेत्रं सदाशिवायोक्तमस्त्रं सर्वात्मने स्मृतम् ।
षडंगान्येवमुक्तनि यथास्थानं प्रविन्यसेत् ।।
—इति शारदायां ।।

(१५) मुद्रा—वैसे तो बहुत सी मुद्रायें हैं जो उपास्यदेवता के सन्मुख प्रदर्शित किये जाते हैं। वाममार्गी साधना में इनका प्रयोग मुख्य है। कतिपय ग्रंथों

में दक्षिणमार्गी साधना में भी इनके प्रयोग का उल्लेख मिलता है, जैसे 'गायत्री' की उपासना में भी सन्मुखादि २४ मुद्रायें प्रदर्शित करने का उल्लेख 'गायत्री तंत्र' में मिलता है। यदि चौबीस मुद्राओं का प्रदर्शन संभव न हो तो निम्न पांच मुद्राओं का प्रदर्शन अवश्य करे।

(१) कनिष्ठा + अनामिका + अंगुष्ठा का संयोजन कर।

(२) अंगुष्ठ + तर्जनी का संयोजन।

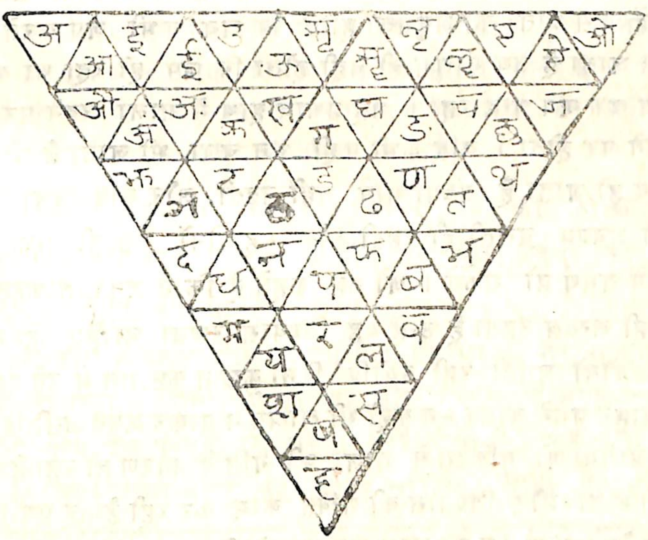
(३) अंगुष्ठ + मध्यमा का संयोजन।

(४) अंगुष्ठ + अनामिका का संयोजन।

(५) अंगुष्ठ + कनिष्ठा का संयोजन।

कनिष्ठानामिकांगुष्ठा अंगुष्ठा तर्जनीतथा।
अंगुष्ठामध्यमाभ्याच अंगुष्ठानामिकाततः।
कनिष्टांगुष्ठ संयोगात्पंचमुद्रा प्रकीर्तिताः॥
—गायत्री व्याख्या

जनन चक्र



जप माला का स्वरूप

प्रत्येक मंत्र के जाप हेतु माला आवश्यक है, क्योंकि जप की (संख्या) गणना करना नितांत आवश्यक है जो माला से ही सम्भव है। जिस मंत्र के जप की गणना न हो, वह जप निष्फल होता है—

"असंख्या तु यज्जप्तंतत्सर्वं निष्फलं भवेत"

माला के सम्बन्ध में अनन्त श्री स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती का कथन है :—

साधकों के लिये माला बड़े ही महत्व की वस्तु है। माला भगवान के स्मरण और नाम जप में बड़ी सहायक होती है, इसलिए साधक उसे अपने प्राणों के समान प्रिय समझते हैं और गुप्त धन की भाँति सुरक्षित रखते हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि जप की संख्या आवश्यक होनी चाहिए। इससे उतनी संख्या पूर्ण करने के लिए सब समय प्रेरणा प्राप्त होती रहती है एवं उत्साह तथा लगन में किसी प्रचार की कमी नहीं आने पाती। जो लोग बिना संख्या के जप करते हैं उन्हें इस बात का अनुभव होगा कि जब कभी जप करते-करते मन अन्यत्र चला जाता है तब मालूम ही नहीं होता कि जप हो रहा था या नहीं या कितने समय तक जप बन्द रहा। यह प्रभाव हाथ में माला रहने पर या संख्या से जप करने पर होता। यदि कभी कहीं मन चला भी जाता है तो माला का चलना बन्द हो जाता है, संख्या आगे नहीं बढ़ती, और यदि माला चलती रही तो जीभ भी अवश्य चलती ही रहेगी और यह दोनों कुछ ही समय में मन को खींच लाने में समर्थ हो सकेंगे। जो यह कहते हैं कि मैं जप तो करता हूँ पर मेरा मन कहीं अन्यत्र रहता है उन्हें यह विश्वास रखना चाहिए कि यदि जीभ और माला दोनों घूमती रहीं क्योंकि बिना कुछ न कुछ मन में रहे यह घूम नहीं सकती तो बाहर घूमने वाला मन कहीं भी आश्रय न पाकर अपने उसी स्थिर अँश के पास लौट आयेगा जो मूर्च्छित से माला की गति के कारण हो रहा है। माला के फिरने में जो श्रद्धा और विश्वास की शक्ति काम कर रही है वह एक साथ व्यक्त हो जायेगी और सम्पूर्ण मन को आत्मसात् कर लेगी।

माला के द्वारा जब इतना काम हो सकता है तब आदरपूर्वक उसका विचार न करके यों ही साधारण सी वस्तु समझ लेना भूल नहीं तो और क्या है? उसे केवल गिनने की एक तरतीब समझकर अशुद्ध अवस्था में भी पास रखना बायें हाथ से गिन लेना, लोगों को दिखाते फिरना पैर तक लटकाये रहना, जहाँ कहीं रख देना जिस किसी चीज से बना लेना तथा चाहे जिस प्रकार गूंथ लेना सर्वथा वर्जित है। ऐसी बातें समझदारी और श्रद्धा की कमी से होती है, विशेषकर उन लोगों से जिन्होंने किसी गुरु से विधिपूर्वक दीक्षा न लेकर माला के विधि विधान पर विचार ही नहीं किया है। शास्त्रों में माला के सम्बन्ध में बहुत विचार किया गया है। यहाँ संक्षेप में उसका कुछ थोड़ा सा दिग्दर्शन कराया जाता है।

तीन प्रकार की माला

माला प्रायः तीन प्रकार की होती है—करमाला, वर्णमाला और मणिमाला। अँगुलियों पर जो जाप किया जाता है वह करमाला जप है। यह दो प्रकार से होता है—एक तो अँगुलियों से ही गिनना और दूसरा अँगुलियों के पर्वों पर गिनना। शास्त्रतः दूसरा प्रकार ही स्वीकृत है। इसका नियम है कि अनामिका के मध्य भाग से नीचे की ओर चले फिर कनिष्ठा के मूल से अग्रभाग तक और फिर अनामिका और मध्यमा का अग्र भाग पर होकर तर्जनी के मूल तक जाय। इस प्रकार अनामिका के दो, कनिष्ठा के तीन, पुनः अनामिका का एक, मध्यमा का एक और तर्जनी के तीन पर्व दस संख्या होती है। मध्यमा के दो पर्व सुमेरू के रूप में छूट जाते हैं। साधारण करमाला का यही क्रम है, परन्तु अनुष्ठान भेद से इसमें अन्तर भी पड़ता है—जैसे

(१) शक्ति के अनुष्ठान में अनामिका के दो पर्व, कनिष्ठा के तीन पुनः अनामिका का अग्र भाग एक मध्यमा के तीन पर्व और तर्जनी का एक मूल पर्व इस प्रकार दस संख्या पूरी होती है।*

(२) श्रीविद्या में इससे भिन्न नियम है। मध्यमा का मूल एक अनामिका का मूल एक कनिष्ठा के तीन, अनामिका और मध्यमा के अग्रभाग एक-एक और तर्जनी के तीन इस प्रकार दस संख्या पूरी होती है। करमाला के जप करते समय अँगुलियाँ अलग-अलग नहीं होनी चाहिये। थोड़ी सी हथेली मुड़ी

---

* देखें—यामल।

रहनी चाहिये। मेरू का उल्लंघन और पर्वों की सन्धि (गाँठ) का स्पर्श निषिद्ध है। यह निश्चित है कि जो इसी सावधानी रखकर जप करेगा उनका मन अन्यत्र नहीं जायेगा। हाथ को हृदय के सामने लाकर अँगुलियों को कुछ टेढ़ी करके वस्त्र से ढककर दाहिने हाथ से ही जप करना चाहिये। जप अधिक संख्या में करना हो तो इन दशकों को स्मरण नहीं रखा जा सकता। इसलिये उनको स्मरण रखने के लिए एक प्रकार की गोली बनानी चाहिये। लाक्षा, रक्तचन्दन, सिन्दूर, और गौ के सूखे कण्डे को चूर्ण करके सबके मिश्रण से वह गोली तैयार करनी चाहिये। अक्षत अँगुली, अन्न, पुष्प, चन्दन अथवा मिट्टी से उन दशकों का स्मरण रखना निषिद्ध है, माला की गिनती भी इनके द्वारा नहीं करनी चाहिये।*

वर्णमाला—का अर्थ है—अक्षर के द्वारा संख्या करना। यह प्रायः अन्तर्जप में काम आती है परन्तु बहिर्जप में भी इसका निषेध नहीं है। वर्णमाला के द्वारा जप करने का प्रकार यह है कि पहले वर्णमाला का एक अक्षर बिंदु लगाकर उच्चारण कीजिये और फिर मंत्र का—इस क्रम से अवर्ग के सोलह कवर्ग से पवर्ग तक के पचीस और यवर्ग के लकार तक आठ और पुनः एक लकार इस प्रकार पचास गिनते जाइये, फिर लकार से लौटकर अकार तक आइये सौ की संख्या पूरी हो जायेगी। अ को सुमेरू मानते हैं। उसका उल्लंघन नहीं होना चाहिये। संस्कृत में त्र और ज्ञ स्वतन्त्र अक्षर नहीं, संयुक्ताक्षर माने जाते हैं। इसलिये उनकी गणना नहीं होती। वर्ण भी सात नहीं आठ माने जाते हैं। आठवाँ शकार से प्रारम्भ होता है। इनके द्वारा अं कं चं टं तं पं यं शं यह गणना करके आठ बार जपना चाहिये—ऐसा करने से जप संख्या १०८ हो जाती है। ये अक्षर तो माला के मणि हैं। इनका सूत्र है कुण्डलिनी शक्ति। वह मूलाधार से आज्ञाचक्र पर्यन्त सूत्र रूप से गूंथे हुए हैं। इन्हीं के द्वारा आरोह और अवरोह क्रम में अर्थात् नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे जाप करना चाहिये। इस प्रकार जो जप होता है, वह सद्य सिद्धिप्रद होता है।

जिन्हें अधिक संख्या में जप करना हो उन्हें तो मणिमाला रखना अनिवार्य है। मणि (मनिया) पिरोये होने के कारण इसे मणिमाला कहते हैं। यह माला अनेक वस्तुओं की होती है। रुद्राक्ष, तुलसी, शंख, पद्मबीज, जीवपुत्रक, मोती, स्फटिक, मणि रत्न, सुवर्ण, मूंगा, चाँदी, चंदन और कुशामूल—

---

* देखें—शाक्तानन्द तरंगिणी।

इन सभी के मणियों से माला तैयार की जा सकती हैं। इनमें वैष्णवों के लिये तुलसी और स्मार्त, शैव, शाक्त आदि के लिये रुद्राक्ष सर्वोत्तम माना गया है। माला बनाने में इतना ध्यान रखना चाहिये कि एक चीज की माला में दूसरी चीज न लगायी जाय। विभिन्न कामनाओं के अनुसार भी मालाओं में भेद होता है और देवताओं के अनुसार भी। उनका विचार कर लेना चाहिये। माला के मणि (दाने) छोटे बड़े न हों। एक सौ आठ दानों की माला सब प्रकार के जपों में काम आती है। ब्राह्मण कन्याओं के द्वारा निर्मित सूत से माला बनायी जाय तो सर्वोत्तम है। शाँति कर्म में श्वेत, वशीकरण से रक्त, अभिचार में कृष्ण और मोक्ष तथा ऐश्वर्य के लिये रेशमी, सूत की माला विशेष उपयुक्त है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के लिये क्रमशः श्वेत, रक्त पीत और कृष्ण वर्ण सूत्र श्रेष्ठ हैं। रक्त वर्ण का प्रयोग सब वर्णों के लोग सब प्रकार के अनुष्ठानों में कर सकते हैं। सूत को तिगुना करके फिर से तिगुना कर देना चाहिये। प्रत्येक मणि को गूंथते समय प्रणव के साथ एक-एक अक्षर का उच्चारण करते जाना चाहिये। जैसे—ॐ अँ कहकर प्रथम मणि तो ऊं आं कहकर दूसरी। मणि बीच में जो गाँठ देते हैं उसके सम्बन्ध में विकल्प है चाहे गाँठ दे और चाहे न दें। दोनों ही बात ठीक हैं। माला गूंथने का मंत्र अपना इष्ट मंत्र भी है। अन्त में ब्राह्मण ग्रंथि देकर सुमेरू गूंथे और पुनः 'हुँ' कहकर ग्रंथि लगाये। स्वर्ण आदि सूत्र से भी माला पिरोई जा सकती है। रुद्राक्ष के दानों के मुख और पुच्छ नीचा। पोहने के समय यह ध्यान रखना चाहिये कि दोनों का मुख परस्पर में मिलता जाय और गाँठ देनी हो तो तीन फेरे की अथवा ढाई फेरे की लगानी चाहिये। ब्रह्म ग्रंथि भी लगा सकते हैं। इस प्रकार निर्माण करके उसका संस्कार करना चाहिये।

मनकों की संख्या

तीस रुद्राक्ष के दानों से बनायी गयी माला जप कर्म में धन देने वाली होती है। सत्ताईस दानों की माला पुष्टिदायिनी और पच्चीस दानों की माला मुक्तिदायिनी होती है, पन्द्रह रुद्राक्षों की बनी हुई माला अभिचार कर्म में फल-दायक होती है। जप कर्म में अँगूठे को मोक्षदायक समझना चाहिए और तर्जनी को शत्रुनाशक। मध्यमा धन देती है और अनामिका शान्ति प्रदान करती है। एक सौ आठ दानों की माला उत्तमोत्तम मानी गयी है। सौ दानों की माला उत्तम और पचास दानों की माला मध्यम होती है। चौवन दानों की माला मनोहारिणी एवं श्रेष्ठ कही गयी है। इस तरह की माला से जप करे। वह जप

किसी को दिखाये नहीं। कनिष्ठिका अँगुली अक्षरणी (जप के फल को क्षरित—नष्ट न करने वाली) मानी गयी है, इसीलिये जप कर्म में शुभ है। दूसरी अँगुलियों के साथ अँगुष्ठ द्वारा जप करना चाहिये, क्योंकि अँगुष्ठ के बिना किया हुआ जप निष्फल होता है।*

मणिमाला १०८, ५४ या २७ मानकों की शुभ है। इससे कम (२७ से कम) दानों की माला शुभ नहीं होती—

अष्टोत्तर शतं कार्याचतुष्पंचाँशमेववा।
सप्तविंशतिमाना वा ततोहीनाधमास्मृता:॥

जप करते समय 'सुमेरू' का उल्लंघन मणिमाला में भी नहीं किया जाता। एक माला पूरी होने पर माला पलटकर विपरीत क्रम से गणना की जाती है। इस क्रिया को गुरु द्वारा समझ लेना चाहिये।

माला के मनकों (दानों) की गिनती करते (जप करते) समय अँगुष्ठ, मध्यमा और अनामिका का ही प्रयोग करना होता है अर्थात् अनामिका अँगुली में माला स्थापित कर मध्यमा और अँगुष्ठ के द्वारा मनकों की संख्या आगे बढ़ाते रहना चाहिये। तर्जनी का प्रयोग वर्जित है। तर्जनी का प्रयोग तब होता है जब मारण कर्म के निमित्त जप किया जा रहा हो।

शैवागमतंत्र के अनुसार तर्जनी का प्रयोग विद्वेषण, उच्चाटन में तथा कनिष्ठिका का प्रयोग मारण में करना चाहिए—

तर्जन्यंगुष्ठयोगाद्धि विद्वेषोच्चाटनादिषु:।
कनिष्ठांगुष्ठकाभ्य ंतुजपेन्मारणकर्मणि॥

तागा (सूत्र) टूट जाने पर टूटी माला से जप निषिद्ध है, सूत्र देने पर उसमें गाँठ देकर न जोड़े अपितु नये सूत्र में पिरोकर जप करे।

जप में जम्हाई, छींक या खाँसी आने पर, बायें हाथ से माला छू जाने पर अथवा जप करते समय तर्जनी अँगुली का स्पर्श हो जाने पर उस आवृति का जप व्यर्थ हो जाता है जो गणना में सम्मिलित नहीं होता अर्थात् माला में तब तक जो अधूरी गिनती हुई है वह भी दूषित मानी जाती है—

कासे प्लुते च जम्भायामेकमावर्तकंत्यजेत।
प्रमादात्तर्जनी युक्तोभवेदावर्तकं त्यजेत्॥
तर्जन्या न स्पर्शेत्सूत्रं कम्पयेन्नोविधूनयेत्।
न स्पृशेत्वामहस्तेन करभ्रष्टां न कारयेत्॥

—शैवागमतंत्र

---

* सनातन वाणी

जप माला के संस्कार

कोई भी जप, साधना, पुरश्चरण या अनुष्ठान में माला की आवश्यकता होती है। प्राय: जनसाधारण बाजार से माला खरीदकर उसी से जप आरम्भ कर देते हैं। ऐसी माला से जप करना निरर्थक व निषिद्ध है क्योंकि उससे कोई लाभ या सिद्धि सम्भव नहीं है। सर्वप्रथम माला क्रय करने के बाद विधिवत् उसके संस्कार करना चाहिए और तदुपरान्त ही उक्त माला से जप करना चाहिए, अन्यथा जप निष्फल है और आराध्य देवता भी प्रसन्न होने के स्थान पर रुष्ट होता है।

अप्रतिष्ठित मालाभिर्मंत्रं जपति यो नरः।
सर्वं तद्विफलं विद्या त्क्रुद्धोभवति देवता ।।

—मुण्डमाला तंत्रे।

कोई भी माला हो, जप या साधना में प्रयुक्त प्रत्येक माला में पहले संस्कार करना आवश्यक है फिर रुद्राक्ष माला में तो अति आवश्यक है। रुद्राक्ष, कमलगट्टा तुलसी आदि जिसकी भी माला हो यह ध्यान में रखना चाहिए कि उसके दाने सभी लगभग समान आकार के हों कोई बहुत बड़ा और कोई छोटा न हो। कोई पुराने कोई नये न हों। कीड़ा लगे या टूटे-फूटे न हों। माला के संस्कार की विधि 'शैवागमतंत्र' में इस प्रकार वर्णित है :—

पीपल के पत्तों से निर्मित अष्टदल कमल (एक पत्ता मध्य में तथा शेष आठ पत्ते आठ दिशाओं में रखने से अष्टदल कमल बनेगा) के ऊपर माला स्थापित कर क्रमश: गाय के दूध, दही, घी, गोमूत्र, गोबर से पृथक्-पृथक् प्रक्षालित (धोये) करे, तदनन्तर निम्न मंत्र से जल द्वारा प्रक्षालित करें*—

ॐ सद्योजातं प्रपद्यापि सद्योजाताय वै नमः।
भवे भवे नाति भवे भवस्य माँ भवोद्भवाय नमः।।

तदनन्तर चन्दन, अगर, रोरी आदि से माला का घर्षण (मलना) निम्न मंत्र से करें—

---

* शिवमहापुराण में भी यही विधान है।

ॐ वामदेवायनमः ज्येष्ठाय नमः
श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालायनमः ।
कल विकरणाय नमो बल विकरणाय नमो,
वलायनमो बलप्रमथनाय नमः,
सर्वभूत दमनायनमो मनोन्मनाय नमः ।

तदनन्तर निम्न मंत्र से माला को धूपित (धूप) करें—

ॐ अघोरेभ्यो थघोरेभ्यो घोर घोरतरेभ्यः ।
सर्वेभ्यः सर्वसर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः ।।

तदनन्तर निम्न मंत्र से माला में चन्दन आदि का लेप करें—

उँ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि ।
तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ।।

तदनन्तर माला के प्रत्येक दाने को निम्न मंत्र से सौ-सौ बार अभिमंत्रित करें—

ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वर सर्वभूतानां ।
ब्रह्माधिपति ब्रह्मणोधिपति ब्रह्माशिवो मे अस्तुसदाशिवोम् ।।
ॐ ह्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं
एँ ऐं ओं औं अँ अः कँ खँ गँ घँ ञँ चँ छँ जँ झँ
ञँ टँ ठँ डँ ढँ णँ तँ थँ दँ धँ नँ पँ फँ बँ
भँ मँ यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ क्षँ ।।

पुनः इस माला को पूर्वोक्त पीपल के पत्ते से निर्मित अष्टदल कमल में स्थापित कर माला की प्राण प्रतिष्ठा करें—

इतने संस्कार करने के बाद माला जप करने योग्य शुद्ध तथा सिद्धिदायक होती है।

नित्य जप करने से पहले माला का पूजन निम्न मंत्र से करने के उपरान्त जप प्रारम्भ करें—

ॐ अक्षमालाधिपतये सुसिद्धि देहि-देहि,
सर्व मंत्रार्थ साधिनि साधय-साधय,
सर्व सिद्धि परिकल्पय परिकल्पय मे स्वाहा ।
ऐं ह्रीं अक्षमालिकायै नमः ।

जप करते समय माला पर किसी की दृष्टि नहीं पड़नी चाहिए। एतदर्थ गोमुख रूपी थैली 'गोमुखी' में माला रखकर इसी थैले में हाथ डालकर जप किया जाता है। अथवा वस्त्र आदि से माला आच्छादित करें।१ अन्यथा जप निष्फल होता है। जो जप किया जाय, उसकी संख्या (गणना) अवश्य करें।२

जप समाप्त होने पर माला को शिर में धारण कर (माला का शिर से स्पर्श कराकर) शुद्ध स्थान में माला रख दें।

जिस माला से साधना, जप या पुरश्चरण किया जाता है, उसे पहनना निषिद्ध है। जप की माला को कभी भी हाथ में (भुजा में) कण्ठ में (गले में) अथवा शिर पर धारण करने से माला अपवित्र व प्रभावहीन हो जाती है।३

१—परदृष्टि गतं सूत्रं सर्वथा निष्फलं भवेत्।
तस्मात्सर्व प्रयत्नेन गोपनीयं सदा बुधैः॥

२—असंख्यातेन यज्जप्तं तज्जप्तं निष्फलं भवेत्।

३—न धारयेत्करे कण्ठे मूर्ध्नि च जपमालिकाम्।
—मुण्डमाला तंत्रे।

कलश स्थापना का महत्व और विधि

भारतीय संस्कृति में कुम्भ की एक विराट कल्पना है, कुम्भ समस्त ब्रह्माण्ड का प्रतीक है, क्योंकि ब्रह्माण्ड का आकार भी कुम्भ (घट) के ही समान है, अतः समस्त सृष्टि का इसी कुम्भ में समावेश है। चौरासी लाख योनि के प्राणियों समेत सभी देवी-देवता, नदी-नद, पर्वत, तीर्थ इसी कुम्भ में सन्निहित हैं—

त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयिस्थिताः।
शिवः स्वयं त्वमेवासीविष्णुस्त्वं च प्रजापतिः।।

आदित्या वसव रुद्राः विश्वेदेवा मरुद्गणाः।
त्वयितिष्ठन्ति सर्वेऽपि सर्वकाम फलप्रदः।।

✪ ✪ ✪

कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले तस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणः स्मृताः।।

कुक्षौ तु सागराः सप्त सप्तद्वीपा वसुन्धराः।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः।।

अंगैस्तु सहिता सर्वे कलशे तु समाश्रिताः।

दूसरी ओर कलश अमृतत्व का प्रतीक है, समुद्र मंथन से प्राप्त अमृत कलश ही वास्तविक कलश है।

इसी कारण प्रत्येक संस्कार पर, प्रत्येक उत्सव पर, किसी भी साधना या पुरश्चरण प्रारम्भ करने से पहले कलश स्थापन का विधान भारतीय संस्कृति में है। बिना कलश की स्थापना और पूजन किये कोई मंगल कार्य नहीं सम्पादित होता है।

कलश स्थापन का विधान यह है कि पूजा, साधना या पुरश्चरण स्थल पर भूमि को शुद्ध करके, भूमि पर पहले 'घटार्गल यंत्र' बनायें (देखें शारदा तिलक, नवम पटल) यह सम्भव न हो तो (क्रमशः) विन्दु, त्रिकोण, षटकोण, अष्टदल,

षट्विंश दल, भूपुर सहित गन्धादि से चित्रित करे अथवा संक्षिप्त में विन्दु, उसके बाहर त्रिकोण, उसके बाहर वृत्त और उसके बाहर चतुष्कोण चित्रित करे। इस चित्र के ऊपर शुद्ध मिट्टी से वेदिका का निर्माण करे। वेदी के ऊपर गेहूँ, जौं, सप्तधान्य आदि बोये, तदनन्तर इसी वेदी के ऊपर अथवा इसके समीप कलश स्थापित करे।

कलश के साथ वेदी में जौं-गेहूँ आदि सप्तधान्यों का बोना भी प्रत्येक मंगल कार्य में, दीक्षा में, साधना या अनुष्टान में सर्व प्रथम व आवश्यक कार्य है :—

यवान्वै वापयेत्तत्रगोधमैश्चापि संयुतान् ।
तत्र संस्थापयेत्कुंभं विधिना मंत्र पूर्वकम् ॥

प्रतिष्ठायां च दीक्षायां स्थापने चोत्सवे तथा।
संप्रोक्षणे च शान्त्यर्थं विवाहे मौंजिवन्धने ॥

सर्व मंगल कार्येषु कारयेदंकुरार्पणम् ।
मंगलांकुरस्य वपनं कुर्यात्तत्रैव चाहनि ।।

—सिद्धान्त शेखर

अथवा दीक्षाग्रहण, यज्ञारम्भ, पुरश्चरणारम्भ से नवें, सातवें, पाँचवें या तीसरे दिन पूर्व भी यह कार्य किया जा सकता है।

प्रतिष्ठा दिवसात्पूर्वं नवमे सप्तमे दिने ।
पंचमे वा तृतीये वा सद्योवा चांकुरार्पणम् ॥

तंत्रशास्त्र की मान्यता है कि प्रत्येक उत्सव-संस्कार-दीक्षाग्रहण-पुरश्चरण आदि में वेदी पर जौं आदि धान्य का बोना सफलता व मंगल सूचक है—

उत्सवेषु विविधेष्वपि दीक्षा स्थापनादि पवित्र विधौच ।
मँगलांकुर विशेषणपूर्वं मँगलँ भवति कर्मकृतँ तत् ॥

इस प्रकार वेदी में जौं आदि अन्न बोने के उपरान्त कलश की स्थापना होती है। कलश को जल से परिपूर्ण किया जाता है तदनन्तर गंगाजल, गन्ध, अक्षत, दूर्वा, सर्वोषधी, हरिद्रा, सुपारी, पंचपल्लव, सप्तमृतिका, पंचरत्न, दूध, दही, घी, सुवर्ण, कलश में डालकर विभिन्न देवताओं को कलश में आवाहित कर पूजन किया जाता है। तदन्तर प्रधान देवता (जिसकी उपासना या अनुष्ठान होना है) का आवाहन व पूजन किया जाता है।

विशेष द्रव्य

यदि पुरश्चरण किसी विशेष प्रयोजन से किया जा रहा हो तो तदनुसार कलश में विशेष वस्तुएँ भी डाली जाती है :—

धर्मकामः क्षिपेद् भस्म धनकामस्तु मौक्तिकम् ।
श्री कामः कमलँ दद्यात् कामार्थी रोचनँ तथा ।।
मोक्षकामो न्यसेद्वस्त्रँ च जयकामो पराजिताम ।
उच्चाटनार्थं व्याघ्रीं च वश्यार्थं शिखिमूलकम् ।।
मारणाय मरीचँ च कैतवँ मोहनाय च ।

अर्थात् धर्मलाभ हेतु भस्म, धन लाभ हेतु मोती और कमल, विषय भोग हेतु रोचना, मोक्ष हेतु वस्त्र, विजय हेतु अपराजिता (बड़ी खिरैंटी) - किसी का उच्चाटन करना हो तो व्याघ्री (छोटी कटेरी) वशीकरण हेतु मोरपंखी, मारण हेतु काली मिर्च और मोहित करने हेतु धतूरा ।

कलश में सभी वस्तुएँ कर्मकाण्डीय पद्धति के अनुसार विधिवत् मंत्रों का उच्चारण करते हुए डाली जाती हैं और पूजन भी विधिबत् किया जाता है ।

मुख्यतः कलश ताँबे का उत्तम माना गया है, इसके अभाव में सुवर्ण, चाँदी पीपल या मिट्टी का कलश ग्राह्य है ।

सभी मांगलिक कार्यों में सामान्यतः मध्य में पचास अंगुल चौड़ा और सोलह अंगुल ऊँचा, नीचे बारह अंगुल चौड़ा और ऊपर से आठ अंगुल का मुख वाला कलश श्रेष्ठ माना जाता है :—

हेमराजतताम्राश्च मृण्मयालक्षणान्विताः ।
यात्रोद्वाह प्रतिष्ठादौ कुम्भास्युरभिसेचने ।।
पंचाशांगुल वैपुल्या उत्सेधे षोडऽशांगुलाः ।
द्वादशांगुलमूलास्युर्मुखमष्टांगुलं भवेत् ।।

जौं के अंकुरों से प्राप्त संकेत

वेदी के ऊपर जो सप्तधान्य व जौं आदि बोये जाते हैं । उनसे सफलता—असफलता, शुभ या अशुभ संकेत भी प्राप्त होते हैं । यदि जौं के अँकुर सीधे ऊगें, कोमल और श्वेत वर्ण हों तो साधना में सफलता का शुभ संकेत है । इसके

विपरीत अँकुर सीधे न होकर टेढ़े-मेढ़े हों, तिरछे हों और पश्चिम या दक्षिण दिशा की ओर मुड़े हों, धुंधले वर्ण के, बौने हों तो असफलता, विघ्न आदि के प्रतीक होते हैं—

> सम्यगूर्ध्वं प्ररूढ़ानि कोमलानिसितानि च।
> धूम्रवर्णा न्यपूर्वाणि तथा तिर्यग्गतानि च ॥
> श्यामलानि च कुब्जानि वर्जयेद्दशुभानि च।
>
> —सिद्धान्त शेखर

यवांकुर धुंधले हों तो वाद-विवाद का भय होता है यदि अधूरे उगे हों तो जनहानि, तिरछे हों तो रोग भय, बौने हों तो शत्रुभय होता है। ऐसी स्थिति में पुरश्चरण में सिद्धि तो संदिग्ध है ही साथ ही अनिष्ट का भी संकेत है। ऐसी स्थिति में अशुभ फलों के निराकरण हेतु शान्ति करने का आदेश तंत्रशास्त्र में है—

> अशुभे चांकुरेजाते शान्ति होमँ समाचरेत्।
> मूलमँत्रेण जुहुयाद् गुरुमूर्तिधरैः सह ॥
> अघोरास्त्रेण चास्त्रेण शतँ वाथ सहस्त्रकम्।

तंत्रशास्त्र के एक अन्य ग्रंथ 'सारस्वत तंत्र' में भी धुंधले, काले, तिरछे, गिरे हुए, बौने, रोग ग्रस्त, ठीक से न उगे होने पर साधना में असफलता तथा रोग, कष्ट, हानि के अलावा मृत्युभय का भी संकेत मिलता है—

> प्ररूढ़ैरंकुरैः कर्तुर्निर्दिशेच्च शुभाशुभं।
> श्यामैःकृष्णैरंकुरैरर्थहानिस्तिर्यग्रूढैर्व्याधिरांदोलितैस्तैः।
> कुब्जै र्दुःखं दुःष्प्ररूढैर्मृ ति च रोगाभुग्नैः स्थानदेशेष्टहानिः ॥

—कूट जटामांसी, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, तालीसपत्र, चन्दन, शिलाजीत, वच, चंपक, नागरमोथा यह दस वस्तुएँ सर्वौषधि हैं।

—हाथीशाला, घुड़साल, वल्मीक, संगम, गोशाला, न्यायालय और चतुष्पथ की मिट्टी सप्त मृतिका है।

—नीलम, पोखराज, मोती, सोना और मोती यह पंचरत्न हैं।

—पीपल, गूलर, आम, बट, और पलाश यह पांच वृक्षों के पत्ते पंचपल्लव हैं।

कृषि उत्पादन के बारे में पूर्व संकेत

वेदी में सप्तधान्य व जौं आदि बोकर कलश स्थापना का विधान सांस्कृतिक, आध्यात्मिक तथा उपासना की दृष्टि से तो है ही साथ ही इसके द्वारा कृषि उत्पादन के बारे में भी पूर्वानुमान का विधान है। दोनों नवरात्रियों में देवी स्थापना के समय वेदी में जो अन्न बोये जाते हैं उनसे अगली कृषि के बारे में ज्ञात होता है।

भारत में मुख्यतः तीन फसलें होती हैं। चैत्र की नवरात्रियों में स्थापित कलश की वेदी से जायद कृषि का, शारदीय नवरात्रों से शीतकालीन कृषि का और हरकाली की स्थापना (लगभग १६ जुलाई) की वेदी से वर्षाकालीन कृषि का पूर्वानुमान होता है।

चैत्र की नवरात्रियों में वेदी पर जौं, गेहूँ के अलावा मक्का आदि जायद फसलों के बीज भी बोये जाते हैं। इसी प्रकार हरकाली पर वर्षाऋतु के अन्न धान आदि और शारदीय नवरात्रों में सरसों, चना, जौं आदि शीतकालीन अन्न बोये जाते हैं।

ऐसी मान्यता है कि कलश वेदी पर जिस अन्न के बीज स्वस्थ्य तथा अच्छे उगेंगे उनकी उपज वर्ष में अच्छी होगी और जिस अन्न के बीज बौने रोगी, तिरछे आदि उगें या अच्छी तरह न उगें—वर्ष में उन अन्नों की उपज अच्छी नहीं होगी। ऐसी स्थिति में दुर्भिक्ष व अनावृष्टि का भी संकेत मिलता है।

o—o

पूजा सम्बन्धी सामान्य नियम

पूजा में कहीं कोई त्रुटि न हो, कोई नियम विरुद्ध कार्य न हो यह ध्यान में रखना आवश्यक है। सामान्य रूप से नित्य प्रति पूजा उपासना में निम्न नियमों को ध्यान में रखना चाहिए।*

—पत्र, पुष्प, जल तथा फल आदि (गंगाजल व कमल बिल्वपत्र, तुलसीदल छोड़कर) ताजे होना चाहिए। एक दिन से अधिक यह वर्जित हैं। पुष्प, पत्र, फल आदि उसी दिन तोड़कर अर्पित करने चाहिए।

—तुलसी, आवला के पत्ते, बिल्वपत्र, कमल के पुष्प जो कली के रूप में हों तीन दिन तक ग्राह्य हैं।

—गन्धहीन, पहले दिन से तोड़े, वृक्ष से स्वयं गिरे पुष्प देवपूजा योग्य नहीं होते।

—पुष्प अर्पित करते ससय पुष्पों का मुख ऊपर का रक्खें।

—बिल्वपत्र तुलसी आदि पत्र अधोमुख अर्पित करे।

—फूल, पत्र और फल यह तीनों इस प्रकार अर्पित करें कि उनकी डण्डी (जहाँ से पेड़ पर जुड़ा हो) उपास्य देवता की ओर हो—अपनी ओर न हो।

—बिल्वपत्र तुलसी आदि के पत्ते कटे, गन्दे न हों।

—धोती में रखने, पानी में डालने से पुष्प अपवित्र हो जाते हैं, पूजा के योग्य नहीं रहते।

पुष्प आदि के बारे में विशेष विवरण—भगवान शिव को प्रिय पुष्प ये हैं—अर्क (मदार) करवीर (कनैल), बिल्वपत्र और बकुल, धत्तूर, शमी, द्रोणपुष्प (गुमा), नीलकमल शिव पर चढ़ाने से उत्तरोत्तर अधिक फल मिलता है। पाटल, मन्दार, अपामार्ग (चिड़चिड़ी), जाति, चंपक, उशीर, तगर,

---

* केवल तान्त्रिक पूजा में ही नहीं, स्मार्त श्रौत आदि सामान्य एवं दैनन्दिन पूजा में भी इन नियमों का पालन आवश्यक है।

नागकेसर, पुन्नाग, जपा (उड़हूल), मल्लिका, सहकार (आममंजरी), कुसुम्भ भी शिव को प्रिय हैं।

भगवान शिव को कुंद के अतिरिक्त केतकी, अतिमुक्त, यूथी, मदंतिका, शिरीष, सर्ज, बंधूक, अंकोल पत्र, करंज (करौंदा), इन्द्रतरु, विभीतक (बहेड़ा), तथा निर्गन्ध और उग्रगंधी का फूल न चढ़ायें। इनके बदले कुछ न मिले तो कुशा चढ़ादें।

भगवान शिव को विल्वपत्र चढ़ाते समय ध्यान दें कि उसकी पत्तियाँ अपनी ओर सीधे खड़ी रहें।

विष्णु के प्रिय पुष्प पत्र—मालती, जाति, केतकी, मल्लिका, अशोक, चंपक, पुन्नाग, बकुल, उत्पल (कमल), कुंद, करवीर, पाटल (गुलाब), तगर के पुष्प भगवान विष्णु को प्रिय हैं।

अपामार्ग (चिड़चिड़ी) भृंगराज, खदीर, शमी, दूर्वा कुशा, दमनक, विल्व और तुलसीपत्र भगवान विष्णु को उत्तरोत्तर प्रिय हैं। तुलसी सर्वाधिकप्रिय है।

भगवान सूर्य एवँ गणेश के प्रिय पुष्प—भगवान विष्णु के प्रिय पुष्प श्रीसूर्यनारायण देवता तथा श्रीगणपति देवता के भी प्रियपुष्प हैं।

पुष्पों के अभाव में सूर्य को कुब्जक पुष्प भी चढ़ाये जा सकते हैं। ऐसा भविष्य पुराण में कहा गया है।

कृष्णला, उन्मत्त (काँची), गिरिकर्णिका, कंटकारिका, आम्रातक तथा गंधहीन पुष्पों से सूर्य की पूजा नहीं करनी चाहिए।

वर्जित पुष्प—भगवान शिव को कुँद, विष्णु को उन्मत्त, देवी को मंदार पुष्प तथा सूर्य को तगर पुष्प भूल कर भी नही चढ़ाना चाहिए।

सभी देवों तथा देवियों के प्रिय पुष्प—जाती, मल्लिका, करवीर, अशोक, उत्पल, चंपक, बकुल, विल्व, शमी, कुशा इनका प्रयोग सर्व देवपूजा में बिहित है।

पितरों के प्रिय तथा अप्रिय पुष्प—करवीर (कनैल), धत्तूर, विल्वपत्र, केतकी, वकुल, कुंद, किंशुक, कुरंटिका तथा सभी प्रकार के लाल फूल पितृकर्म में सर्वथा त्याज्य हैं। इनका उपयोग पितरों के लिए न करें। श्राद्ध में तो एकदम से न करें। पानी में उगने वाले लालफूल तथा सभी प्रकार के उजले फूल पितरों को प्रिय हैं।

तुलसी और विष्णु—तुलसी भगवान विष्णु को अतिप्रिय है। यह बहुत शीघ्र ही प्रभावित होने वाला पवित्र पौधा है। तुलसी को मंगल, शुक्र, रविवार के दिन नहीं तोड़ते। वैधृति, व्यतीपात, पूर्णिमा-अमावस्या (पर्वद्वय), संक्रान्ति, द्वादशी, दोनों प्रकार के सूतकों में, तथा सायंकाल में भी तुलसी नहीं तोड़ी जाती, रविवार को दूर्वा तथा कार्तिक में आंवला का पत्र नहीं तोड़ना चाहिए अन्यथा पुण्यक्षय होता है।×

कौन से पुष्प या पत्रादि कितने दिनों तक पर्युषित (वासी) नहीं होते, अर्थात् शुद्ध रहते हैं :—

कुशा (एक मास तक, लेकिन कुशग्रहणी अमावास्या को संग्रहीत कुशा एक वर्ष तक), भृंगराज (९ दिन), नागकेशर (२ दिन), कमल-१, बिल्वपत्र ३० दिन, तुलसीपत्र ६ दिन, शमी-७, जाती-१, अपामार्ग-३, केतकी-४, दूब-८, मदार-१, अगस्त्य-३, पलाश-६, मल्लिका-४, करवीर (कनेर या कनैल)-८, कह्लार-११, तगर-६, चंपक-९, कुंभी-१, दमनक-१ अन्य जिन पुष्पों का उल्लेख नहीं हुआ है, उनपर उपरोक्त सामान्य नियम लागू होंगे।

यथा संभव अपने उपवन के पुष्पों को ही पूजा में प्रयोग करे, पूजा हेतु पुष्पों की चोरी करने में भी दोष नहीं है, लेकिन पूजा हेतु किसी से पुष्प मांगना वर्जित है। पूजा के पुष्पों को न तो सूंघना चाहिए और न अपने शरीर पर रखना चाहिए। अंजलि में पूजा के पुष्प लेकर किसी को प्रणाम करने से भी पुष्प अपवित्र माने जाते हैं।

—शालिग्राम (विष्णु) में अक्षतों से पूजन निषिद्धहै, अक्षतों के स्थान पर जौं से पूजन होता है। लेकिन यदि बिष्णु की मूर्ति धातु से बनी या पट्ट आदि चित्र पर अंकित हो तो अक्षतों से पूजा हो सकती है।

— गणेश जी को तुलसी, दुर्गा जी को दूब, सूर्य को बिल्ब पत्र नहीं चढ़ाये जाते हैं। कुछ स्थलों पर लक्ष्मी जी को कमल पुष्प न चढ़ाने का भी वर्णन मिलता है परन्तु यह सर्वसम्मत नहीं है।

शिव जी को शंख से अर्घा देना निषिद्ध है।

—शिव जी को कुन्द का पुष्प, विष्णु जी को धतूरा, देवी को मदार (आक) सूर्य को तगर पुष्प चढ़ाना वर्जित है।

× धर्मसिन्धु, भविष्यपुराण, देवीपुराण आदि पर आधारित।
(श्री तापस चन्द्र : त्रिस्कंध ज्योतिषम् ४/११)

—संक्रान्ति के दिन, द्वादशी, अमावास्या, पूर्णिमा तिथियों में, रविवार के दिन तथा संध्या के समय या रात्रि में तुलसी तोड़ना वर्जित है।

—वस्त्र अर्पित करते समय उपास्य देवी। देवता के स्वरूप व वर्ण को देखते हुए तदनुसार रंग के वस्त्र अर्पित करने चाहिए। यथा सूर्य को गुलाबी, गणेश जी को लाल, हनुमान जी को लाल, शिवजी को सफेद, देवी जी को पीला, लक्ष्मी जी को गुलाबी इत्यादि।

वस्त्र में दोनों ओर किनारी होना आवश्यक है। सिले वस्त्र वर्जित हैं (सिले वस्त्र मूर्तियों में लोग पहनाये रहते हैं जो शास्त्र सम्मत नहीं है)।

—एक ही घर में दो शिवलिंगों, दो शंखों, दो सूर्यमूर्तियों, दो शालिग्राम शिलाओं, दो गोमती चक्रों, दो नर्मदेश्वरों, तीन गणेश जी की मूर्तियों, तीन देवी मूर्तियों का पूजन निषिद्ध है। इससे घर में अशान्ति व भय होता है :—

गृहे लिंगद्वयं नार्च्यं गणेश त्रितयं तथा।
शंखद्वयं तथा सूर्यौ नार्चौ शक्तित्रयं तथा॥
द्वे चक्रे द्वारकायाश्च शालिग्रामशिलाद्वयं।
तेषांतु पूजनेनैवहृयुद्वेगं प्राप्नुयात् गृही॥

लेकिन यदि एक ही घर में कई परिवार निवास करते हैं और उनके भिन्न-भिन्न पूजागृह हों तो दोष नहीं है। जैसे एक घर में दो परिवार रहते हैं, दोनों के भिन्न-भिन्न पूजा गृह हैं तो दोनों परिवार एक-एक शिवलिंग की पूजा करें तो एक घर में दो शिवलिंग पूजा का दोष नहीं होगा।

—घर में अकेले किसी एक देवता (एकमूर्ति) का पूजन भी निषिद्ध है, विशेषतः गृहस्थ परिवार में—

एकामूर्तिर्नपूज्यैव गृहिणा स्वेष्टमिच्छता।
अनेक मूर्ति सम्पन्नः सर्वान्कामानवाप्नुयात्॥

अतः एक से अधिक मूर्तियाँ होना आवश्यक है। विशेषतः गृहस्थ घरों में पंचदेवताओं (सूर्य, गणपति, देवी, विष्णु और शिव) का पूजन होना चाहिए—

आदित्यं गणनाथं च देवी रुद्रं च केशवं।
पंचदैवतमित्युक्तं सर्व कर्मसु पूजयेत्॥

पंचदेव पूजन की यही भारतीय परम्परा है।

—पूजा का क्रम इस प्रकार है—

रविर्विनायकश्चण्डो ईशोविष्णुस्तथैवच ।
अनुक्रमेण पूज्यन्ते व्युत्क्रमेतु महद्भयं ।

अर्थात् पहले सूर्य की, फिर गणेश की, फिर देवी की, तदनन्तर शिव की, तदनन्तर विष्णु की पूजा करे । अन्यथाभय व अशान्ति कारी होता है ।

सामान्य पूजा में तो यह नियम है ही । प्रत्येक संस्कारों, यज्ञों, उत्सवों में भी सर्वप्रथम सूर्य, गणेश, देवी (गौरी, मातृका) पूजन का क्रम नियत है ।

—पूजा से पूर्व दीप प्रज्वलित करना आवश्यक है ।

— **देव प्रतिमा का परिमाण**—मन्दिरों में स्थापित देवी/देवता की मूर्ति का आकार छोटा या बड़ा जैसा चाहें रख सकते हैं । लेकिन घरों में स्थापित एवं पूजा की प्रतिमायें साधक के अंगुष्ठ मात्र से लेकर बाहर अंगुल तक की ही होनी चाहिए । अर्थात् न तो अंगूठे से छोटी हो और न ही बारह अंगुल से बढ़ी हो ।

अंगुष्ठपर्वाद्दारभ्य वितस्ति यावदेवहि ।
गृहेषु प्रतिमा कार्या नाधिकाः शस्यते बुधैः ।
—मत्स्यपुराण ।

—घर में देवस्थान ईशान कोण में उत्तम है । दक्षिण में निषिद्ध है ।

देवताओं की स्थापना घर में इस प्रकार करनी चाहिए कि उनका मुख पश्चिम को हो—

देवानांहि मुखं कार्यं पश्चिमायां सदाबुधैः ।
—नारद पुराण ।

— **आरती**

प्रत्येक देवी देवता की आरती खड़े होकर चौदह बार करनी चाहिए। सर्वप्रथम उपास्यदेवता के चरणों का स्मरण करते हुए चारबार पैरों की, पुनः दो बार नाभिकी, फिर एक बार मुख की, अन्त में सातवार सर्वांग की । यही नीराजन का विधान है ।

'आदौ चतुः पाणितले विधायद्वेनाभिमध्ये मुखमण्डलेऽकं ।'
सर्वेषुचांगेषुच सप्तवारानारार्तिकं भक्तजनस्तु कुर्यात् ।।

— **प्रदक्षिणा**—देवी जी की एक, सूर्य की सात, गणेश जी की तीन, बिष्णु की चार और शिव जी की डेढ़ परिक्रमा करने का विधान है—

एकं चण्ड्या रवौ सप्त त्रिणीदद्यात् विनायके ।
चत्वारि केशवो दद्यात् शिवस्यार्धं प्रदक्षिणा ।।

(शिवलिंग के साथ नीचे शक्ति (अर्घा) होती है जिसका मुख उत्तर दिशा को रहता है, इसका उलंघन वर्जित है, अतः शिव जी की प्रदक्षिणा में अपने स्थान से उठकर दक्षिण होते हुए उत्तर तक जाकर वापस लौटते हैं, पूरी परिक्रमा वर्जित है) प्रदक्षिणा क्रमशः दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, पूर्व—इस क्रम से की जानी चाहिए ।

—साधक को स्वयं भी धोती आदि बगैर सिला वस्त्र पहनना आवश्यक है । सिले वस्त्र पहनकर पूजा निषिद्ध है (अन्य सम्प्रदाओं में भी ऐसा ही नियम देखने को मिलता है । इस्लामधर्मावलम्बी भी काबा तीर्थ में जाकर धोती और उत्तरीय के रूप में बगैर सिले वस्त्र पहनते हैं । उपासना के समय बगैर सिली तागों से बुनीहुई टोपी ही शुभमानी जाती है) ।

—साधना के पूर्व चन्दन, रोरी, भस्म आदि लगाना, रुद्राक्ष पहनना, शिखा बन्धन, जनेऊ अथवा कन्धे में अंगोछा आदि कोई उत्तरीय वस्त्र धारण भी अत्यन्त आवश्यक है । अन्यथा साधना सिद्ध नहीं होती । जिस देवता की उपासना करनी हो स्वयं को भी उपासना से पहले उसी रूप में प्रस्थापित करे—

'शिवंभूत्वा शिवं यजेत्'

इत्यादि । जैसे शिव की उपासना करनी हो तो भस्म, रुद्राक्ष आदि धारण कर ही पूजा करे ।

—नयी मूर्ति अग्न्युत्तारण, प्राणप्रतिष्ठा, प्रतिष्ठा, षोडश संस्कार करने के उपरान्त ही पूजा के योग्य होती है ।

—प्रत्येक पूजा एवं साधना में गुरु का पूजन व ध्यान आवश्यक है ।

—किसी भी पूजा, होम, जप, दान, पाठ, श्राद्ध आदि में खाली हाथ कार्य करना निषिद्ध है । हाथ में सोना, या चांदी (अंगूठी पहनी हो) धारण कर अथवा जन साधारण के निमित्त कुशा का पवित्र धारण करना अनिवार्य है—

जपे होमे तथा दाने स्वाध्याये पितृतर्पणे ।
अशून्यं तु करं कुर्यात सुवर्ण रजतैः कुशैः ।।

—संध्या, सूर्य, चन्द्र, यम, काल, पञ्चमहाभूत (अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी, आकाश) यह आठ प्रत्येक कर्म के साक्षी हैं । अतः प्रत्येक कार्य (पूजन, हवन आदि में) इनका स्मरण पूजन कर प्रणाम करना चाहिए—

"सूर्यःसोमो यमः कालः संध्या भूतानि पंच च।
एते शुभाशुभस्येह कर्मणो मम साक्षिणः ।।
भो देव प्राकृतं चित्तं पापाक्रान्तमभून्मम ।
तन्निसारय चित्तान्मे पापं तेस्तु नमोनमः ।।
ॐ हूं फट् स्वाहा ।।"

—**पूजन सामग्री की स्थिति**—किसी भी पूजा या उपासना में पूजन सामग्री इस प्रकार रखने का विधान है—गन्ध पुष्प अक्षत आदि पूजा सामग्री दक्षिण ओर (दाहिने ओर)। नैवेद्य देवता के सामने या दायें भी रख सकते हैं। दीपक घी का हो तो दाहिने और तेल का हो तो बाँये। धूप वायीं ओर या सामने जलायें। अर्घा वायें ओर स्थापित करे। देवता को गन्ध, पुष्प, अक्षत, फल, आभूषण, पान, सुपारी आदि सामने समर्पित करे। हस्तप्रक्षालन हेतु जल पीठ की ओर।

एक मत यह है कि घी के दीपक में सफेद बत्ती हो तो दायें, घी का दीपक लाल बत्ती का वायें, सफेद बत्ती का तैल दीपक दायें। लालबत्ती का तैलदीपक वायें स्थापित करे।

—पूजा, जप आदि उपासना पद्मासन, सिद्धासन अथवा वीरासन में बैठकर ही करना चाहिए।

—जप की माला को स्वयं धारण करना वर्जित है।

—**ओंकार का प्रयोग**—स्त्रियों तथा संस्कारहीन व्यक्तियों को बिना ओंकार के मंत्र कहना चाहिए, इन्हें छोड़ शेष गृहस्थों को मंत्र के प्रारम्भ में ॐ लगाना चाहिए। वानप्रस्थी और सन्यासियों को मंत्र के प्रारम्भ और अन्त में भी ॐ लगाना चाहिए—

प्रणवाद्यंगृहस्थानां तच्छून्यं निष्फलं भवेत्।
आद्यन्तयोर्वनस्थानां यतीनां महतामपि ।।

लेकिन जिस मंत्र का प्रथमाक्षर ऐं, ह्रीं, क्लीं या श्रीं आया हो उनमें ओंकार नहीं लगना है। प्रायः वैष्णव मंत्रों के प्रारम्भ में ओंकार, शिव मंत्रों में शाक्तबीज ह्रीं, शाक्त मंत्रों में कामबीज क्लीं, सूर्य आदि के मंत्रों में भी शक्ति-बीज (ह्रीं) लगाना उचित है।

वाक्चैव कामः शक्तिश्च प्रणवः श्रीश्च कथ्यते ।
तदाद्येषु च मंत्रेषु प्रणवं नैव योजयेत् ।।

—प्रत्येक पूजन कार्य में सर्वप्रथम सूर्यपूजन व सूर्य को अर्घ्य देना आवश्यक है—

यावन्नदीयतेचार्घो भास्कराय महेश्वरि ।
तावन्न पूजयेद्विष्णुं शंकरं वा महेश्वरीं ।।

—गन्धर्व तंत्र

—श्रद्धा पूर्वक किया गया पूजन ही सार्थक होता है, अश्रद्धापूर्वक किसी परिस्थिति वश किया गया पूजन व्यर्थ है ।

—पूजा अर्चना में यह ध्यान रक्खें कि न्यायोपार्जित धन का ही उपयोग हो । धर्मशास्त्रों के अनुसार आय का दस प्रतिशत धन धार्मिक व सामाजिक जनहित के सत्कार्यों में होना चाहिए । अन्यायोपार्जित धन से, रिश्वत आदि से उपार्जित धन से, चोरी के धन से अथवा जबरन चन्दा आदि लेकर संग्रहीतधन से पूजा-अर्चना वर्जित है ।

—सूर्यमन्दिर या सूर्य पूजा में शंख बजाना, (दुर्गा) देवी की पूजा में वांसुरीवादन अथवा पियरी वादन तथा शिवालय या शिवपूजा में झल्लक (करताल) बजाना वर्जित है ।

शिवागारे झल्लकं च सूर्यागारे च शंखकं ।
दुर्गागारे वँशिवाद्यँ मधुरी च न वादयेत् ।।

—योगिनी तन्त्र ।

क्योंकि नृत्य, गायन, वादन भी पूजा का अंग है, अतः इस अवसर पर इस नियम को ध्यान में रक्खें ।

प्रत्येक पूजा विधान में जटिल विधान हैं । संक्षिप्त में कुछ नियमों का ही यहाँ पर वर्णन किया गया है । नियमानुसार पूजां अर्चना ही सार्थक है, अन्यथा वह निष्फल ही नहीं अनिष्ट कर भी हो सकती है ।

★

पूजा के उपचार और उनका क्रम

पूजा के हेतु अपने साधन, सामर्थ्य एवं समयानुसार विविध प्रकार के उपचार हैं। वैसे तो जितने अधिक उपचार हों उतनी ही पूजा श्रेष्ठ है लेकिन वास्तव में उपचारों का उतना महत्व नहीं जितना कि उनके क्रम का है।

पंचोपचार, दशोपचार, द्वादशोपचार, षोडशोपचार, अष्टादशोपचार, अष्टविंशोपचार, अष्टत्रिंशोपचार या चतुष्षष्ठि उपचार जिससे भी पूजा की जाय, उनके क्रम को ध्यान में रखना चाहिए। जैसे गन्ध पुष्प के बाद स्नान कराना, फल देने के बाद नैवेद्य देना आदि क्रम के विपरीत है। साधक अपनी सामर्थ्यानुसार ५, १०, १२, १६, १८, २८, ३८, ६४ आदि किसी एक विधि से आराधना का अधिकारी है।

(अ) क्रमशः आसन, आवाहन, स्नान, नीराजन, वस्त्र, आचमन, यज्ञोपवीत, आचमन, आभूषण, दर्पणावलोकन, गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, पानीय, आचमन, हस्त प्रक्षालन एवं प्रोक्षण, ताम्बूल, अनुलेपन, पुष्प, पुनः पुष्पदान, गीत, वाद्य, नृत्य, स्तुति, प्रदक्षिणा, पुष्पांजलि और नमस्कार—यह २८ उपचार होते हैं।

(आ) आसन, आवाहन, अर्घ्य, पाद्य, आचमन, स्नान, वस्त्र, यज्ञोपवतीत, भूषण, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, तर्पण, माला, नमस्कार और विसर्जन—यह अष्टादश उपचार हैं। अष्टादश उपचार से पूजन श्रेष्ठ कहा गया है—

'अष्टादशोपचारास्तु सर्वेषामुत्तमाः प्रिये'

(इ) मुख्य रूप से षोडशोपचार (१६) से पूजन व्यापक है। आसन, स्वागत, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, मधुपर्क, आचमन, स्नान, वस्त्र, आभूषण, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, नमस्कार—यह १६ उपचार हैं।

(ई) पाद्य, अर्घ्य, आचमन, मधुपर्क, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य—यह दश उपचार हैं।

(उ) संक्षेप में पंचोपचार से पूजा का विधान है, इसमें गन्ध, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य इन पांच उपचारों से पूजन किया जाता है।

इन उपचारों में कुछ तो स्पष्ट हैं। जैसे आसन, उपास्य देवता की उपस्थिति का भान कर बैठने को पुष्प आदि का आसन देना। आवाहन या स्वागत करना। पाद्य = उपास्य के चरण धोना। अर्घ्यं = उपास्य के हाथ धोना। आचमन = मुख धोना। मधुपर्क = दही घी और शहद तीनों को मिलाकर पेय पदार्थ देना। आचमन—पुनः मुख प्रक्षालन। स्नान = स्नान कराना। वस्त्र = स्नान के उपरान्त वस्त्र पहनाना। आभूषण पहनाना। गन्ध = चन्दन कुंकुम कस्तूरी आदि से टीका करना। पुष्प = पुष्प अर्पित करना। धूप = वातावरण को शुद्ध व सुगन्धित करने हेतु धूप जलाना। दीप = प्रकाश हेतु दीपक जलाना। नैवेद्य = भोजन देना। नमस्कार = हाथ जोड़ना।

यह एक ऐसी कल्पना है कि उपास्य देवता या मंत्र स्वयं आपके सामने साकार रूप में उपस्थित है, उसका स्वागत-सत्कार व पूजन करके स्वयं को समर्पित करना है।

पूजा के पाँच अंग

तांत्रिक उपासना में पूजा के अलावा पूजन के पंचांगों का विशिष्ट स्थान है। पंचांग होने पर ही पूजन पूर्ण होगा। यह पंचांग हैं :—

१—पटल (उपास्य का वर्णनात्मक पाठ)।

२—पद्धति (पूजनविधि)।

३—कवच (आत्मदेह में उपास्य की रक्षात्मक कल्पना)।

४—नामसहस्र (उपास्य देव के १००० नामों का पाठ)।

५—स्तोत्र (विनम्र प्रार्थना है)। इसी कारण से संस्कृत साहित्य में स्तोत्र साहित्य का विशाल भण्डार है। आचार्य शंकर जैसे वेदान्तविद् भी तांत्रिक उपासना की सार्थकता मानते हैं और स्तोत्र साहित्य प्रणेताओं में शंकर का स्थान सर्वोपरि है।

'भावमिच्छन्ति देवताः'

पूजा में मंत्रोच्चारण आवश्यक नहीं है, मंत्र तो संस्कृत में केवल भाव व्यक्त करते हैं, बिना मंत्रोच्चारण के भी आप अपनी भावना मन से व्यक्त कर

सकते हैं। यदि मंत्रोच्चारणपूर्वक पूजन कर सकें तो उत्तम है। जैसे इष्ट देवता को आसन अर्पित करने का मंत्र है—

रम्यं सुशोभनं दिव्यं सर्वसौख्यकरं शुभं ।
आसनं च मयादत्तं गृहाणपरमेश्वर ॥ इत्यादि

अर्थात् हे परमेश्वर यह उत्तम, देखने में सुन्दर, सुखकारी आसन आपको अर्पित करता हूँ, कृपया स्वीकार करें।

वास्तव में पूजा में भक्ति आवश्यक है, यदि भक्तिभाव नहीं है तो उपासना व्यर्थ हैं।

नवधाभक्ति

भक्ति का तात्पर्य उपास्य के प्रति अनन्य प्रेम, सर्वतोभावेन समर्पण है। जो केवल गूंगे के स्वाद की तरह अनुभव जन्य एवं वर्णनातीत है। प्रारम्भ में ईश्वर के साकार रूप में उपासना होती है अतः उसमें पूजादिक वाह्य आत्मीयता की आवश्यकता होती है, इसी हेतु व्यास जी ने पूजन को भी भक्ति ही का रूप माना है।* गर्गाचार्य जी के मत से उपास्य के चरित्र (कथा) आदि में अनुराग ही भक्ति है, शाण्डिल्य मुनि के मत से उपास्य के प्रति आत्मसमर्पण ही भक्ति है, और नारद जी के मतानुसार अपने समस्त कर्म उपास्य को ही समर्पण कर उपास्य का थोड़ा भी विस्मरण होना असह्य हो जाय यही भक्ति का स्वरूप है। नारद जी का भावार्थ यह है कि अपने दैनन्दिन कार्य में भी प्रत्येक कार्य को भगवान की ही सेवा मानकर करे, और भगवान का स्मरण सदव हृदय में रहे। इसी भाव से आचार्य शंकर ने भी कहा है—

आत्मा त्वं गिरिजामतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं ।
पूजातेविषयोपभोग रचना निद्रा समाधिस्थितिः ॥
संचारः पदयोः प्रदक्षिणदिधिः स्तोत्राणिसर्वागिरो ।
यद्यत्कर्मकरोमि तद् तदखिलं शम्भो तवाराधनम् ॥

यहाँ पर आत्मा को उपास्य, शरीर को उपास्य का मन्दिर, सांसारिक निर्वाह के हेतु लौकिक कार्यों को उपास्य की पूजा, निद्रा को समाधि, चलने में उपास्य की प्रदक्षिणा और मुख के निकले समस्त शब्दों को उपास्य की स्तुति

---

* पूजादिष्वनुराग इति पाराशर्यः । कथादिष्विति गर्गः ।

मानकर अपने सम्पूर्ण कर्मों को ईश्वराधना ही माना है। मुख्यतः भक्ति के ६ प्रकार हैं।*

(१) मानसी—अनन्य प्रेम पूर्वक हृदय में उपास्य का स्मरण।

(२) वाचिकी—वाणी के द्वारा उपास्य की स्तुति, गुणगान।

(३) कायिकी – उपास्य के प्रसन्नतार्थ व्रत, उपवासादि।

(४) लौकिकी—विविध व्यंजन, वस्त्र, उपहार, गीत, नृत्यपूर्वक उपास्य का पूजन।

(५) वैदिकी—धर्मशास्त्राध्ययन, यज्ञादि।

(६) आध्यात्मिकी—उपास्य और उपासक में एकीभाव। तत्व चिन्तन।

मूलतः भक्ति के ३ रूप हैं, बाद में तीन रूपों का भी पहले तीन रूपों में अन्तर्भाव हो जाता है क्योंकि मन, वाणी और देह से ही समस्त व्यापार होते हैं।

इसमें भी भक्ति के त्रिधाभेद हैं :—**

(१) आर्त भक्ति —विपत्ति के कारण दुखी उपासक द्वारा दुखों से मुक्ति हेतु। यह भक्ति अस्थायी है। विपत्तियों के कारण ईश्वर की आस्था, पर विपत्तियों के छूटते ही विस्मरण।

(२) अर्थाभिलाषी—ऐश्वर्यादि प्राप्ति हेतु ईश्वर की उपासना। इस आशा पर कि प्रसन्न होने पर उसकी कृपा से सम्पत्ति में वृद्धि होगी। यह भक्ति लोभ मूलक है।

(३) ज्ञानार्थी —यही भक्ति ज्ञानार्थी और ज्ञानी है, प्रारम्भ में ईश्वर तत्व के प्रति जिज्ञासावश भक्ति होकर ईश्वर तत्व जान लेने पर स्थायी भक्ति। यही भक्ति परमार्थ साधिका एवं सर्वश्रेष्ठ है।

---

* पद्मपुराण।

**यद्यपि गीता में आर्त, जिज्ञासु, आथार्थी और ज्ञानी चार प्रकार के भक्त और भक्ति मानी हैं, किन्तु नारद जी ने भक्ति के तीन रूप मुख्य माने हैं—

"गौणी त्रिधा गुणभेदादार्तादिभेदाद्वा" ना.भ.सू. ५६ :

विस्तारपूर्वक नारद जी ने भक्ति के ११ रूप बतलाये हैं : १. गुणगान में प्रवृत्ति, २. उपास्य का रूप चिन्तन, ३. पूजन, ४. स्मरण ५. उपास्य की सेवा दास्यभाव, ६. उपास्य के प्रति सखाभाव, ७. स्वयँ को उपास्य की पत्नी के रूप में मानकर उपास्य को पति मानकर दाम्पत्य भाव, ८ उपास्य को माता या पिता मानकर पुत्रभाव, ९. स्वयँ अपनी कुछ चिन्ता न कर अपना उत्तरदायित्व उपास्य को सौंप देना, १०. उपास्य के चिन्तन, भजन में तन्मयता, ११. उपास्य को अपने से दूर मानकर उपास्य ही में अन्तर्भाव (मोक्ष) कामना से विरह रूपा भक्ति। यह एकादश भक्ति के स्वरूप हैं।* इन भक्तियों का उदय एक के बाद एक क्रमशः होता है, और विरहरूपी अन्तिम भक्ति ज्ञान की चरम सीमा एवं ब्रह्म साक्षात्कार की प्रथम अवस्था है।

कबीर में कान्तासक्ति, रैदास में तन्मयतासक्ति, सूरदास में सख्यासक्ति, और तुलसी में आत्म-निवेदनासक्ति दृष्टिगोचर होती है। किन्तु इनकी भक्ति एकरूपा नहीं है, वास्तव में इनकी भक्ति एकादश रूपा है, किन्तु एकादशरूपों में भी एक रूप की विशेषता है। जहाँ तुलसीदास के विनय पत्रिका में आत्मनिवेदनासक्ति दृष्टिगोचर होती है तो दूसरी ओर 'सेव्य सेवक भाव बिनु भय न तरिए उरगारि' में उनकी दास्यासक्ति स्पष्ट है। ज्ञान के उत्तरोत्तर विकास के साथ भक्ति के रूपों में भी विकास होता रहता है।

कुछ लोगों का मत है कि भक्ति का उदय, ज्ञान से होता है, कुछ भक्ति और ज्ञान को सहयोगी मानते हैं, किन्तु सनत्कुमारादि और नारद जी के मत से भक्ति स्वयं फलदायिनी है।** अर्थात् भक्ति के परिणाम से ही ज्ञान और वैराग्य रूप फल मिलता है, यही लक्ष्य है। श्रीमद्भागवत पुराण के मत से भी भक्ति माता है, ज्ञान और वैराग्य यह दो भक्ति के पुत्र हैं, अतः भक्ति के द्वारा ज्ञान और वैराग्य-रूपी फल ही साधक के लक्ष्य हैं और ज्ञान के द्वारा भक्ति का उदय, अथवा भक्ति और ज्ञान को परस्पर सहयोगी मानना यह मत युक्तिसंगत नहीं है। कुछ अन्य आचार्य भक्ति का उदय विषय त्याग और सन्यास से कहते हैं, कुछ भजन से भक्ति का उदय मानते हैं, कुछ भगवान के गुण कथादि सुनने से,

---

* "गुणमहात्म्यासक्ति, रूपासक्ति, पूजासक्ति, स्मरणासक्ति, दास्यासक्ति, सख्यासक्ति, कान्तासक्ति, वात्सल्यासक्ति, आत्मनिवेदनासक्ति, तन्मयतासक्ति, परमविरहासक्तिरूपा एकधाप्यनेकधा भवति" ना.भ.सू. ८२।

** नारद भक्ति सूत्र २८, २९, ३०।

कीर्तन से मानते हैं। किन्तु वास्तव में भक्ति का उदय महापुरुषों की सत्संगति से अथवा ईश्वरेच्छा से ही अन्तःप्रेरणा से होता है, क्योंकि महापुरुषों की संगति भी ईश कृपा से ही होती है अतः भक्ति के उदय में भगवत्कृपा ही मूल कारण है।*

गुणमहात्म्यासक्ति से लेकर पूजासक्ति आदि दास्यासक्ति तक आरम्भ की पाँच अवस्थायें सगुणोपासना की प्रतीक हैं। ईश्वर के प्रति आस्था, भक्ति के उत्तरोत्तरविकास, और उपास्य के स्मरण को स्थायी रखने के हेतु पूजन, भजन, कीर्तन, नृत्य, गीत, जप, व्रतोपवासादि के द्वारा जब उपास्य के प्रति अनन्य आसक्ति हो जाती है, तब ज्ञान और वैराग्य का उदय होता है। जब तक ज्ञान और वैराग्य का उदय न हो तब तक वेदोक्त स्मार्त कर्म ही कर्तव्य हैं, वेद विहित कर्म ज्ञान के बाद भी आचार की दृष्टि से पालनीय हैं, एतदर्थ जब तक ज्ञान वैराग्य का उदय न हो तब तक वैदिक स्मार्त कर्म (साकारोपासना) एवं लोक व्यवहार का त्याग नहीं करना चाहिए।**

किन्तु केवल साकारोपासना से ही भक्ति का विकास नहीं होगा। ज्ञान और वैराग्य को भक्ति के पुत्र कहें, या भक्ति की चरम सीमा कहें, बात एक ही है। श्रीमद्भागवत का सृजन ही इसी से हुआ है, वहां भक्ति तो युवती है, किन्तु उसके पुत्र ज्ञान वैराग्य बूढ़े हो चूके हैं। स्मार्त वैदिक कर्मों की स्थिति, साकारोपासना से ईश्वर के प्रति भक्ति तो विद्यमान थी किन्तु परमार्थिक भक्ति (ज्ञान वैराग्य) का अभाव था। अर्थात स्मार्त कर्मों एवं साकारोपासना के पीछे समाज लकीर का फकीर हो चुका था। जिस परमार्थिक साधना के हेतु सगुणोपासना और स्मार्त यज्ञों की आवश्यकता है उस परमार्थिक उपासना से समाज का ध्यान ही हट चुका था। ज्ञान वैराग्य की सिद्धि के हेतु साकारोपासना को स्थान मिला है, किन्तु केवल साकारोपासना से स्वतः ज्ञान असम्भव है, इसी हेतु वैदिकी भक्ति के द्वारा शास्त्राध्ययन भी भक्ति का एक अंग है—

ऋग्यजुः सामजाप्यानि संहिताध्ययनानिच।
क्रियन्ते विष्णुमुद्दिश्य सा भक्ति वैदिकी मता॥

अतः मानसी, कायकी, वाचकी भक्ति के साथ-साथ वैदिकी भक्ति के द्वारा (शास्त्राध्ययन से) भक्ति की वह चरम सीमा प्राप्त होगी जब ज्ञान और वैराग्य

---

* नारद भक्ति सूत्र ३५ से ४१।

** वही।

का उदय होकर स्मार्त कर्मों एवं साकारोपासना की आवश्यकता ही नहीं रह जायगी। यह वह अवस्था होगी जिसे आत्म साक्षात्कार या परमहंसत्व कहा जाता है।

मंत्र जप विधि

आशाहीन, क्रियाहीन, श्रद्धाहीन तथा विधि के पालनार्थ आवश्यक दक्षिणा से हीन जो जप किया जाता है, वह सदा निष्फल होता है। मंत्र यदि आज्ञासिद्ध और क्रियासिद्ध और श्रद्धासिद्ध होने के साथ ही दक्षिणा से भी युक्त हो तो उसकी सिद्धि होती है और उसके महान फल प्राप्त है।

साधक को चाहिए कि वह शुद्ध वेश में स्नान करके सुन्दर आसन बाँधकर अपने हृदय में साध्यदेवता अपने गुरु का चिन्तन करते हुए उत्तर या पूर्व की ओर मुँह किये मौन भाव से बैठे चित्त को एकाग्र करे। अंगन्यास करके प्राणायाम के द्वारा इष्ट देव का ध्यान करे और विद्या स्थान, अपने रूप, ऋषि, छन्द, देवता, बीज शक्ति तथा मंत्र के वाच्यार्थ रूप का स्मरण करके जप करे।

जप के पाँच प्रकार

मानस जप उत्तम है, उपांशु जप मध्यम है तथा वाचिक जप उससे निम्न-कोटिका माना गया है—ऐसा आगमार्थ विशारद विद्वानों का कथन है। जो ऊँचे-नीचे स्वर से युक्त तथा स्पष्ट और अस्पष्ट पदों एवं अक्षरों के साथ मंत्र का वाणी द्वारा उच्चारण करता है, उसका यह जप वाचिक कहलाता है। जिस जप में केवल जिह्वा मात्र हिलती है अथवा बहुत धीमे स्वर से अक्षरों का उच्चारण होता है तथा जो दूसरों के कान में पड़ने पर भी उन्हें कुछ सुनाई नहीं देता, ऐसे जप को 'उपांशु' कहते हैं। जिस जप से अक्षर पद्धति का एक वर्ण से दूसरे वर्ण का, एक पद का तथा शब्द और अर्थ का मन के द्वारा बारम्बार चिन्तनमात्र होता है, वह 'मानस' जप कहलाता है। वाचिक जप एक गुना ही फल देता है, उपांशु जप सौ गुना फल देने वाला बताया जाता है, मानस जप का फल सहस्त्र गुना कहा गया है तथा सगर्भ जप उससे सौ गुना अधिक फल देने वाला है। प्राणायामपूर्वक जो जप होता है, उसे 'सगर्भ' जप कहते हैं। सगर्भ जप में भी आदि और अन्त में प्राणायाम कर लेना श्रेष्ठ बताया गया है। मंत्रार्थवेत्ता बुद्धि-मान साधक प्राणायाम करते समय चालिस बार मंत्र का स्मरण कर लें। जो ऐसा करने में असमर्थ हो, वह अपनी शक्ति के अनुसार जितना हो सके, उतने ही मंत्रों का मानसिक जप कर ले। पाँच, तीन अथवा एक बार अगर्भ या सगर्भ प्राणायाम करे। इन दोनों में सगर्भ प्राणायाम श्रेष्ठ माना गया है। सगर्भ की

अपेक्षा भी ध्यान सहित जप सहस्त्रगुना फल देने वाला कहा जाता है। इन पाँच प्रकार के जपों में से कोई एक जप अपनी शक्ति के अनुसार करना चाहिए।

माला के घटकों का महत्त्व

अंगुली से जप की गणना करना एक गुना बताया गया है। रेखा से गणना करना आठ गुना उत्तम समझना चाहिए पुत्रजीव (जियापोता) के बीजों की माला से गणना करने पर जप का दस गुना अधिक फल होता है। शंख के मनकों से सौ गुना, मूगों से हजार गुना, स्फटिक मणि की माला से दस हजार गुना, मोतियों की माला से लाख गुना, पद्माक्ष से दस लाख गुना और सुवर्ण के बने हुए मनकों से गणना करने पर कोटि गुना अधिक फल बताया गया है। कुशाकी गांठ से अथवा रुद्राक्ष से जाप करने पर अनन्त गुणा फल होता है।

जप करने का स्थान

घर में किये हुये जप को समान या एक गुना समझना चाहिये। गोशाला में उसका फल सौ गुना हो जाता है, पवित्र वन या उद्यान में किये हुये जाप का फल सहस्त्रगुना बताया जाता है। पवित्र पर्वत पर दस हजार गुना, नदी के तट पर लाख गुना, देवालय में कोटि गुना और मेरे (शिव) निकट किये हुये जाप को अनन्त गुना कहा गया है। सूर्य, अग्नि, गुरु, चन्द्रमा, दीपक, जल, ब्राह्मण और गौओं के समीप किया हुआ जाप श्रेष्ठ होता है।

दिशा

पूर्वाभिमुख किया हुआ जाप वशीकरणण में और दक्षिणाभिमुख जाप अभिचार कर्म में सफलता प्रदान करने वाला है। पश्चिमाभिमुख जाप को धन-दायक जानना चाहिये और उत्तराभिमुख जाप शान्तिदायक होता है।

सावधानी

सूर्य, अग्नि, ब्राह्मण, देवता तथा अन्य श्रेष्ठ पुरुषों के समीप उनकी ओर पीठ करके जप नहीं करना चाहिये। सिर पर पगड़ी रखकर, कुर्त्ता पहनकर, नंगा होकर, बाल खोलकर, गले में कपड़ा लपेटकर, अशुद्ध हाथ लेकर, सम्पूर्ण शरीर से अशुद्ध रहकर तथा विलापपूर्वक कभी जप नहीं करना चाहिये। जप करते समय क्रोध, मद, छींकना, थूकना, जंभाई लेना वर्जित है। यदि कभी वैसा सम्भव हो जाय तो आचमन करे अथवा इष्टदेव का स्मरण करे या ग्रह नक्षत्रों का दर्शन करे अथवा प्राणायाम कर ले।

बिना आसन के वैठकर, सोकर, चलते-चलते अथवा खड़ा होकर जप न करे। गली में या सड़क पर, अपवित्र स्थान में तथा अँधेरे में भी जप न करे।

दोनों पाँव फैलाकर कुक्कुट आसन से बैठकर, सवारी या खाट पर चढ़कर अथवा चिंता से व्याकुल होकर जप न करे। यदि शक्ति हो तो इन इन सब नियमों का पालन करते हुये जप करे और अशक्त पुरुष यथाशक्ति जप करे।

सदाचार का पालन आवश्यक

जप में सदाचार का पालन करना आवाश्यक है। सदाचारी मनुष्य शुद्ध भाव से जप और ध्यान करके कल्याण का भागी होता है। आचार परम धर्म है, आचार उतम धन है—आचार श्रेष्ठ विद्या है और आचार ही परम गति है। आचारहीन पुरुष संसार में निन्दित होता है और परलोक में भी सुख नहीं पाता। इसलिये सबको आचरणवान होना चाहिये।*

आचारः परमो धर्म आचारः परमं धनम्।
आचारः परमा विद्या आचारः परमा गतिः॥
आचारहीनः पुरुषो लोके भवति निन्दितः।
परमं च सुखी न स्यात्तस्मादाचारवान् भवेत्॥

जप के अन्त में

जप समाप्त होने पर जिस स्थान पर जप किया जा रहा है, उसभूमि की मिट्टी चन्दन की तरह मस्तक पर धारण करना चाहिए। अन्यथा इन्द्र जप का हरण कर लेता है—

यस्मिनस्थाने जपं कृत्वाशक्रोहरतितज्जपं।
तन्मृदालक्ष्म कुर्वीत ललाटेतिलकाकृतिः॥

जप का आसन

प्रत्येक जप, होम, पूजा या उपासना में सबसे नीचे कुशासन, ऊपर कुशा का विष्टर (२५ पत्तों से बना), इसके ऊपर काले मृग का चर्मासन, इसके ऊपर कुश विष्टर, इसके ऊपर कम्बल आदि ऊन का आसन, इसके ऊपर पुनः विष्टर रखकर (६ आसनों में स्थित होकर) क्रिया करने का विधान है। यह आसन सर्वथा रक्षात्मक है। वैसे तो बालों वाला आसन वर्जित है—

लोम्निचैव यदासीनस्तदा सर्वं विनस्यति।
लोम संस्पर्शमात्रेण सिद्धि हानिः प्रजायते॥

---

* (शि० पु० वा० सं० उ०ख० १४/५५५१)

ऐसा कहा गया है। लेकिन काले मृग के चर्म में, व्याघ्रचर्म में या कम्बल आदि में यह दोष नहीं होता।

यदि उपरोक्त आसन संभव न हो तो कोई एक आसन ग्रहण किया जा सकता है। शिवगीता के अनुसार कम्बलआसन सिद्धिदायक, मृगचर्म में मुक्ति, व्याघ्रचर्म में मोक्ष, कुशासन में ज्ञान, पत्राशान में दीर्घायु, वस्त्रासन में स्त्री लाभ, अश्मासन (पत्थर) में दुख, काष्ठासन में रोग, तृणासन में यश हानि, बांस के आसन में दरिद्रता और भूमि पर आसन लगाकर बैठने से असफलता (सिद्धि न मिलना) इत्यादि फल कहा गया है। इस तरह कामना के अनुसार भी आसन का चयन कर सकते हैं।

जप सम्बन्धी कुछ और नियम

—अपनी शय्या (विस्तर), अपना वस्त्र, अपनी स्त्री, अपनी सन्तान, अपना जलपात्र (कमण्डलु) यह अपने लिये पवित्र हैं। दूसरों के लिये नहीं।

अर्थात् दूसरे के वस्त्र पहनकर, दूसरे के आसन में बैठकर आदि जप, यज्ञ, पूजादि वर्जित है—

आत्मशय्यासनं वस्त्रं जायापत्यं कमण्डलुः।
शुचिन्यात्मन एतानि परेषां न कदाचनः।।

व्यासः (गायत्री भाष्य)

—जल में सूखे वस्त्र पहनकर और सूखे में गीले वस्त्र पहनकर पूजा आदि वर्जित है—

यज्जले शुष्कवस्त्रेण स्थले चैवार्द्रवाससा।
जपोहोमस्तथादानं तत्सर्वं निष्फलं भवेत्।।

—गायत्री मंत्र का जप जल में खड़े होकर करना वर्जित है—

कदाचिदपि नो विद्वान् गायत्रीमुदके जपेत्।

—गोभिलः।

गायत्रीं न जपेत्तोये—इत्यादि।

—जप करते समय प्रातः काल नाभिप्रदेश के पास, मध्याह्न में हृदय के पास, सायं मुख के सामने हाथकर जप करे—

नाभिदेशे जपं प्रातर्मध्याह्ने हृदये करम्।
सायं मुख समीपे चधृत्वा कुर्यात्तु वाग्यतः।।

—आह्निक पंचाशिका

साधना की दीपावली (महानिशा) का महत्त्व

दीपावली जहाँ एक सांस्कृतिक पर्व है वहीं तंत्र शास्त्र में भी इसका महत्व कम नहीं है। वैसे तो वैधृति, व्यतीपात, ग्रहणकाल, संक्रान्ति काल आदि तांत्रिक साधना के लिये महत्वपूर्ण, आशु फलप्रद माने गये हैं, लेकिन इन सबमें 'दीपावली' को सर्वश्रेष्ठ माना गया है, तंत्रशास्त्र में दीपावली को महानिशा कहा गया है, महानिशा ही तंत्रसाधन को सर्वोत्तम है।

दीपावली या महानिशा में दक्षिण चार और बामाचार दोनों प्रकार की साधना होती है, कदाचित् संयोग से दीपावली सोमवार को हो या मंगलवार को—तब तो सोने में सुगन्ध है, जिसमें सिद्धिलाभ की आशा बढ़ जाती है। बामाचार में तो दीपावली पर अनेक चमत्कारिक सिद्धियाँ प्राप्त की जाती हैं, अनेक चमत्कारों की जननी 'वैसा की खोपड़ी' की साधना इसी महानिशा को सिद्ध होती है और 'कर्णपिशाची' 'धनदा' 'भोगदा' आदि योगिनी की साधना जो श्रावणी पूर्णिमा से प्रारम्भ की जाती है, तीन महीने के उपरान्त इसी महानिशा को उसकी साधना पूर्ण होती है।

कुन्जी आवश्यक

तंत्र शास्त्र के प्रति जन साधारण में बड़ी भ्रान्ति है, वे समझते हैं कि यह क्रिया सरल है। तंत्रशास्त्र की सैकड़ों छोटी-बड़ी पुस्तकें छपी हुई जो बाजार में मिलती हैं लोग उन्हें लेकर उनमें निर्दिष्ट विधि के अनुसार उलटे सीधे प्रयोगों में लग जाते हैं, और हाथ कुछ भी नहीं आता, तब तंत्रों से अविश्वास होता जाता है। यह हाल साधारण जनता का नहीं बड़े-बड़े लोगों का है, महाराज भर्तृहरि कहते हैं "मंत्राराधन द्वारा सिद्धि प्राप्त करने के लिये रात-रात भर कई रातें श्मशान में जागकर बिताई लेकिन कुछ भी हाथ न लगा" इसका कारण यह है कि आरम्भ में जनता के हितार्थ ताकि वे इन प्रयोगों द्वारा लाभ प्राप्त कर सकें, तंत्र शास्त्रों की रचना हुई, आरम्भ में यह विद्या गुप्त रक्खी जाती रही, केवल विश्वस्त शिष्य को ही दीक्षा दी जाती थी। धीरे-धीरे इसका व्यापक प्रसार हुआ और लोग अपने स्वार्थ के लिये तंत्रों के द्वारा मारण, मोहन, बशीकरण, उच्चाटन आदि षट्कर्मों के द्वारा दूसरों को अकारण हानि पहुँचाने लगे। तंत्रशास्त्र का यह दुरुपयोग देखकर तत्कालीन समस्त तंत्रशास्त्र कीलित कर दिया गया अर्थात् उसके प्रयोग का गुप्त रहस्य (कुंजी) गोपित कर दिया। यह ठीक ऐसा दृष्टान्त है जैसे किसी सिपाही को बन्दूक देकर शक्ति दी जाती है

और अगर वह शक्ति का दुरुपयोग कर बगावत करता है तो उससे बन्दूक छीन ली जाती है, ठीक इसी प्रकार जितने भी प्राचीन प्रकाशित तंत्रशास्त्र हैं वे सब निःशस्त्र सेनानी (बिना हथियार के सिपाही) हैं। अतः जब तक सिद्धगुरु के द्वारा मंत्र की कुंजी (चाबी) न मिले तब तक वह मंत्र निरर्थक है।

शुद्ध उच्चारण

किसी भी मंत्र को जपने। पाठ करने से पहले मंत्र का शुद्ध व स्पष्ट उच्चारण करना सीखें, गुरु के समक्ष रहकर निरन्तर अभ्यास करें। शुद्ध तथा स्पष्ट उच्चारण आ जाने पर ही मंत्र का प्रयोग करें। मंत्र एक ओर जहाँ सिद्धि और मनोकामनाओं की पूर्ति करता है वहीं उच्चारण में त्रुटि होने पर विपरीत प्रभावकारी होता है। इसी हेतु कहा गया है कि मंत्र के समान कोई शत्रु नहीं है---

"नास्ति मंत्र समो रिपुः"

थोड़ी सी स्वर या वर्ण में उच्चारण भेद, ह्रस्वदीर्घ से अर्थ का अनर्थ हो जाता है और परिणामस्वरूप मंत्र अनिष्टकारी व मारक हो जाता है—

मंत्रोहीनः स्वरतोवर्णतो वा,
मिथ्याप्रयुक्तो न तमर्थमाहः ।
सवाग्वज्रं यजमानं निहन्ति —
यथेन्द्र शत्रुः स्वरतोपराधात् ॥

इस सम्बन्ध में एक वैदिक कथानक प्रचलित है। वृत्रासुर ने युद्ध में इन्द्र से विजय पाने हेतु एक अनुष्ठान करवाया। मंत्र था--

'इन्द्रशत्रुर्वधस्व'

(हे इन्द्र के शत्रु शक्तिशाली होओ)

लेकिन अनुष्ठान में मंत्र का उच्चारण इस प्रकार हुआ—

'इन्द्रशत्रूर्वर्धस्व'

(आपका शत्रु इन्द्र शक्तिशाली हो)

और इस अशुद्ध मंत्र के अनुष्ठान स्वरूप वृत्रासुर स्वयं मारा गया। यहाँ पर केवल उ/ऊ की मात्रा में त्रुटि होने से ही अनर्थ हुआ।

सूतक आदि में जप के नियम

अपने कुल में सात पीढ़ी के अन्दर किसी की मृत्यु होने पर व्यक्ति को दस दिनों का मरणाशौच (सूतक) और किसी बच्चे का जन्म होने पर दस दिनों तक जननाशौच (सूतक) होता है। सूतक में व्यक्ति को अपवित्र माना जाता है। ऐसी स्थिति में कौन से जप हो सकते हैं (इन दिनों) और कौन नहीं हो सकते हैं ? पूजा की जाती है या नहीं ? इसका निर्णय इस प्रकार है। प्रायः पूजा जप या अनुष्ठान दो प्रकार के होते हैं—

(अ) नैत्तिक--अर्थात् जिन्हें मनुष्य नित्य करता है, नियमित रूप से करता है। जैसे प्रतिदिन देवपूजा, गायत्री जप, अपना सिद्ध किया हुआ मंत्र का जप, अपने अभीष्ट उपास्य देवता का जप, विभिन्न सम्प्रदायों में गुरुदीक्षा लेकर जो जप किया जाता है जैसे वैष्णव सम्प्रदाय का व्यक्ति नित्य ही द्वादशाक्षर मंत्र (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय), शैव षडक्षर मंत्र (ॐ नमः शिवाय) आदि का जप करते हैं। इन्हें नैत्तिक कार्य कहा जाता है।

नैत्तिक जप व पूजन सूतक आदि में, रोगग्रस्त आदि हो जाने पर स्नान आदि न होने से अशुद्धि अवस्था में भी प्रत्येक स्थिति में नित्य करने का विधान है। नित्य न करने से मंत्र शक्तिहीन हो जाता है अतः उसे करना ही आवश्यक है। लेकिन मरणाशौच में जल का प्रयोग न कर मानसिक रूप से पूजन का नियम है—

महाविद्या गृहीत्वा च जपेज्जीवावधि प्रिये।
महागुरु निपातादौ नपूजायां विकल्पना ॥
मोहाद्वा यदिवादैवात्पूजवेन्नच साधकः।
तस्य सर्वं विनाशःस्यान्मारयेत्तं सदाशिवः॥

—विश्वसार तंत्र

पूजयेन्मृतकेऽपिस्याज्जनने सरुजोपिवा।
सर्वत्रैव विधिःप्रोक्तः सर्वं काम फलप्रदः॥
अथःसूतकिनः पूजांवक्ष्यामागमचोदिताम्।
वाह्यपूजा क्रमेणैवध्यानयोगेन पूजयेत्॥

—रुद्रयामल

तारायाश्चैवकाल्याश्च त्रिपुरायाश्चसुव्रते।
सूतके मृतके चैव न त्यजेयुर्जपार्चनं ।।

—वाराहीतंत्र

इस प्रकार ध्यानयोग के द्वारा मानसिक पूजा व जप मान्य है। इसी प्रकार उपरोक्त नैत्तिक जप तथा सिद्ध मंत्रों का जप चलते-फिरते, उठते-बैठते, खाते किसी भी रूप में किया जा सकता है। ऐसे मंत्रों के जप में आसन लगाकर बैठकर पूजा गृह में ही जप करना आवश्यक नहीं है।

जाग्रच्छयान उत्तिष्ठन् भुंजानोगमनेऽपि वा ।
सिद्धमंत्रे न दोषः स्यादशोच नियमेऽपि च ।।
न कल्पना दिवा रात्रौ न च संध्यावसानके ।।

— विश्वसार तंत्र

अन्य ग्रन्थों में भी ऐसा ही वर्णन है।

(२) **नैमित्तक**—किसी कामना या उद्देश्य से, कुछ समय के लिये जो कोई जप, साधना, अनुष्ठान, पूजा आदि की जाती है, उसमें सूतक का दोष होता है। सूतक की स्थिति में कोई जप, साधना, पूजा या यज्ञ आदि का प्रारम्भ नहीं किया जा सकता। वह दोषपूर्ण तथा निष्फल होगा।

लेकिन यदि सूतक दोष लगने से पहले से साधक कोई पूजा, जप, यज्ञ, अनुष्ठान कर रहा हो, मध्य में सूतक हो जाय तो उसमें भी सूतक दोष नहीं होगा, उक्त पूजा, साधना चलती रहेगी, लेकिन उसकी समाप्ति सूतक समाप्त होने पर ही करनी होगी। सूतक समाप्त होने तक जो जप, यज्ञ, पूजा चल रही है उसे चलाते रहना चाहिए।

व्रत यज्ञ विवाहेषु श्राद्धहोमेऽर्चने जपे ।
आरब्धे सूतकं न स्यादनारब्धेतु सूतकम् ।।
आरम्भो वरणं ज्ञेयं संकल्पोव्रत जापयोः ।
नान्दिश्रादं विवाहादौ श्राद्धे पाक परिष्क्रिया ।।
निमंत्रणं तु वा श्राद्ध आरंभस्यादितिश्रुतिः ।।

'आरम्भ' होने की परिभाषा उपरोक्त सूत्र में इस प्रकार है—

किसी व्रत या जप करने में संकल्प कर लेना (विधिपूर्वक जल लेकर प्रत्येक कार्य के प्रारम्भ में संकल्प किया जाता है), किसी यज्ञ में ब्राह्मणों का

वरण कर लेना (यज्ञ सम्पादन हेतु विधिपूर्वक संकल्प लेकर ब्राह्मणों का वरण किया जाता है), विवाह आदि षोडश संस्कारों में नान्दिमुखश्राद्ध तक कर्म सम्पन्न हो जाना तथा श्राद्ध में खाना बन जाना और निमंत्रण देना – यह कार्यारम्भ की परिभाषा है। इसके बाद सूतक हो जाय तो उसका दोष नहीं होता।

दिशा का विचार

विभिन्न उद्देश्यों के अनुसार जप करते समय दिशा का भी ध्यान रखना आवश्यक है। किसी भी परमार्थमूलक या कामना रहित जप में पूर्व या उत्तर की ओर मुख शुभ है। वशीकरण को पूर्व मुख, मारण आदि क्रियाओं में दक्षिण मुख, शान्ति तथा पुष्टि एवं आरोग्य कामना हेतु उत्तर मुख शुभ होता है। धन प्राप्ति हेतु पश्चिम मुख भी ग्राह्य है।

साधना में जप संख्या का नियम

कोई भी साधना या अनुष्ठान एक दिन में सम्पन्न नहीं होता। कई लाख संख्या में मंत्र का जाप करना होता है अतः महिनों तक का समय लग सकता है। नित्यप्रति थोड़ा-थोड़ा करके जप किया जाता है लेकिन नियम यह है कि पहले दिन जितनी संख्या में जप हो, अगले दिन उससे कम संख्या में जप न हो। अर्थात पहले दिन जितनी संख्या जप हुआ हो अगले दिन भी उतना अवश्य हो। तात्पर्य यह कि अगले दिनों में आप चाहें तो जप की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ा तो सकते हैं लेकिन घटा नहीं सकते।

माला संचालन

परमार्थ (मोक्ष) अथवा सात्विक भाव से उपासना में माला को मध्यमा या अनामिका में स्थापित कर अँगुष्ठ द्वारा संचाचित करे अर्थात् माला के मनकों को मध्यमा और अँगुष्ठ से अथवा अनामिका तथा अँगुष्ठ के द्वारा आगे बढ़ाये।

विद्वेषण (फूट डालने के उद्देश्य से) कार्य में तर्जनी पर माला स्थापित कर अँगुष्ठ से संचालित किया जाता है। इसी प्रकार मारण में कनिष्ठा में माला स्थापित कर अँगूठे से संचालन किया जाता है।

देवस्थापन विधि व पार्षद

भारतीय संस्कृति में वैसे तैंतीस करोड़ देवी-देवताओं की मान्यता है लेकिन इनमें पंचदेवों का महत्व विशेष है। यह पंचदेवता विष्णु, शिव, गणेश, सूर्य और देवी हैं। इन पंचदेवों में सृष्टिकर्ता ब्रह्मा तथा देवों के राजा इन्द्र का नाम भी सम्मिलित नहीं हैं, ऐसा क्यों ?

इस सम्बन्ध में 'मंत्रयोग संहिता' 'कापिल तंत्र' 'योग शास्त्र' आदि में स्पष्ट किया गया है कि क्योंकि इस सृष्टि के सृजन में पंचतत्व मुख्य कारण हैं, क्योंकि यह पंचदेवता पंचतत्वों के प्रतीक हैं।* अतः इन पंचदेवों का पूजन ही आवश्यक माना गया है। प्रत्येक गृहस्थ कुलीन घरों में तथा मन्दिरों में भी इन पंचदेवों की पूजा को ही दैनन्दिन रूप में मान्यता है—

विष्णु = आकाशतत्व**

देवी = अग्नितत्व

सूर्य = वायुतत्व

शिव = पृथ्वीतत्व

गणेश = जलतत्व

अतः कहा गया है कि इन पंचदेवों का प्रत्येक कर्म में पूजन करना चाहिए—

आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्रं च केशवम्।
पंचदैवतमित्युक्तं सर्वकर्मसु पूजयेत् ।।

---

* मानवानां प्रकृतयः पंचधा परिकीर्तिताः।
यतो निरूप्यते सर्गः पंचभूतात्मको बुधैः ।।
— योग शास्त्र

**आकाशस्याधिपो विष्णुरग्नेश्चैव महेश्वरी।
वायोः सूर्यः क्षितेरीशो जीवनस्य गणाधिपः ।।
—मंत्रयोग संहिता

शुक्रनीति (४/३६६) में भी कहा गया है कि राजा गांवों के मध्य, चौराहों आदि सार्वजनिक स्थानों पर सूर्य, शिव, विष्णु, गणेश और देवी के मन्दिरों का ही निर्माण करवाये—

श्रृंगाटके ग्राम मध्ये विष्णोर्वाशंकरस्य च,
गणेशस्य रवेर्देव्याः प्रासादान् क्रमतोन्यसेत् ।।

यद्यपि कुछ लोकोक्तियों में सूर्य के स्थान पर ब्रह्मा को लेकर ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गणेश और देवी के रूप में भी पंचदेवों की मान्यता मिलती है —

सदा भवानी दाहिने सिद्धि करे गणेश।
पाँचों देव रक्षा करें ब्रह्मा विष्णु महेश ।।

लेकिन इसका कोई शास्त्रीय आधार नहीं है। इन्हीं पंचदेवों की मान्यता के आधार पर भारत में प्राचीनकाल से ही 'पंचपरमेश्वर' के रूप में पंचायती न्याय प्रणाली स्थापित हुई है। जिस प्रकार प्राचीनकाल में 'राजा' को ईश्वर का रूप माना जाता था, उसी प्रकार पाँच पंचों को भी पंचदेवताओं का रूप माना जाता था। आज भी पंचायत प्रणाली हमारे यहाँ जीवित है, लेकिन प्रत्येक पंचायत में पाँच ही पंचहों—यह आवश्यक नहीं है, जब कि पंचायत में पंचों की संख्या ठीक पाँच होनी चाहिए, यही प्राचीन परम्परा है। पाँच पंचों में से सर्वसम्मति से एक विशिष्ट पंच का अध्यक्ष के रूप में चयन होता था, शेष चार सामान्य पंच होते थे।

पंचदेवोपासना में भी यही नियम है कि व्यक्ति अपनी रुचि के अनुसार इन पाँच देवताओं में से जिस रूप के प्रति उसमें विशेष श्रद्धा हो उसको मुख्य देवता के रूप में तथा अन्य देवों को सहायक के रूप में स्थापित कर उपासना करे। जिस देवता को पंच देवताओं मध्ये मुख्य देवता के रूप में स्थापित किया जाता है उसे मध्य में स्थापित किया जाता है, शेष चार देवों को नियमानुसार विभिन्न दिशाओं में स्थापित किया जाता है। प्रत्येक देवता की अपने नियत दिशा में स्थापना आवश्यक है, तभी साधना सफल व सुखदायक होती है। नियम के विरुद्ध दिशाओं में देवताओं की स्थापना कर पूजा उपासना करने से सफलता या सुखशान्ति के स्थान पर उलटे असफलता, हानि, दुख, शोक, कष्ट, रोग, भय, उपद्रवादि अनिष्ट फल प्राप्त होते हैं। भले ही घर में देवी-देवताओं की स्थापना हो या मन्दिरों में देव मूर्तियों की स्थापना हो, इसी नियम का परिपालन आवश्यक है। यह क्रम इस प्रकार है :—

(१) गणेश पंचायतन

गणपति को प्रधान देवता के रूप में मानकर उपासना करने में (गाणपत्य सम्प्रदाय में) श्री गणेश जी की मध्य में स्थापना कर विष्णु को ईशान में, नैऋत्य में सूर्य, वायव्य में देवी और आग्नेय में शिव जी की स्थापना करे।

(२) शिव पंचायतन

शैव सम्प्रदाय में भगवान शिव को मध्य में स्थापित कर ईशान में विष्णु, नैऋत्य में गणेश, वायव्य में देवी, तथा आग्नेय में सूर्य की स्थापना करे।

(३) विष्णु पंचायतन

वैष्णव सम्प्रदाय में विष्णु को मध्य में स्थापित कर ईशान में शिव, आग्नेय में गणेश, नैऋत्य में सूर्य और वायव्य दिशा में देवी की स्थापना करे।

(४) देवी पंचायतन

शाक्त सम्प्रदाय में देवी की मध्य में स्थापना कर ईशान में विष्णु, आग्नेय में शिव, नैऋत्य में गणेश और वायव्य में सूर्य की स्थापना करे।

(५) सूर्य पँचायतन

सौर सम्प्रदाय में मध्य में सूर्य की स्थापना कर ईशान में शिव, आग्नेय में गणेश, नैऋत्य में विष्णु और वायव्य में देवी की स्थापना करे।

भारत में मुख्यतः उपरोक्त पाँच सम्प्रदाय ही मुख्यतः प्रचलित हैं। प्रत्येक सम्प्रदाय में अपने सम्प्रदाय के मुख्य अराध्य देव की मध्य में स्थापना कर शेष देवी-देवताओं की स्थापना कर उपासना की जाती है :—

हेरम्बं तु यदामध्ये ईशान्यामच्युतं यजेत् ।
आग्नेयां पंचवक्त्रंतु नैऋत्यां द्युमणिं यजेत् ॥
वायव्यामम्बिकां चैव यजेन्नित्यमतिन्द्रियः ।

— —

यदा तु शंकरं मध्ये ऐशान्यां श्रीपतिं यजेत् ।
आग्नेयां च तथा हंसं नैऋत्यां पार्वतीसुतम् ॥
वायव्यां च सदा पूज्या भवानी भक्त वत्सला ।

— —

यदा तु मध्ये गोविन्दमीशान्यां शंकरं यजेत् ।
आग्नेयां गणनाथं च नैऋत्यां तपनं तथा ।।
वायव्यामम्बिका चैव यजेन्नित्यं समाहितः ।

— —

भवानी तु यदा मध्ये ऐशान्यांमाधवं यजेत् ।
आग्नेयां पार्वतीनाथं नैऋत्यां गणनायकं ।।
प्रद्योतनं तु वायव्यामाचार्यस्तु प्रपूजयेत् ।

— —

सहस्त्रांशुर्यदामध्ये ऐशान्यां पार्वतीपतिम् ।
आग्नेयां एक दन्तं च नैऋत्यां अच्युतं तथा ।।
वायव्यां पूजयेद्देवीं भोगमोक्षैकभूमिकाम् ।

देवों के पार्षद

प्रत्येक देवता के अपने-अपने पार्षद (गण, पारिवारिक सदस्य, सहायक, वाहन आदि) हैं. देवी-देवताओं के पूजन के साथ ही इन पार्षदों का भी पूजन कर इष्टदेवता का प्रसाद सर्वप्रथम इन्हें प्रदान करना आवश्यक है। मन्दिरों आदि में तो मुख्य देवता के अनुसार इन पार्षदों की मूर्तियाँ भी द्वारों पर अँकित मिलती हैं, अन्यत्र घरेलू एवं सामान्य उपासना में इनका मानसिक स्मरण कर प्रसाद अर्पित कर देना यथेच्छ है। जैसे शिव मन्दिरों में मुख्य गण नन्दी की मूर्ति भी प्राप्त होती है, इसी प्रकार जिस देवता-देवी का मन्दिर हो, उसके गणों के चित्र उत्कीर्ण मिलते हैं।

प्रत्येक मुख्य देवता के गण इस प्रकार हैं और इन्हीं मंत्रों का पाठ कर इन पार्षदों का पूजन व प्रसाद वितरण करने का विधान है—

(१) शिव के पार्षद – बाणासुर, रावण, चंडीश नन्दी, भृंगीरिटिः आदि।

बाणरावण चंडीश नन्दी भृंगीरिटादयः ।
सदाशिव प्रसादोयं सर्वे गृह्णन्तु शांभवा ।।

(२) विष्णु के पार्षद—विष्वक्सेन, उद्धव, अक्रूर, शुक, सनक आदि हैं।

विष्वक्सेनोद्धवाक्रूराः सनकाद्या शुकादयः ।
महाविष्णु प्रसादं ते सर्वे गृह्णन्तु वैष्णवा ।।

(३) गणेश के पार्षद—गालव, गार्ग्य, मंगल, चन्द्रमा आदि हैं।
गणेशो गालबो गार्ग्यो मंगलश्च सुधाकरः।
गणेशस्य प्रसादं वै सर्बे गृह्णन्तु गाणपाः॥

(४) सूर्य के पार्षद—माठर, पिंगल, दण्ड, चण्डाशु आदि हैं।
माठरः पिंगलो दण्डः चण्डांशो परिपार्श्वकाः।
प्रभाकर प्रसादं ते सर्वे गृह्णन्तु पार्षदाः॥

(५) देवी के पार्षद—शक्ति, उच्छिष्ट चाण्डाली, गणेश, सूर्य चन्द्र आदि हैं।
शक्तिरुच्छिष्ट चाण्डाली गणेश सविता शशि।
महादेवी प्रसादंते सर्वे गृह्णन्तु पार्षदाः॥

अभीष्ट देवी-देवता का चयन

उपासना जीवन का एक अभिन्न अंग है, प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी रूप में ईश्वर रूपी दिव्यशक्ति की उपासना करता ही है। यह अपने पूर्वजन्म के संस्कारों पर निर्भर है। उपासना तभी सार्थक है जब उपासना सिद्धि दायक फलीभूत हो। भारतीय संस्कृति में ३३ करोड़ देवी-देवताओं की मान्यता है, अनेकों देबी-देवताओं की उपासना करते हुए भी मुख्य रूप से इनमें से किसी एक की उपासना करने से अधिक लाभ हो सकता है अथवा किस व्यक्ति को कौन से देवी-देवता की उपासना सार्थक होगी, इसका ज्ञान ज्योतिषशास्त्र के माध्यम से संभव है और तदनुसार अपने अभीष्ट देवी-देवता की उपासना से जीवन में सिद्धि संभव है। अन्यथा उपासना व्यर्थ है।

जन्म कुण्डली में पंचम स्थान को बुद्धि का और नवम स्थान को धर्म (उपासना) का माना गया है। पंचम भाव से जहाँ बुद्धि एवं प्रवृत्ति का पता चलता है वहीं नवम भाव से अपने अनुकूल अभीष्ट देवता-देवी का ज्ञान होता है। अतः कोई भी साधना करने से पहले यह ज्ञात करना चाहिए कि उसे किसकी उपासना करनी चाहिए।

यहाँ पर पंचमभाव का स्वामी, पंचम भाव में स्थितग्रह, नवम भाव का स्वामी, नवमभाव में स्थितग्रह—इन चारों में जो अधिक बली हो—उसके आधार पर निर्णय किया जाता है।

पंचमभाव से उपासना की प्रकृति :—

(१) यदि पंचम भाव में शुभग्रह हो (पूर्णचन्द्र, बु. बृ. शु.), पंचमेश शुभ ग्रह हो तो जातक सात्विक भाव का उपासक होता है। निष्काम उपासक, दार्शनिक, वैष्णव, बौद्ध आदि।

(२) यदि पंचमभाव का स्वामी पापग्रह (सू. मं. श.) हो, अथवा पंचम में पापग्रह विद्यमान हों तो व्यक्ति राजसिक या तामसिक उपासक होता है। कामना विशेष से उपासना करने वाला, बलिदान आदि प्रथाओं का अनुगामी इत्यादि।

(३) यदि पंचम में राहु या केतु विद्यमान हों तो व्यक्ति भूत-प्रेत, जादू-टोना, यक्षिणी, पिशाच आदि निम्न कोटि के देवी-देवताओं का उपासक होता है।

उपास्य देवता का लिंग :

इसका विचार नवम भाव से ही मुख्य है।

(१) चन्द्रमा तथा शुक्र स्त्रीलिंगी ग्रह हैं, अतः यदि नवम में शुक्र या चन्द्रमा हो, अथवा नवम भाव का स्वामी चन्द्रमा या शुक्र हो तो व्यक्ति को स्त्रीलिंग (देवी के किसी भी रूप का—दश महाविद्याओं में से कोई एक, गायत्री दुर्गा आदि) अर्थात् देवी की उपासना सिद्धि दायक होती है।

(२) नवम में पुरुष ग्रह (सू. मं. वृ.) हो, अथवा नवम भाव का स्वामी पुरुष ग्रह हो तो पुरुष संज्ञक देवता की उपासना फली भूत होती है।

बृहस्पति हो तो जातक को वैष्णवी आदि सात्विक उपासना या आध्यात्मिक (दार्शनिक) चिन्तन की धारा में जाना चाहिए अथवा किसी वैष्णव अवतारों की उपासना करनी चाहिए। सूर्य हो तो श्री राम, कृष्ण आदि राजसी अवतारों की उपासना श्रेयस्कर है।

मंगल हो तो युवा उग्र एवं कुमार देवताओं (कार्तिकेय, हनुमान, गणेश, भैरव, मृत्युंजय, कार्तवीर्य आदि) की उपासना फलदायक सिद्ध होगी।

(३) शनि उभय लिंगी ग्रह है। यदि नवम भाव में शनि स्थित हो या नवमेश शनि हो तो जातक को शिवजी की उपासना प्रत्यक्ष फल दायक होती है। ज्ञातव्य है कि (अर्घा + लिंग) शिवाराधना में उभयलिंगी आराधना ही होती है।

(४) बुध भी उभय लिंगी ग्रह है—लेकिन स्त्रीलिंगी गुण अधिक हैं अतः नवम भाव में बुध होने से अथवा नवमेश बुध होने पर व्यक्ति देवी रूप (स्त्री-लिंगी) का ही उपासक होता है किन्तु बालारूप में जैसे त्रिपुरसुन्दरीषोडशी, गौरी, श्यामा आदि।

(५) नवम भाव में अकेले एक ही ग्रह हो—ऐसा बहुधा कम होता है। कभी एक भी ग्रह नहीं होता। नवम में कोई ग्रह न होने पर नवमेश से ही देवी-देवता निर्धारित करना चाहिए। नवम में एक से अधिक ग्रह हों तो नवमेश से जिसकी पुष्टि हो, उसे ग्रहण करना चाहिए।

यदि नवम में राहु—केतु में से कोई स्थित हो तो उग्ररूप की उपासना सार्थक होगी। यथा --

देवी रूप में उग्रतारा, काली, भद्रकाली, दक्षिणकालिका, बगला, धूमावती, ज्वालामुखी इत्यादि एवं वाममार्गी साधना। वैष्णवरूप में—नृसिंह, वराह, परशुराम इत्यादि।

शैव सम्प्रदाय में – भैरव आदि— तथा शैव सम्प्रदाय के अधीन पाशुपत, कापालिक, नकुलीश, शिवाद्वैत आदि।

कुछ विशिष्ट योग :—

उपरोक्त मार्ग दर्शक सिद्धान्त तो हैं ही इसके अलावा ज्योतिष शास्त्र के प्राचीन ग्रंथों में कुछ व्यवस्थाओं का भी वर्णन मिलता है, जो पंचम और नवम भाव से सम्बन्धित ग्रह पर आधारित है—

(१) सूर्य से सूर्य या शिव का उपासक।

(२) राहु या केतु से यक्षिणी, भूत-प्रेतादि।

(३) बुध हो तो किसी भी देवता-देवी की उपासना सार्थक होती है, व्यक्ति सभी देवी-देवताओं का भक्त होता है। अथवा विष्णु की।

(४) सूर्य से —गायत्री रूपा देवी की उपासना।

(५) चन्द्रमा से --पार्वती (गौरी) की उपासना।

(६) मंगल से कार्तिकेय (स्कंद) की, श्री हनुमान जी की।

(७) गुरु से शिव जी की। निराकारोपासक भी हो सकता है।

(८) नवम में पापग्रह राहु-केतु के साथ हों, नवमेश भी पापग्रह हो तो व्यक्ति नास्तिक होता है। इसे किसी भी देवी-देवता की उपासना (नास्तिक भाव से श्रद्धाहीन होने से) सार्थक नहीं होती, अपितु तंत्र-मंत्र-उपासना के चक्कर में कष्ट व हानि होती है।

(९) पंचम में समराशि (२, ४, ६, ८, १०, १२) हो और उसमें शुक्र या चन्द्रमा स्थित हो तो देवी (शक्ति) का सिद्ध भक्त होता है।

(१०) नवम भाव में मंगल हो या नवमेश मंगल हो तो शिव की उपासना भी सफल होती है।

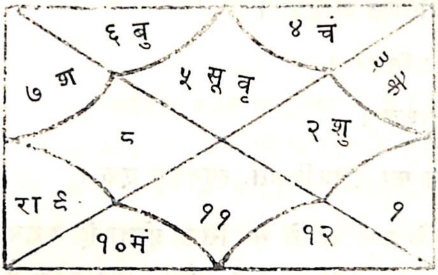
(११) यदि जन्म कुण्डली में चन्द्रमा और वृहस्पति के बीच सभी ग्रह स्थित हों तो निगुण एवं निराकारोपासना होती है। इसी प्रकार सभी ग्रह शनि-मंगल के मध्य हों तो भी निर्गुणोपासक होता है।

इसी प्रकार चन्द्रमा मकर में हो और सभी ग्रह सूर्य तथा मंगल के मध्य हों तो निर्गुणोपासक होता है।

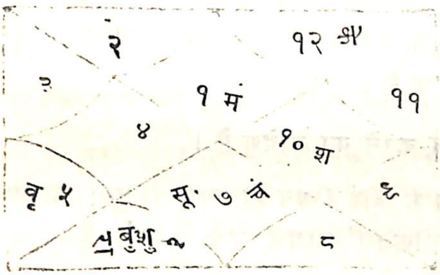
(१२) वृहस्पति और शनि एक ही नवमांश में हो तथा नवम या दशम स्थान स्थान में हों तो इसे साधना में परमसिद्धि प्राप्त होना निश्चित है।

इसी प्रकार साधना में सिद्धि का संकेत देने वाले अनेक योग हैं।

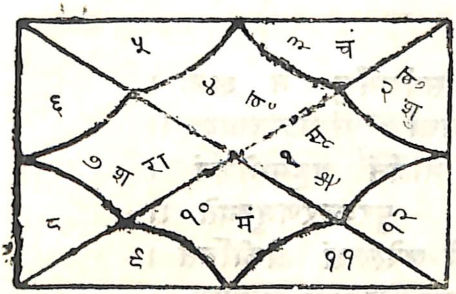
कुछ उदाहरण—



लंकापति रावण—पंचमेश गुरू और नवमेश मंगल, पंचम राहु—भगवान शंकर का तामसिक उपासक।



परमवैष्णव, रामभक्त श्रीहनुमान। पंचम गुरु नवमेश होकर और पंचमेश सूर्य।



श्री आदिशंकराचार्य—परमसिद्ध संत। नवमेश वृहस्पति उच्च का लग्न में। वेदान्त दर्शन के व्याख्याकार।

मंत्र सिद्धि एवं पुरश्चरण विधान

किसी भी मंत्र को सिद्ध करने हेतु 'पुरश्चरण' करना होता है। बिना पुरश्चरण के मंत्र सिद्ध नहीं होता। पुरश्चरण के पाँच अंग हैं—

(१) जप—एक लाख या अधिक × ४ = न्यूनतम चारलाख।

(२) होम—जप संख्या का दशप्रतिशत आहुति।

(३) तर्पण—होमाहुति का दश प्रतिशत।

(४) मार्जन—तर्पण का दश प्रतिशत।

(५) ब्रह्मभोज—मार्जन की संख्या का दशप्रतिशत, न्यूनतम एक।

वैसे तो कौन मंत्र कितनी संख्या में जप करने से सिद्ध होता है, इसका उल्लेख रहता है। जहाँ उल्लेख न हो वहाँ न्यूनतम जप संख्या एक लाख है, परन्तु कलियुग में सामान्य व्यक्तियों के निमित्त चौगुने जप का विधान है अर्थात् न्यूनतम चार लाख। जप संख्या के क्रमश: दशांश संख्या में हवन, तर्पण, मार्जन और ब्राह्मणों को भोजन कराना आवश्यक है।

पुरश्चरण काल में केवल फलाहार करने का आदेश है।

यदि जप के (पुरश्चरण) के मध्य में कोई विघ्न हो जाय तो पुन: प्रारम्भ से जप करना आवश्यक है। जैसा कि 'नीलतंत्र' सप्तम पटल में वर्णन है।

सामान्य रूप से किसी भी मंत्र को सिद्ध करने हेतु न्यूनतम एक लाख का पुरश्चरण वांछित है—

जीवहीनो यथादेहो सर्वकर्मसु न क्षमः।
पुरश्चरणहीनोऽपि तथा मंत्रोऽफलप्रदः॥
जपो होमस्तर्पणश्च मार्जनं ब्रह्मभोजनं।
पंचांगोपासनं लोके पुरश्चरणमुच्यते॥
एवं कृत्वा हविष्याशी जपेल्लक्षं प्रकीर्तितं।
ततः प्रयोगं सर्वेषां वश्यादीनां च कारयेत्॥

स्वेच्छाचारपरोमंत्री पुरश्चरण सिद्धये ।
रहस्यमालामादाय लक्ष्यमेकं सदा जपेत् ।।
एवं कृत्वा हविष्याशी जपेल्लक्ष चतुष्टयं ।
विशेषतः कलियुगे मत्प्रसादाद्भविष्यति ।।

विना पुरश्चरण के मंत्र सिद्ध नहीं होता ।

इस प्रकार मंत्र सिद्ध हो जाने के उपरान्त ही उस मंत्र का प्रयोग कार्यरूप में करना चाहिए और परीक्षण करना चाहिए कि मंत्र सिद्ध हुआ या नहीं ? यदि मंत्र का प्रयोग करने पर इच्छित कार्य की सिद्धि होती है तो स्पष्ट है कि मंत्र सिद्ध हो गया और सफलता न मिलने पर मंत्र सिद्ध नहीं हुआ, इसका आभास होता है ।

पुरश्चरण करने पर मंत्र सिद्ध हो ही जायगा, यह निश्चित नहीं है क्योंकि जाने या अनजाने में कोई छोटी सी त्रुटि हो जाने पर अर्थात् क्रियाहीन, भक्ति-हीन, भावना हीन, विधिहीन, श्रद्धाहीन, विश्वासहीन कार्य करने पर सिद्धि संभव नहीं है अतः श्रद्धा भक्ति और विश्वास पूर्वक विधिसहित क्रिया आवश्यक है ।

ऐसे व्यक्ति जो काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, अहंकार आदि से मुक्त न हो । जो दूसरे के अहित करने के उद्देश्य से, विध्वंसात्मक प्रवृत्ति से प्रेरित होकर पुरश्चरण करता है, उसे सिद्धि मिलना कठिन होता है ।

परोपकार एवं सर्जनात्मक लोकहित एवं जनहित के उद्देश्य से सात्विक विचार, शुद्ध आचार-विचार एवं दिनचर्या पूर्वक मौन व्रत का पालन करते हुए साधना करने पर ही मनोवांछित सफलता संभव है ।

यदि पूर्वजन्म के पापों अथवा किसी अन्य कारण से एक बार पुरश्चरण करने से मंत्र सिद्ध न हो तो पुनः पुनः पुरश्चरण करना चाहिए जब तक कि मंत्र सिद्ध न हो—

पुरश्चरण एकस्मिन् कृते जन्मान्तराधतः ।
मंत्रो यदि न सिद्धः स्यात्तदातत्पुनराचरेत् ।।
—मंत्र महोदधि

पुरश्चरण की क्रिया प्रारम्भ करने से पहले कोई एकान्त व सुरक्षित स्थान का चयन किया जाता है, जहाँ किसी का आवागमन न हो । निर्जन बन में

अथवा किसी ऐसे मन्दिर में जहाँ कोई आता न हो, पुरश्चरण हेतु उत्तम है। किसी अन्य व्यक्ति के आवागमन से, किसी के देख लेने से पुरश्चरण भंग हो सकता है।

पुरश्चरण घर में भी एक अलग शान्त कमरे में किया जा सकता है लेकिन गुप्त रूप से। पुरश्चरण कर्ता को पुरश्चरण शुरू करने से उसकी समाप्ति तक किसी के स्पर्श से बचना होगा। स्वयं पाकी हो तो उत्तम है, अन्यथा शुद्ध फलाहार भोजन आवश्यक है। इस बीच घर से बाहर निकलना सर्वथा वर्जित रहेगा। इस प्रकार कठोर संयम व साधना से ही मंत्र सिद्धि संभव होती है। पौराणिक आख्यानों से भी ज्ञात होता है कि पुराकाल में सिद्धि हेतु ऋषि-मुनि निर्जन बन में ही तपस्या, साधना करते थे।

ग्रहण में मंत्र सिद्धि

ग्रहण काल में मंत्र का जप विशेष प्रभावकारी होता है अतः यदि सूर्यग्रहण अथवा चन्द्रग्रहण में ग्रहण के स्पर्श काल से मोक्षकाल तक निरन्तर विधि पूर्वक किसी समुद्रगामिनी नदी में खड़े होकर मंत्र जपा जाय और बाद में होम, तर्पण, मार्जन, ब्रह्मभोज आदि करके पुरश्चरण के पाँचों अंग पूर्ण किये जांय तो भी मंत्र सिद्धि हो सकती है—

यद्वासमुद्रगामिन्यांनद्यामिन्दुरविग्रहे।
स्पर्शान्मोक्षान्तमाजप्य जुहुयात्तद्दशांशतः॥
विप्रान्सम्भोज्य नानात्रैर्मन्त्राणां सिद्धिमाप्नुयात्।

—मंत्र महोदधि।

यदि सात्विक भाव से परमार्थ हेतु मंत्र सिद्ध करना हो तो एक मंत्र को सिद्ध करना ही पर्य्याप्त है लेकिन सांसारिक कामनाओं की इच्छा से राजसिक वा तामसिक उपासना में विभिन्न कामनाओं की सिद्धि हेतु विभिन्न मंत्रों को सिद्ध करना हो तो ग्रहण में ऐसे मंत्र सिद्ध किये जा सकते हैं। प्रत्येक वर्ष में दो-तीन ग्रहण तो पड़ते ही हैं इस प्रकार मनुष्य अपने जीवन काल में सरलता से अनेक मंत्रों को सिद्ध कर सकता है। पुरश्चरण विधि से मंत्र सिद्ध करने से एक मंत्र को सिद्ध करने में ही बहुत समय लगेगा।

यहाँ पर ग्रहण में समुद्रगामिनी नदी में जप करने को कहा गया है, वैसे तो सभी नदियां समुद्र में ही विलीन होती हैं लेकिन किसी बड़ी नदी में मिलकर

वे अपना नाम खो देती हैं, अतः ऐसी नदी हो जो अपने मूलनाम से ही समुद्र में मिलती हो जैसे गंगा, सिन्धु, नर्मदा, ताप्ती, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, ब्रह्मपुत्र आदि ।

पुरश्चरण की दीर्घ कालीन प्रक्रिया और उसका क्रम

तांत्रिक साधना एक दीर्घकालीन प्रक्रिया एवं साधना है । इस विद्या की ओर रुचि के जागृत् होने से लेकर मंत्र की सिद्धि तक वर्षों का समय लगता है फिर भी यह निश्चित नहीं है कि मंत्र सिद्ध हो ही जाय । यदि अनेकों मंत्र सिद्ध करने हों तो वह जीवन भर में भी संभव नहीं है क्योंकि भिन्न-भिन्न मंत्रों से भिन्न-भिन्न कार्य सिद्ध होते हैं अतः विभिन्न कार्यों के निमित्त विभिन्न मंत्र सिद्ध करने होंगे । हाँ यदि परमार्थिक उपासना हो तो एक मंत्र की सिद्धि ही पर्य्याप्त है ।

सर्वप्रथम यह जानना आवश्यक है कि तंत्र और तंत्र साधना क्या है ? दक्षिणमार्गी तथा वाममार्गी उपासना क्या है, क्या इस जटिल उपासना के हेतु व्यक्ति सक्षम है । यदि कोई व्यक्ति अपने को इस योग्य समझे और तांत्रिक उपासना के प्रति आस्थावान हो तो सर्व प्रथम उसे योग्य गुरु का चयन करना चाहिये । योग्य गुरु मिल जाने पर न्यूनतम एक वर्ष अथवा अधिक समय तक निष्कपट भाव से गुरू की तन धन मन से सेवा करके अपने प्रति उनमें विश्वास उत्पन्न करे । इस अवधि में अष्टांग योग साधन द्वारा अपने मन तथा शरीर को तांत्रिक साधना के योग्य बनायें क्योंकि बिना योग के तांत्रिक साधना संभव नहीं है ।

जब गुरु प्रसन्न होकर दीक्षा देना चाहें, तब सर्वप्रथम गुरु के माध्यम से ही 'मंत्रशोधन' विधि के द्वारा अपने अनुकूल मंत्र का चयन कराये और दीक्षा ग्रहण के लिये उपर्युक्त समय का निर्धारण कर विधिवत् गुरु से मंत्र की दीक्षा ले ।

मंत्र प्राप्त हो जाने पर मंत्र के महत्व को समझे । दूसरे चरण में मंत्र के जप व पुरश्चरण की बात आती है । पुरश्चरण करने के हेतु सर्वप्रथय स्थान और सुरक्षा की व्यवस्था करे, ताकि कोई विघ्नबाधा न हो । स्थान व भोजन की व्यवस्था सुनिश्चित हो जाने पर सर्वप्रथम पंचगव्य का निर्माण (विधिवत्) कराकर, क्षौरकर्म करके स्वयं पंचगव्य का प्राशन कर आत्मशुद्धि करे और स्थान

को भी शुद्ध करे। × उपास्य देवी/देवता का यंत्र अथवा मूर्ति बनवाकर रख ले। पूजा सामग्री का सम्पादन कर सर्वप्रथम दीप प्रज्वलित करे, यह दीपक स्थापना से पुरश्चरण की समाप्ति तक निरन्तर प्रज्वलित रहे, कोई बाधा न हो ऐसी व्यवस्था करे। दीपक जलाकर उसके लक्षणों को देखकर सफलता या असफलता के संकेतों का अध्ययन करें, यदि असफलता सूचक अशुभ संकेत प्राप्त हों तो पुरश्चरण हेतु अनुकूल समय न जानकर उसे स्थगित कर दे और कालान्तर में पुनः प्रयास करे।

यदि सफलता सूचक शुभ संकेत प्राप्त हों तो सर्वप्रथम आत्मरक्षा व उपासना की रक्षा के निमित्त तांत्रिक प्रयोगों को सर्वप्रथम करे ताकि साधना में कोई विघ्न या अनिष्ट आदि न हो, शारीरिक रक्षा हो।

तदनन्तर चयनित मंत्र के दस संस्कार करके मंत्रसाधन के पूर्व की क्रियायें सम्पादित करे। जपमाला का विधिवत् निर्माण कराकर माला के संस्कार सम्पादित करे।

तीसरे चरण में मंत्रसिद्ध करने की क्रिया होती है।

सूर्य का पूजन कर स्वस्तिवाचन (देवताओं से मंगल की कामनापूर्वक प्रार्थना), गणेश पूजा (यथानाम), मातृ पूजा (श्री गणेश जी का १६ माताओं के साथ पूजन) नांदिमुख, वृद्धि या आभ्युदायिक श्राद्ध (कोरे अन्न वस्त्र आदि के द्वारा अपने पारिवारिक व जातीय अभ्युदय की कामना से पितरों का आबाहन एवं श्राद्ध) पुण्याहवाचन (परिवार के कुशल क्षेम, पुण्य, धनधान्य की वृद्धि, महत्व एवं अधिकारों में वृद्धि, सम्पन्नता, नीरोगता, सुख-शान्ति तथा कल्याण की कामना से मंत्रपाठ) कलश पूजन (कलश सृष्टि का प्रतीक है, इसमें नवग्रहों सभी देवी-देवताओं, वरुण, व्रह्मा आदि का आवाहन कर पूजन किया जाता है। कुशा से चर्तुमुख व्रह्मा की प्रतीक मूर्ति बनाकर स्थापित की जाती है) मुख्य है। आत्म रक्षा, यज्ञ रक्षा के उद्देश्य से रक्षा सूत्रों को भी कलश में स्था-

---

× पुरश्चरण जब प्रारंभ करना हो तब बृहस्पति या शुक्र अस्त न हो, गोचर से चन्द्रमा अपनी राशि के अनुकूल हो, शुभ दिन ब मुहूर्त हो, यह ध्यान रक्खें।

पुरश्चरण प्रारंभ करने से तीन दिन या एक दिन पहले मुण्डन करे। पंचगव्य प्राशन करे। पुरश्चरण के अधिकार प्राप्ति हेतु मन, वाणी, तथा शरीर की शुद्धि के निमित्त विधिपूर्वक एकहजार गायत्री का जप करे। इसके बाद ही दूसरे या तीसरे दिन से पुरश्चरण की प्रक्रिया प्रारंभ करे।

पित व प्रतिष्ठित किया जाता है, जिसे बाद में कर्म या यज्ञ की समाप्ति पर स्वयं तथा परिवार के लोगों के हाथ में बाँधा जाता है।

उपास्य देवता की मूर्ति या यंत्र को पूजास्थल पर स्थापित कर उसका अग्न्युत्तारण, प्रतिष्ठा, प्राणप्रतिष्ठा, पंचदश संस्कार आदि सम्पादित करके स्वयं अपनी भी प्राण प्रतिष्ठा करे। पूजा सम्बन्धी सामान्य नियमों का पालन करते हुए, यथासम्भव उपचारों से पूजा के क्रम को ध्यान में रखते हुए नवधा भक्ति एवं विश्वासपूर्वक उपास्य देवता का पूजन करे।

तदनन्तर विधिपूर्वक मंत्र का जप प्रारम्भ करे, सुखपूर्वक एक दिन में जितना जप हो सके, उतना ही जप करे ताकि नित्यप्रति उतना जप हो सके। इस प्रकार जब तक चार लाख या निर्धारित संख्या में जप पूर्ण नहीं हो जाता, नित्यप्रति स्थापित देवताओं का पूजन कर जप करता रहे।

जप के बाद हवन भी एक अनिवार्य अँग है। भिन्न-भिन्न देवता हैं, जिनके नाम से आहुति दी जाती है लेकिन उपास्य देवता के अलावा निम्न देवताओं को अनिवार्य रूप से आहुति दी जाती है :—

सर्वप्रथम क्रम से प्रजापति, इन्द्र, अग्नि, वायु, सूर्य। इसके अनन्तर साधना से सम्बन्धित अपने अभीष्ट मंत्र से मुख्य हवन किया जाता है। तदुपरांत गणेश, षोडशमातृका, ब्रह्मा, बरुण, नवग्रह (सूर्य, चन्द्र मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु, केतु) अधिदेवता (रुद्र, उमा, लक्ष्मी, स्कंद, विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र, यम, काल, प्रजापति) प्रत्यधिदेवता (अग्नि, आप, पृथ्वी, विष्णु, इन्द्र, इन्द्राणी, प्रजापति, सर्प, ब्रह्मा) पंचलोकपाल, (गणेश, दुर्गा, वायु, आकाश, अश्विनी कुमार) दश दिग्पाल (इन्द्र, अग्नि, यम, निऋति, वायु,वरुण, कुबेर, ईशान, ब्रह्मा, अनन्त) विश्वकर्मा, वास्तोस्पति, क्षेत्रपाल। तदन्तर, अग्नि, वरुण, विश्वदेव, मरूत, स्वर्क, वरुण और प्रजापति के नाम आहुति देने का विधान है। साथ ही अपने इष्टदेव कुल के देवी-देवताओं को भी। हवन के अन्त में 'पूर्णाहुति' भी दी जाती है।

हवन के बाद बलिदान की प्रक्रिया पूरी करके पुरश्चरण के अन्य अँगों (तर्पण, मार्जन, ब्रह्मभोज) को पूरा करे। अन्त में देवताओं (उपास्य देवता/देवी को छोड़कर) को विसर्जित करे।

कालान्तर में आवश्यकता पड़ने पर मंत्र का प्रयोग करके यह ज्ञात करे कि मंत्र सिद्ध हुआ या नहीं। अन्यथा सिद्ध न होने पर पुनः पुरश्चरण करे।

इस सम्बन्ध में पंचगव्य निर्माण, प्रतिष्ठा, प्राण प्रतिष्ठा, अग्न्युत्तारण, गणेश पूजा आदि पंचाँग कर्म, पूजन, हवन आदि कर्मकाण्ड पद्धति से योग्य विद्वान आचार्य द्वारा ही सम्पन्न किये जाते हैं।*

बलिदान भी कर्मकाण्ड पद्धति के अनुसार ही सस्पन्न होता है। तंत्रशास्त्र में पशु बलिदान या अपने शरीर से रक्तदान ब्राह्मणों के निमित्त वर्जित है ही अन्य वर्णों के हेतु भी पशु बलिदान तामसिक या वाममार्गी साधना का ही एक अँग है। निरुत्तरतंत्र, दुर्गा रहस्य, श्यामा रहस्य निर्णयसिन्धु, कालिकापुराण आदि तंत्र ग्रंथों में ब्राह्मण साधक को पशु बलिदान या रक्तदान निषिद्ध कहा गया है। सात्विक पूजा व परमार्थिक उपासना में तथा ब्राह्मण उपासक को केला, नारियल, गन्ना, खीरा, कूष्माण्ड आदि फलों की बलि देना कहा गया है। अथवा माषान्न (उड़द की दाल + चावल] या दध्यक्षत (दही + चावल) की बलि दी जा सकती है :—

कूष्माण्ड मिक्षुदण्डश्चमद्यमासव मेवच।
ऐतेबलिसमाज्ञेयास्तृप्तौ छागसमास्मृता:।।

\+ +

रम्भेक्षु नारिकेलं च गुवाकं कण्टकीफलम्।
ऊर्वारुकं करंजं च छेदेयेच्छुरिकादिना।।

\+ +

ब्राह्मणेन सदादेयं कूष्माण्डं बलिकर्मणि।
श्रीफलं वा सुराधीश छेदं नैवतु कारयेत्।।

इत्यादि

सात्विक, राजसिक और तामसिक उपासना की दृष्टि से तथा विभिन्न कामनाओं की दृष्टि से होम में भी समिधा, होम द्रव्य का चयन किया जाता है और हवन करने समय मुद्रायें भी भिन्न-भिन्न होती हैं। मारण आदि कुछ अभिचार कर्मों में तो पिष्ट आदि से शत्रु की मूर्ति तैयार कर उसकी प्राण प्रतिष्ठा करके छुरे से काट-काटकर उसके शरीर की ही आहुति दी जाती है। इस सबका वर्णन तंत्रग्रंथों में है।

---

* इस सम्बन्ध में कोई कर्मकाण्ड की पद्धति प्रयोग में ला सकते हैं अथवा 'वार्षिक व्रतोत्सव पूजा विधानम्' (आचार्य भास्करानन्द लोहनी रचित) देखें।

मंत्र जप अनुष्ठान पाठ की सामान्य विधि

मंत्र सिद्ध हो जाने पर किसी प्रयोजन से कोई पुरश्चरण अथवा ऐसे मंत्र जिन्हें सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है, उन मंत्रों का जप पाठ या पुरश्चरण करने की सामान्य विधि यह है कि यदि व्यक्ति पुरश्चरण करने में समर्थ हो तो स्वयं जप करे। स्वयँ समय न होने पर किसी विद्वान व्यक्ति से कोई भी अनुष्ठान या पाठ करवाया जा सकता है ऐसी स्थिति में सर्वप्रथम संकल्प करके जप एवं पुरश्चरण कर्ता व्यक्ति का वरण करना होगा। जप व पुरश्चरण प्रभावी तभी होगा जब कि जपकर्ता व्यक्ति आपका भोजन खाकर, आपके द्वारा दत्त वस्त्र पहनकर अनुष्ठान सम्पादित करे। अतः जप कितने दिनों तक चलेगा इसका अनुमान कर उतने दिनों तक का भोजन, भोजन व्यवस्था के अन्य आधार (अर्थात् अनाज, घी, नमक, मसाले, भोजन बनाने के बर्तन, लकड़ी आदि सभी उपकरण) छाता, जूता, जलपात्र, आसन, वस्त्र, जनेऊ, आभूषण, अँगूठी आदि की व्यवस्था कर जपकर्ता को देनी चाहिए। यदि उपरोक्त व्यवस्था सम्भव न हो तो तीन वस्तुयें देना आवश्यक है - पात्र, वस्त्र और सोने की अँगूठी—

भोजनं भोजनाधारश्छत्रोपानह कमण्डलुः।
आसनं वसनं मुद्रा कर्णभूषोपवीतकम्॥
एतद्दशविधं देयं पदंवरण सिद्धये।
पदाभावेत्रयं देयं पात्र वस्त्रांगुलीयकम्॥

—रुद्रकल्प

इसके साथ ही अनुष्ठान में जो पूजन सामग्री आदि प्रयुक्त होगी, उसकी भी व्यवस्था करना होगा।

जप/अनुष्ठानकर्ता स्नानादि नित्य क्रिया से निवृत्त होकर, शुद्ध (बिना सिले—धोती उत्तरीय आदि) वस्त्र व नवीन यज्ञोपवीत पहनकर, यथा देवता तथा वेष (भस्म चन्दनादि धारण कर) निर्धारित पूजा स्थल पर, शुद्ध आसन पर पूर्व या उत्तर मुख होकर, सिद्धासन अथवा पद्मासन लगाकर बैठे। शिखा

बन्धन करके कुशा का पवित्र/स्वर्ण अँगूठी धारण करे। दीपक जलाकर उसका पूजन करे, दीपक के सुरक्षा की व्यवस्था कर ले ताकि जप के प्रारम्भ से पुरश्चरण के अन्त तक जितना भी समय/दिन लगें —इस मध्य निरन्तर अखण्ड दीप प्रज्वलित रहे।

इसके बाद क्रमशः सूर्य, गणेश, देवी, शिव तथा श्री विष्णु, चन्द्रमा, यम, काल, सन्ध्या, पंचमहाभूत (अग्नि, वायु, जल, पृथ्वी, आकाश) को स्मरण कर प्रणाम करे। तदनन्तर अन्य भी जो देवता पूजा स्थल में हों, अपने इष्ट देवता, कुल देवता, स्थान देवता आदि को भी स्मरण कर प्रणाम करे।

इसके बाद माता, पिता और गुरु का स्मरण कर प्रणाम करे (जिस व्यक्ति से आपने विद्या प्रत्यक्ष ग्रहण की हो, अथवा जिस व्यक्ति के ग्रन्थों से विद्या ग्रहण की हो*) भगवान सूर्य को अर्घ्य (जल) दें। अपने आसन की तथा भूमि की गन्धाक्षत से पूजन करें।

बायें हाथ में चावल व पीली सरसों लेकर दायें हाथ से दसों दिशाओं में छोड़कर भूतोत्सादन करें—

अपसर्पन्तु ते भूताये भूता भुवि संस्थिता।
येभूताविघ्नकर्तारः ते नश्यन्तुशिवाज्ञया।।
अपक्रामन्तुभूतानि पिशाचा सर्वतोदिशम्।
सर्वेषामविरोधेन पूजाकर्म समारभे।।

इसके अनन्तर संकल्प करे—"आज की तिथि में मैं ...... नाम का व्यक्ति अपने ...... कार्यसिद्धि के निमित्त/अथवा ...... नाम के व्यक्ति के ...... कार्य के निमित्त ...... मंत्र का पुरश्चरण प्रारम्भ कर रहा हूँ, इस क्रम में ...... मंत्र का ...... इतनी संख्या में जप/पाठ आरम्भ करने जा रहा हूँ।"

जिस देवता/ग्रह से सम्बन्धित मंत्र का जपानुष्ठान हो, उस ग्रह या देवता की प्राणप्रतिष्ठा मूर्ति विद्यमान हो तो उसकी पंचोपचार/षोडशोपचार यथास्थिति पूजा करे। ऐसा न हो तो कागज पर/गोबर से/मिट्टी से/सुपारी से चित्र या मूर्ति का आकार बनाकर उसकी प्रतिष्ठा-प्राणप्रतिष्ठा कर पूजा करे।

---

* गुरु जीवित हों तो विद्या की सफलता के निमित्त प्रति वर्ष गुरु पौर्णिमा को यथाशक्ति उनका सम्मान करें।

ऐसा भी विधान है कि मूर्ति आदि न होने पर उक्त देवता की मूर्ति का ध्यान (चिन्तन) कर अथवा उसके सर्वव्यापी पंचतत्वात्मक रूप की कल्पना कर पंचोपचार मानसिक रूप से भी पूजा की जा सकती है।

ऊँ लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि।

ऊँ हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि।

ऊँ यं वायु आत्मकं धूपं समर्पयामि।

ऊँ रं तेजासात्मकं दीपं समर्पयामि।

ऊँ वं अमृतात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि।

ऊँ सं सर्वात्मकाय नमः।

तदुपरान्त विधिपूर्वक निर्मित तथा विधिपूर्वक संस्कारित एवं प्रतिष्टित माला का पूजन कर विधिपूर्वक निर्धारित संख्या में जप करे (ऐसे अनुष्ठान में जिसका जप एक दिन से अधिक चले, नित्य एक निर्धारित संख्या में ही जप होता है, कभी कम या कभी अधिक संख्या में जप नहीं होता, अशुभ होता है)। यदि न्यास वांछित हों तो जप करने से पहले विनियोग व न्यास कर लें।

षडंग न्यास की विधि

(अँगुष्ठकाभ्यांनमः) में दोनों हाथों की तर्जनी से दोनों हाथ का अँगूठा छूना।

(तर्जनीभ्यांनमः) में अँगूठे से तर्जनी को छूना।

(मध्यमाभ्यांनमः) में अँगूठे से मध्यमा को छूना।

(अनामिकाभ्यांनमः) में अँगूठे से अनामिका को छूना।

(कनिष्ठिकाभ्यांनमः) में अँगूठे से कनिष्ठा को छूना।

(करतलकरपृष्ठाभ्यांनमः) में दायें हाथ से बायें हाथ की और बायें हाथ से दायें हाथ की हथेली और हथेली के पीछे छूना।

(हृदयायनमः) दायें हाथ से हृदय के स्थान पर छूना।

(शिरसेस्वाहा) दांया हाथ शिर पर रखना।

(शिखायैवौषट्) दांया अँगूठा से शिखाको छूना।

(कवचायहुम्) दायें हाथ से बायां और बायें हाथ से दांये कन्धे बाहु) छूना।

(नेत्रत्रयायवौषट्) दायें हाथ की अनामिका से बांयी आँख और तर्जनी से दांयी आँख व मध्यमा से दो आँखों के बीच नाक छूनी। तीनों को एक साथ छूना।

(अस्त्रायफट्) दायें हाथ की तर्जनी व मध्यमासे बायें हाथ में ताली बजाना।

जप समाप्त कर (यदि जप से पहले न्यास किये हैं तो जप की समाप्ति पर पुनः उसी प्रकार न्यास करें) माला का पुनः पूजन कर उसे सुरक्षित स्थान में स्थापित कर दें।

अपने आसन के नीचे से धूल लेकर चन्दन की भांति मस्तक पर लगा लें। अन्यथा इन्द्र देवता जप का हरण कर लेते हैं।

पुरश्चरण के निमित्त जप या पाठ का जो लक्ष्य निर्धारित है वह अकेले एक व्यक्ति द्वारा या अन्य विद्वानों के सहयोग से सामूहिक रूप से एक ही दिन में भी सम्पन्न हो सकता है और अनेक दिनों तक भी अनुष्ठान चल सकता है, जैसी स्थिति हो।

यदि जप/अनुष्ठान/पाठ का विधान एक दिन से अधिक चले तो प्रथम दिन से अन्तिम दिन तक जप/पाठ/अनुष्ठान नित्य प्रति इसी क्रम से चलेगा, यही दिनचर्या होगी। इस अवधि में ब्रह्मचर्यपालन, सात्विक व फलाहारी भोजन, भूमि शयन, मनसा वाचा कर्मणा शुद्ध आचरण रखना अनिवार्य है।

जप की संख्या (लक्ष्यानुसार) पूर्ण होने पर उस संख्या के दश प्रतिशत आहुति हवन, तर्पण, मार्जन, विद्वानों को भोजन* कराने का विधान है अथवा निर्धारित संख्या से दश प्रतिशत संख्या में और जप करे।

अनुष्ठान की समाप्ति पर आवाहित देवी/देवताओं को विसर्जित कर दें।

दक्षिणा यज्ञ का एक अँग है जप या पाठकर्ता व्यक्ति का पारिश्रमिक नहीं। अतः यदि कोई व्यक्ति स्वयँ अपने निमित्त भी जप या पाठ करता है तो

---

* जप संख्या का दशांश आहुति हवन, इसका दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन और मार्जन का दशांश भोजन दान।

उसे अनुष्ठान की समाप्ति पर इच्छानुसार दक्षिणा (सुवर्ण, द्रव्य, गाय यथाशक्ति) गुरुजनों या विद्वज्जनों को देना चाहिए तभी अनुष्ठान पूर्ण होगा। यदि किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के माध्यम से अनुष्ठान करवाया हो तो भी दक्षिणा के साथ उनके पारिश्रमिक को ध्यान में रख कर सन्तुष्ट करना आवश्यक है।

वेदोक्त तांत्रिक अनुष्ठान

वैदिक साहित्य तत्र-मंत्रों से भरा पड़ा है, अथर्व वेद तो तंत्रशास्त्र का ही ग्रंथ है। मनु का तो कथन है कि ब्राह्मण का शस्त्र मंत्र ही है, अतः वह अथर्ववेद में वर्णित मंत्रों के द्वारा ही अपने विरोधियों पर विजय प्राप्त करे, और निःसंकोच इन मंत्रों का प्रयोग करें।"* यह ज्ञातव्य है कि हमारा वैदिक साहित्य संहिता, ब्राह्मण, उपनिषद (आरण्यक) तथा वेदांग इन चार भागों में है सम्राट् विक्रम के समय तक (दो हजार वर्ष पूर्व) जो वैदिक साहित्य था, वह आज अलभ्य है। तत्कालीन ग्रंथ महाभाष्य में तथा अन्य ग्रंथों में वैदिक साहित्य की जो सूची मिलती है—उसमें से अब केवल एक शतांश ही प्राप्त होता है। उन दिनों मात्र हस्तलिखित व कुछ ही प्रतियाँ होती थीं जो आक्रमणकारियों द्वारा भारतीय पुस्तकालयों को जला दिये जाने से नष्ट हो गया है अथवा विदेशों में चला गया है, जो इस प्रकार है :—

	ऋग्वेद	यजुर्वेद	सामवेद	अथर्ववेद
विक्रम के समय	२१	१०१	१०००	६
वर्तमान	१	५	३	२

अर्थात् विक्रम के समय कुल ग्रंथ संख्या २१ + १०१ + १००० + ६ = ११३१
आज उपलब्ध १ + ५ + ३ + २ = ११

कालान्तर में जो ग्रंथ आज प्राप्त हैं, इनका भी अस्तित्व समाप्त हो सकता है, पाश्चात्य शिक्षा का प्रभाव है।

यही स्थिति ब्राह्मणग्रंथों, उपनिषदों व वेदागों की भी है।

यहाँ यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि ब्राह्मण ग्रंथ क्या हैं ? वास्तव में ब्राह्मणग्रंथों में संहितामंत्रों के प्रयोग व उपयोग की विधि वर्णित है। किस मंत्र या ऋचा का कहाँ, कब, कैसे और क्यों उपयोग किया जाता है, यह ज्ञान ब्राह्मणग्रंथों से ही प्राप्त होता है अतः ब्राह्मणग्रंथों के अभाव में संहिताग्रंथों का प्रयोग ही सम्भव नहीं है।

---

* मनुस्मृति ११/३३, निर्णयसागर प्रेस, सम्वत् १९८५ संस्करण।

वास्तव में ब्राह्मणग्रंथ वेदों की कुंजियां हैं।

(अ) ऋग्वेद का—ऐतरेय तथा सांख्यायन ब्राह्मण।

(आ) यजुर्वेद का—शतपथ (तैत्तरैय व आरण्यक कृष्ण यजुर्वेद का)

(इ) सामवेद का—ताण्ड्य ब्राह्मण।

(ई) अथर्ववेद का—गोपथ ब्राह्मण।

ब्राह्मणग्रंथ भी आज के युग में सम्पूर्ण उपलब्ध नहीं हैं। उदाहरण के रूप में अथर्ववेद का "गोपथ ब्राह्मण" जो आज प्राप्त है वह अपूर्ण है. उसमें ब्राह्मण ग्रंथों की सामग्री है ही नहीं। वास्तव में यह 'गोपथब्राह्मण' नहीं इसकी भूमिका मात्र है। इस ग्रंथ के अभाव में अथर्ववेद के मंत्रों एवं अनुष्ठानों का प्रयोग संभव ही नहीं है।

उल्लेखनीय है कि अथर्ववेद मुख्यतः तंत्र से सम्बन्धित है जन साधारण की समस्याओं से सम्बन्धित नीरोगता, दीर्घायु, आर्थिक समृद्धि, व्यापार में उन्नति, राज्य या पद का लाभ, बुद्धि विद्या में प्रगति, शत्रु पराजय, कृषि उन्नति, पशु समृद्धि, सन्तति लाभ, गृहस्थ सुख की प्राप्ति आदि के निमित्त तंत्रों का विशद वर्णन है साथ ही अन्य तंत्रों की तुलना में अथर्ववेद का तंत्र साहित्य अधिक प्रभावी व उपयोगी माना गया है। यह सभी प्रयोग लोक कल्याण एवं जन कल्याण की भावना से हैं। अन्य तंत्र ग्रंथों में वर्णित तंत्र जहाँ कीलित (प्रभावहीन) तथा अभिचार (मारण, मोहन, उच्चाटन आदि अहितकारी षट्कर्मों) से सम्बन्धित है वहीं अथर्ववेद का तंत्र साहित्य जीवित (प्रभावकारी, अकीलित) और समाज के लिए कल्याणकारी है।

पुराणों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि पुराणों ने ब्राह्मण ग्रंथों की रक्षा में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। जो आंशिक रूप में ही सही, परन्तु बहुमूल्य है। पुराणों में इन ब्राह्मणग्रंथों का सर्वांगीण उल्लेख सम्भव भी न था क्योंकि उनकी विषय वस्तु भिन्न है। इसके बावजूद पुराणों में (विशेषतः अग्निपुराण में) कुछ मुख्य-मुख्य कामनाओं से सम्बन्धित अथर्ववेद के तांत्रिक प्रयोगों की विधि के साथ ही ऋग्वेद व सामवेद के तांत्रिक प्रयोगों का भी उल्लेख मिलता है। वैसे तो पर्य्याप्त मात्रा में इन प्रयोगों का वर्णन है, यहाँ पर इनमें से कुछ आवश्यक एवं जनहित के प्रयोगों की विधि का पुराणोक्त वर्णन दे रहा हूँ।

अथर्ववेदीय अनुष्ठान

(१) 'शान्तातीयगण' से हवन शांति कारक है।
(२) 'भैषज्यगण' रोगशांति कारक हैं।
(३) 'अभयगण' से मनुष्य के भय दूर होते हैं।
(४) 'अपराजितगण' के अनुष्ठान से मनुष्य पराजित नहीं होता।
(५) 'आयुष्यगण' का अनुष्ठान अल्पमृत्यु से रक्षा कारक है।
(६) 'वास्तुगण' का अनुष्ठान गृहभूमि सम्बन्धी समस्त दोष का निवारक है।

कुछ विशेष अनुष्ठान इस प्रकार हैं :—

(१) यस्त्वां मृत्यु० शीर्षक ऋचा का अनुष्ठान अल्प मृत्यु से रक्षाकारी है।
(२) इन्द्रेणदत्तम्० (इन्द्रेणदण्ड०वा) शीर्षक ऋचा का अनुष्ठान मनोकामनापूरक एवं सभी वाधानिवारक है।
(३) यमस्य लोकान्० यह दुःस्वप्न नाशक है।
(४) इन्द्रश्चपंच० यह व्यवसाय में लाभ व उन्नति कारक है।
(५) कामो मे वाजी० यह महिलाओं के सौभाग्य में वृद्धि एवं दाम्पत्य सुख सूचक है।
(६) अग्नेगोभिन० यह बुद्धिवर्धक है।
(७) ध्रुवंध्रुवेय० यह स्थानलाभ (पदलाभ) कारक है।
(८) अलक्तजीव० यह कृषि सम्पदा में वृद्धिकारी है।
(९) शपत्वहृन—का अनुष्ठान शत्रुनाशक व विजयप्रद है।
(१०) त्वमुत्तमं—का अनुष्ठान यश ब बुद्धि में वृद्धिकारक है।
(११) येन चेहदिशं च—का अनुष्ठान गर्भ स्थापन कारक (संतानदायक) है।
(१२) अयंते योनि—का अनुष्ठान पुत्रदायक है।
(१३) मुंचामित्वा—का अनुष्ठान अल्पमृत्यु से रक्षा कारक है।

ऋग्वेदीय अनुष्ठान

(१) 'सदसस्पति० शीर्षक तीन ऋचाओं का पाठ, जल में जप अथवा होम बुद्धिवर्धक है।
(२) 'अन्वयोयन० शीर्षक नौ ऋचायें रोगशान्ति कारक तथा अल्पमृत्यु निवारक हैं।

(३) 'हिरण्यस्तूप०' ऋचा शत्रुबाधा शामक व विजयप्रद है।

(४) येतेपंथा०' शीर्षक ऋचा यात्री के निमित्त सकुशल यात्रा व सफलता दायक है। स्वस्तिपंथा०' शीर्षक ऋचा का भी यही प्रभाव है।

(५) 'आनोभद्रा० इस ऋचा का जप दीर्घायु कारक है।

(६) यात्रा में 'जातवेदस०' ऋचा का जप करने से यात्रा भय व कष्ट रहित होती है और यात्री सकुशल लौटता है।

(७) गर्भिणीस्त्री के प्रसव के समय 'प्रमन्दिन० ऋचा का जप अथवा इससे अभिमंत्रित पेय पीने से प्रसव शीघ्र व सुखपूर्वक होता है।

इसी प्रकार 'विजिहीष्व वनस्पते' शीर्षक ऋचा भी सुखप्रसव कारक है।

(८) 'इमां'० शीर्षक दो ऋचाओं का अनुष्ठान इच्छित मनोकामना पूर्ण कारक है।

(९) 'मानस्तोके०' शीर्षक दो ऋचाओं का शुद्धतापूर्वक उपोषित रहकर निरन्तर तीन रात्रि जप करके घृत के साथ गूलर की समिधा से हवन करने से अल्पमृत्यु का निवारण होता है।

(१०) 'उभे वासा०' शीर्षक सूक्त अथवा 'इमंनु सोम०' अथवा 'यो जात०' शीर्षक सूक्त का अनुष्ठान मनोकामना पूर्ण करने वाला है।

(११) कंकतोन० ऋचा समस्त बिषबाधा का शामक है।

(१२) 'चित्रं देवानां' शीर्षक ऋचा धनदायक है।

(१३) 'अपेहि०'० और 'अधः स्वप्न०' तथा 'यो मे राजन्०' शीपक ऋचायें दुःस्वप्न शामक हैं।

(१४) वर्षा की कामना से (वृष्टियज्ञ) 'अच्छावद' शीर्षक ऋचा का अनुष्ठान किया जाना चाहिए। यह अनुष्ठान निरन्तर निराहार व निर्वस्त्र होकर करना चाहिए।

(१५) राज्य, पद अथवा सेवा प्राप्ति की कामना से 'अश्वपूर्वा' इस मंत्र का एक लक्ष जप व दश सहस्त्र हवन का अनुष्ठान है। ब्राह्मण मृगचर्म में, क्षत्रिय व्याघ्रचर्म में, वैश्य बकरे की खाल में बैठकर स्नान तथा जपादि अनुष्ठान पूर्ण करे।

(१६) पशुओं की समृद्धि व नीरोगता हेतु 'आगार०' शीर्षक सूक्त का अनुष्ठान करे।

(१७) शासक को अपने युद्ध में वाद्ययंत्रों (दुन्दुभि) को 'उपेति०' शीर्षक सूक्त से अभिमंत्रित करना चाहिए, इससे युद्ध में जय प्राप्त होगी।

(१८) 'प्राग्नये०' इत्यादि तीन सूक्तों का अनुष्ठान अक्षय धनदायक है।

(१९) 'त्र्यम्बक०' शीर्षक ऋचा का अनुष्ठान दीर्घायुदायक है।

(२०) 'इन्द्रासोम० शीर्षक ऋचा का अनुष्ठान शत्रुनाशक है।

(२१) 'मही०' इत्यादि चार ऋचाओं का अनुष्ठान महान से महान भयों से रक्षाकारक है।

(२२) 'प्रवेषाम० ऋचा का रात्रि में मानसिक जाप द्यूत में जयदायक है।

(२३) ब्रह्मणाग्नि संविदानं० यह ऋचा गर्भस्थ शिशु की मृत्यु से रक्षाकारक है।

सामवेदीय अनुष्ठान

(१) 'परिप्रियाहिवः०' इस ऋचा के अनुष्ठान से वांछित पत्नी की प्राप्ति होती है।

(२) पुत्र सन्तति प्राप्ति के निमित्त 'रथन्तर०' ऋचा का अनुष्ठान करे।

(३) 'नयिश्रीः' ऋचा का अनुष्ठान श्रीवृद्धिकारक है।

(४) शत्रु के मारण हेतु अभिचार कर्म करना हो तो वषट्कारपूर्वक अमित्वा शूरनो नुमो० शीर्षक ऋचा का अनुष्ठान व एक हजार हवन करे। पिष्ट से शत्रु की मूर्ति बनाकर उसे छुरे से काटकर सरसों के तेल में भिगाकर क्रोधपूर्वक हवन करे।

अथर्ववेद के कुछ अन्य अनुभूतप्रयोग

वैसे तो अथर्ववेद में सैकड़ों प्रयोग हैं, इनमें से कुछ अनुभूत सिद्ध प्रयोगों का उल्लेख कर रहा हूँ। एक ओर जहाँ विदेशों में भारतीय विद्याओं पर खोज हो रही है और इन्हीं के आधार पर विदेशियों ने मेस्मरिजम (अभिमर्शन) हिप्टैनिक सजैशन [आदेश] सेल्फ हिप्नोटिजम , संकल्प] और मैन्टल हीलिंग [मानसोपचार] जैसी विधियाँ खोज निकाली हैं, वहीं भारतीय जनमानस अपनी ज्ञान सम्पदा से अनभिज्ञ व उदासीन है। पाश्चात्य शिक्षा के वशीभूत उसे अपने ज्ञान-विज्ञान पर न तो श्रद्धा है और न विश्वास और न उसे जानने के प्रति रुचि ही है। पाश्चात्य विद्वानों के जूठन पर चलने वाला यह समाज निरन्तर अधोगति को अग्रसर है। जब पाश्चात्य विद्वान शोध करके इनकी प्रामाणिकता व उपयोगिता घोषित करते हैं तभी उसे विश्वास होता है। भारतीय वाङ्मय का ज्ञान अंग्रेजी माध्यम से नहीं, संस्कृत से माध्यम से ही संभव है।

इसी अथर्ववेद में अनेक चमत्कारी महोषधियों का वर्णन है लेकिन इस दिशा में कोई शोध हुआ ही नहीं है। गुणकारी नीम की हमारे यहाँ अभी तक

उपेक्षा ही रही है. अब अमरीका द्वारा उसकी उपयोगिता सिद्ध होने पर अपने देश वासियों की आखें खुली हैं।

आयुष्काम

(१) आयु वृद्धि (१-६-३०)* 'विश्वेदेवा— कृणोमि'

(२) ,, (१-६-३५) 'यदावध्न—महृणीभमाना: दाक्षायण'

अर्थात् सुवर्ण में जड़ित नीलम अभिमंत्रित कर धारण करने का विधान है, जो समस्त अरिष्टकारी एवं अनिष्टकारी तत्वों से रक्षाकारक व आयु वृद्धि कारक है।

(३) दीर्घायुष्य हेतु पलाशमणि का प्रयोग (३-२-५) 'आयमगन्०'

(४) शतायु प्रदायक रक्षाकारक तथा सर्वसिद्धि प्रदायक 'त्रिशक्ति' मुद्रिका (५/६/२८) 'नवप्राणा—सौभगाय०' इसके प्रयोग की वैज्ञानिकी विधि इस प्रकार है—१२ भाग लोहा, १६ भाग तांबा और १० भाग सोना अलग-अलग लेकर अलग-अलग ३ तार बराबर नाप के निकालें, फिर इन तीनों तारों को चोटी की तरह एक साथ गूंथें, तदन्तर इस लड़ की ऐसी अँगूठी बनावें जो तीन लड़ों की (तीन सूत की) हो। उपरोक्त मंत्र से १०८ वार अभिमंत्रित कर धारण करे।

शत्रु के मारण हेतु प्रयोग

(१) अभिचार कृत्य (२-३-१२) 'द्यावापृथिवी—वागपिगच्छतु'
:, (२-४-१६ से २-४-२३ तक)

(२) विवाद में जय/शास्त्रार्थ, चुनाव, मुकद्दमा आदि में विजय हेतु प्रयोग, पाठा वनस्पति का उपयोग (२-५-२७) 'नेच्छत्रु:—कृधि'।

(३) शत्रुसंहार हेतु—खदिर वृक्ष में उत्पन्न पीपल वृक्ष की मणि का प्रयोग (३-२-६) पुमान पुंस:०।

(४) युद्ध या विवाद—मुकद्दमे में विजय हेतु सर्पकंचुकी का प्रयोग 'अमूपारे—पुर:' (१-५-२७)।

(५) वैकंकत की समिधाओं में हवन (५-२-८) वैकंकते०।

(६) ज्योतिष्मती का हवन (१०-३-५) इन्द्रस्यौज०।

---

* यह तीन अँक क्रमश: काण्ड, अध्याय तथा सूक्त सूचक हैं, यथा प्रथम काण्ड, षष्ठ अध्याय का ३०वाँ सूक्त।

विवाह कारक

सुयोग्य पत्नी तथा सुयोग्य पति की यथाशीघ्र प्राप्ति तथा विवाह कार्य में होने वाले विलम्ब और विघ्नबाधाओं के निराकरण हेतु कुछ अनुभूत तांत्रिक प्रयोग मिलते है। वैदिक तंत्र होने से यह दोषरहित, प्रभावकारी तथा सर्वथा सात्विक प्रयोग हैं। वर्तमान परिस्थितियों में यह प्रयोग सार्थक सिद्ध होंगे।

साथ में हिन्दी अनुवाद भी दे दिया है, इससे आपको लाभ होगा।

पति प्रदाता मंत्र

निम्न प्रयोग कन्याओं के निमित्त है। जिन कन्याओं के विवाह में विलम्ब हो रहा हो, या विघ्नबाधायें आती हों, बात चलकर फिर टूट जाती हो ऐसी बालिकाओं को नित्यप्रति अविच्छिन्न रूप से प्रात: सूर्य को जल देकर निम्न मंत्रों का पाठ करना चाहिए। विधिवत अनुष्ठान भी सम्पन्न हो सकता है।

अथवा नित्य प्रति हवन भी इन मंत्रों से कर सकती हैं।

(१) कन्या का विवाह (२-६-३६) 'आनो अग्ने—धेह्योषधे'।

सर्व प्रथम विनियोग हाथ में जल लेकर छोड़ना]।

ॐ अस्य आनो अग्ने इति अष्टमंत्राणां पतिवेदन ऋषि: त्रिष्टुप अनुष्टुप छन्द:, अग्नि प्रभृति: देवता पति प्राप्तये पाठे जपे होमे वा विनियोग:।

आ नो अग्ने सुमतिं संभलो गमेदिमां कुमारीं सह नो भगेन।
जुष्टा वरेषु समनेषु वल्गुरोषं पत्या सौभगमस्त्वस्यं ।। १ ।।

सोमजुष्टं ब्रह्मजुष्टमर्यम्णा संभृतं भगम्।
धातुर्देवस्य सत्येन कृणोमि पतिवेदनम् ।। २ ।।

इयमग्ने नारी पतिं विदेष्ट सोमो हि राजा सुभगां कृणोति।
सुवाना पुत्रान् महिषी भवति गत्वा पतिं सुभगा विराजतु ।। ३ ।।

यथाखरो मघवंश्चारुरेष प्रियो मृगाणां सुषदा बभूव।
एवा भगस्य जुष्टेयमस्तु नारी सम्प्रिया पत्याविराधयन्ती ।। ४ ।।

भगस्य नावमारोह पूर्णामनुपदस्वतीम्।
तयोपप्रतारय यो वरः प्रतिकाम्यः ।। ५ ।।

आ क्रन्दय धनपते वरमामनसं कृणु।
सर्वं प्रदक्षिणं कृणु यो वरः प्रतिकाम्यः ।। ६ ।।

इदं हिरण्यं गुल्गुल्वयमौक्षो अथो भगः ।
एते पतिभ्यस्त्वामदुः प्रतिकामाय वेत्तवे ।। ७ ।।
आ ते नयतु सविता नयतु पतिर्यः प्रतिकाम्यः । त्वमस्यै धेह्योषधे ।। ८ ।।

हे अग्ने ! कन्या को ग्रहण करने की इच्छा वाला सुन्दर वर हमारे दृष्टि-गत हो या जो वर हमको पहिले निराश कर चुका है, वह इस कन्या को प्राप्त करने की अभिलाषा सहित आकर अपने ऐश्वर्य सहित इस कन्या को प्राप्त हो फिर आगत बरातियों को कन्या का वरण सुन्दर लगे और यह कन्या पति के साथ सौभाग्यवती हो ।। १ ।। सोम, गंधर्व और अर्यमा नामक विवाहाग्नि से स्वीकृत कुमारिका रूप धन को धाता देवता की आज्ञा से मनुष्य रूप पति को प्राप्त करने वाली बनाता हूँ ।। २ ।।

यह कन्या पति को प्राप्त हो सोम इसे सौभाग्यवती बनावें यह पति को प्राप्त कर तेजस्विनी हो और पुत्र को जन्म देने वाली योग्य पत्नी बने । अपने पति से साथ प्रसन्नता पूर्वक रहे, भाग्यवती हो । तुझे इच्छित पति प्राप्त हो । जो वर तेरी इच्छा करता हो तुम उस तक पहुँच सको ।

हे वरुण देवता, इसके सम्भावित पति को इसके पास बुलाओ और उसके मन को इस प्रकार प्रेरित करो कि वह इससे विवाह कर ले, इससे विवाह की इच्छा व्यक्त करे, सोम आदि देवता इस कन्या को सुयोग्य पति दें । सूर्य देव पति को समीप लायें जो पाणिग्रहण करके अपने घर ले जाय ।

द्वितीय प्रयोग

[२] कन्या के विवाह हेतु [६—६—६०] 'अर्यमा—प्रतिकाम्य' ।

इसका प्रयोग विवाहार्थी युवक अथवा विवाहार्थी कन्या दोनों में कोई कर सकता है । यह प्रयोग दोनों के विवाह में सहायक (पतिदायक अथवा पत्नी दायक) है ।

नित्य प्रति सूर्य का पूजन कर इन मंत्रों का नियमित पाठ करना चाहिए ।

सर्व प्रथम विनियोग (जल हाथ में लेकर छोड़ दें) — ॐ अयमाइति मंत्र त्रयस्य अथर्वाऋषिः, अर्यमा देवता, अनुष्टुप छन्दः, पति (पत्नी) कामार्थे पाठे विनियोगः ।

अर्यमा यात्यर्यमा पुरस्ताद् विषितस्तुपः ।
अस्या इच्छन्नग्रुवै पतिमुत जायमजानये ।। १ ।।
अश्रमदियमर्यमन्नन्यासां समनं यती ।
अङ्गो न्वयंमन्नसा अन्याः समनस्यायति ।। २ ।।
धाता दाधार पृथिवीं धाता द्यामुत सूर्यम् ।
धातास्या अग्रुवै पतिं दधातु प्रतिकाम्यम् ।। ३ ।।

जिस सूर्य की रश्मियाँ पूर्व दिशा में उग रही हैं, वे सूर्य इस स्त्री रहित पुरुष को स्त्री और कन्या के लिए पति प्रदान करने की इच्छा से उदय हो रहे हैं ।।१।। पतिव्रता स्त्रियों ने जिन शान्ति कर्मों को किया था, उन्हें करती हुई यह पति-अभिलाषिणी कन्या, पति के प्राप्त न होने से दुःखित है । हे अर्यमा ! अन्य स्त्री भी इसके निमित्त शान्ति कर रही है ।। २ ।। अखिल विश्व के धारक विधाता ने पृथिवी को स्थापित कर द्युलोक और सविता को सूर्य मण्डल में स्थापित किया है । वे संसार के नियंता ही इस कन्या के लिए काम्य पति प्रदान करें ।। ३ ।।

तृतीय प्रयोगः पत्नी प्राप्ति हेतु

(३) इच्छित पत्नी प्राप्ति हेतु पुरुष द्वारा प्रयोग (२-५-३०) 'यथेदं-सहागमं'
(४) पत्नी प्राप्ति हेतु (६/८/८२) आगच्छत—शचीपते० ।

यह प्रयोग उन लड़कों के हेतु है, जिनके विवाह में बाधा आ रही हों, विलम्ब हो रहा हो ।

यह मंत्र इन्द्र देवता का है । विवाह सम्बन्धों की प्राप्ति और उसकी स्थरता में इन्द्र देवता का महत्व स्वीकार किया गया है, इसी दृष्टि से विवाह संस्कार के पूर्व भी वर-कन्या द्वारा इन्द्र-इन्द्राणी के पूजन का विधान भारतीय संस्कृति में प्रचलित है । इन मंत्रों का अविराम नियमित पाठ या अनुष्ठान होता है ।

सर्वप्रथम विनियोग [जल लेकर छोड़ना] आगच्छत इति मंत्राणाँ अनुष्टुपछन्दः, इन्द्रोदेवता, पत्नी प्राप्तये पाठे जपे वा विनियोगः ।

आगच्छत आगतस्य नाम गृह्णाम्यायतः ।
इन्द्रस्यवृत्रघ्नो वन्वे वासवस्य शतक्रतोः ।। १ ।।
येन सूर्या सावित्रीमश्विनोहतुः पथा ।
तेन मामब्रवीद् भगो जायामा वहतादिति ।। २ ।।

यस्तेऽङ्कुशो वसुदानो बृहन्निन्द्र हिरण्ययः।
तेना जनीयते जायां मह्यं देहि शचीपते ॥ ३ ॥

इन्द्र देवता का आवाहन तथा स्वागत करते हुए हम आप को वृत्रहर आदि अनेक नामों से सम्बोधित कर प्रार्थना करते हैं ताकि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हों। विवाह की कामना करते हुए मैं आपसे इच्छित फल मांगता हूँ। जिस प्रकार अश्विनी कुमारों ने सूर्या-सावित्री नामक कन्या को विवाह के द्वारा पत्नी के रूप में प्राप्त किया, हे इन्द्र, उसी प्रकार मुझे भी पत्नी प्राप्त करायें। हे इन्द्राणी के पति इन्द्र आप सर्वथा सम्पन्न हैं, समर्थ हैं, आपके हाथों ही मुझे पत्नी प्राप्त हो सकती है, अतः मुझे पुत्रों को जन्म देने वाली योग्य पत्नी प्रदान करें।*

व्यापार में उन्नति

इन्द्रमहं—रिषाम् (३-३-१५)।

विश्व में लगभग पचास प्रतिशत से भी अधिक लोग छोटे या बड़े (उद्योग) व्यापार द्वारा आजीविका करते हैं। व्यापार हमेशा हानि की सम्भावनाओं (जोखिम) से पूर्ण होता है। व्यापार में अच्छी बिक्री न होना, क्रय में हानि होना, दरों में तेजी-मन्दी के कारण घाटा होना, धोखा होना, कर्मचारियों का असहयोग, साझेदारों से विरोध आदि व्यापार में क्षति के कारण हैं। इसके अलावा राजदण्ड, दैवी आपदायें (अग्निभय आदि) चोरी, डकैती का भय, शत्रुओं का भय भी बना रहता है। कुछ दुष्ट प्रकृति के व्यक्ति दूसरों की उन्नति से चिढ़कर शत्रुतावश तंत्र-मंत्र आदि अभिचार से भी दूसरों का व्यापार बाधित (बांध) कर देते हैं।

हमारे दिव्यद्रष्टा महर्षियों, ऋषियों ने इन हानियों तथा भयों से बचने हेतु भी प्रभावकारी अनेक प्रयोग बतलाये हैं। इन सब में यह "व्यापार वृद्धि प्रयोग" सर्वाधिक महत्व का तथा प्रभावकारी है। जनहितार्थ इस गुप्त प्रयोग को दिया जा रहा है। सामान्य रूप से इन मंत्रों का वाणिज्य संस्थान (दूकान संस्था या फैक्ट्री में) नित्यप्रति नियमित रूप से पाठ करने अथवा नित्य नियमित रूप से हवन करने से व्यापार में आने वाली सभी बाधायें दूर होकर व्यापार में

---

* पाठ या जप केवल मंत्रों का होता है। अनुवाद आपके ज्ञान हेतु प्रस्तुत है।

वेदोक्त तांत्रिक अनुष्ठान

वैदिक साहित्य तंत्र-मंत्रों से भरा पड़ा है, अथर्व वेद तो तंत्रशास्त्र का ही ग्रंथ है। मनु का तो कथन है कि ब्राह्मण का शस्त्र मंत्र ही है, अतः वह अथर्ववेद में वर्णित मंत्रों के द्वारा ही अपने विरोधियों पर विजय प्राप्त करे, और निःसंकोच इन मंत्रों का प्रयोग करें।''* यह ज्ञातव्य है कि हमारा वैदिक साहित्य संहिता, ब्राह्मण, उपनिषद (आरण्यक) तथा वेदांग इन चार भागों में है सम्राट् विक्रम के समय तक (दो हजार वर्ष पूर्व) जो वैदिक साहित्य था, वह आज अलभ्य है। तत्कालीन ग्रंथ महाभाष्य में तथा अन्य ग्रंथों में वैदिक साहित्य की जो सूची मिलती है—उसमें से अब केवल एक शतांश ही प्राप्त होता है। उन दिनों मात्र हस्तलिखित व कुछ ही प्रतियाँ होती थीं जो आक्रमणकारियों द्वारा भारतीय पुस्तकालयों को जला दिये जाने से नष्ट हो गया है अथवा विदेशों में चला गया है, जो इस प्रकार है :—

	ऋग्वेद	यजुर्वेद	सामवेद	अथर्ववेद
विक्रम के समय	२१	१०१	१०००	९
वर्तमान	१	५	३	२

अर्थात् विक्रम के समय कुल ग्रंथ संख्या २१ + १०१ + १००० + ९ = ११३१
आज उपलब्ध १ + ५ + ३ + २ = ११

कालान्तर में जो ग्रंथ आज प्राप्त हैं, इनका भी अस्तित्व समाप्त हो सकता है, पाश्चात्य शिक्षा का प्रभाव है।

यही स्थिति ब्राह्मणग्रंथों, उपनिषदों व वेदागों की भी है।

यहाँ यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि ब्राह्मण ग्रंथ क्या हैं? वास्तव में ब्राह्मणग्रंथों में संहितामंत्रों के प्रयोग व उपयोग की विधि वर्णित है। किस मंत्र या ऋचा का कहाँ, कब, कैसे और क्यों उपयोग किया जाता है, यह ज्ञान ब्राह्मणग्रंथों से ही प्राप्त होता है अतः ब्राह्मणग्रंथों के अभाव में संहिताग्रंथों का प्रयोग ही सम्भव नहीं है।

---

* मनुस्मृति ११/३३, निर्णयसागर प्रेस, सम्वत् १९८५ संस्करण।

वास्तव में ब्राह्मणग्रंथ वेदों की कुजियां हैं।

(अ) ऋग्वेद का—ऐतरेय तथा सांख्यायन ब्राह्मण।

(आ) यजुर्वेद का—शतपथ (तैत्तरैय व आरण्यक कृष्ण यजुर्वेद का)

(इ) सामवेद का—ताण्ड्य ब्राह्मण।

(ई) अथर्ववेद का—गोपथ ब्राह्मण।

ब्राह्मणग्रंथ भी आज के युग में सम्पूर्ण उपमब्ध नहीं हैं। उदाहरण के रूप में अथर्ववेद का "गोपथ ब्राह्मण" जो आज प्राप्त है वह अपूर्ण है. उसमें ब्राह्मण ग्रंथों की सामग्री है ही नहीं। वास्तव में यह 'गोपथब्राह्मण' नहीं इसकी भूमिका मात्र है। इस ग्रंथ के अभाव में अथर्ववेद के मंत्रों एवं अनुष्ठानों का प्रयोग संभव ही नहीं है।

उल्लेखनीय है कि अथर्ववेद मुख्यतः तंत्र से सम्बन्धित है जन साधारण की समस्याओं से सम्बन्धित नीरोगता, दीर्घायु, आर्थिक समृद्धि, व्यापार में उन्नति, राज्य या पद का लाभ, बुद्धि विद्या में प्रगति, शत्रु पराजय, कृषि उन्नति, पशु समृद्धि, सन्तति लाभ, गृहस्थ सुख की प्राप्ति आदि के निमित्त तंत्रों का विशद वर्णन है साथ ही अन्य तंत्रों की तुलना में अथर्ववेद का तंत्र साहित्य अधिक प्रभावी व उपयोगी माना गया है। यह सभी प्रयोग लोक कल्याण एवं जन कल्याण की भावना से हैं। अन्य तंत्र ग्रंथों में वर्णित तंत्र जहाँ कीलित (प्रभावहीन) तथा अभिचार (मारण, मोहन, उच्चाटन आदि अहितकारी षट्कर्मों) से सम्बन्धित है वहीं अथर्ववेद का तंत्र साहित्य जीवित (प्रभावकारी, अकीलित) और समाज के लिए कल्याणकारी है।

पुराणों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि पुराणों ने ब्राह्मण ग्रंथों की रक्षा में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। जो आंशिक रूप में ही सही, परन्तु बहुमूल्य है। पुराणों में इन ब्राह्मणग्रंथों का सर्वांगीण उल्लेख सम्भव भी न था क्योंकि उनकी विषय वस्तु भिन्न है। इसके बावजूद पुराणों में (विशेषतः अग्निपुराण में) कुछ मुख्य-मुख्य कामनाओं से सम्बन्धित अथर्ववेद के तांत्रिक प्रयोगों की विधि के साथ ही ऋग्वेद व सामवेद के तांत्रिक प्रयोगों का भी उल्लेख मिलता है। वैसे तो पर्य्याप्त मात्रा में इन प्रयोगों का वर्णन है, यहाँ पर इनमें से कुछ आवश्यक एवं जनहित के प्रयोगों की विधि का पुराणोक्त वर्णन दे रहा हूँ।

अथर्ववेदीब अनुष्ठाय

(१) 'शान्तातीयगण' से हवन शांति कारक है।
(२) 'भैषज्यगण' रोगशांति कारक हैं।
(३) 'अभयगण' से मनुष्य के भय दूर होते हैं।
(४) 'अपराजितगण' के अनुष्ठान से मनुष्य पराजित नहीं होता।
(५) 'आयुष्यगण' का अनुष्ठान अल्पमृत्यु से रक्षा कारक है।
(६) 'वास्तुगण' का अनुष्ठान गृहभूमि सम्बन्धी समस्त दोष का निवारक है।

कुछ विशेष अनुष्ठान इस प्रकार हैं :—

(१) यस्त्वां मृत्यु० शीर्षक ऋचा का अनुष्ठान अल्प मृत्यु से रक्षाकारी है।
(२) इन्द्रेणदत्तम्० (इन्द्रेणदण्ड०वा) शीर्षक ऋचा का अनुष्ठान मनोकामनापूरक एवं सभी बाधानिवारक है।
(३) यमस्य लोकान्० यह दुःस्वप्न नाशक है।
(४) इन्द्रश्चपंच० यह व्यवसाय में लाभ व उन्नति कारक है।
(५) कामो मे वाजी० यह महिलाओं के सौभाग्य में वृद्धि एवं दाम्पत्य सुख सूचक है।
(६) अग्नेगोभिन० यह बुद्धिवर्धक है।
(७) ध्रुवंध्रुवेय० यह स्थानलाभ (पदलाभ) कारक है।
(८) अलक्तजीव० यह कृषि सम्पदा में वृद्धिकारी है।
(९) शपत्वहन—का अनुष्ठान शत्रुनाशक व विजयप्रद है।
(१०) त्वमुत्तमं—का अनुष्ठान यश व बुद्धि में वृद्धिकारक है।
(११) येन चेहदिशं च—का अनुष्ठान गर्भ स्थापन कारक (संतानदायक) है।
(१२) अयंते योनि—का अनुष्ठान पुत्रदायक है।
(१३) मुंचामित्वा—का अनुष्ठान अल्पमृत्यु से रक्षा कारक है।

ऋग्वेदीय अनुष्ठान

(१) 'सदसस्पति० शीर्षक तीन ऋचाओं का पाठ, जल में जप अथवा होम बुद्धिवर्धक है।
(२) 'अन्वयोयन० शीर्षक नौ ऋचायें रोगशान्ति कारक तथा अल्पमृत्यु निवारक हैं।

(३) 'हिरण्यस्तूप०' ऋचा शत्रुबाधा शामक व विजयप्रद है।

(४) येतेपंथा०' शीर्षक ऋचा यात्री के निमित्त सकुशल यात्रा व सफलता दायक है। स्वस्तिपंथा०' शीर्षक ऋचा का भी यही प्रभाव है।

(५) 'आनोभद्रा० इस ऋचा का जप दीर्घायु कारक है।

(६) यात्रा में 'जातवेदस०' ऋचा का जप करने से यात्रा भय व कष्ट रहित होती है और यात्री सकुशल लौटता है।

(७) गर्भिणीस्त्री के प्रसव के समय 'प्रमन्दिन० ऋचा का जप अथवा इससे अभिमंत्रित पेय पीने से प्रसव शीघ्र व सुखपूर्वक होता है।

इसी प्रकार 'विजिहीष्व वनस्पते' शीर्षक ऋचा भी सुखप्रसव कारक है।

(८) 'इमां'० शीर्षक दो ऋचाओं का अनुष्ठान इच्छित मनोकामना पूर्ण कारक है।

(९) 'मानस्तोके०' शीर्षक दो ऋचाओं का शुद्धतापूर्वक उपोषित रहकर निरन्तर तीन रात्रि जप करके घृत के साथ गूलर की समिधा से हवन करने से अल्पमृत्यु का निवारण होता है।

(१०) 'उभे वासा०' शीर्षक सूक्त अथवा 'इमंतु सोम०' अथवा 'यो जात०' शीर्षक सूक्त का अनुष्ठान मनोकामना पूर्ण करने वाला है।

(११) कंकतोन० ऋचा समस्त बिषबाधा का शामक है।

(१२) 'चित्रं देवानां' शीर्षक ऋचा धनदायक है।

(१३) 'अपेहि०'० और 'अध: स्वप्न०' तथा 'यो मे राजन्०' शीषक ऋचायें दु:स्वप्न शामक हैं।

(१४) वर्षा की कामना से (वृष्ट्रियज्ञ) 'अच्छावद' शीर्षक ऋचा का अनुष्ठान किया जाना चाहिए। यह अनुष्ठान निरन्तर निराहार व निर्वस्त्र होकर करना चाहिए।

(१५) राज्य, पद अथवा सेवा प्राप्ति की कामना से 'अश्वपूर्वा' इस मंत्र का एक लक्ष जप व दश सहस्त्र हवन का अनुष्ठान है। ब्राह्मण मृगचर्म में, क्षत्रिय व्याघ्रचर्म में, वैश्य बकरे की खाल में बैठकर स्नान तथा जपादि अनुष्ठान पूर्ण करे।

(१६) पशुओं की समृद्धि व नीरोगता हेतु 'आगार०' शीर्षक सूक्त का अनुष्ठान करे।

(१७) शासक को अपने युद्ध में वाद्ययंत्रों (दुन्दुभि) को 'उपेति०' शीर्षक सूक्त से अभिमंत्रित करना चाहिए, इससे युद्ध में जय प्राप्त होगी।

(१८) 'प्राग्नये०' इत्यादि तीन सूक्तों का अनुष्ठान अक्षय धनदायक है।

(१६) 'त्र्यम्बक०' शीर्षक ऋचा का अनुष्ठान दीर्घायुदायक है।

(२०) 'इन्द्रासोम० शीर्षक ऋचा का अनुष्ठान शत्रुनाशक है।

(२१) 'मही०' इत्यादि चार ऋचाओं का अनुष्ठान महान से महान भयों से रक्षाकारक है।

(२२) 'प्रवेषाम० ऋचा का रात्रि में मानसिक जाप द्यूत में जयदायक है।

(२३) ब्रह्मणाग्नि संविदानं० यह ऋचा गर्भस्थ शिशु की मृत्यु से रक्षाकारक है।

सामवेदीय अनुष्ठान

(१) 'परिप्रियाहिव:०' इस ऋचा के अनुष्ठान से वांछित पत्नी की प्राप्ति होती है।

(२) पुत्र सन्तति प्राप्ति के निमित्त 'रथन्तर०' ऋचा का अनुष्ठान करे।

(३) 'नयिश्री:' ऋचा का अनुष्ठान श्रीवृद्धिकारक है।

(४) शत्रु के मारण हेतु अभिचार कर्म करना हो तो वषट्कारपूर्वक अमित्व। शूरनो नुमो० शीर्षक ऋचा का अनुष्ठान व एक हजार हवन करे। पिष्ट से शत्रु की मूर्ति बनाकर उसे छुरे से काटकर सरसों के तेल में भिगाकर क्रोधपूर्वक हवन करे।

अथर्ववेद के कुछ अन्य अनुभूतप्रयोग

वैसे तो अथर्ववेद में सैकड़ों प्रयोग हैं, इनमें से कुछ अनुभूत सिद्ध प्रयोगों का उल्लेख कर रहा हूँ। एक ओर जहाँ विदेशों में भारतीय विद्याओं पर खोज हो रही है और इन्हीं के आधार पर बिदेशियों ने मेस्मरिजम (अभिमर्शन) हिप्टैनिक सजैशन [आदेश] सेल्फ हिप्नोटिजम , संकल्प | और मैन्टल हीलिंग [मानसोपचार] जैसी विधियाँ खोज निकाली हैं, वहीं भारतीय जनमानस अपनी ज्ञान सम्पदा से अनभिज्ञ व उदासीन है। पाश्चात्य शिक्षा के वशीभूत उसे अपने ज्ञान-विज्ञान पर न तो श्रद्धा है और न विश्वास और न उसे जानने के प्रति रुचि ही है। पाश्चात्य विद्वानों के जूठन पर चलने वाला यह समाज निरन्तर अधोगति को अग्रसर है। जब पाश्चात्य विद्वान शोध करके इनकी प्रामाणिकता व उपयोगिता घोषित करते हैं तभी उसे विश्वास होता है। भारतीय वाङ्मय का ज्ञान अंग्रेजी माध्यम से नहीं, संस्कृत से माध्यम से ही संभव है।

इसी अथर्ववेद में अनेक चमत्कारी महोषधियों का वर्णन है लेकिन इस दिशा में कोई शोध हुआ ही नहीं है। गुणकारी नीम की हमारे यहाँ अभी तक

उपेक्षा ही रही है. अब अमरीका द्वारा उसकी उपयोगिता सिद्ध होने पर अपने देश वासियों की आखें खुली हैं।

आयुष्काम

(१) आयु वृद्धि (१-६-३०) * 'विश्वेदेवा — कृणोमि'

(२) ,, (१-६-३५) 'यदाबध्न—महृणीश्रमानाः दाक्षायण'

अर्थात् सुवर्ण में जड़ित नीलम अभिमंत्रित कर धारण करने का विधान है, जो समस्त अरिष्टकारी एवं अनिष्टकारी तत्वों से रक्षाकारक व आयु वृद्धि कारक है।

(३) दीर्घायुष्य हेतु पलाशमणि का प्रयोग (३-२-५) 'आयमगन्०'

(४) शतायु प्रदायक रक्षाकारक तथा सर्वसिद्धि प्रदायक 'त्रिशक्ति' मुद्रिका (५/६/२८) 'नवप्राणा—सौभगाय०' इसके प्रयोग की वैज्ञानिकी विधि इस प्रकार है—१२ भाग लोहा, १६ भाग तांबा और १० भाग सोना अलग-अलग लेकर अलग-अलग ३ तार बराबर नाप के निकालें, फिर इन तीनों तारों को चोटी की तरह एक साथ गूंथें, तदन्तर इस लड़ की ऐसी अँगूठी बनावें जो तीन लड़ों की (तीन सूत की) हो। उपरोक्त मंत्र से १०८ वार अभिमंत्रित कर धारण करे।

शत्रु के मारण हेतु प्रयोग

(१) अभिचार कृत्य (२-३-१२) 'द्यावापृथिवी—वागपिगच्छतु'
:, (२-४-१६ से २-४-२३ तक)

(२) विवाद में जय/शास्त्रार्थ, चुनाव, मुकद्दमा आदि में विजय हेतु प्रयोग, पाठा वनस्पति का उपयोग (२-५-२७) 'नेच्छतुः—कृधि'।

(३) शत्रुसंहार हेतु—खदिर वृक्ष में उत्पन्न पीपल वृक्ष की मणि का प्रयोग (३-२-६) पुमान पुंसः०।

(४) युद्ध या विवाद—मुकद्दमे में विजय हेतु सर्पकंचुकी का प्रयोग 'अमूपारे—पुरः' (१-५-२७)।

(५) वैकंकत की समिधाओं में हवन (५-२-८) वैकंकते०।

(६) ज्योतिष्मती का हवन (१०-३-५) इन्द्रस्यौज०।

---

* यह तीन अँक क्रमशः काण्ड, अध्याय तथा सूक्त सूचक हैं, यथा प्रथम काण्ड, षष्ठ अध्याय का ३०वाँ सूक्त।

विवाह कारक

सुयोग्य पत्नी तथा सुयोग्य पति की यथाशीघ्र प्राप्ति तथा विवाह कार्य में होने वाले विलम्ब और विघ्नबाधाओं के निराकरण हेतु कुछ अनुभूत तांत्रिक प्रयोग मिलते हैं। वैदिक तंत्र होने से यह दोषरहित, प्रभावकारी तथा सर्वथा सात्विक प्रयोग हैं। वर्तमान परिस्थितियों में यह प्रयोग सार्थक सिद्ध होंगे।

साथ में हिन्दी अनुवाद भी दे दिया है, इससे आपको लाभ होगा।

पति प्रदाता मंत्र

निम्न प्रयोग कन्याओं के निमित्त हैं। जिन कन्याओं के विवाह में विलम्ब हो रहा हो, या विघ्नबाधायें आती हों, बात चलकर फिर टूट जाती हो ऐसी बालिकाओं को नित्यप्रति अविच्छिन्न रूप से प्रातः सूर्य को जल देकर निम्न मंत्रों का पाठ करना चाहिए। विधिवत अनुष्ठान भी सम्पन्न हो सकता है।

अथवा नित्य प्रति हवन भी इन मंत्रों से कर सकती हैं।

(१) कन्या का विवाह (२-६-३६) 'आनो अग्ने—धेह्योषधे'।

सर्व प्रथम विनियोग [हाथ में जल लेकर छोड़ना]।

ॐ अस्य आनो अग्ने इति अष्टमंत्राणां पतिवेदन ऋषिः त्रिष्टुप अनुष्टुप छन्दः, अग्नि प्रभृतिः देवता पति प्राप्तये पाठे जपे होमे वा विनियोगः।

आ नो अग्ने सुमतिं संभलो गमेदिमां कुमारीं सह नो भगेन।
जुष्टा वरेषु समनेषु वल्गुरोषं पत्या सौभगमस्त्वस्यं ॥ १ ॥

सोमजुष्टं ब्रह्मजुष्टमर्यम्णा संभृतं भगम्।
धातुर्देवस्य सत्येन कृणोमि पतिवेदनम् ॥ २ ॥

इयमग्ने नारी पतिं विदेष्ट सोमो हि राजा सुभगां कृणोति।
सुवाना पुत्रान् महिषी भवति गत्वा पतिं सुभगा विराजतु ॥ ३ ॥

यथाखरो मघवंश्चारुरेष प्रियो मृगाणां सुषदा बभूव।
एवा भगस्य जुष्टेयमस्तु नारी सम्प्रिया पत्याविराधयन्ती ॥ ४ ॥

भगस्य नावमारोह पूर्णामनुपदस्वतीम्।
तयोपप्रतारय यो वरः प्रतिकाम्यः ॥ ५ ॥

आ क्रन्दय धनपते वरमामनसं कृणु।
सर्वं प्रदक्षिणं कृणु यो वरः प्रतिकाम्यः ॥ ६ ॥

इदं हिरण्यं गुल्गुल्वयमौक्षो अथो भगः ।
एते पतिभ्यस्त्वामदुः प्रतिकामाय वेत्तवे ।। ७ ।।
आ ते नयतु सविता नयतु पतिर्यः प्रतिकाम्यः । त्वमस्यै धेह्योषधे ।। ८ ।।

हे अग्ने ! कन्या को ग्रहण करने की इच्छा वाला सुन्दर वर हमारे दृष्टिगत हो या जो वर हमको पहिले निराश कर चुका है, वह इस कन्या को प्राप्त करने की अभिलाषा सहित आकर अपने ऐश्वर्य सहित इस कन्या को प्राप्त हो फिर आगत वरातियों को कन्या का वरण सुन्दर लगे और यह कन्या पति के साथ सौभाग्यवती हो ।। १ ।। सोम, गंधर्व और अर्यमा नामक विवाहाग्नि से स्वीकृत कुमारिका रूप धन को धाता देवता की आज्ञा से मनुष्य रूप पति को प्राप्त करने वाली बनाता हूँ ।। २ ।।

यह कन्या पति को प्राप्त हो सोम इसे सौभाग्यवती बनावें यह पति को प्राप्त कर तेजस्विनी हो और पुत्र को जन्म देने वाली योग्य पत्नी बने । अपने पति से साथ प्रसन्नता पूर्वक रहे, भाग्यवती हो । तुझे इच्छित पति प्राप्त हो । जो वर तेरी इच्छा करता हो तुम उस तक पहुँच सको ।

हे वरुण देवता, इसके सम्भावित पति को इसके पास बुलाओ और उसके मन को इस प्रकार प्रेरित करो कि वह इससे विवाह कर ले, इससे विवाह की इच्छा व्यक्त करे, सोम आदि देवता इस कन्या को सुयोग्य पति दें । सूर्य देव पति को समीप लायें जो पाणिग्रहण करके अपने घर ले जाय ।

द्वितीय प्रयोग

[२] कन्या के विवाह हेतु [६—६—६०] 'अर्यमा—प्रतिकाम्य' ।

इसका प्रयोग विवाहार्थी युवक अथवा विवाहार्थी कन्या दोनों में कोई कर सकता है । यह प्रयोग दोनों के विवाह में सहायक (पतिदायक अथवा पत्नी दायक) है ।

नित्य प्रति सूर्य का पूजन कर इन मंत्रों का नियमित पाठ करना चाहिए ।

सर्व प्रथम विनियोग (जल हाथ में लेकर छोड़ दें) — ॐ अयमाइति मंत्र त्रयस्य अथर्वाऋषिः, अर्यमा देवता, अनुष्टुप छन्दः, पति (पत्नी) लाभार्थे पाठे विनियोगः ।

अर्यमा यात्यर्यमा पुरस्ताद् विषितस्तुपः ।
अस्या इच्छन्नग्रुवै पतिमुत जायमजानये ।। १ ।।
अश्रमदियमर्यमन्नन्यासां समनं यती ।
अङ्गो न्वर्यमन्नसा अन्याः समनस्यायति ।। २ ।।
धाता दाधार पृथिवीं धाता द्यामुत सूर्यम् ।
धातास्या अग्रुवै पतिं दधातु प्रतिकाम्यम् ।। ३ ।।

जिस सूर्य की रश्मियाँ पूर्व दिशा में उग रही हैं, वे सूर्य इस स्त्री रहित पुरुष को स्त्री और कन्या के लिए पति प्रदान करने की इच्छा से उदय हो रहे हैं ।।१।। पतिव्रता स्त्रियों ने जिन शान्ति कर्मों को किया था, उन्हें करती हुई यह पति-अभिलाषिणी कन्या, पति के प्राप्त न होने से दुःखित है। हे अर्यमा ! अन्य स्त्री भी इसके निमित्त शान्ति कर रही है ।। २ ।। अखिल विश्व के धारक विधाता ने पृथिवी को स्थापित कर द्युलोक और सविता को सूर्य मण्डल में स्थापित किया है। वे संसार के नियंता ही इस कन्या के लिए काम्य पति प्रदान करें ।। ३ ।।

तृतीय प्रयोगः पत्नी प्राप्ति हेतु

(३) इच्छित पत्नी प्राप्ति हेतु पुरुष द्वारा प्रयोग (२-५-३०) 'यथेदं-सहागमं'
(४) पत्नी प्राप्ति हेतु (६/८/८२) आगच्छत—शचीपते० ।

यह प्रयोग उन लड़कों के हेतु है, जिनके विवाह में बाधा आ रही हों, विलम्ब हो रहा हो ।

यह मंत्र इन्द्र देवता का है। विवाह सम्बन्धों की प्राप्ति और उसकी स्थरता में इन्द्र देवता का महत्व स्वीकार किया गया है, इसी दृष्टि से विवाह संस्कार के पूर्व भी वर-कन्या द्वारा इन्द्र-इन्द्राणी के पूजन का विधान भारतीय संस्कृति में प्रचलित है। इन मंत्रों का अविराम नियमित पाठ या अनुष्ठान होता है।

सर्वप्रथम विनियोग [जल लेकर छोड़ना] आगच्छत इति मंत्राणाँ अनुष्टुपछन्दः, इन्द्रोदेवता, पत्नी प्राप्तये पाठे जपे वा विनियोगः ।

आगच्छत आगतस्य नाम गृह्णाम्यायतः ।
इन्द्रस्यवृत्रध्नो वन्वे वासवस्य शतक्रतोः ।। १ ।।
येन सूर्या सावित्रीमश्विनोहतुः पथा ।
तेन मामब्रवीद् भगो जायामा वहतादिति ।। २ ।।

यस्तेऽङ्कुशो वसुदानो बृहन्निन्द्र हिरण्ययः।
तेना जनीयते जायां मह्यं देहि शचीपते।। ३।।

इन्द्र देवता का आवाहन तथा स्वागत करते हुए हम आप को वृत्रहर आदि अनेक नामों से सम्बोधित कर प्रार्थना करते हैं ताकि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हों। विवाह की कामना करते हुए मैं आपसे इच्छित फल मांगता हूँ। जिस प्रकार अश्विनी कुमारों ने सूर्या-सावित्री नामक कन्या को विवाह के द्वारा पत्नी के रूप में प्राप्त किया, हे इन्द्र, उसी प्रकार मुझे भी पत्नी प्राप्त करायें। हे इन्द्राणी के पति इन्द्र आप सर्वथा सम्पन्न हैं, समर्थ हैं, आपके हाथों ही मुझे पत्नी प्राप्त हो सकती है, अतः मुझे पुत्रों को जन्म देने वाली योग्य पत्नी प्रदान करें।*

व्यापार में उन्नति

इन्द्रमहं—रिषाम् (३-३-१५)।

विश्व में लगभग पचास प्रतिशत से भी अधिक लोग छोटे या बड़े (उद्योग) व्यापार द्वारा आजीविका करते हैं। व्यापार हमेशा हानि की सम्भावनाओं (जोखिम) से पूर्ण होता है। व्यापार में अच्छी बिक्री न होना, क्रय में हानि होना, दरों में तेजी-मन्दी के कारण घाटा होना, धोखा होना, कर्मचारियों का असहयोग, साझेदारों से विरोध आदि व्यापार में क्षति के कारण हैं। इसके अलावा राजदण्ड, दैवी आपदायें (अग्निभय आदि) चोरी, डकैती का भय, शत्रुओं का भय भी बना रहता है। कुछ दुष्ट प्रकृति के व्यक्ति दूसरों की उन्नति से चिढ़कर शत्रुतावश तंत्र-मंत्र आदि अभिचार से भी दूसरों का व्यापार बाधित (बांध) कर देते हैं।

हमारे दिव्यद्रष्टा महर्षियों, ऋषियों ने इन हानियों तथा भयों से बचने हेतु भी प्रभावकारी अनेक प्रयोग बतलाये हैं। इन सब में यह "व्यापार वृद्धि प्रयोग" सर्वाधिक महत्व का तथा प्रभावकारी है। जनहितार्थ इस गुप्त प्रयोग को दिया जा रहा है। सामान्य रूप से इन मंत्रों का वाणिज्य संस्थान (दूकान संस्था या फैक्ट्री में) नित्यप्रति नियमित रूप से पाठ करने अथवा नित्य नियमित रूप से हवन करने से व्यापार में आने वाली सभी बाधायें दूर होकर व्यापार में

---

* पाठ या जप केवल मंत्रों का होता है। अनुवाद आपके ज्ञान हेतु प्रस्तुत है।

उन्नति होगी। चोरी, डकैती, राजदण्ड आदि से भी रक्षा होगी। यदि किसी कारण से व्यापार अच्छा न चल रहा है, या किसी शत्रु ने कोई अभिचार करवा कर व्यापार बाधित (बाधा हो) किया हो, तो उसका दुष्प्रभाव भी दूर होगा।

इस प्रयोग की विशेष विधि यह है कि महानिशा की रात्रि में उपरोक्त मंत्रों को सिद्ध करके इन्द्र, अग्नि, सविता, सोम तथा प्रजापति के बीजमंत्रों सहित यंत्र निर्माण करे और सविधि मंत्र जागृत होने पर उत्कीलन, प्रतिष्ठा, पंचदशसंस्कार पूजन तथा हवन आदि क्रियायें करके यंत्र को सिद्ध कर लें। तदुपरान्त दाड़िमी वृक्ष से प्राप्त वन्दा* के साथ इस सिद्ध यंत्र को वाणिज्य संस्थान में विक्रय पटल पर या ऐसे स्थान पर स्थापित करे—जो जनाकर्षक हो, अथवा कोषागार (कैशबाक्स) में स्थापित करके नित्यप्रति धूपदीपादि से पूजन होता रहे। इस क्रिया से व्यापार में सभी बाधायें दूर होकर अप्रत्याशित उन्नति व लाभ होना निश्चित है।

मंत्रों के साथ उसका भावार्थ भी दे रहे हैं, भावार्थ का पाठ आवश्यक नहीं है।

सर्वप्रथम विनियोग—(जल लेकर छोड़ना) अस्य इन्द्रमहादि मंत्राणा अथर्वा ऋषि, त्रिष्टुप जगती छन्दः, इन्द्र अग्नि सोम प्रजापतिप्रभृतयो देवताः व्यापारे लाभ, विजयकामनया च पाठे जपे होमे वा विनियोगः।

इन्द्रमहं वणिजं चोदयामि स न ऐतु पुरएता नो अस्तु।

नुदन्नरातिं परिपन्थिनं मृगं स ईशानो धनदा अस्तु मह्यम्। १।

ये पन्थानो बहवो देवयाना अन्तरा द्यावापृथिवी संचरन्ति।

ते मा जुषन्तां पयसा घृतेन यथा क्रीत्वा धनमाहराणि। २।

इध्मेनाग्न इच्छमानो घृतेनजुहोमि हव्यं तरसे बलाय।

यावदीशे ब्रह्मणावन्दमान इमां धियं शतसेयाय देवीम्। ३।

इमामग्ने शरणिं मीमृषो नो यमध्वानमगाम दूरम्।

---

* वन्दा का वर्णन आगे क्रम से करेंगे।

शुनं नो अस्तु प्रपणी विक्रयश्च प्रतिपणः फलिनं मा कृणोतु।
इद हव्यं संविदानौ जुषेथां शुनं नो अस्तु चरितमुत्थितं च। ४।
येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः।
तन्मे भूयो भवतु मा कनीयोऽग्ने सातघ्नवो देवान् हविषा निषेध। ५।
येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः।
तस्मिन् म इन्द्रो रुचिमा दधातु प्रजापतिः सविता सोमो अग्निः। ६।
उप त्वा नमसा वयं होतर्वैश्वानर स्तुमः।
स नः प्रजास्वात्मसु गोषु प्राणेषु जागृहि। ७।
विश्वाहा ते सदमिद् भरेमाश्वायेव तिष्ठते जातवेदः।
रायस्पोषेण समिषा मदन्तो माँ ते अग्ने प्रतिवेशा रिषाम। ८।

—मैं व्यापार में उन्नति की इच्छा से इन्द्रदेव की प्रार्थना करता हूँ इन्द्रदेव यहाँ आगमन करें और मेरे व्यापार में बाधा डालने वाले शत्रु, मनुष्य, डाकू, चोर, आदि के भय को नष्ट करें। मुझे व्यापार में पर्याप्त लाभ प्राप्त हो।

—मेरे व्यापार के रास्ते देश या विदेश में सुखपूर्ण तथा लाभकारी हों, जिसमें मैं मूल धन तथा लाभ के धन के साथ सकुशल घर लौटूं। मार्ग में कोई भय न हो।

—हे अग्नि देवता ? व्यापार में लाभ, उन्नति और प्रगति के निमित्त मैं आपकी प्रार्थना करता हूँ। दूर देश में घर से बाहर होने के कारण जो व्रत नियम आदि इस बीच मुझसे नहीं हो सके हैं, उनके प्रति मुझे क्षमा करें। मुझे मार्ग में, विदेश में कष्ट सहने की शक्ति दें और मुझे क्रय (खरीद) तथा विक्रय (बिक्री) दोनों व्यापारों में लाभ हो। मूलधन से बढ़ा हुआ (मुनाफा) धन मुझे प्राप्त हो।

—मैं अपने मूलधन से अपनी धन सम्पत्ति बढ़ाना चाहता हूँ, इस लाभ में जो विघ्न हैं उन्हें दूर करके मेरा धन आपकी कृपा से दिनों-दिन बढ़ता रहे।

—इन्द्र, सविता, सोम, प्रजापति और अग्निदेवता मेरे मन को इस प्रकार प्रेरित करें कि जिससे मैं मनोवांछित धन को प्राप्त कर सकूं।

—मैं आपकी प्रार्थना करता हूँ, हमारे पुत्र, पुत्री, पौत्र आदि की भी आप रक्षा करें।

—मैं, नित्यप्रति नियमित रूप से आपकी प्रार्थना करता हूँ, हवि (आहुति) देता हूँ। हम हमेशा धन तथा अन्न आदि से परिपूर्ण रहें।

सापत्न्यबाधाहर—सौत से मुक्ति दिलाने हेतु प्रयोग, पाठा वनस्पति का उपयोग (३।४।१८) इमांखना० ।

वंध्यादोष निवारणपूर्वक गर्भधारण—पुत्रेष्टि प्रयोग

(१) यह प्रयोग अनुभूत एवं सिद्ध परीक्षित है, इस प्रयोग से अनेक वंध्यास्त्रियों को जिन्हें डाक्टरों ने निराश कर दिया था, सन्तान दी है। सर्वप्रथम इसमें बरगद का बन्दा वांछित है, उसके अभाव में कदम्ब पीपल या आम का बन्दा प्रयुक्त किया जा सकता है। बरगद, पीपल, आम यह क्रमशः अधिक प्रभावी होते हैं* उपरोक्त बन्दा के फूल (जो गुड़हल के समान लाल रंग के पतले और लगभग दो इन्च लम्बे होते हैं) ताजा नागौरी असगन्ध, विदारी-कन्द, जायफल, बादाम व मिश्री (बन्दा १० ग्राम, असगन्ध १ किलो, विदारी-कन्द ५०० ग्राम, जायफल १० ग्राम और बादाम १ किलो, मिश्री १ किलो, इन सबको कूट छानकर रख लें) इसमें से आधा चूर्ण अलग कर लें, इसमें शुद्ध गोघृत मिलाकर हवन करें—

(१) येन वेहद—स्वोषधयः (३।५।२३)

(२) पर्वता—सूतवे (५।५।२५)

(३) यन्तासि—जनादीति (६।८।८१) इन सूक्तों से हवन कर हवन से शेष बचाकर थोड़ा सा अँश पहले से बचाये गये आधे अँश में मिला लें। इसे औषधि रूप में पति-पत्नी दोनों, सायँ प्रातः एक-एक चम्मच दूध, जल या चाय के साथ सुविधानुसार सेवन करें। औषधि सेवन प्रारम्भ करने के दिन से न्यूनतम पन्द्रह दिन ब्रह्मचर्यपूर्वक रहकर, तदनन्तर सहवास करें। यदि इस प्रयोग से भी सन्तान न हो तो यह सुनिश्चित है कि तब किसी भी उपाय या चिकित्सा से सन्तान सम्भव नहीं है अन्यथा इस प्रयोग से सन्तान की प्राप्ति निश्चित है।

(२) स्त्रियों में बन्धत्व तथा पुरुषों के नपुंसकत्व दोष निवारण हेतु अर्कमणि का प्रयोग (६-८-७२) यथासितः० ।

(३) पुरुषों की नपुंसकता का निवारण—कैथ का प्रयोग (४-१-४) यां त्वा० ।

---

* बन्दा का वर्णन यथाक्रम आगे करेंगे ।

गर्भरक्षा प्रयोग

यह प्रयोग भी सिद्ध अनुभूत तथा लेखक द्वारा सैकड़ों बार परीक्षित है। जिन महिलाओं का प्रायः गर्भपात हो जाता हो, उन्हें इसका प्रयोग करना चाहिए—

(१) यन्तासि – जनादीति (६-८-८१) तथा

यौते—मुंच तत् (८-३-६) और यथेयं० (६-२-१७)

पहले इन मंत्रों से पीली सरसों का हवन कर हवन से शेष बचे पीली सरसों को एक सौ आठ बार अभिमंत्रित करके यंत्र (ताबीज) के अन्दर भर ले, ताकि स्नान आदि के जल से दूषित न हो, तदुपरान्त इस यंत्र को डोरे में पिरोकर या कपड़े में बाँधकर गर्भिणी स्त्री के कमर में बाँधे। इसके प्रभाव से गर्भपात नहीं होगा।

(ध्यान रहे -- प्रसव का समय आने पर इसे कमर से अवश्य उतार कर रख दिया जाय, अन्यथा प्रसव में बाधा होगी)।

पुत्र प्राप्ति हेतु प्रयोग

गर्भस्थ शिशु पुत्र ही हो, अर्थात् पुत्र का ही जन्म हो, एतदर्थ हमारे यहाँ प्राचीन काल से 'पुंसवन' संस्कार का प्रचलन है। अथर्ववेद का विशेष प्रयोग यह है कि जहाँ शमी के वृक्ष के ऊपर पीपल का वृक्ष उगा हो (प्रायः एक वृक्ष के ऊपर या उसके खोखर में दूसरा वृक्ष उग आता है)

ऐसे वृक्ष की खोज अत्यन्त कठिन होते भी अत्यन्त प्रभावकारी है। इस वृक्ष से शमी तथा पीपल की कोमल कोमलें लेकर वटवृक्ष की कोमल जटाओं से साथ इनको मलकर पीसकर, रस निकाल कर पुंसवन संस्कार करें। इनका प्रयोग करने से पहले 'शमी—दधदिह' (६-२-११) मंत्रों से इस रस को अभिमंत्रित कर लें।*

---

* गर्भधारण के तीसरे माह अर्थात् ६० दिन बाद यह संस्कार होता है। यह रस (घोल) ४/५ चम्मच हो। सायँकाल सूर्यास्त के बाद गुरुवार को यह रस गर्भिणी को पहले दाहिने नाक से, फिर बाँये नाक से (२-२ चम्मच) पिलाया जाता है।

उपरोक्त वृक्ष न मिलने पर पीपल व शमी के वृक्षों से अलग कोपलें ले सकते हैं अन्यथा केवल वट वृक्ष की जटाओं से ही।

देखें—ज्योतिष संहिता।

सुरव प्रसव प्रयोग

यद्यपि आजकल नगर व ग्राम सभी क्षेत्रों में चिकित्सा की पर्याप्त सुविधा है और आसानी से चिकित्सक मिल भी जाते हैं फिर भी किसी विशेष परिस्थिति में जव गर्भवती असह्य प्रसव पीड़ा से ग्रस्त हो निम्न प्रयोग अनुभूत एवं सत्य तथा परीक्षित है। इस प्रयोग से शीघ्र ही सुखपूर्वक प्रसव हो जाता है।

(१) वषटते—पद्यताम् (१-२-११) के मंत्रों से जल, दूध, तेल या गुड़ आदि अभिमंत्रित कर गर्भिणी को पीने/खाने को देने से सुखपूर्वक प्रसव होता है।

वषट्ते पूषन्नस्मिन्त्सूतावर्यमा होता कृणोतु वेधाः।
सिस्त्रतां नार्यृतप्रजाता वि पर्वाणि जिहताँ सूतवाउ॥
चतस्त्रोदिवः प्रदिशश्चतस्त्रोभूम्या उत।
देवा गर्भसमैरयन् तं व्यूर्णुवन्तु सूतवे॥
पूषा व्यूर्णोतु वि योनिं हापयामसि।
श्रथया सूषणे त्वमव त्वं बिष्कले सृज॥
नैव मांसे न पीवसि नैवमज्जस्वाहतम्।
अवैतु पृश्नि शेवलं जराय्वत्तवेऽव जरायु पद्यताम्॥
विते भिनद्मि मेहनं वि योनिं विगवीनीके।
विमातरं च पुत्रं च वि कुमारं जरायुणा व जरायु पद्यताम्॥
यथा वातो यथामनो यथा पतन्ति पक्षिणः।
एवा त्वं दशमास्य साकँ जरायुणा—पताव जरायु पद्यताम्॥

(२) निम्न ऋचा के द्वारा पानी या तेल दूर्वा से अभिमंत्रित कर पिलायें—कोई गुड़ ही अभिमंत्रित कर खाने को देते हैं।

विजिहीर्य वनस्पते तदिदं च्यावनं स्मृतं।
पंच वा पितुः कामा स्याच्या वेत इदं जपन्॥

(३) अथवा निम्न मंत्र से दूर्वा द्वारा पानी या तिल का तेल अभिमंत्रित कर पीने को दें—

हिमवत्युत्तरे पार्श्वे, सुरथा नाम यक्षिणी।
तस्यास्मरण मात्रेण, विशल्या गर्भिणी भवेत् ॥
ओम श्री ओम स्वाहा।

(४) निम्न मंत्र को जपते हुए प्रसविनी स्त्री के सिर पर जल छिड़कें।

एजस्त्विति, प्रजापति ऋषि, पवितच्छन्दः।
गर्भो देवता अभ्युक्षणे विनियोगः ॥
ॐ एजतु दशमास्योगर्भो, अस्त्रज्जरायुणा सह।
यथायं वायु रेजति, यथा समुद्र एजति ॥
एवायं दशमास्यो अस्त्रज्जरायुणा सह।

इसके अनन्तर निम्न मंत्र के अभिमंत्रित जल पिलाने से जरायु का भी पतन हो जाता है।

(५) अवैत्विति प्रजापति ऋषि पंक्तिच्छन्द, उल्वं देवता, जपे विनियोग।

अवैतु पृश्नरँ शैवलँ शुनेजराद्यन्त, वैने मां मांसेन पीवरी।
नवकांश्चच वायतनयव जरायु पद्यताम् ॥

खेद कि भारत का यह प्राचीन ज्ञान ज्ञाता लोगों के साथ ही लुप्त होता जा रहा है। कठिन परिस्थितियों में यह मंत्र प्राणरक्षक सिद्ध हो सकते हैं।

अभिचार शान्ति

[१] विरोधियों, शत्रुओं द्वारा किये गये कोई अभिचार की काट हेतु (शत्रु के द्वारा कराये गये तंत्र-मंत्र के दोष शान्ति हेतु प्रयोग), अपामार्ग का उपयोग (४।४।१७ से ४।४।१९) ईशानां त्वा०।

[२] भवा शर्वो० (४।६।२८)।

[३] सुपर्णस्त्वा० (५।३।१४)।

[४] शत्रु का प्रयोग उलटे शत्रु पर प्रेषित करना (५।३।३१) यां ते चक्रु०।

[५] शत्रु के तंत्र-मंत्रों से रक्षा कारक तिलक वृक्ष मणि (८।३।५) अयं प्रतिसरो०।

[६] आत्मरक्षा कारी तथा शत्रुहन्ता वरणमणि (१०।२।३) अयं मे० ।

[७] शत्रुकृत तंत्र-मंत्र, कृत्या की शान्ति, 'जङगिड' मणि का प्रयोग (१६।५।३४-३५) जङ्गिडोऽसि० ।

भूत-प्रेत बाधाहर प्रयोग

अजश्रृंगी, गूगल, पीला, नलदी, ओक्षगन्धी, प्रमर्दनी आदि औषधियों की धूप (४।८।३७) त्वया पूर्वं० ।*

पति वशीकरण

सौवर्चल/शंखपुष्पी का प्रयोग (७।४।३८) इदं खनामि० ।

पत्नी का वशीकरण

[१] यथावृक्षं—वानयन्तु मे (६।१।८ तथा ६) ।

[२] यथायं०—(६-१०-१०२) ।

ऋण से मुक्ति हेतु प्रयोग

[१] अपमित्य० (६-१२-११७) ।

बिछुड़े बैरी पति-पत्नी का पुनर्मिलन

न्यस्तिका—वीर्यावति (६-१३-१३६) ।

रक्षाकारी वेदोक्त महाकवच

सोना, नीलम का टुकड़ा, जौं, कुशा, दूब, सरसों, गन्ध (रोरी), अक्षत, गोमय, दही, भोजपत्र, मोर पंख, सर्प कंचुकी, ताँबे का टुकड़ा, उशीर, कुनरू, बालक (बालछड़), जटामांसी, हरिद्रा, आम के पत्ते का टुकड़ा, तागे का टुकड़ा जिसे तिभागा कर लिया जाय—इन बाइस वस्तुओं को इकट्ठा कर—उस दिन की प्रतीक्षा करे—जिस दिन श्रावण की पौर्णमासी को श्रवण नक्षत्र पड़े और भद्रा न हो ।

---

* अजश्रृंगी = मेढाश्रृंगीं / पीला = दारू हल्दी / प्रमर्दनी = धाय के फूल/ इक्षुगन्धी = कांस, भूम्यामलक, ताल मखाना, गोखरू और बाराहीकन्द । उशीर = खस । मोक्षक = पाढर ।

उपरोक्त बस्तुओं को—गणानात्वा गणपतिं० तत्सवितुर्वरेण्यं०

जातवेदसे०

सप्तऋषय:०

नतद्रक्षांसि०

यदावध्नन्दाक्षायणा०

रक्षोहणं बलगहनं० स्वराडसि० सपत्नहा०

रक्षोहणौ वां०

मान: शं सो अररूषो०

त्र्यम्बकं यजामहे० (दो मंत्र)

इन बारह मंत्रों से मंत्रित कर, प्रतिष्ठा प्राण प्रतिष्ठापूर्वक, उपरोक्त समय में ही कवच में स्थापित कर गले में धारण करे। अल्प मृत्यु, रोग, शत्रु, भूत-प्रेत, तन्त्र-मन्त्र, दुर्घटना आदि सभी से—आत्म रक्षाकारी अमोघ तन्त्र है।

विभिन्न रोगों पर कुछ चमत्कारी दिव्योषधियां

मूत्रदोष निवारण (१-२-३)।

हृदय रोग व पीलिया (१-५/२२)।

कुष्ठ रोग (१-५ २३, १-५-२४)।

ज्वर शान्ति (१-५-२५)।

बनौषधि मूंज का प्रयोग—अतिसार नाड़ी व्रण आदि में (२-१-३)।

दाद, खाज, खुजली की औषधि—पृश्निपर्णी (२-४-२५)।

कृमिनाश—घातक कीटाणु जीवाणु एवं कृमियों रक्षा (२-६-३१ तथा ३२) और (५-५-२३)।

सर्प विष निवारण—सुपारी वृक्ष का प्रयोग (४-२-६) तथा (५-३-१३)।

विष निवारक—वरणावृक्ष (४-२-७) तथा (६-२-१२)।

हड्डी जोड़ने व घाव भरने वाला लाख (२-३-११) तथा (५-२-५)।

ज्वर शान्ति (५-५-२२)।

कण्ठमाला का उपचार (६-३-२५)।

केशोत्पादक शमी (६-३-३०)।

आक्षेप व वात रोगहर-पिप्पली (६-११-१०६)।

विसर्प, विद्रधि, श्वास-कास हर पलाश (६-१३-१२७)।

केश वर्धक काकमाची (६-१३-१३६—१३७)।

बिच्छू तथा सर्प विष निवारक मधूक (७-५-५६) तथा (१०-२-४)।

जलोदर रोग नाशक – जीवन्ती (८-३-७)।

अनेक रोगों की प्रभावकारी औषधि—शतवार (१६-५-३६)।

व्याधिहर गूगल (१६-५-३८)।

रोगहर—कूट (१६-५-३६)।

०—०

आदिशक्ति दुर्गा और शाक्तमंत्र

कोई भी सृष्टि अकेले पुरुष तत्व (ईश्वरांश) से संभव नहीं है. सृष्टि के प्रारम्भ में ईश्वर ने स्वयं पुरुष + नारी (ईश्वर + शक्ति) के संयुक्त रूप 'अर्ध-नारीश्वर' के रूप में इस सृष्टि का निर्माण किया। इनमें पुरुषतत्व उदासीन तथा स्त्रीतत्व ही सक्रिय होता है। इस प्रकार इस विश्व के प्रणेता नियन्ता 'ईश्वर' नाम की जो सत्ता है, उस ईश्वर की 'शक्ति' (स्त्रीअंश) ही आदिशक्ति है। अर्थात् इस महान सृष्टि के निर्माण, पालन तथा संहार कर्त्री जो आदि महाशक्ति है वही शक्ति माँ दुर्गा है। विश्व की माता है।

मोहन जोदड़ो व हड़प्पा में किये गये उत्खनन से यद्यपि प्राचीन भारत में शाक्त उपासना के बारे में अधिक प्रकाश नहीं पड़ता है लेकिन सिन्धु घाटी में योनि के आकार की मूर्तियों का प्राप्त होना शक्ति पूजा की प्राचीनता सिद्ध करता है। एशिया माइनर, यूनान, फिनीशिया, मिश्र आदि प्राचीन सभ्यता वाले राष्ट्रों में भी मातृपूजा का प्रचलन बहुत पुराना है। विदेशों में भी हजारों वर्ष पुराने शक्ति मन्दिर उपलब्ध होते हैं. उदाहरणार्थ ब्राजिल में अनेकों शिव-पार्वती मन्दिर, यूरोप में (कोरिय) पार्वतीमन्दिर, कोरिया में पार्वतीमन्दिर व कम्बोडिया में (बेयन) मन्दिर इत्यादि।

विश्व के सबसे प्राचीन साहित्य वेदों में (ऋग्वेद १०/१२५, अथर्ववेद ४/३०, ऋग्वेद ६/८६/१०, ८/२५/३, ८/४७/२, २/२७/७, १/१३६/३, आदि सर्वत्र) मातृशक्ति की चर्चा है। हो भी क्यों नहीं, माता से बढ़कर और कौन सी शक्ति है और उसे कौन भुला सकता है या अवहेलना कर सकता है। ईश्वर की किसी भी देवता के रूप में उपासना करें - मातृरूप में सभी देवता 'शक्ति' से जुड़े हैं, अकेले उनका कोई अस्तित्व ही नहीं। यही कारण है कि शक्ति की उपासना अनादि काल से प्रचलित है क्या वेद, क्या उपनिषद, क्या पुराण सर्वत्र शक्ति की महत्ता का वर्णन है, उचित भी है इस समस्त सृष्टि की नियन्ता जो अदृश्य शक्ति है, उस शक्ति की उपासना होनी ही चाहिये। सुन्दर चर्चित स्थण्डिल पर अंकुरित यव पल्लवों के मध्य घट में इसी शक्ति की उपासना घर-

घर में होती है और 'या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता। नमस्तस्य, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः' के उच्चारण से वातावरण गुंजरित हो उठता है।

जैसा कि ऋग्वेद में वर्णन है—"मैं इस ब्रह्माण्ड की एकमात्र अधीश्वरी हूँ, पार्थिव व अपार्थिव धन देने वाली हूँ, प्रपंच रूप से अनेक भावों में अवस्थित हूँ भूरिभाव से अनन्त जीवों में प्रविष्ट हूँ। जिसको चाहती हूँ उसे उच्च पद देती हूँ, उसे ऋषि ब्रह्मा मेधावान बनाती हूँ। मैं ही जन समूह के निमित्त युद्ध करती हूँ, मेरे द्वारा ही सृष्टि प्रवर्तित होती है। वायु की तरह मैं निखिल ब्रह्माण्ड में प्रवाहित हूँ। इस पृथ्वी पर, स्वर्ग तथा स्वर्ग से परे भी मेरा ही अस्तित्व है, यही मेरी महिमा है।" यथार्थ है। शक्ति के बिना तो सभी निर्जीव व असहाय है, श्री शंकराचार्य जी ने ठीक ही कहा है :—

शिवः शक्त्यायुक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं ।
न चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि ।।

अर्थात् निर्गुण रूपी ब्रह्म (शिव) प्रकृतिरूपा शक्ति के साथ संयुक्त होकर ही सृष्टि स्थिति व लयात्मक कार्य में समर्थ होता है, यदि प्रकृति (शक्ति) का सहयोग न हो तो वह ब्रह्म (परमात्मा, शिव) स्वयं हिलने-डुलने या श्वाँस लेने की भी सामर्थ्य नहीं रखता।

यों तो भारतीय संस्कृति में तैंतीस करोड़ देवताओं की मान्यता है, तदनुसार इस शक्ति के भी प्रत्येक देवता के साथ तैंतीस करोड़ नाम व रूप हैं। ब्रह्मा के साथ ब्रह्माणी,, विष्णु के साथ वैष्णवी, शिव के साथ शिवानी, नृसिंह के साथ नारसिंही, कार्तिकेय के साथ कौमारी, कृष्ण के साथ राधा, राम के साथ सीता, इन्द्र के साथ ऐन्द्री आदि, इस शक्ति को जो रूप या नाम दें, इसके बिना कोई कार्य या साधना सफल नहीं होती, क्योंकि यही सृजनात्मक प्रकृति रूपा महाशक्ति है। इसके बिना किसी भी देव का अस्तित्व नहीं है।

एक रूपा होते हुए भी मुख्यतः शक्ति के महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती यह तीन रूप हैं। जिनका वर्णन पुराणों में हुआ है। इस महाशक्ति के तीन रूप हैं, तीन ही गुण हैं, तीन ही चरित्र हैं। इन तीनों शक्तियों के एकाकार होने से ही महाशक्ति का सृजन होता है। विज्ञान के अनुसार गणित एवं सांख्यिकी में एक 'त्रिकोणीय शक्ति सिद्धांत' है, पदार्थ विद्या के अनुसार इसे तीन शक्तियों के एक केन्द्र पर आधारित होने से 'इक्युलि ब्रियम्' या 'ट्रैंगिल आफ फोर्सेस' कहा गया है। यह तीन शक्तियाँ हैं—

(अ) सद्बुद्धि (प्रेरणात्मक) और उसका सदुपयोग ।

(आ) एकता तथा सामूहिक एवं सम्मिलित प्रयास ।

(इ) व्यक्तिगत हित एवं स्वार्थ का परित्याग ।

मार्कण्डेय पुराणान्तर्गत दुर्गा सप्तशती में इन तीनों महाशक्तियों की प्रतीकात्मक एवं अलंकारिक भाषा में विस्तृत व्याख्या है । जहाँ यह तीनों शक्तियाँ काम करेंगी, वहाँ सुख, शान्ति व सफलता निश्चित है ।

विस्तार से इस महाशक्ति के नौ रूपों की कल्पना भी मिलती है। स्मार्त एवं सात्विक (दक्षिणमार्गी) उपासना में इन्हें 'नवदुर्गा' कहा गया है । शक्ति के इन नौ रूपों की कल्पना इस कारण है कि इस समस्त ब्रह्माण्ड में जितने भी जीवधारी हैं अथवा वृक्षादि हैं वह सभी मूलरूप से नौ तत्वों से बने हैं। यह नौ तत्व ही नवदुर्गा हैं—

भूमिरापोनलोवायु खं मनोबुद्धिरेवच ।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ।।
अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम् ।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ।।

—गीता

अर्थात् पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि, अहंकार और चेतन-शक्ति (प्राणवायु) यह नौ मूलभूत तत्व ही सृष्टि का कारण हैं। इनसे परे कुछ नहीं ।

आध्यात्मिक दृष्टि से इन नव दुर्गाओं का अन्य रूप भी है । यथा—

१—शैलपुत्री (स्थिरता व दृढ़ता की प्रतीक) ।
२—ब्रह्मचारिणी (चरित्र शुद्धि) ।
३—चन्द्रघण्टा (जागरूकता) ।
४—कूष्माण्डा (निष्कपटता व आत्मसंयमशक्ति) ।
५—स्कंदमाता (त्याग) ।
६—कात्यायनी (ज्ञान) ।
७—कालरात्री (निर्भयता) ।
८—महागौरी (सेवाभाव व दयालुता) ।
९—सिद्धिदात्री (धैर्य) ।

इन नौ गुणों से ही कोई भी व्यक्ति या राष्ट्र समृद्ध व शक्तिशाली हो सकता है। नवरात्रों में इन नवधा गुणों का विकास कर शक्ति अर्जित करने और उसे आत्मसात् करने की प्रेरणा मिलती है।

इन नौ शक्तियों को आत्मसात् करने का साधना पर्व होने से ही 'नवरात्र' नाम पड़ा है। नवरात्रियों की यह नौ रातें आध्यात्मिक विकास तथा इष्टसाधना के निमित्त विशेष महत्व रखती हैं। अंकशास्त्र या गणित में ९ का अंक सर्वोपरि है, साधना में यह परमात्मा तथा परमसिद्धि का प्रतीक है।

दोनों नवरात्र ऐसे समय पर पड़ते हैं, जब आत्मा का प्रतीक सूर्य और मन का प्रतीक चन्द्र दोनों ही विषुवत रेखा के सन्निकट सम्पात विन्दु पर होते हैं, आध्यात्मिक विकास एवं साधना हेतु यह समय विशेष रूप से अनुकूल होता है, ऐसे समय में मन स्थिर रहता है जो साधना हेतु आवश्यक है।

यंत्ररूप में, चित्र रूप में अथवा प्रतिमा रूप में इस महाशक्ति की अपने देवता के साथ (शिवरूप, ब्रह्म) कहीं भी उपासना हो सकती है, लेकिन शक्तिपीठों में साधना का विशेष महत्व है। अधिकांश साधक इन पीठों में साधना करके ही सिद्धि प्राप्त करते हैं। पुराणों के अलंकारिक वर्णन के अनुसार दक्ष प्रजापति के यज्ञ में सती के देहत्याग से कुपित शिव ने उनके देह को १०८ खण्डों में विभक्त कर जहाँ-जहाँ फेंका, वे १०८ स्थान ही सिद्धपीठों के रूप में प्रसिद्ध हैं। सम्प्रति इन १०८ शक्तिपीठों में से ५१ या ५२ का ही वर्णन प्राप्त होता है। 'दाक्षायणीतंत्र' तथा 'योगिनी हृदय तंत्र' में ५१ शक्तिपीठों का उल्लेख है, जब कि 'तंत्र चूड़ामणि' में ५२ पीठों का वर्णन मिलता है। तात्विक दृष्टि से शिव के सृजक (ब्रह्मरूप) और सती को शिव (ब्रह्म) की अपरा शक्ति प्रकृति रूप में मानने पर पुराणों के कथन का अभिप्राय यह है कि महाप्रलय (दक्ष के यज्ञ में सती का देह त्याग, प्रकृति का कार्य अवरुद्ध होना, अर्थात् महाप्रलय) के बाद सर्वप्रथम सृष्टि पर (पृथ्वी में) जहाँ-जहाँ सर्वप्रथम प्रकृति (जीवनीय तत्व) का उदय हुआ, वहीं शक्तिपीठ के रूप में मान्य रही होंगी।

प्रत्येक शक्तिपीठ में माँ का भिन्न-भिन्न नाम है और उनके साथ विभिन्न नामों के भैरवों की भी स्थिति है, जो इस प्रकार है---

माँ के अष्टोत्तरशत नाम (१०८) और सिद्धतीर्थ स्थानों का वर्णन मत्स्यपुराण (१३/२६-५६) और देवी भागवत (७/३०/५५-८४) में उपलब्ध होता है, परन्तु इनमें से बहुत से स्थान ऐसे हैं जिनका निर्णय करना कठिन है।

१—हिंगलाज में सतीका ब्रह्मरन्ध्र गिरा था। यहाँ पर देवी कोट्टरी और भीमलोचन भैरव का मंदिर है। कराची से ९० मील दूर समुद्र किनारे एक गुफा में ज्योति दर्शन होता है।

२—शर्करा में तीन आंखें गिरीं। यहाँ महिषमर्दिनी और क्रोधीश भैरवका मंदिर है। सक्कर स्टेशन के समीप यह स्थान है।

३—सुगन्धा में नासिका। देवी सुगन्धा और त्र्यम्बक भैरवका मंदिर है। जिला बरिशाल से १३ मील उत्तर शिकारपुर ग्राम में सुगन्धा या उग्रतारा का मंदिर है। होली के अवसर पर यहाँ बड़ा मेला लगता है।

४—कश्मीर में कण्ठ। अमरनाथ के समीप देवी भगवती या महामाया और त्रिसन्ध्येश्वर भैरवका मंदिर यहाँ है।

५—ज्वाला मुखी में जिह्वा। यहाँ देवी अम्बिका और उन्मत्त भैरवका स्थान है। यह स्थान पंजाब का प्रमुख तीर्थ स्थान है। दशहरे पर मेला लगता है।

६—जालन्धर में वामस्तन। यहां त्रिपुर मालिनी और भीषण भैरव का मन्दिर है।

७—वैद्यनाथ में हृदय। देवी जयदुर्गा और वैद्यनाथ भैरव का यहाँ प्रमुख स्थान है।

८ नेपाल में दोनों जांघें। देवी महामाया और कपाली भैरव का स्थान है। इसके अलावा पशुपतेश्वर मन्दिर भी है।

९—मानव क्षेत्र में बांया हाथ। देवी दाक्षायणी तथा अमर भैरव का यहाँ स्थान है। मानसरोवर में।

१०—उत्कल के विराज क्षेत्र में नाभि। देवी विमला और जगन्नाथ भैरव का स्थान है शक्ति का पीठ स्थान है।

११—गण्डक नदी में दक्षिण गण्ड। देवी गण्डकी चण्डी और चण्डमाणी (चक्रमाणी) भैरव का स्थान है। गण्डक नदी की जहाँ से उत्पत्ति हुई है वहां पर एक शालिग्राम पत्थर हैं।

१२—बहुला में बायां हाथ। देवी बहुला और भीरूक भैरव का स्थान है। काटवा के पश्चिम केतुग्राम में यह स्थान है।

१३—उजानी में दाहिने हाथ का जोड़। यहां देवी मंगलचण्डी तथा कपिलाम्बर भैरव हैं।

१४—चट्टग्राम में (चट्टगांव) दक्षिण हस्तार्द्ध यहाँ देवी भवानी और चन्द्रशेखर भैरव हैं। शिवरात्रि के अवसर पर यहाँ मेला लगता था।

१५—त्रिपुरा में दाहिना पैर। देवी त्रिपुरेश भैरव यहां है। त्रिपुरा राज्य के राधाकिशोर पुर ग्राम में यह स्थान है।

१६—त्रिश्रोत में बाया पैर। देवी भ्रामरी और ईश्वर भैरव यहां हैं। जिला जलपाईगुड़ी के बोदा इलाके में यह स्थान हैं।

१७—कामरूप में महामुद्रा योनि पीठ। देवी कामारूपा और उमानन्द भैरव का स्थान है। असम प्रान्त में स्थान है।

१८—प्रयाग में दोनों हाथों की अंगुलियां देवी ललिता और भव-भैरव का स्थान है।

१९—जयन्ती में बायीं जंघा। देवी जयन्ती और कुमदीश्वर भैरव का स्थान है। श्री हट्के जयन्ती परगना में कालजोड़ नामक स्थान में यह स्थान हैं।

२०—काली घाट में दाहिने पैर की अंगुलियां। यहां देवी कालिका और नकुलेश्वर भैरव का स्थान है।

२१—किरीट में किरीट। देवी विमला और सम्वर्त्त भैरव का स्थान है। बेण्डल तथा बारहोरोय लूप लाइन में यह स्थान है।

२२—वाराणसी में कुन्तल। यहाँ देवी बिशालाक्षी और काल भैरव का स्थान है। मणिकर्णिका में पीठस्थान है।

२३—कन्याश्रम में पीठ। देवी सर्व्वाणी और निभिष भैरव का स्थान है।

२४—कुरुक्षेत्र में दक्षिण पैर का गुल्फ। यहां देवी सावित्री और स्थान भैरव (अश्वनाथ) का स्थान है।

२५—मणिबन्ध में मणिबन्ध और कर गन्थी। देवी गायत्री और सर्व्वानन भैरव का स्थान है। अजमेर के निकट पुष्कर महातीर्थ के पास यह स्थान है।

२६—श्री हट्ट में ग्रीवा। देवी महालक्ष्मी और सम्बरानन्द भैरव का स्थान है। श्री हट्ट शहर से २ मील दूर जैनपुर में भैरव मन्दिर तथा पास ही महालक्ष्मी का पीठ स्थान है।

२७—कांची देश में कंकाल। देवी वेदगर्भा और रुरु भैरव का स्थान है। बोलपुर के पास नदी किनारे यह स्थान है। चैत्र संक्रान्ति के अवसर पर यहाँ मेला लगता है।

२८—कालमाधव में बाम नितम्व। देवी काली और असितांग भैरव का स्थान है।

२९—सोन नदी में दक्षिण नितम्व। देवी नर्मदा और भद्रसेन भैरव का स्थान है।

३०—रामगिरि में दक्षिण स्तन। देवी शिवानी और चण्डभैरव स्थान है। विलासपुर से ६ मील दूर स्थान है।

३१—वृन्दावन में केश। देवी उमा और भूतेश भैरव का स्थान है।

३२—शुचिदेश में ऊपर के दांत। देवी नारायणी और संहार भैरव का स्थान है। जिला खुलना के अन्तर्गत ईश्वरूपर ग्राम में यह स्थान है।

३३—पचरागर में नीचे के दांत। देवी वाराही और महारुद्र भैरव का स्थान है।

३४—करतोया तीर में तल्फ। देवी अपर्णा और वामन भैरव का स्थान है। इस स्थान का आधुनिक नाम भवानीपुर है। रामनवमी, दीपावली और वैशाख के हर मंगल, शनिवार को वहाँ मेला लगता है।

३५—श्रीपर्व में दक्षिण गुल्फ। देवी सुनन्दा और नन्द भैरव का स्थान है। यह स्थान लद्दाख पर्वत के पास है।

३६—विभासक में वाम गुल्फ। देवी भीम रूपा और सर्वानन्द भैरव का स्थान है यह स्थान कलकत्ता से ४७ मील दूर है।

३७—प्रभास में उदर। देवी चन्द्रभागा और वक्रतुण्ड भैरव का स्थान है। यह स्थान जिला मथुरा में है।

३८—भैरव पर्वत में ऊपर का ओंठ। महादेवी और लम्बकर्ण भैरव का स्थान है। उज्जैन स्थित क्षिप्रा नदी के किनारे यह स्थान है।

३९—मगध में, दक्षिणी जंघा। देवी सर्वानन्दकरी और व्योमकेश भैरव का स्थान है। बक्सर स्टेशन से २ मील की दूरी पर यह स्थान है।

४०—जनस्थान में चिबुक। देवी भ्रामरी और विकृताक्ष भैरव का स्थान है। खानदेश के अन्तर्गत जलगांव स्टेशन के जंगल में यह स्थान है।

४१—गोदावरी तीर में दक्षिण गण्ड। देवी विश्व मातृका और दण्डपाणी भैरव का स्थान है।

४२—रत्नावली में दक्षिण स्कन्ध। देवी कुमारी और शिव भैरव का स्थान है यह स्थान मद्रास के निकट रत्नावली मे है।

४३—क्षीर ग्राम में दाहिने पैर का अंगूठा। देवी योगमाया और खीर खण्डक भैरव का स्थान है। वैशाख के माह में देवी को तालाब से बाहर निकालते हैं, साल भर के लिए तालव में छोड़ देते हैं। वैशाख में यहाँ मेला लगता है वैशाख के मास में ग्राम निवासी छाता-जूता का प्रयोग नहीं करते।

४४—मिथिला में बायां कन्धा। देवी महादेवी और महोदर भैरव का स्थान है। यह स्थान जनकपुर रोड स्टेशन के पास है।

मतान्तर से नटहाटी असम में गला। देवी कालिका और योगीश भैरव का स्थान है। यह स्थान नलहाटी स्टेशन से दो मील दूर है। यह स्थान अप्रमाणिक है।

४५—कालीघाट में मस्तक। देवी जयदुर्गा और क्रोधीश भैरव का स्थान है। यह कालीघाट कलकत्ता वाला नहीं बल्कि कटोवा स्टेशन के गंगा के उस पार जुरनपुर ग्राम में है।

४६—वक्रेश्वर में भोहें। देवी महिषमर्दिनी और वक्र नाथ भैरव का स्थान है। ओणडाल जंकशन से १३८ मील दूर दुबराजपुर में यह स्थान है। यहां सात उष्ण प्रस्रवण और मन्दिर के बीच संगमरमर के पत्थर से निर्मित उष्ण प्रस्रवण है। महामुनि अष्टावक्र को यहीं सिद्धि प्राप्त हुई थी।

४७—जशोर में पाणि पद्म। देवी यशोरेश्वरी और चण्ड भैरव का स्थान है। जशोर के ईश्वरीपुर ग्राम में यह स्थान है।

४८—अट्टहास में नीचे का ओंठ। देवी फुल्लरा और विश्वेश भैरव का स्थान है। वीरभूमि जिला के लाभपुर ग्राम में यह स्थान है।

४९—नन्दीपुर में हार। देवी नन्दिनी और नन्दिकेश्वर भैरव का स्थान है। सांइथिया स्टेशन के समीप एक बृहत पीपल वृक्ष के नीचे यह स्थान है।

५०—लंका में—नूपुर। देवी इन्द्राक्षी और राक्षसेश्वर भैरव का स्थान है।

५१—विराट में बायें पैर की अंगुलियां। देवी अम्बिका और अमृत भैरव का स्थान है।

सिद्धमंत्र

(१) दक्षिणमार्गी साधना में सात्विक भाव से परमार्थिक उपासना हेतु 'दुर्गा गायत्री' मंत्र भी एक सिद्धमंत्र है। शाक्त उपासना में माँ दुर्गा का रूप ही प्रधान तथा सर्वशक्ति सम्पन्न है क्योंकि यह रूप ही महाकाली + महालक्ष्मी + महासरस्वती का शक्ति त्रिभुज है।

"ॐ गिरिजायै विद्महे, शिवप्रियायै धीमहि।
तन्नो दुर्गा प्रचोदयात्"

इस आदि महाशक्ति का सिद्ध एवं अनुभूत बीज मंत्र भी नौ अक्षरों का है, जो प्रकृति के घटक उपरोक्त नौ तत्वों एवं नवदुर्गाओं का प्रतीक है। सात्विक उपासना में यह मंत्र समस्त कामनाओं की पूर्ति कारक व सिद्धि दायक है, जो 'नवार्ण मंत्र' के नाम से प्रसिद्ध है :—

'ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे'*

एक अष्टाक्षरी सिद्ध मंत्र भी है :—

"ओं ह्रीं दुं दुर्गायै नमः"

अष्टाक्षरी मंत्र आठ महाशक्तियों का प्रतीक है। मंत्र महोदधि (अध्याय १४३/६ और अध्याय १४४/३१) में ब्रह्माणी माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, माहेन्द्री, चामुण्डा और चण्डिका या महालक्ष्मी इन आठ रूपों को 'अष्टमाशक्ति' कहा गया है।**

नवार्णमंत्र तथा अष्टाक्षर मंत्र के षडंगन्यास इस प्रकार हैं—

(अ) नवार्णमंत्र—ॐ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः, ॐ क्लीं मध्यमाभ्याँ नमः ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः, ॐ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायैविच्चे करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः। ॐ ऐं हृदयायनमः, ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ क्लीं शिखायै वौषट्,

---

* उपरोक्त मंत्र के अलावा 'नवार्णमंत्र' के और भी अनेक रूप हैं, जो कामनाभेद से जपनीय हैं :—

(१) **ओं ऐं ह्रीं क्लीं लं श्रीं ह्रीं क्लीं नमः।**

(२) **ओं ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे (यहां प्रारम्भ में ओंकार है)।**

(३) **ओं ऐं ह्रीं क्लीं लं ह्रीं नमः (दक्षिण भारत में मान्य)।**

(४) **हूं ऐं ऐं ह्रीं चामुण्डायै स्वाहा (डामरतंत्र के अनुसार)।**

** दोनों मंत्रों का विनियोग इस प्रकार है—

ॐ अस्य नवार्ण/अष्टाक्षर मंत्रस्य ब्रह्मा विष्णु रुद्राऋषयः, गायत्र्युष्णिगनुष्टुपछन्दांसि, महाकाली महालक्ष्मी महा सरस्वत्यो देवताः, नन्दा शाकंभरी भीमाशक्तयः रक्त दन्तिका दुर्गाभ्रामर्यो बीजानि, अग्निवायु सूर्यस्तत्वानि, ऋग्यजुः सामवेदाध्यानानि श्री दुर्गादेव्या प्रीतये अभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः।

ॐ चाण्डुण्डायै कवचायहुम्, ॐ विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ऐं ह्लीं क्लीं चामुण्डायै यिच्चे अस्त्रायफट् ।

(आ) अष्टाक्षरमंत्र—

ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः, ह्लीं तर्जनीभ्यां नमः, दुं मध्यमाभ्यां नमः, दुर्गायै अनामिकाभ्यां नमः, नमः कनिष्ठिकाभ्यां नमः, ॐ ह्लीं दुंदुर्गायै नमः करतल करपृष्ठाभ्यां नमः । ॐ हृदयायनमः, ह्लीं शिरसेस्वाहा, दुं शिखायै वौषट्, दुर्गायै कवचायहुम्, नमः नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ ह्लीं दुं दुर्गायै नमः अस्त्रायफट् ।

माँ शक्ति के आराधकों को 'शाक्त' कहा जाता है, तान्त्रिक उपासना में माँ शक्ति की उपासना के दो प्रकार हैं, एक 'समयाचार' अर्थात् सात्विक दक्षिण-मार्गी उपासना और दूसरी 'कौलाचार' अर्थात् उग्र या वाममार्गी साधना । इसके अलावा भी अनेक शाखायें हैं । शाक्त उपासक अधिकांशतः अद्वैतवादी हैं, इस मत के अनुसार आराध्या देवी से एकता स्थापित करने पर ही पूजा का अधिकार प्राप्त होता है । कुछ उपासक द्वैतवादी भी हैं जो शक्ति (प्रकृति) और शिव (आत्मा) नाम से दो रूप मानते हैं, तदनुसार शिव मां शक्ति (काली) के पैरों के नीचे स्थित प्रदर्शित किये जाते हैं यह इस ओर संकेत है कि शिव (आत्मा) रूप उदासीन होता है और शक्ति (प्रकृति) के संयोग से ही वह सक्रिय होता है ।

न शिवेन विना देवि न देव्या च विना शिवः ।
नानयोरन्तरं किञ्चित् चन्द्र चन्द्रिकयो रिवः ॥

अर्थात् न तो देवी के बिना शिव का अस्तित्व संभव है, और न शिव बिना देवी का है, चाँद और चांदनी की भांति परस्पर एक दूसरे से अविभाज्य हैं ।

सामान्य सात्विक उपासना में जहाँ देवी के तीन रूपों (महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती) या नौ रूपों (नव-दुर्गाओं) का महत्व है, तंत्र शास्त्र में माँ देवी के दशरूप मुख्य हैं, इन्हें 'दशमहाविद्या' कहा गया है । दक्षिणमार्गी साधना में यह दशरूप—त्रिपुरासुन्दरी या षोडशी, कमला या लक्ष्मी, सरस्वती या वाग्देवी, तारा, मातंगी, शारिका, राज्ञी, भेडा, भुवनेश्वरी और ज्वालामुखी हैं ।

वाममार्गी साधना में शक्ति के दशरूप—काली, तारा, त्रिपुरासुन्दरी,

भुवनेश्वरी, भैरवी या त्रिपुर भैरवी, छिन्न मस्ता, धूमावती, बगलामुखी, मातंगी और कमला हैं।*

इन रूपों के अलावा कुलवागीश्वरी, कालरात्री, दक्षिण काली, गौरी, कामेश्वरी, तुरी, अन्नपूर्णा, श्यामा नाम से भी माँ शक्ति की उपासना होती है। वैष्णव मत में राधा, सीता आदि भी शक्ति के ही रूप हैं। पुराणों तथा आगम ग्रंथों में प्राप्त कथानकों के अनुसार जगन्माता सती को जब शिवजी ने दक्षयज्ञ में जाने से रोका तो उन्होंने कुपित होकर शंकर जी को अपने दशरूप दिखलाये, यही दशरूपों को 'दशमहाविद्या' कहा गया है।

विभिन्न लक्ष्यों की प्राप्ति एवं विभिन्न कामनाओं के अनुसार इन रूपों में से किसी रूप की उपासना अभीष्ट होती है, जैसा कि कहा गया है—

मुक्तिं ददाति त्रिपुरा लक्ष्मी लक्ष्मीं ददाति च।
विद्याददाति वाग्देवी प्रत्येकं जन्म निश्चला ।।
तारा तारयति क्लेशाद्राज्यं तु भुवनेश्वरी।
मातंगी राक्षसी सातु भीतिं हरति नित्यशः ।।
शारिका शं ददात्येव संततिं लोकपूजिताम्।
राज्ञी राज्ये राजवश्यं भेडा भय विनाशिनी ।।
धनं ज्वालामुखी देवी भक्तेभ्यश्चप्रयच्छति।
एता देव्या इष्टदात्र्यो जप होमार्चनादिभिः ।।

अर्थात् मोक्ष कामना से त्रिपुरासुन्दरी, धन की कामना से लक्ष्मी की, विद्या की कामना से वाग्देवी की, क्लेशों से मुक्ति हेतु तारा की, राज्य अथवा आजीविका की प्राप्ति हेतु भुवनेश्वरी की, किसी भी प्रकार के भय निवारण हेतु मातंगी की, संततिसुख की कामना से शारिका की, राजा अथवा शासन को अपने वशीभूत करने एवं शासन या न्यायालय आदि में सफलता एवं विजय कामना से राज्ञी की, भय निवारण हेतु भेडा की, धन के निमित्त ज्वालामुखी रूप में शक्ति की उपासना करनी चाहिए। जप, होम, पूजनादि से प्रसन्न होकर यह महाविद्यायें निश्चित रूप से मनोवांछित कामना की पूर्ति करती हैं ऐसी सनातन मान्यता है। बगलामुखी की उपासना भी आत्मजय, शत्रुपराजय तथा शत्रु को निष्क्रिय करने के उद्देश्य से की जाती है।

दस महाविद्याओं के साथ उनके निर्दिष्ट शिव का भी पूजन किया जाता है, क्योंकि अकेले शिव (पुरुष रूप) या अकेले माँ (स्त्रीरूप) की उपासना अभीष्ट फल दायक नहीं है। स्त्री + पुरुष का संयुक्त रूप ही ईश्वर का रूप है—

प्रत्येक महाविद्या के साथ शिव रूप इस प्रकार हैं :—

काली (महाकाल), तारा (अक्षोभ्य), षोडशी (पंचवक्त्र) भुवनेश्वरी (त्र्यम्बक), भैरवी (दक्षिणामूर्ति), छिन्नमस्ता (कवन्ध), मांतगी (मातंग), बगला मुखी (एकमुख महारुद्र), कमला (सदाशिव श्री विष्णु) धूमावती (यह विधवा रूप में पूजित हैं)।

शिवमहापुराण, शतरुद्र संहिता अध्याय १६—१८ के अनुसार भगवान शिव के दस अवतारों के साथ दस महाशक्तियाँ इस प्रकार हैं :—

महाकाल (महाकाली) तार (तारा), बालभुवनेश (बाला भुवनेश्वरी), षोडशश्रीविद्येश (षोडशी त्रिपुरा सुन्दरी), भैरव (भैरवी), छिन्नमस्तक (छिन्नमस्ता), धूमवान (धूमावती), बगलामुख (बगलामुखी), मातंग (मातंगी), और कमल (कमला महालक्ष्मी)* दश महाविद्याओं को भगवान के दश अवतारों से सम्बद्ध भी कहा गया है—

कृष्णरूपा कालिकास्या द्रामरूपा च तारिणी।
बगला कूर्मरूपास्यान्मीनोधूमावती भवेत्॥
छिन्नमस्ता नृसिंहः स्याद्वाराहश्चैव भैरवी।
सुन्दरी जामदग्न्यःस्याद्वामनो भुवनेश्वरी॥
कमला बुद्धरूपा स्याद्दुर्गास्यात्कल्किरूपिणी।**

अर्थात् काली (कृष्ण), तारा (राम), बगला (कूर्म), धूमावती (मत्स्य), छिन्नमस्ता (नृसिंह), भैरवी (वाराह), त्रिपुरासुन्दरी (परशुराम), भुवनेश्वरी (वामन), कमला (बुद्ध) और दुर्गा (कल्कि) रूपा हैं।

माँ आदि शक्ति के सहस्त्रों नाम व सहस्त्रों रूप हैं, कामनाभेद से विभिन्न रूपों व नामों से पूजित होती है। भारतीय संस्कृति में शक्ति की उपासना अनेक रूपों में होती है। किसी भी यज्ञ, मांगलिक कार्य या संस्कार में श्री गणेश जी के साथ मण्डप के अग्निकोण में षोडश मातृकाओं का नियमित पूजन होता है। यथा—

---

* इसमें और भी मत-मतान्तर हैं जैसा कि 'तंत्रशास्त्र परिचय' शीर्षक में भी एक मत का उल्लेख है।

** शक्ति तत्व दर्शन/४०६ (इसमें भी मतान्तर है, जैसा कि तोडल तंत्र का मत 'तंत्र शास्त्र परिचय' शीर्षक से पहले वर्णन हो चुका है।

गौरी, पद्मा, शची, मेधा, सावित्री, विजया, जया।
देवसेना, स्वधा, स्वाहा मातरः, लोकमातरः ।।
धृति पुष्टि, (तथा) तुष्टिः, (आत्मनः) कुलदेवेते।

इसी प्रकार प्रत्येक कार्य में 'सप्त जीवमातृ' और सप्त द्वारमातृ' का भी नियमित पूजन होता है।

कुमारी, धनदा, नन्दा, विपुला, मंगला चला।
पद्मा, (चैव सुविख्याताः सप्तैता द्वार मातरः) ।।
कल्याणी, मंगला, भद्रा, पुण्या, पुण्यमुखी (तथा)।
जया, (च) विजया (चैवः सप्तैता जीवमातरः) ।।

वास्तुपूजा के अवसर पर (वायुकोण) में तथा अन्य यज्ञादि कर्मों में (नैऋत्यकोण) चौंसठ योगिनियों के रूप में शक्ति की उपासना होती **है।** यह हैं—

दिव्या, महाशब्दा, सिद्धि, माहेश्वरी, प्रताक्षी, दक्षिणा, काली, कालरात्री, निशाकारी, हुंकारी, वैतालिका, ह्रींकारी, भूतडामरा, उर्ध्वकेशी, विरूपाक्षी, शुष्कांगी, नरभोजिनी, फेत्कारी, वीरभद्रा, धूम्राक्षी, कलहप्रिया, राक्षसी, घोर राक्षसी, विशालाक्षी, वीरा, भयंकरी, कुमारी, चण्डी, वाराही, मुण्डधारिणी, भैरवी, वज्रधारिणी, क्रोधिनी, दुर्मुखा, प्रेतवाहिनी, कर्का, दीर्घलम्बोष्ठी, मालिनी, योगिनी, कालग्निमोहिनी, मोहिनी चक्रा, कुण्डलिनी, बालुका कौबेरी, यमदूती, करालिनी, कौशिका, यक्षिणी, भक्षिणी, कौमारी, मंत्रवाहिनी, विशाला, कार्मुकी, व्याघ्री, महाराक्षसी, प्रेतभक्षिणी, धूर्जटी, विकटा, घोररूपा, कपालिका, निष्कला, अमला और सिद्धिप्रदा।

इनके अलावा मतान्तर से चौंसठ योगिनियाँ इस प्रकार हैं—

अक्षोभ्या, रूक्षकर्णी, राक्षसी, क्षपणा, क्षमा, पिंगाक्षी, अक्षया, क्षेमा, इला, नीलालया, लोला, रक्ता, बलाकेशी, लालसा, विमला, दुर्गा (हुताशा), विशालाक्षी, ह्रींकारा, वड़वामुखी, महाक्रूरा, क्रोधना, भयंकरी, महानना, सर्वज्ञा, तरला, तारा, ऋग्वेदा, हयानना, सारा, रुद्रसंग्राही, शम्बरा, तालजंघिका, रक्ताक्षी, सुप्रसिद्धा, विद्युज्जिह्वा, करंकिणी, मेघनादा, प्रचण्डा, उग्रा, कालकर्णी, वरप्रदा, चण्डा, चण्डवती, प्रपंचा, प्रलयान्तिका, शिशुवक्त्रा, पिशाची, पिशिताशवलोलुपा, धमनी, तपनी, रागिनी, विकृतानना, वायुवेगा, बृहत्कुक्षी, विकृता,

विश्वरूपा, यमजिह्वा, जयन्ती, दुर्जया, जयन्तिका, विडाली, रेवती, पूतना और विजयन्तिका।

योगिनी माँ का तामसिक एवं उग्ररूप है। वामाचार में विभिन्न योगिनियों की उपासना की जाती है। प्रत्येक ग्रामीण क्षेत्रों में स्थान-स्थान पर योगिणियों के मन्दिर स्थापित मिलते हैं। योगिणियों के चार, आठ अथवा दस हाथ कहे जाते हैं। ग्रामीण विशेषत: आदिवासी क्षेत्रों में ग्रामीण एवं स्थानीय देवी-देवताओं के रूप में इनकी विशेष मान्यता है।

शाक्त तंत्र-ग्रंथ

वैदिक परम्परा से प्रचलित शाक्त उपासना का मध्यकालीन विकास नेपाल, कामरूप तथा बंगाल से हुआ, विन्टरनीज तथा अन्य पाश्चात्यविद्वानों, ऐतिहासिक साक्ष्यों से इसका विकास बंगाल से माना जाता है। स्वयं तंत्रशास्त्रों के अनुसार नवनाथ रचित तंत्रग्रंथ व कुलशास्त्र पहले बने। इसे तांत्रिक रूप देने का श्रेय गुरु श्री मत्स्येन्द्र नाथ जी को दिया जाता है जिन्होंने कामरूप से यह विद्या ग्रहण कर चन्द्रद्वीप (बंगाल) में आकर 'महाकौल ज्ञान निर्णय' और 'शक्तिसंगम तंत्र' की रचना की। इनके बाद श्री श्रीकण्ठनाथ ने 'श्रीमतोत्तरतंत्र' की रचना की, श्री श्रीकण्ठनाथ का वर्णन स्कंद पुराण के नागरखण्ड २६२ अध्याय में व अन्याय पुराणों में भी मिलता है। श्री आदि शंकराचार्य तो शक्ति के उपासक थे ही, विद्वान 'प्रपंचसारतंत्र' और 'आनन्द लहरी' को श्री शंकराचार्य की ही रचना मानते हैं। दक्षिणभारत के श्री लक्ष्मणदेशिकेन्द्र ने सुप्रसिद्ध "शारदातिलक" और 'ताराप्रदीप" ग्रंथों की रचना की। माँ त्रिपुर सुन्दरी के परम साधक श्री भास्करानन्द नाथ ने पैंतालीस ग्रंथ लिखे, इनमें 'वरिवस्या रहस्य' और त्रिपुर सुन्दरी वाह्य वरिवस्या' मुख्य हैं, यह भी दक्षिण भारतीय थे। शाक्त उपासना सम्बन्धी अन्य तंत्र ग्रंथों में 'कालीतत्व' (श्रीराघवभट्ट-महाराष्ट्र), पदार्थादर्श, तंत्रसार (श्री कृष्णानन्द), शाक्तानंद तरंगिणी और ताराहस्य (श्री ब्रह्मानन्द), श्यामारहस्य, शाक्तक्रम, तत्व चिन्तामणि, तत्वानन्द तरंगिणी, षट्कर्मोल्लास (श्री पूर्णानन्द), तारारहस्य वृत्तिकार (शंकर आगमाचार्य) सर्वोल्लास, त्रिपुरार्चनदीपिका, नवात्मपूजा पद्धति (श्री सर्वानन्द) प्रसिद्ध हैं।

शाक्तदर्शन

संक्षेप में शाक्त दर्शन के अनुसार सृष्टि के प्रारंभ में आदिशक्ति त्रिपुरा से शब्द तथा वस्तुओं की उत्पत्ति हुई। परम तत्व शिव है। आदि शक्ति द्वारा

स्फूर्तिरूप धारण करने से शिव ने तेजस्व रूप से प्रवेश किया, जिससे बिन्दु का प्रादुर्भाव हुआ। शिव में शक्ति के प्रवेश से नाद उत्पन्न हुआ। इन 'नाद' और 'बिन्दु' के संयोग से 'अर्धनारीश्वर' का रूप बना। यही कामतत्व है। पुलिंग श्वेत स्त्रीलिंग लाल है, इनके संयोग से कला की उत्पत्ति हुई। काम एवं कला तथा नाद एवं बिन्दु के संयोग से ही सृष्टि का निर्माण हुआ। मूलतत्व अनन्त व अव्यक्त है। सृष्टि के विकास में शिवतत्व आगम है और शक्ति शिव की प्रकृति रूपा है।

दशमहाविद्याओं की उपासना सम्बन्धी विस्तृत साहित्य, प्रत्येक का पंचांग (पटल पद्धति, कवच, नामसहस्र और स्तोत्र) शारदा तिलक में संग्रहीत हैं।

दशमहाविद्या और उनके सिद्धमंत्र

तांत्रिक उपासना में देवी के विभिन्न नाम व रूप उपलब्ध होते हैं दश महाविद्या के अलावा भी अनेक नाम व रूपों में माँ की उपासना होती है। उनमें से प्रमुख नाम रूप निम्न हैं :—

कमला / महालक्ष्मी

इस महान सृष्टि की संचालनकर्त्ता जो महाशक्ति है उसी का एक रूप लक्ष्मी है जो एक रूपा होते भी व्यावहारिक दृष्टि से महालक्ष्मी, महाकाली और महासरस्वती इन रूपों में विभक्त है :—

'ऐकेव शक्ति : परमेश्वरस्य,
भिन्ना त्रिधा साव्यवहारकाले'

गणित सांख्यिकी अर्थात् स्थिर पदार्थ विद्या में एक सिद्धान्त है 'इक्युलित्रियम्' जिसमें तीन शक्तियाँ एक केन्द्र पर आधारित होती हैं जो 'ट्रैंगिल आफ फोर्सेज' अर्थात् 'शक्ति त्रिभुज' नाम से प्रसिद्ध है। इस सृष्टि के निर्माण और नियंत्रण में भी इन्हीं तीन शक्तियों महाकाली (बुद्धिबल), महालक्ष्मी (धन बल) और महासरस्वती (जन बल) ही कारण हैं। इन तीनों में भी धन बल का महत्व सर्वोपरि है— सर्वेगुणा कांचन माश्रयन्ति'।

महालक्ष्मी महिमा से वेद पुराण, उपनिषद भरे पड़े हैं, लक्ष्मी की कल्पना और उपासना अनादि काल से प्रचलित है। यजुर्वेद (३१-२२) में लक्ष्मी को परमात्मा की पत्नी कहा गया है।

लक्ष्मी के व्यावहारिक रूप का वर्णन करते हुए यजुर्वेद कहता है कि संसार का समस्त वैभव लक्ष्मी का ही रूप है। ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में बिस्तार से व्याख्या करते हुए कहा गया है कि "गाय, हाथी, घोड़े आदि पशु सोना, चांदी, कीर्ति, सम्पन्नता, भरण पोषण के समस्त पदार्थ, अन्न, दास-दासी, तेज, कान्ति, दीर्घायु, शक्ति, पुत्र-पौत्र आदि वैभव एवं सुख-समृद्धि ही लक्ष्मी का स्वरूप है।"

महालक्ष्मी उपासना हेतु नियत तिथियाँ

वैसे तो लक्ष्मी की उपासना कभी भी की जा सकती है, लेकिन कुछ तिथियाँ विशेष रूप से उत्तम, सफलतादायक कही गयी हैं—

[अ] कार्तिक कृष्ण अमावास्या अर्थात् दीपावली पर।

[आ] आश्विन शुक्ल पौर्णमासी अर्थात् शरद पौणिमा।

[इ] भाद्रपद शुक्ल अष्टमी से आश्विन कृष्ण अष्टमी तक निरन्तर सोलह दिनों तक।

[ई] श्रावण शुक्ल पक्ष के अन्तिम शुक्रवार को। दक्षिण भारत में लक्ष्मी उपासना का यही मुख्य पर्व है।

[उ] चैत्र शुक्लपक्ष पंचमी।

उपासना विधि

महालक्ष्मी का पूजन श्रीयंत्र में, किसी मूर्ति में, किसी पत्रचित्र या भित्ति चित्र में, कलश में, अग्नि में किया जा सकता है लेकिन पूजन से पूर्व अभ्युक्षण, अग्न्युत्तारण प्रतिष्ठा, प्राणप्रतिष्ठा करना अत्यावश्यक है। पूजन या पुरश्चरण हेतु भवन की ईशान दिशा श्रेष्ठ है। महालक्ष्मी षोडशकला युक्त हैं अतः इनकी उपासना में १६ प्रकार के पुष्प, १६ दीपक, १६ फल १६ प्रकार का नैवेद्य विशेषतः १६ मालपुए, १६ सुपारी आदि प्रयोग होते हैं। उपासक को स्वयं भी १६ मालपुए भोजन करने का आदेश है। दूर्वा के १६ अँकुर महालक्ष्मी को समर्पित किये जाते हैं। लक्ष्मी के प्रसाद रूप में सोलह तागे व गांठों वाला डोर पहना जाता है। अँग्रेजी शासनकाल में रुपये की १६ कला (एकन्नी) होती थीं, रुपये के सोलह कलाओं का प्रचलन किस आधार पर हुआ? यह शोध का विषय है। कच्चा नारियल, बेल, कमल के पुष्प लक्ष्मी को विशेष प्रिय हैं। पुरश्चरण एवं जप हेतु कमलगट्टे की माला उत्तम है।

महालक्ष्मी का स्वरूप तथा परिवार

अज्ञानतावश लोग उल्लू को लक्ष्मी का वाहन कहते हैं लेकिन वैदिक वाङ्मय या संस्कृत साहित्य में ऐसा कहीं भी उल्लेख नहीं मिलता। उन्हें कमलासना (कमल में स्थित, कमल का आसन), राजसिंहासनस्था (राजसिंहासन पर विराजमान) अश्वारूढ़ा, अश्वपूर्वा (घोड़े का वाहन या घोड़े के रथ पर विराजमान) कहा गया है। मार्कण्डेय आदि कतिपय पुराणों, तंत्रशास्त्रों में सिंह

वाहिनी भी माना गया है। वैदिक साहित्य में उनके स्वरूप की कल्पना (ध्यान) इस प्रकार है (उपासक को इसी स्वरूप का ध्यान करते हुए उपासना करनी चाहिए।

माँ लक्ष्मी एक अनिंद्य सुन्दरी गौरवर्ण हैं। कमल का पुष्प उनका आसन है, उनकी आँखें कमल पुष्प के समान बड़ी एवं मनोहर हैं। मुख भी कमल के समान कांतिमय है, स्वर्णाभूषणों से देदीप्यमान शरीर की कांति है, कमल पुष्पों की माला धारण की है और करोड़ों सूर्यों के समान दिप्तिमान स्वरूप है। चार हाथों में क्रमशः वरदान (अभयमुद्रा), अँकुश, पाश और कमल पुष्प धारण किये हैं।

(पुराणों व तंत्र शास्त्रों में और भी अनेक प्रकार के रूपों का वर्णन मिलता है) पुराणों में लक्ष्मी के तीन नेत्र भी कहे गये हैं। अठारह भुजा वाली लक्ष्मी का भी वर्णन है। अमृत कलश हाथ में लिये रूप का भी उल्लेख है।

कुबेर कीर्ति इन्द्र और चिन्तामणि यह चार लक्ष्मी जी के अंगरक्षक हैं, अणिमादि अष्टसिद्धियाँ सहचरी हैं। चन्द्रमा सहोदर है। महर्षि कर्दम, आनन्द और चिक्लीत यह तीन पुत्र हैं। अतः महालक्ष्मी की उपासना करते समय उनके इन पारिवारिकजनों, सहचरों का भी पूजन आवश्यक है।

लक्ष्मी जी के सिद्ध मंत्र

(१) सर्व सिद्ध लक्ष्मी मंत्र :—

ॐ ऐं क्लीं सौं ऐं ह्रीं श्रीं ॐ नमोभगवति मातंगीश्वरि सर्वजन मनोहारिणि सर्वराज वशंकरि सर्वमुख रंजनि सर्व स्त्रीपुरुषवशंकरि सर्वदुष्ट मृगवशंकरि सर्व लोकवशंकरि ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं ॐ"

इस मंत्र के पुरश्चरण से मनुष्य को धन की प्राप्ति व सर्वत्र सम्मान, सफलता प्राप्त होती है।

(२) धनदा लक्ष्मी मंत्र :—

निम्न मंत्र के पुरश्चरण से निश्चित रूप से धन की प्राप्ति होती है।

"ॐ नमो धनदायै स्वाहा"

(३) महालक्ष्मी मंत्र :—

"ॐ श्रीं ह्रीं ऐं महालक्ष्म्यै कमल धारिन्यै सिंहवाहिन्यै स्वाहा"

इस मंत्र के पुरश्चरण से शत्रुपराजय, आत्मजय तथा धन की प्राप्ति होती है।

(४) ज्येष्ठालक्ष्मी मंत्र :—

"ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ज्येष्ठलक्ष्मीं स्वयंभुवे ह्रीं ज्येष्ठायै नमः"

इस मंत्र के पुरश्चरण से विशेष सम्पन्नता प्राप्त होती है।

(५) लक्ष्मीगायत्री :—

"ॐ महालक्ष्मी च विद्महे विष्णुपत्नी च धीमहि।
"तन्नो लक्ष्मी प्रचोदयात्।"

लक्ष्मी गायत्री मंत्र भी सम्पन्नता दायक है, व्यापार में विशेष उन्नतिदायक है। कुछ विद्वान लक्ष्मी गायत्री इस प्रकार से मानते हैं—

"ॐ महालक्ष्म्यै च विद्महे महाश्रियै च धीमहि। तन्नो श्रीः प्रचोदयात्।"

(६) एक अन्य चमत्कारी सिद्ध मंत्र :—

"ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नमः"

इस मंत्र का पुरश्चरण आर्थिक कष्ट का निवारण पूर्वक सम्पन्नता दायक है।

(७) ऋग्वेद में वर्णित श्रीसूक्त का नित्यप्रति नियमित पाठ करने अथवा हवन करने से मनुष्य को जीवन में आर्थिक कष्ट नहीं होता और उत्तरोत्तर समृद्धि प्राप्त होती है।

(८) श्रीसूक्त के साथ 'व्यापारवृद्धिमंत्र' श्रीलक्ष्मी यंत्र के साथ में व्यापारिक प्रतिष्ठान के अन्दर तथा प्रवेश द्वार पर (ताकि सभी आगन्तुकों की उस पर दृष्टि पड़े) स्थापित करने से व्यवसाय में अप्रत्याशित एवं असाधारण उन्नति होती है।

(९) श्री महालक्ष्मी का एक अन्य सिद्ध तांत्रिक मंत्र :—

"ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौं ॐ ह्रीं क ए ई ल ह्रीं ह स क ह ल ह्रीं सकल ह्रीं सौं ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ"

इस मंत्र का विधिवत् पुरश्चरण करने से अनायास और अबाध धन की प्राप्ति होती है।

(१०) सुप्रसिद्ध तंत्र ग्रंथ 'रुद्रयामल' में महालक्ष्मी का मंत्र इस प्रकार वर्णित है :—

हरिण्याक्षीपरा ह्यक्षं लक्ष्मीबीजत्रयंत्विदम् ।
विपरीततया प्रोक्तं सत्वरं फल दायकं ।
क्षमाशंकापिनीरं च तर्दते द्विज सत्तम ।।

इस सूत्र के अनुसार महालक्ष्मी का निम्नमंत्र सिद्ध होता है, जो प्रत्यक्ष फल दायक है

"ॐ ह्रीं श्रीं लक्ष्मि महालक्ष्मि सर्वकामप्रदे सर्व सौभाग्यदायिनि अभिमतं प्रयच्छ सर्वे सर्वगते सुरूपे सर्वदुर्जय विमोचिनि ह्रीं सः स्वाहा"

इसके अलावा विभिन्न तंत्रग्रंथों में लक्ष्मी के अनेक मंत्र प्राप्त होते हैं और कामना के अनुसार बीजमंत्रों के आधार पर नये मंत्रों का भी सृजन किया जा सकता है।

वर्तमान अर्थप्रधान युग में महालक्ष्मी की उपासना अत्यन्त उपयोगी है, क्योंकि भिन्न-भिन्न देवताओं, देवियों की उपासना पृथक-पृथक कामना से की जाती है। धन की प्राप्ति, धन की स्थिरता और समृद्धि हेतु लक्ष्मी की उपासना ही मुख्य है, 'लक्ष्मी लक्ष्मी ददाति च' माँ लक्ष्मी (धन) देती है।

तांत्रिक उपासना में महालक्ष्मी की उपासना 'कमला' नाम से होती है। सुख-समृद्धि एवं वैभव से परिपूर्ण करना ही इसका कार्य है। माता 'कमला' का ध्यान इस प्रकार है—

कान्त्या कांचन सन्निभा हिमगिरिप्रख्यैः चतुर्भिगजैः ।
हस्तोप्रस्थिहिरण्मयामृतघटैरासिच्यमाना श्रियम् ।।
बिभ्राणा वरमब्जयुग्ममभयं हस्तैः किरीटोज्वलां ।
क्षौमाबद्ध नितम्बबिम्ब ललितां वन्देऽरविन्दस्थिताम् ।।

अर्थात् माँ कमला कमलपुष्प के ऊपर विराजमान हैं। चार हाथ हैं, दो हाथों में कमलपुष्प धारण किये हैं, शेष दो हाथों से वरद व अभयमुद्रा प्रदर्शित कर रही हैं। सुनहला वर्ण है। रेशमी साड़ी पहने हैं। चार बड़े हाथी उन्हें अमृत जल से निरन्तर स्नान करा रहे हैं।

काली

देवी काली शक्ति का उग्ररूप है।

काली के भी दक्षिण कालिका भद्रकाली और कालरात्री यह तीन मुख्य रूप हैं।

[१] दक्षिण काली के मंत्र का वर्णन श्यामारहस्य' में इस प्रकार है—

कुंतीत्रयं तारयुग्मं क्षामयुग्मं ततोभिधाम् ।
दक्षिणाकालिकेत्येवमंते कालीत्रयं पुनः ।।
कूर्चयुग्मं परायुग्मं पयश्चैव सुरेश्वरि ।
दक्षिणा कालिकायाश्च हनुर्द्वाविंशकार्णकः ।।

उपरोक्तानुसार बाइस अक्षरों का मंत्र इस प्रकार सिद्ध होता है—

"क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिणकालिके
क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा"

[२] कालरात्री देवी का मंत्रोद्धार 'कालरात्रीकल्प' में इस प्रकार उपलब्ध है।

प्रणवो वासना माया मन्मथः कमला तथा ।
बीजं पंचशिरो ज्ञेयं ततः पल्लवमुद्धरेत् ।।
ततोमध्ये ऽभिधां त्यक्त्वाह्यन्ते सर्ववशंकुरु ।
नीरं देहि युगं चैव मध्ये त्यक्त्वाभिधां ततः ।।
गणैश्वर्यै तथा चान्ते विश्वं च समुदाहृतं ।।

इसके अनुसार मंत्र इस प्रकार सिद्ध होता है—

"ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं कालेश्वरी सर्वजन मनोहारिणि सर्वमुखस्तंभनि सर्वराजवशंकरि सर्वदुष्ट निर्दलिनि सर्वस्त्रीपुरुषाकर्षिणि बंदीश्रृंखला-स्त्रोटय त्रोटय सर्वशत्रून्भंजय भंजय द्वेष्यान्निर्दलय निर्दलय सर्वान्स्तंभय स्तंभय मोहनास्त्रेणद्वेषिणमुच्चाटयउच्चाटय सर्ववशं कुरु स्वाहा देहि देहि सर्वकालरात्रि कामिनिगणैश्वर्यै नमः"

देवी कालरात्री के उपरोक्त मंत्रका अनुष्ठान न्यायालय आदि में विजय, शत्रुपराजय, वशीकरण, किसी स्त्री या पुरुष का आकर्षण, कारागार से बंदी का मोचन आदि कार्यों में सफलता दायक है।

[३] महाकाली का बीज मंत्र—

दुर्गा सप्तशती के अनुसार काली का बीज मंत्र "ऐं" है। इस बीज मंत्र के अनुष्ठान से भी काली की सिद्धि होती है।

'भद्रकाली' को देवी का सात्विक रूप माना गया है, वैष्णव सम्प्रदायों में प्रधानतः 'भद्रकाली' के रूप में ही देवी काली की उपासना होती है। इन्हें कुछ साधक 'तारा' का रूप मानते हैं।

महाकाली का ध्यान [स्वरूप] इस प्रकार है—

शवारूढ़ा महाभीमां घोरद्रंष्ट्राहसन्मुखीं ।
चतुर्भुजां खड्गमुंडवराभय करां शिवाम् ।।
मुण्डमाला धरां देवीं ललज्जिह्वादिगम्बराम् ।
एवं संचिन्तयेत् कालीं श्मशानालय वासिनम् ।।

अर्थात् काली जी कृष्णवर्ण की भयानक रूप वाली हैं, शव के ऊपर विराजमान (खड़ी) हैं बड़े बड़े दांत हैं हँस रही हैं। चार हाथ हैं एक हाथ में तलवार व एक हाथ में मुण्ड है, एक हाथ से वरदान दे रही है तथा एक हाथ से अभय दान दे रही हैं, वस्त्र विहीन हैं, जीभ लपलपा रही है, श्मशान भूमि में निवास है।

महाकाली के दशमुख और भुजाओं वाले रूप की भी एक कल्पना है—

खड्गं चक्र गदेषु चाप परिघाञ्छूलं भुशण्डींशिरः ।
शंखं सं दधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वांगभूषावृताम् ।।
नीलाश्मद्युतिमास्यपाद दशकां सेवेमहाकालिकाम् ।
यामस्तो त्स्वपितरो कमलजो हन्तुंमधुं कैटभं ।।

इस रूप में माँ काली अपने हाथों में तलवार, चक्र, गदा, बाण, चाप, परिघ, शूल, भुशण्डी, शंख और मुण्ड धारण किये हैं, नीले पत्थर के समान कृष्णवर्ण द्युति है और मधु तथा कैटभ नामक दैत्य के संहार को उद्यत है।

ऐसे ही दशहस्ता, दशमुखा, तीस आखों वाली काली का भी वर्णन मिलता है—

भीमांभीमोग्रद्रष्ट्रांज्जनगिरिविलसत्तुल्यकान्ति दशास्यां ।
त्रिशल्लोलाक्षिमालां दशलुलितभुजां पंक्तिपादांस्तथैव ।।
शूलं वाणंगदां वै धनुरथदधतीं शँख चक्रे भुशण्डीं ।
वन्दे कालीं कराग्रैः परिघमसियुतं तामसीं शीर्षकं च ।।

[४] श्री रुद्रयामल तंत्र में 'कालीकवच' के अन्तर्गत देवी काली का निम्न मंत्र वर्णित है। इसका अनुष्ठान मुख्यतः आत्मजय, शत्रुपर जय व शत्रुओं के विनाश हेतु होता है—

"ह्रीं ह्रीं कालिके घोरद्रष्ट्रे रुधिर प्रिये रुधिरपूर्ण वक्त्रे रुधिरावृतस्तनि मम शत्रून् खादय खादय, हिंसय हिंसय, मारय मारय, भिंदि भिंदि छिंधि छिंधि उच्चाटयउच्चाटय द्रावय द्रावय शोषय शोषय स्वाहा ह्रीं ह्रीं कालिकायै मदीय शत्रून्समर्पयामि स्वाहा ॐ जय जय किरि किरि किटि किटि कुट कुट कट्ट कट्ट मर्दय मर्दय मोहय,मोहय हर हर मम रिपून्ध्वंसयध्वंसय भक्षय भक्षय त्रोटय त्रोटय यातुधानि चामुण्डे सर्वजनान् राज्ञो राजपुरुषां योषाः रिपून् ममवश्यान् कुरु कुरु तनु तनु धान्यंधनमश्वान् गजान् रत्नानि दिव्यकामिनीः पुत्र पौत्रान् राजश्रियं देहि देहि यक्ष यक्ष क्षां क्षींक्षूं क्षैं क्षौं क्षः स्वाहा"

इसके अलावा विभिन्न तंत्र ग्रंथों में काली के अनेक मंत्र हैं तथा नवीन मंत्रों की रचना कर उन्हें सिद्ध किया जा सकता है।

त्रिपुरा सुन्दरी

दस महाविद्याओं मे त्रिपुरासुन्दरी (षोडशी) का प्रमुख स्थान है। त्रिपुरासुन्दरी का जपनीय मूलमंत्र षोडशाक्षर (१६ अक्षरों का) गोपनीय है। जिसका वर्णन डामरतंत्र, रुद्रयामल तंत्र और बामकेश्वर तंत्र आदि में गूढ़ रूप से वर्णित प्राप्त होता है। यथा—

क्षीरोद संभवाभूतिः कामं वाग्भव मेवच ।
शक्तिः प्रणव लज्जेपि लक्ष्मीशक्त्यादिकं ततः ।।
विपरीततयाप्रोक्ता विद्याश्रीः षोडशाक्षरी ।
त्रिकूटा सकलाभद्रे विज्ञेयं षोडशाक्षरी ।।
—डामरतंत्र ।।

हिरण्याक्षी तथा माया काम चैवाथ वासना ।
शरद्व्यक्षं तथा क्षामा लक्ष्मी शक्त्यादिकं ततः ।
विपरीत तथा प्रोक्ता विद्या श्रीः षोडशाक्षरी ।।
—रुद्रयामल ।

लक्ष्मी परा मदनवाग्भव शक्तियुक्ता,
तारं च भूति कमला कथितापि विद्या ।
शक्त्यादिकं तु विपरीत तथा च प्रोक्तं,
श्री षोडशाक्षरविधिः शुभमस्तुपूर्णः ।।
—वामकेश्वर तंत्र ।

वाग्भवकूट, कामराजकूट और शक्तिकूट इन्हें एक-एक अक्षर माना जायगा, इनमें शेष तेरह अक्षरों को संयुक्त करने से षोडशाक्षर का पूर्णमंत्र बनता है ।

क ए ई ल ह्रीं = वाग्भवकूट
ह स क ल ह्रीं = कामराजकूट
स क ल ह्रीं = शक्तिकूट

इन तीन कूटों को संयुक्त करने से षोडशाक्षर मंत्र इस प्रकार सिद्ध होता है -

**"कएईल ह्रीं, हसकलह्रीं, सकलह्रीं,
श्रीं ह्रीं क्लीं ऐंसौः ओंह्रीं श्रीं सौः
ऐं क्लीं ह्रींश्रीं"**

शाक्त उपासना में त्रिपुरा सुन्दरी या षोडशी की ऊपासना दक्षिण मार्ग तथा वाममार्ग (दोनों) में भी प्रचलित है । देवी षोडशी की उपासना अन्य कामनाओं के साथ स्त्री प्राप्ति हेतु विशेष रूप से की जाती है ।

मां त्रिपुरा कामकला की देवी हैं । कामकला के स्पन्दन से तीमों लोकों में कामकला द्वारा समस्तभाव और सृष्टि की सृजन करने वाली परम सुन्दरी हैं ।

इन्हें 'राजराजेश्वरी' भी कहा जाता है ।

इनका ध्यान इस प्रकार है—

हृत्पुण्डरीक मध्यस्थां प्रातः सूर्यसमप्रभां ।
पाशांकुशधरां सौम्यां वरदाभय हस्तकाम ।।
त्रिनेत्रांरक्त बसनां भक्तं कामदुधां भजे ।।

अर्थात् हृदय रूपी कमल (भगवान शिव के हृदयरूपी या नाभिरूपी कमल) के मध्य विराजमान और प्रातःकालीन सूर्य के समान प्रभा वाली हैं। चार हाथ हैं, दोनों में क्रमशः पाश तथा अंकुश धारण किये हैं। दो हाथ अभय तथा वरदान मुद्रा में हैं। तीन आँखें हैं। रक्तवस्त्र धारण किये हैं। परम सुन्दरी हैं।

कुछ विद्वान इनके हाथों में तीर, धनुष माला और शूल धारी रूप में भी उपासना करते हैं।

एक कथानक के अनुसार काली रूप धारण करने के उपरान्त देवी जब शिव के पास मौजूद नहीं थी उस समय देवर्षि नारद भगवान शिव के पास गये और भगवती की गैर मौजूदगी की बात पूछी। शिवजी ने मजाकिये स्वर में कहा कि वे मुझे परित्याग कर कहीं अन्तर्ध्यान हो गई है। नारद जी ने ढूंढ़ते हुए भगवती के पास पहुँच कर शिव के द्वारा कही गई बात कहीं। देवी कुपित होकर एक षोड़शी युवती का रूप धारण कर भगवान शिव के पास पहुँची। वहाँ पहुँच कर शिव के हृदय पटल पर एक अन्य नारी की छाया देखकर वे क्रोधित हो गयी और शिव को विश्वासघाती कहा। इस पर भगवान शिव ने कहा —हे कल्याणी तुम ध्यान से देखो मेरे हृदय पटल पर अन्य किसी स्त्री की नहीं, तुम्हारी ही छाया है। तुम विश्व में इसी षोडशी रूप में पूजित होगी।

परस्पर स्त्री-पुरुष के प्रति आकर्षण, वशीकरण या विद्वेषण के निमित्त भी त्रिपुरा सुन्दरी के मंत्रों का प्रयोग होता है।

इनका एक संक्षिप्त मंत्र भी बतलाया गया है—

"ऐं क्लीं सः"

इनका एक ध्यान यह भी है —

वालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनां ।
पाशाँकुशवराभीतीर्धारयन्तीं शिवां भजे ।।

सरस्वती

वाग्देवी अर्थात् सरस्वती की गणना दस महाविद्याओं में होती है और वाग्देवी की उपासना विद्या के निमित्त होता है, जैसा कि कहा गया है—

'विद्यां ददाति वाग्देवी प्रत्येकं जन्म निश्चला।'

(१) सरस्वती मंत्र

देवी सरस्वती विद्या तथा बुद्धि की अधिष्ठात्री देवी है। बुद्धि की प्रखरता परीक्षा में सफलता, शिक्षा में प्रगति, विवेक बुद्धि और विद्वता हेतु सरस्वती की उपासना मुख्य है। भारतीय वाङ्मय, तंत्रशास्त्र में देवी सरस्वती के बहुत से मंत्र प्राप्त होते हैं जो विभिन्न ऋषि मुनियों व साधकों द्वारा अनुभूत हैं। जो विभिन्न मंत्र सरस्वती के प्राप्त होते हैं उनमें से निम्न मंत्र को सर्वश्रेष्ठ व सिद्धमंत्र कहा जाता है।

तारं लज्जा वाग्भवं च परा प्रणव एव च।
वीज पञ्चशिरो ज्ञेयमते ज्ञेयं नमः इति॥

—शारदा पटल

अर्थात् —

"ओं ह्रीं ऐं ह्रीं ओं वाग्देव्यैनमः"

यह मंत्र सिद्ध होता है।

(२) कुलवागीश्वरी मन्त्र

सरस्वती की भांति ही कुलवागीश्वरी देवी भी विद्या तथा बुद्धि की अधिष्ठात्री देवी है। इस देवी के मंत्र का उद्धार मुण्डमाला तंत्र' में उपलब्ध होता है—

प्रणवं मदनं चैव स्कंदं नारायण प्रियम्।
लटं तथेच्छावीजं च ततः पल्लव मुद्धरेत्॥
झषहस्ते ततः पश्चात्कुल वागीश्वरी ततः।
अन्ते च वासना वीजं पद्मंकांक्षापि नीरजं॥
नर्तकी वीजमंभोजं पयश्चैव सुरेश्वरी।
कुल वागीश्वरी देव्याश्चतुर्विशाक्षरो मनुः॥

उपरोक्त सूत्र के अनुसार चौबीस अक्षरों का निम्नमंत्र बनता है:—

"ओं क्लीं ह्रीं श्रीं हूं झषहस्ते कुल वागीश्वरि ऐं ठः खं ठः खीं ठः स्वाहा"

विधि तथा श्रद्धा विश्वासपूर्वक उपरोक्त मंत्रों के जप व पुरश्चरण से बुद्धि का विकास, सामान्य तथा प्रतियोगी परीक्षाओं में भी सफलता निश्चित है।

(३) नील सरस्वती मंत्र

आज के युग में मानव जिन समस्याओं से ग्रस्त है, उसमें शिक्षा प्रमुख है। प्रत्येक व्यक्ति की इतनी सामर्थ्य नहीं है कि वह वर्तमान समय की व्ययसाध्य विद्यालयों की शिक्षा के अलावा अपने बच्चों के हेतु प्रत्येक विषय के अतिरिक्त प्रशिक्षण (ट्यूशन) करवा सके। विद्यालयों की स्थिति यह है कि अध्यापक या तो विद्यालय आते नहीं और आते भी हैं तो पढ़ाते नहीं। यदि कोई सच्चरित्र शिक्षा देना भी चाहे तो कुछ छात्र पढ़ना भी नहीं चाहते तथा अन्य छात्रों की शिक्षा में भी बाधा डालते हैं। कुछ भी हो परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने पर पश्चात्ताप सभी को होता है।

बुद्धि-विद्या की देवी सरस्वती है, शिक्षा में मन लगे, आपकी बुद्धि प्रखर हो, परीक्षा में सफलता मिले, इस उद्देश्य से सरस्वती मंत्र का जप या अनुष्टान हितकारी है।

विनियोग (जल हाथ में लेकर निम्न अँश पढ़कर छोड़ दें)।

अस्य नीलसरस्वती महामंत्रस्य देवाचार्य ऋषि:, अनुष्टुप छन्द:, श्री नील सरस्वती देवता, अपकृत्यादि विनाशने विद्याबुद्धिवर्चस्व सिद्धर्थे जपे विनियोग:।

ध्यान—

घंटा शिर: शूल मसि कराग्रे, संविभ्रतिं चन्द्रकलावतंसाम्।
प्रमथनतीं पादतले पशुं तां, भजेमुदानीलसरस्वतीशाम्॥

(देवी के निम्नस्वरूप का मन में ध्यान करें— चन्द्रमा के समान कान्ति-वाली माँ सरस्वती के चार हाथ हैं जिसमें घण्टा, मुण्ड, शूल तथा खड्ग धारण किये हैं, पैरों से अज्ञान रूपी पशु का मँथन कर रही हैं, ऐसी देवी नील सरस्वती को मेरा प्रणाम है)।

कुछ मंत्रशास्त्री 'नीलसरस्वती' को माँ 'तारा' का रूप मानते हैं।

तदनन्तर निम्न मंत्र का जप करें। एक, दो, तीन या इससे अधिक माला, जितना संभव हो नित्य प्रति जप कर सकते हैं। एक माला में १०८ दाने होते हैं, लेकिन एक माला में गिनती १०० की होगी। नित्य ही बराबर संख्या में जप हो, यह आवश्यक नहीं है लेकिन जप प्रारम्भ करने के बाद बीच में किसी दिन क्रम न टूटे। इस प्रकार सवालाख जप पूर्ण होने पर हवन, मार्जन, तर्पण करें।

ऐं श्रीं ह्रीं क्लीं क्लीं
ऐं ब्लूं त्रीं नील सरस्वति,
बुद्धि वैकल्यदोषं हर हर,
विद्या बुद्धि वर्चस्वं मे देहि देहि,
अपकृत्यादि भयं नाशय नाशय,
त्रीं ब्लूं ऐं क्लीं क्लीं
ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं ऐं ।।

जप के हेतु अशोक के फलों की माला बनायी जाय तो उत्तम है ।

जप स्वयं कर सकते हैं. उच्चारण शुद्ध हो, ध्यान दें ।

नील सरस्वती का एक छोटा मंत्र भी है —

(४) "ह्रीं स्त्रीं हूं"

(५) सरस्वती कवच

बुद्धि की प्रखरता तथा विद्या में उन्नति परीक्षा आदि में सफलता हेतु सरस्वती कवच, एक प्रभावकारी प्रयोग है ।

सफलता के हेतु इस कवच के पाँच लाख पाठ वा जप का विधान है, जो नियमित रूप से नित्यप्रति एक निर्धारित संख्या में करके पूरा किया जा सकता है । पाँच लाख की संख्या पूर्ण होने पर साधक असाधारण कवि, ग्रंथकार यशस्वी एवं अजेय विद्वान हो सकता है ।

सामान्यत: वस्त्रादि से गुरु का सत्कार कर मंत्र ग्रहण करने के उपरान्त नित्यप्रति तीन पाठ करना लाभकारी है । अथवा शुभ मुहूर्त में इस कवच के पाठ को यंत्रिका (तावीज) में स्थापित करवा कर प्रतिष्ठा करके गले या भुजा में धारण श्रेयस्कर है ।

सर्वप्रथम विनियोग (जल हाथ में लेकर छोड़ना ॐ अस्य सरस्वती कवचस्य प्रजापति ऋषि:, वृहस्पतिश्छन्द: नारायणोदेवता, सर्वतत्वपरिज्ञानसर्वार्थ— साधन तथा कविता सिद्धये च पाठे जपे वा विनियोग: ।

ॐ ह्रीं सरस्वत्यै स्वाहा शिरो मे पातु सर्वत: ।
श्रींवाग्देवतायै स्वाहा भालं मे सर्वदावतु ।।
ॐ सरस्वत्यै स्वाहेति श्रोत्रं पातु निरन्तरम् ।
ॐ श्रीं ह्रीं भारत्यै स्वाहा नेत्रयुग्मं सदावतु ।।

ॐ ह्रीं वाग्वादिन्यै स्वाहा नासां मे सर्वतोऽवतु ।
ह्रीं विद्याधिष्ठातृदेव्यै स्वाहा ओष्ठं सदावतु ।।
ॐ श्रीं ह्रीं ब्राह्म्यै स्वाहेति दन्तपंक्ति सदावतु ।
ॐ श्रीं ह्रीं पातु मे ग्रीवां स्कन्धं श्री सदावतु ।।
श्रीविद्याधिष्ठातृ देव्यै स्वाहा वक्षः सदावतु ।
ॐ ह्रींविद्यास्वरूपायै स्वाहा मे पातु नाभिकाम् ।।
ॐ ह्रीं ह्रींवाण्यै स्वाहेति मम पृष्ठं सदावतु ।
ॐ सर्ववर्णात्मिकायै पदयुग्मं सदावतु ।।
ॐ रागाधिष्ठातृदेव्यै सर्वाङ्गं मे सदावतु ।
सर्वकण्ठवासिन्यै स्वाहा प्राच्यां सदावतु ।।
ॐ ह्रीं जिह्वाग्रवासिन्यै स्वाहाऽग्निदिशि रक्षतु ।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं सरस्वत्यैबुधजनन्यै स्वाहा ।।
सततं मन्त्रराजोऽयं दक्षिणे मां सदावतु ।
ॐ ह्रीं श्रींत्रक्षरो मन्त्रो नैऋत्यां मे सदावतु ।।
कविजिह्वाग्र वासिन्यै स्वाहा मां वारुणेऽवतु ।
ॐ सदाम्बिकायै स्वाहा वायव्ये मां सदावतु ।।
ॐ गद्यपद्यवासिन्यै स्वाहा मामुत्तरेऽवतु ।
ॐ सर्वशास्त्र वासिन्यै स्वाहेशान्यां सदावतु ।।
ॐ ह्रीं सर्वपूजितायै स्वाहा चोर्ध्वं सदावतु ।
ॐ ऐं ह्रीं पुस्तकवासिन्यै स्वाहाधो मां सदावतु ।।
ॐ ग्रन्थवीजस्वरूपायैस्वाहा मां सर्बतोऽवतु ।

जिन्हें कवच का पाठ या जप संभव न हो, वे निम्न मन्त्रों में से किसी मंत्र का नित्य प्रति ८, २८, १८, १०८ की संख्या में यथा शक्ति जाप कर सकते हैं।

(६) सरस्वती मंत्र

ऐं ह्रीं श्रीं सरस्वत्यै बुधजनन्यैस्वाहा ।

यह प्रभावशाली मंत्र है, इसे मंत्र राज' कहा गया है (ब्रह्मवैवर्त पुराण, प्रकृतिखण्ड, अध्याय–४)

(७) "ओं ह्रीं श्रीं" यह एक तीन अक्षरों का छोटा मंत्र है।

स्मरणशक्ति व बुद्धि का विकास, कवित्वशक्ति, वाक्‌शक्ति, कल्पनाशक्ति

को जागृत करने के उद्देश्य से विद्यार्थियों, अभिवक्ताओं, कवियों, लेखकों के लिये माँ सरस्वती के निम्न दो मंत्र भी सिद्धमंत्र हैं—

(८) "ॐ सर्व चैतन्यरूपां तामाद्यां विद्यां च धीमहि,
बुद्धि यो नः प्रचोदयात् ।"

—देवीभागवत १/१/१

(९) "सरस्वत्यै विद्महे, ब्रह्मपुत्र्यै धीमहि ।
तन्नो देवी प्रचोदयात् ।।"

(सरस्वती गायत्री)

तारा

माँ तारा की तारा, उग्रतारा, महोग्रतारा, वज्रा, सरस्वती, नीला, चद्रकाली, कामेश्वरी आदि नामों से उपासना होती है। देवी के तीन रूपों (महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती) में तारा को महाकाली का ही स्वरूप माना जाता है।

माँ तारा के मंत्र का उद्धार 'भैरव सर्वस्व' में इस प्रकार है—

तारं व्योषं तथा कांता माया वाग्भव मेवच ।
कूर्चं चैव महेशानि ह्यन्ते फट् ठ द्वयं ।।

इस आधार पर मंत्र का स्वरूप यह बनता है—

"ओं ह्रीं स्त्रीं ह्रीं ऐं हूं उग्रतारे फट् स्वाहा"

माँ तारा का ध्यान इस प्रकार है—

वे दो हाथों वाली हैं, शरीर पर सर्पों का यज्ञोपवीत धारण किये हैं, गोद में बायीं ओर भगवान शिव पुत्र रूप में विराजमान हैं और वे उन्हें स्तनपान करा रही हैं।

माँ तारा की उपासना इच्छानुसार किसी भी कामना से की जा सकती है, लेकिन सन्तान की प्राप्ति, सन्तान की रक्षा, स्वयं आत्मरक्षा एवं दीर्घायु कामना से तारा की उपासना मुख्य है। इसके अलावा 'तारा' की उपासना प्रत्येक प्रकार के क्लेश से मुक्तिदायक है "तारा तारयति क्लेशान्" कहा गया है।

कुछ विद्वान तारा का मंत्र इस प्रकार मानते हैं—

ॐ तारे तु तारे तुरे स्वाहा'

क्लेशों से तारने निवारण करने के अलावा माँ तारा भवसागर से भी तारने वाली हैं। इन्हें 'प्रज्ञापरिमिता' भी कहा गया है। बौद्ध साधना में तारा के रूप को ही अवलोकितेश्वर की शक्ति माना गया है।

माँ तारा के सूक्ष्म रूप में शुक्ला, नीला और चित्रा नाम उपलब्ध होते हैं।

भुवनेश्वरी

माता भुवनेश्वरी के मंत्र का वर्णन 'कुब्जिका सर्वस्व' नामक तंत्रग्रंथ में इस प्रकार है—

प्रणवं च तथा माया कमला मन्मथस्तथा।
अन्ते विश्वं नाम मध्ये प्रोक्तं तुभ्यं महेश्वरि॥
प्रोक्तो ऽयं भुवनेश्वर्या मनुस्तुर्याक्षराभिधः।

इस आधार पर माँ भुवनेश्वरी का मंत्र इस प्रकार सिद्ध होता है—

"ओं ह्रीं श्रीं क्लीं भुवनेश्वर्यै नमः"

माँ भुवनेश्वरी पद्मासन पर विराजित है, चार हाथ हैं, रक्तवर्ण हैं वे विविध अलंकारों से अलंकृत हैं। ब्रह्मा जी को सृष्टि की प्रेरणा देने वाली माँ भुवनेश्वरी ही हैं। तीन शक्तियों (महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती) मध्ये माँ भुवनेश्वरी को महासरस्वती का रूप माना जाता है। माँ भुवनेश्वरी सर्व प्रकार की सिद्धियाँ देने में समर्थ हैं अतः अनेक कामनाओं की पूर्ति हेतु इनकी उपासना एवं मंत्रानुष्ठान किया जाता है। मुख्यतः वैवाहिक तथा संतति सुख की प्राप्ति हेतु माँ भुवनेश्वरी की उपासना फलदायक श्रेष्ठ है। तंत्र विशेषज्ञों का कथन है कि "राज्यं तु भुवनेश्वरी"

अर्थात् भुवनेश्वरी की उपासना

राज्य (राज्य में पद, राजसम्मान, पदवृद्धि) दायक है।

'ताराकर्पूरराजस्तोत्र' के अनुसार एक छोटा मंत्र भी है—

'ह्रीं स्त्रीं हूँ फट्'

शिर में चन्द्रमा विराजित है, बड़े-बड़े उत्तुंग स्तन हैं। एक हाथ में पाश तथा एक हाथ में अंकुशधारण किये हैं, शेष दो हाथों से अभय व वरद मुद्रा प्रदर्शित है—

वालरविद्युतिमिन्दु किरीटां तुंगकुचांनयनत्रययुक्ताम् ।
स्मेरमुखीं वरदाँकुशपाशांभीतिकरांप्रभजे भुवनेशीम् ।।

मातंगी

माँ मातंगी को देवी पार्वती का रूप माना जाता है और त्रिदेवियों में मातंगी की गणना महाकाली के रूप में होती है। देवी मातंगी राक्षस, भूत, प्रेत, पिशाच आदि से तथा प्रत्येक प्रकार के भय से रक्षाकारी है—

"मातंगी राक्षसी सातु भीतिं हरति नित्यशः"

देवी मातंगी के बारे में कहा जाता है कि एक बार जब वे अपने पितृगृह हिमालय में थी और भगवान शिव को उनकी याद आने लगी तो वे एक मनिहार का रूप धारण कर वहाँ पहुँच गये परन्तु माँ पार्वती ने उन्हें पहचान लिया। बाद में एक बार जब शिव जी ध्यान मग्न थे तो उसी ब्याज से पार्वती जी भी एक चाण्डालिन युवती का रूप बनाकर उनके पास पहुँची, यहाँ भी भगवान शिव ने अपने योगबल से उन्हें पहचान लिया और स्वयं भी चाण्डाल का रूप धारण कर लिया। अन्त में प्रसन्न होकर शिव जी ने वरदान दिया कि तुम इसी चाण्डालिन के रूप में "मातंगी" नाम से प्रसिद्ध होगी और जो इस रूप में तुम्हारी उपासना करेगा वह सिद्धि को प्राप्त करेगा।

क्योंकि यह माँ का 'चाण्डालिनी' रूप है, अतः यह उग्र उपासना है। यों तो दक्षिणाचार में भी मातंगी की उपासना होती है परन्तु वाममार्ग में इस उपासना की प्रधानता है।

माँ मातंगी के सिद्धमंत्र का वर्णन 'कुलसिद्धसंतान' नामक तंत्र ग्रंथ में इस प्रकार उल्लेख है—

तोमा काली तथा लक्ष्मीर्वागुराद्वयमेवच ।
चारुकं चय बीजानि ह्यादौ प्रोक्तानि शंभुना ।।
अन्त्ये जिह्वा तथा पद्मं लज्जां नीरज मेवच ।
वासना पंकजं चैत्र वनं प्रोक्तं तु शूलिना ।।

इस सूक्त के अनुसार मंत्र इस प्रकार सिद्ध होता है :

"ओं क्रों श्रीं प्रीं प्रीं छ्रीं उच्छिष्ट चाण्डालिनि
देवि महापिशाचिनि मातंगि देवी क्रीं ठः
ह्रीं ठः ह्रीं ठः स्वाहा"

महाभारत के अनुसार मतंग ऋषि चाण्डाल वर्ण के थे, परन्तु तपस्या से उन्होंने ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लिया था और इसी तपोबल से उन्हें मातंगी नाम की कन्या की प्राप्ति हुई थी। मतंग मुनि की पुत्री होने के कारण इन्हें चाण्डालिनी कहा जाता है।

इन्हें 'उच्छिष्ट चाण्डालिनी' भी कहा जाता है क्योंकि परावाक् का स्थूल रूप, शेष बची हुई अभिव्यक्ति वैखरी द्वारा होती है।

देवी मातंगी का वाणी पर प्रभाव होता है। वाणी के द्वारा लेखन, गायन, मुकदमे आदि में बहस, शास्त्रार्थ आदि में विजय एवं वशीभूत करने के निमित्त मातंगी की उपासना सर्वश्रेष्ठ है।

देवी मातंगी का ध्यान इस प्रकार है—

ध्यायेयं रत्नपीठे शुककलपठितं श्रृण्वतीं श्यामलांगीं।
न्यस्तैकांघ्रि सरोजे शशिशकलधरां वल्लकीं वादयन्तीं॥
कह्लारावद्धमालां नियमित विलसच्चूड़िकां रक्तवस्त्रां।
मातंगी शंखपात्राँ मधुरमधुमदाँचित्रकोद्भासिभालाम्॥

अर्थात् माँ मातंगी सिंहासन पर बैठी है, तोते की मधुर वाणी सुनने में व्यस्त है, साँवलावर्ण है एक पैर कमल पुष्प पर स्थित है शिर में बाल चन्द्रमा विराजमान है वीणावादन कर रही हैं कमल पुष्पों की माला पहने हैं। सुन्दर चोली व रक्त वस्त्र पहने हैं, एक हाथ में शँख लिये हैं, मस्तक पर बिन्दी है, मदमस्त हैं।

कुछ विद्वानों के मतानुसार इनका एक मंत्र इस प्रकार भी है—

"ऐं उच्छिष्ट चाण्डालिनि मातंगी सर्ववशंकरी स्वाहा"

परन्तु यह प्रामाणिक नहीं है।

छिन्नमस्ता मंत्र

तंत्र साधना के लिए विख्यात माँ छिन्नमस्ता का प्राचीन व सिद्ध मन्दिर बिहार प्रान्त के हजारीबाग जिले में, रजप्पा में स्थित है। यह रामगढ़ नामक रेलवे स्टेशन के पास है। यहां कोयले की चट्टानें हैं और भैरवी नदी बहती है।

किम्वदन्तियों के अनुसार भारत भ्रमण के समय जगद्गुरु श्री आदि शंकराचार्य ने भी यहां पूजा की थी। मन्दिर के पूर्वी छोर पर तारा, कमला,

षोडशी, भुवनेश्वरी, भैरवी, मातंगी, धूमावती, और बगलामुखी के आठ मन्दिर और भी हैं। इसके अलावा अन्य देवी-देवताओं के भी मन्दिर हैं। यहां बलिदान (पशु) की परम्परा प्रचलित है।

रति तथा कामदेव लेटे हुए हैं जो क्रीड़ा में रत हैं, इनके ऊपर माँ छिन्नमस्ता नग्न रूप में खड़ी हैं। एक हाथ में कैंची है। शिर में नाग लिपटे हैं, तीन आंखें हैं।

इनका ध्यान इस प्रकार है –

प्रत्यालीढपदां सदैव दधतीं छिन्नं शिरः कर्त्तिकां।
दिग्वस्त्रां स्वकबन्ध शोणित सुधाधारां पिबन्तीं मुदा।
नागाबद्ध शिरोमणिं त्रिनयनां हृद्युत्पलालंकृतां।
रत्यासक्त मनोभवो परि दृढां ध्यायेत् जपासन्निभां॥

प्रतीकात्मक रूप में छिन्नमस्ता का यह कबन्ध रूप ब्रह्म (जीव) को माया से पृथक् करना है। रक्त की तीन धारायें इडा, पिंगला और सुषुम्णा इन तीन नाड़ियों की प्रतीक हैं। इन नाड़ियों पर विजय पाने से ही सिद्धि प्राप्त होती है। इनका बीज मंत्र 'हुं' भी है।

माँ छिन्नमस्ता के मंत्र सम्बन्धी सूक्त 'छिन्ना शिरोमणि' नामक तन्त्र ग्रंथ में इस प्रकार प्राप्त होता है—

त्र्यंम्बकः सकला पद्म चारुकं च सुरेश्वरी।
अन्त उच्छून बीजं च फड् द्वयेन समायुतं॥

तदनुसार मंत्र इस प्रकार बनता है : —

"ओं ह्रीं श्रीं छ्रीं छिन्नमस्तके फट् स्वाहा"

यह भी देवी का एक उग्र तथा तामसी रूप है और त्रिदेवियों में महाकाली का ही रूप माना जाता है। दक्षिणाचार में भी उपासना होती है परन्तु वामाचार में छिन्नमस्ता की उपासना मुख्य है।

जैसा कि नाम से प्रकट है माँ छिन्नमस्ता कबन्ध रूप में (शिर विहीन) पूजित होती हैं। इनका स्वरूप इस प्रकार है—

माँ छिन्नमस्ता स्वयं अपना शिर (मुण्ड) काटकर अपने दूसरे हाथ में लिये हुये हैं। डाकिनी तथा शाकिनी यह दो सहचरी उनके दोनों ओर खड़ी हैं। माँ

मांतगी के शरीर से तीन रक्तधारायें बह रही हैं जो एक स्वयं उनके तथा दो उनकी दोनों सहचरियों के मुख में जा रही है।

इस सम्बन्ध में ऐसा कथानक मिलता है कि माँ एक बार अपनी दोनों सहचरियों के साथ घूम रही थीं अचानक उन्हें जोर की भूख लगी, जब भूख असह्य हो गयी और भोजन नहीं मिला तो माँ ने अपना मस्तक काटकर अपने रक्त से ही अपनी तथा सहचरियों की क्षुधा शान्त की।

माँ छिन्नमस्ता को जहां कुछ लोग दशमहाविद्याओं में एक मानते हैं वहीं कुछ विद्वान उन्हें माँ त्रिपुर सुन्दरी (षोडशी) की सखी मानते हैं। इसी क्रम में माँ तुरी, अन्नपूर्णा, श्यामा, दक्षिणकाली कालरात्री, कुलवागीश्वरी को भी माँ त्रिपुर सुन्दरी की सखियों में गिनते हैं।

तंत्र शास्त्र में देवी के अनेक रूप प्राप्त होते हैं और कामना विशेष के अनुसार इन विभिन्न नामों एवं रूपों की विशिष्ट मंत्रों के द्वारा उपासना तथा साधना की जाती है। कुछ ऐसे नाम व रूप हैं, जिनका प्रचलन सामान्यतः कम है, जैसे शारिका, राज्ञी भेडा, ज्वालामुखी, तुरी श्यामा, अन्नपूर्णा आदि।

शारिका

देवी शारिका का मंत्रोद्धार 'त्रिपुरशिरोमणि' तंत्रग्रंथ में इस प्रकार मिलता है--

तारंमाया श्रिया कूर्चं सिधुरं शून्य मेवच।
कल्याणं शारिका देव्या बीजं सप्ताक्षर स्मृतं ॥
अन्त्ये स्तंभं च विज्ञेयं शारिका मंत्रमुत्तमं।

तदनुसार मंत्र इस प्रकार सिद्ध होता है---

'ओं ह्रीं श्रीं हूं ह्लां आं शं शारिकायै नमः'

राज्ञी

देवी राज्ञी के मंत्र का वर्णन इस प्रकार प्राप्त होता है—

तारं लज्जा श्रियमग्निः कामः शक्ति षडक्षरः।
बीजं च षटशिरो ज्ञेयं ततः पल्लवमुद्धरेत ॥
भगवत्यै तथा राज्ञै ह्यन्ते माया च ठ द्वयम्।
एभिः सह मनुः प्रोक्तोराज्ञः पंचदशाक्षरः ॥

—श्यामातंत्रे

इस सूत्र के अनुसार मंत्र इस प्रकार सिद्ध होता है—

'ओं ह्रीं श्रीं रां क्लीं सौः भगवत्यै राज्ञै ह्रीं स्वाहा'

भेडा

'कुल चूड़ामणि' शीर्षक तंत्र ग्रंथ में देवी भेड़ा के मंत्रोद्धार का वर्णन इस प्रकार उपलब्ध होता है --

प्रणवश्च विभूतिश्च हकारान्ता तथैव च ।
वियच्छत्यग्नि बीजानि संयोज्य वाग्भवंतथा ।।
मदनं च तथा शंकाबीजं सप्ताक्षरं वदेत् ।
ठ द्वयेन समायुक्तः प्रोक्तो विंशाक्षरोमनुः ।।

इस सूत्र के अनुसार २० अक्षरों का देवी भेडा का मंत्र इस प्रकार सिद्ध होता है--

"ओं ह्रीं श्रीं हं स्त्रं ऐं क्लीं सौः भेडा भगवति हंस रूपिणिस्वाहा"

ज्वालामुखी

माँ ज्वालामुखी के मंत्र का सूत्र शारदाटीका' में इस प्रकार वर्णित है—

तारं लज्जा श्रियं चैवमन्ते कूर्चं पुरं पयः ।।
बीजं च अक्षरं देव्या ज्वालामुख्या सुरेश्वरि ।।

मंत्र का स्वरूप इस प्रकार है -

"ओं ह्रीं ज्वालामुखिमम शत्रून्भक्षय भक्षय हूं फट् स्वाहा"

भैरवी (त्रिपुर भैरवी)

देवी भैरवी को चामुण्डा का रूप भी माना जाता है। यह उदय होते सहस्त्रों सूर्यों के समान सुवर्ण वर्णा कान्ति से युक्त रक्तवर्णा व चतुर्भुजा हैं। गले में मुण्डमाला धारण किये हैं। दोनों स्तन रक्त से लिप्त हैं। एक हाथ में पुस्तक तथा एक हाथ में माला धारण किये हैं शेष दो हाथ वरद व अभय मुद्रा में हैं। तीन आँखें हैं, मस्तक में चन्द्रमा विराजित है, पद्मासना हैं। इस प्रकार माँ भैरवी का रूप भयानकता व सुन्दरता का सम्मिश्रण है—

उद्यद्भानु सहस्त्र कान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकां ।
रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वरम् ।।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्र विलसद्वक्त्रारविंद श्रियं ।
देवीं बद्ध हिमांशुरत्न मुकुटां वंदेऽ रविंदस्मिताम् ।।

माँ भैरवी के मंत्र का उल्लेख इस प्रकार मिलता है—

"हस्त्रीं हस्क्लीं हसरयु:"

वर्तमान में भैरवी की उपासना वामाचार में अधिक प्रचलित है। भैरवी के नाम पर भारत में यौनिक दुराचार भी प्रचलित रहे हैं।

धूमावती

माँ धूमावती के सम्बन्ध में कथानक है कि एक बार भगवान शिव ध्यान में बैंठे थे तो पार्वती जी ने उन्हें कहा कि मुझे भूख लगी है। शंकर को ही ग्रास बना लिया लेकिन इसके वाद उनके शरीर से धुआँ निकलना शुरू हुआ इससे भगवान शंकर ने योगवल से पुन. अपना शरीर धारण कर लिया और पार्वती जी से कहा कि आँख खोलकर देखो तो इस सृष्टि में पुरुष रूप मेरे सिवा और कोई नहीं है। क्योंकि अपने पति का भक्षण करने से तुम विधवा रूप हो अतः संसार में इसी विधवा रूप 'धूमावती' के नाम से तुम्हारी उपासना होगी।

इसका ध्यान इस प्रकार है—

विवर्णा चंचला दुष्टा दीर्घा च मलिनाम्बरा।
विमुक्त कुंतला रूक्षा विधवा विरल द्विजा॥
काकध्वज रथा रूढ़ा निलम्बित पयोधरा।
शूर्प हस्तातिरूक्षाक्षां धूलहस्त वरान्विता॥

अर्थात् तेज रहित रुखे एवं मलिन वर्ण की लम्बी मैले वस्त्र पहने, चंचल व दुष्ट स्वभाव, केश रूखे व खुले हुए, दाँत टेढे-मेढे, स्तन लटके हुए एक हाथ में सूप तथा एक हाथ से वर मुद्रा में विधवा वेश में, ऐसे रथ पर विराजमान जिसकी ध्वजा में कौवे का चिन्ह है।

धूमावती का बीज मंत्र धूं' है इसी बीज मंत्र के आधार पर कामना विशेष के अनुसार विभिन्न मंत्रों का सृजन और उन्हें सिद्ध कर कार्य किया जा सकता है। दूसरा मंत्र यह है—

'धूं धूं धूमावती स्वाहा'

मोहन' आदि कार्यों में मानव की बुद्धि को भ्रमित करने से उद्देश्य से वाममार्गी साधना में धूमावती की उपासना का विशेष महत्व है। विधवा स्त्री को वशीभूत कर कामसुख व उसकी धन सम्पत्ति प्राप्त करने के उद्देश्य से भी

धूमावती की उपासना की जाती है। जब कि दक्षिणमार्गी साधक धूमावती को सिर्फ धूआं निकलता है ऐसा मानते हैं अर्थात् धूँआ निकलेगा तो अग्नि स्फुटित होगी अर्थात् अज्ञान रूपी धुएं का निराकरण होकर ज्ञान रूपी, ब्रह्म रूपी ईश्वर की प्राप्ति होगी।

अथवा प्रलय के बाद जब पुनः सृष्टि का निर्माण होता है तब इसी 'धूम' से पुनः सृष्टि का सृजन होता है। विधवा रूप प्रलय के बाद का विभत्स रूप है। पार्वती द्वारा शिव को ग्रास बनाना प्रलय के समय प्रकृति द्वारा सृष्टि को ग्रास बनाना ही है।

तुरी श्यामा गौरी कामेश्वरी तथा अन्नपूर्णा के सिद्धमंत्र

देवी तुरी अन्नपूर्णा तथा श्यामा को त्रिपुर सुन्दरी (षोडशी) की सखी के रूप में तंत्रशास्त्रों में वर्णन है। देवी तुरी की उपासना आर्थिक उन्नति तथा आर्थिक व्यवसायिक क्षेत्र में विघ्नबाधाओं के निराकरण हेतु होता है। देवी श्यामा की उपासना से रोगों की शान्ति, अरिष्ट निवारणपूर्वक आयु वृद्धि होती है। माँ अन्नपूर्णा की उपासना से धन-धान्य की अभिवृद्धि होती है।

देवी तुरी के मंत्र

(१) **प्रणवस्तारका ज्योतिस्तारा ह्यन्ते नमः इति।**
तुर्यामूलमिदं प्रोक्तं स्वतंत्रे शंभुना स्फुटम्॥

— तुरीतंत्र

इस आधार पर मंत्र इस प्रकार सिद्ध होता है—

ओं त्रुं त्रां त्रौं महातुर्यै नमः।

(२) आगम लहरी शीर्षक एक अन्य ग्रन्थ में देवी तुरी का मंत्रसूक्त इस प्रकार उपलब्ध होता है—

लक्ष्मीं लज्जां तथा मायां मात्रां द्वादश कामना।
वज्र वैरोचनीये द्वे माये फट् स्वाहया युते॥

इस सूत्र के अनुसार मंत्र का रूप इस प्रकार बनता है—

'श्रीं ह्रीं ह्रीं ऐं वज्र वैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा'

देवी श्यामा मंत्र

देवी श्यामा के मंत्र का सूत्र स्वयं 'श्यामातंत्र' नामक ग्रन्थ में इस प्रकार वर्णित है—

हिरण्याक्षीं तथा जिह्वां काली जिह्वा चतुष्टयं।
ततः सुधारसेश्यामे कृष्णशापं विमोचय॥
अमृतँ स्त्रावय स्वाहा श्याममंत्र उदाहृतः।

इस सूत्र के अनुसार मंत्र इस प्रकार सिद्ध होता है —

"श्रीं ह्रीं क्रां क्रीं क्रूं क्रैं क्रौं क्रः सुधारसे श्यामे कृष्णशापं विमोचयामृतं स्त्रावय स्वाहा"

इस मंत्र को सिद्ध करने के उपरान्त नित्य पांच माला जप करने से सम्पूर्ण अरिष्टों का निवारण होकर नीरोगता व स्वास्थ्य लाभ होता है और विजय प्राप्त होती है ।

मां श्यामा का ध्यान इस प्रकार है : —

त्रैलोक्य पूजित पदाम्बुरुहद्वयीतां,
कृष्णाम्बुभृत्सदृश रूप धराँ त्रिनेत्राँ ।
शूलासि शंख महतीः स्वभुजैर्वहन्तीं,
श्यामाँ स्मरे शवशरीर कृतासनस्थाँ ।।

अर्थात् जल से भरे काले बादलों के समान देवी कृष्ण वर्णा हैं, तीन आंखें हैं चार हाथ हैं, तीन हाथों में शूल, तलवार व शंख धारण किये हैं, चौथे हाथ से अभयदान दे रही हैं, शव (मृत शरीर) के ऊपर आरूढ़ हैं ।

देवी श्यामा की उपासना से सम्बन्धित 'श्यामा रहस्य' व 'श्यामातंत्र' नामक ग्रंथ प्रसिद्ध हैं।

अन्नपूर्णा मंत्र

देवी अन्नपूर्णा के मंत्र सम्बन्धी सूत्र 'कामेश्वरी तंत्र' में प्राप्त होता है जो इस प्रकार है —

**तारँ परापि कमला मीन केतन मेवच ।
विश्वँ ततोभगवति माहेश्वरि ततः पुनः ।।
अन्नपूर्णे ठद्वयँ चमनुर्विंशाक्षरः स्मृतः ।**

इस सूत्र के अनुसार बीस अक्षरों का मंत्र इस प्रकार सिद्ध होता है—

"ओं ह्रीं श्रीं क्लीं नमो भगवति माहेश्वरि अन्नपूर्णे स्वाहा"

इस मंत्र को सिद्ध करने के उपरान्त नित्य प्रातः तथा सायँकाल एक-एक माला जपने से धन-धान्य की वृद्धि होती है ।

इसके अलावा 'प्रसन्न पारिजाता वरदान्नपूर्णा'' का निम्न मंत्र भी तंत्र-ग्रन्थों में उपलब्ध होता है —

''ओं श्रीं ह्रीं नमो भगवती माहेश्वरि प्रसन्न वरदे अन्नपूर्णे स्वाहा''

इस मंत्र को नित्य एक माला जाप करने से पारिवारिक सुख व धन-धान्य की वृद्धि होती है।

मां अन्नपूर्णा का ध्यान इस प्रकार है :—

चन्द्रार्धमौलिं द्विभुजां त्रिनेत्रां शूलाक्षमालेसततं वहन्तीं।
एणासनस्थाँ भुजगोपवीतां तामन्नपूर्णां हृदये स्मरामि ॥

अर्थात् माँ अन्नपूर्णा के दो हाथ हैं, तीन आंखें हैं, मस्तक में अर्धचन्द्र शोभित है, गले में सर्पों की माला है, हाथों में रुद्राक्ष की माला और शूल धारण किये हैं।

आधुनिक युग में तंत्रशास्त्र के मूल ग्रंथ सर्वथा अलम्य हैं अतः शुद्धमंत्रों का उपलब्ध होना कठिन है, ऐसी स्थिति में अशुद्ध तथा भ्रामक मंत्रों का प्रचलन है। सामान्यतः तन्त्रशास्त्र के नाम पर जो पुस्तकें आज प्राप्त होती हैं वे प्रामाणिक नहीं हैं। एक दुर्लभ हस्तलिखित (एक सौ वर्ष से पुराने) ग्रन्थ के आधार पर उपरोक्त मंत्रों को शुद्ध रूप में प्रस्तुत किया गया है।

गौरी मंत्र

माँ गौरी तथा कामेश्वरी दोनों ही पति/पत्नी व सन्तान सुखदायक हैं. अतः गौरी या कामेश्वरी की उपासना स्त्री/पुत्रादि, पति/पुत्रादि सुख की कामना के अलावा विवाह सम्पन्न होने में भी सहायक है। विवाह में विघ्न या विलम्ब होने पर कामेश्वरी तथा गौरी की उपासना श्रेयस्कर है। यहां पर पति कामना से विवाहार्थी वरार्थी कन्या को गौरी की और कन्यार्थी वर को कामेश्वरी की उपासना करनी चाहिए।

माँ गौरी का ध्यान इस प्रकार है—

गौरांगी धृतपंकजां त्रिनयनां श्वेताम्बरां सिंहगां।
चन्द्रोद्भासित शेखरां स्मित मुखीं दोर्भ्यां वहन्ती गदां॥

विधिचन्द्राम्बुजपोचिकामत्रिदशैः संपूजिताङ्घ्रिद्वयो।
गौरीं मानस पंकजे भगवतीं भवतेष्टदां तां भजे॥

अर्थात् माँ गौरी गौरवर्ण हैं, सिंह पर विराजमान हैं, सफेद वस्त्र हैं, तीन आँखें हैं, मस्तक में चन्द्रमा है, दो हाथ हैं, एक हाथ में गदा है तथा एक हाथ से अभयदान दे रही हैं।

विवाहार्थी तथा सौभाग्याकांक्षिणी कन्याओं एवं महिलाओं के लिए गौरी की उपासना का विशेष महत्व है। वैवाहिक पद्धति (कर्मकाण्ड) में भी विवाह के पूर्व कन्या के हाथों गौरी के पूजन का विधान है। यह परम्परा वैदिक काल से अद्यावधि अविच्छिन्न रूप से चली आ रही है। रामचरित मानस में भी श्री तुलसीदास जी ने सीता जी द्वारा स्वयंवर से पूर्व माँ गौरी के पूजन का वर्णन किया है।

सिद्ध मंत्र इस प्रकार है :—

"ओं ह्रीं श्रीं ह्रीं ग्लौं गं गौरीं गीं स्वाहा"

नित्य प्रति नियमित रूप से एक माला जप वांछित है।

कामेश्वरी मंत्र

यह मंत्र भी विवाह में सहायक व पति/पत्नी सुखदायक है।

माँ कामेश्वरी के मंत्र का रात्रि में नियमित एक माला जप करने से सफलता प्राप्त होती है। मंत्र इस प्रकार है :—

"ओं ह्रीं श्रीं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं जं जं वनाख्ये कामेश्वरि वाणदेवते स्वाहा"

ध्यान इस प्रकार है—

त्रिलोचनां सूर्यसहस्त्रशोभां, सिंहासनस्थां द्विभुजाँ धृतासिं।
पीताम्बरां विष्णु महेश सेव्यां कामेश्वरीं तां हृदये स्मरामि॥

अर्थात् माँ कामेश्वरी हजारों सूर्यों के प्रकाश तुल्य तेजस्वी हैं, तीन नेत्र हैं, सिंहासन पर विराजित हैं, दो हाथ हैं, एक हाथ में तलवार है और दूसरे हाथ से अभयदान दे रही हैं पीले वस्त्र धारण किये हैं।

बगलामुखी

बगलामुखी वह शक्ति है जो शक्ति के स्वाभाविक प्रवाह को स्तंभित करती है। इनकी उपासना मुख्यतः शत्रु बाधा शान्ति के उद्देश्य से की जाती है ताकि विरोधीगण जो बोलना चाहें बोल न सकें जो लिखना चाहें लिख न सकें, जो सोचना चाहिए वह सोच न सकें, जो करना चाहें वह कर न सकें, जहाँ जाना चाहें वहाँ जा न सकें—अर्थात् विरोधियों की वाणी, मुख, जीभ, बुद्धि, पैरों आदि का स्तंभन हो।

आध्यात्मिक दृष्टि से बगलामुखी की उपासना से स्तंभन शक्ति प्राप्त होती हैं, इससे दो प्रकार के लाभ होते हैं। किसी मार्ग में शक्ति का प्रवाह रुकने से वह अन्य मार्ग ग्रहण करने की क्षमता प्राप्त करता है और शक्ति के स्तंभन होने से जो शक्ति संचित होती है वह भविष्य में तीव्रतर होकर बाधायें दूर कर कार्य साधन में सहायक होगी।

माँ बगलामुखी का ध्यान (स्वरूप) इस प्रकार है :—

जिह्वाग्रमादाय करेण देवी वामेन शत्रुन्परिपीडयन्तीम्।
गदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्बराढ्यां द्विभुजां नमामि॥

अथवा

मध्ये सुधाब्धि मणि मण्डप मध्य वेद्यां,
सिंहासनो परिगतां परिपीत वर्णाम्॥
पीताम्बरा भरण माल्य विभूषितांगीं,
देवीं स्मरामि धृत मुद्गर वैरी जिह्वाम्॥

अर्थात् क्षीर सागर के मध्य में मणि जड़ित मण्डप पर सिंहासन पर विराजमान हैं, पीतवर्णा हैं। पीले रंग के वस्त्र व आभूषण व माला से विभूषित हैं। दो हाथ हैं, तीन आँखें हैं, मस्तक में अर्ध चन्द्र है, वगुला के समान मुख है, दाहिने हाथ में मुद्गर लिये हैं और बायें हाथ से शत्रु की जीभ को पकड़कर खींच रही हैं और मुद्गर से उसे मार रही हैं। (उपासना के समय जब माँ का

ध्यान करें तो ऐसा ध्यान करें कि वह आपके तथाकथित शत्रु की जीभ खींचकर उसे मुद्गर से मार रही हैं, अपने शत्रु की आकृति का स्मरण करें) ।

पीले वस्त्र धारण कर उपासना करना तथा हल्दी की गांठों से बनी माला में जप करने का विशेष महत्व है ।

माँ बगलामुखी की शक्ति से वाचाल गूंगा हो जाता है, अग्नि व क्रोध शान्त हो जाता है, ज्ञानी सब कुछ भूल जाता है। वैसे तो इनकी उपासना परमार्थ एवं अध्यात्म साधना के उद्देश्य से होती है लेकिन वर्तमान में वाद जीतने, शत्रु को रोगग्रस्त व पीडित करने, पराजित करने, चुनाव जीतने, जीवनी शक्ति का ह्रास करने के हेतु ही इसका उपयोग हो रहा है। इस दृष्टि से यह एक उग्र उपासना है अतः इसमें अत्यन्त सावधानी आवश्यक है, अन्यथा कोई भी त्रुटि या अशुद्धि होने पर उलटे अपना ही संहार हो सकता है। विशेष परिस्थितियों में ही ताकि अपने प्रति अन्याय न हो सके, निरपराध सजा न हो, अधिकारी को अनुकूल निर्णय देने की प्रेरणा मिल सके और अपना पक्ष न्याय-संगत होने पर ही ऐसी उपासना करनी चाहिए ।

सामान्यतः अपने जीवन में आने वाली विघ्नबाधाओं के निराकरण, अध्यात्म साधना में आने वाली बाधाओं के प्रशमन के हेतु समभाव से ही माँ बगला की उपासना होनी चाहिए ।

इनकी उत्पत्ति के बारे में कथानक है कि पूर्व में कभी सत्य युग में अर्ध-प्रलय की स्थिति आने पर भगवान विष्णु ने 'त्रिपुर सुन्दरी' का ध्यान किया और उनके अनुरोध पर सौराष्ट्र के एक सरोवर में 'बगलामुखी' का आविर्भाव हुआ। उस दिन मंगलवार तथा चतुर्दशी तिथि थी, उन्होंने इस प्रलयकारी बवंडर का स्तंभन कर सृष्टि की रक्षा की। शाक्त प्रमोद के अनुसार इनका मंत्र इस प्रकार है—

"ॐ ह्लीं बगलामुखि सर्व दुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तंभन जिह्वां कीलय बुद्धि विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा"

प्रणवं स्थिरमायां च ततश्च बगला मुखीम् ।
तदन्ते सर्वदुष्टानां ततो वाचं मुखं पदं ।।

स्तंभयेति ततो जिह्वां कीलयेति पद द्वयं ।
बुद्धिनाशय पश्चात्तु स्थिरमायां समालिखेत् ।।

लिखेच्च पुनरोंकारं स्वाहेतिपद मन्ततः ।
षट्‌त्रिंशद्‌क्षरी विद्या सर्व सम्पत्करी मता ।।

कुछ विद्वान मंत्र का स्वरूप निम्न रूप में बतलाते हैं, यद्यपि इसमें भी छत्तीस अक्षर हैं परन्तु यह शुद्ध नहीं है, जैसा उपरोक्त सूत्र से सिद्ध है—

"ॐ ह्लीं बगलामुखि सर्बदुष्टानाँ वाचं मुखं स्तंभय
जिह्वां कीलय कीलय बुद्धिनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा"

वर्तमान में माँ के विभिन्न नाम रूपों मध्ये माँ बगलामुखी की उपासना ही कामना विशेष से प्रचलित है। अत इसके न्यासादि दे रहे हैं—

विनियोग—ॐ अस्य श्री बगलामुखी मंत्रस्य नारद ऋषिः, ह्लीं बीजं, स्वाहेति शक्तिः बृहतीछन्द, बगलामुखी देवता अभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः"।

ऋष्यादि न्यास—ॐ नारद ऋषये नमः शिरसि ॐ बृहतीछन्दसे नमः मुखे, ॐ बगलामुखी देवतायै नमः हृदि ॐ ह्लीं बीजाय नमः गुह्ये स्वाहाः शक्तये नमः पादयोः ।

करन्यास	—हृदयादि न्यास
ॐ ह्लीं—अंगुष्ठाभ्याँ नमः ।	—हृदयायनमः
ॐ बगलामुखि—तर्जनीभ्यां नमः ।	—शिरसे स्वाहाः ।
ॐ सर्वदुष्टानां—मध्यमाभ्यां नमः ।	—शिखायै वौषट्,
ॐ वाचंमुखं पदं स्तंभय—अनामिकाभ्याँ नमः ।	—कवचाय हुम् ।
ॐ जिह्वाँ कीलय—कनिष्ठिकाभ्याँ नमः ।	—नेत्र त्रयाय वौषट् ।
ॐ बुद्धि विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा—करतलकरपृष्ठाभ्याँ नमः	—अस्त्रायफट् ।

अक्षरन्यास—ॐ ह्लीं नमः शिखायां, ॐ बगलामुखीनमः दक्षिणनेत्रे, ॐ सर्बदुष्टानां नमः वामनेत्रे, ॐ वाचं नमः दक्षिणकर्णे, ॐ मुखं नमः वामकर्णे, ॐ पदं नमः दक्षिण नासापुटे, ॐ स्तंभय नमः वामनासापुटे, ॐ जिह्वांकीलय नमः मुखे, ॐ बुद्धि बिनाशाय ह्लीं ॐ स्वाहेति नमः गुह्ये ।

दिगन्यास—ॐ ह्लीं प्राच्यै नमः, ॐ बगलामुखी आग्नेयै नमः, ॐ वाचं दाक्षणे नमः, ॐ मुखंनैऋत्यै नम, ॐ पदं प्रतीच्यै नमः, ॐ स्तंभय वायव्यै नमः, ॐ जिह्वाँ उदीच्यै नमः, ॐ कीलय ईशान्यै नमः, ॐ बुद्धि उर्ध्वायै नमः, ॐ विनाशय ह्लीं ॐ स्वाहा भूम्यै नमः ।

आवश्यकतानुसार इस मंत्र में कामना विशेष के अनुसार 'सर्व दुष्टानां' के स्थान पर 'ममशत्रूणाँ' कहा जा सकता है और विशेष परिस्थिति में 'सर्वदुष्टानाँ' के स्थान पर शत्रु का नाम (जैसे कमलाकान्त नाम शत्रु का होने पर 'कमलाकान्तस्य') भी जोड़ा जा सकता है।

जब कभी मंगलवार के दिन चतुर्दशी तिथि पड़े, उस दिन माँ बगुला की साधना विशेष फलदायी होती है।

सिद्धि या किसी कार्य विशेष से जप करने में प्रतिदिन नियमित रूप से, जब तक लक्ष्य पूरा न हो जप होना चाहिए, बीच में छूटे नहीं और जप संख्या भी प्रतिदिन समान होनी चाहिए। किसी दिन कम किसी दिन अधिक न हो।

जप के अलावा 'वगलामुखी स्तोत्र' सहस्त्रनाम तथा 'बगलामुखी कवच' नामक पाठ भी उपलब्ध हैं। जो व्यक्ति जप आदि कठिन साधना न कर सकें उनके लिए यह पाठ सुवि ाजनक व निरापद हैं।

माँ वगलामुखी के बीज मंत्र के बारे में विद्वानों में अनेक मतमतान्तर हैं। जैसे—

'ह्लीं' 'ह्लीं' 'ह्लीं' ह्ल्रीं' ह्लीं' आदि जो एक विवाद का विषय भी बन गया है। इसके अलावा कतिपय प्रकाशनों में 'कीलय-कीलय' 'बुद्धिनाशय-नाशय' आदि भी देखने को मिला है जो युक्तिसंगत व प्रामाणिक नहीं है। उपरोक्त ३६ (छत्तीस) अक्षरों का मंत्र ही शुद्ध है।

'दुर्गासप्तशती' तथा 'अर्गला' के सिद्ध प्रयोग

'वाराही तंत्र' में दुर्गा सप्तशती के विविध प्रयोगों का वर्णन है। यह पाठ संकल्प पूर्वक न्यास पूर्वक हो तथा बलिप्रदान की जाय।

(१) एक आवृत्ति पाठ से भी सिद्धि (कार्य सिद्धि) होती है।

(२) ग्रहशान्ति तथा विविध उपसर्ग (उपद्रवों) की शान्ति हेतु तीन या पाँच आवृत्ति पाठ किया जाय।

(३) किसी प्रकार के भय उत्पन्न होने पर सात या नौ आवृत्ति पाठ करे।

(४) राजवश्य (शासन से कार्य सिद्धि, अधिकारी के वशीकरण) हेतु तथा आर्थिक सम्पन्नता हेतु ग्यारह आवृत्ति पाठ करे।

(५) बारह आवृत्ति पाठ करने से विजय तथा शत्रुपराजय (वाद में जय) होता है।

(६) चौदह आवृत्ति पाठ से स्त्री वश में होती है।

(७) धन-धान्य में वृद्धि तथा स्त्रीपुत्रादि सुख हेतु पन्द्रह या सोलह आवृत्ति पाठ करे।

(८) राजभय के निवारण तथा विरोधियों का मन उच्चाटन करने हेतु सत्रह या अठारह आवृत्ति पाठ करे।

(९) भयंकर बड़े व्रण (फोड़े) की शान्ति हेतु बीस आवृत्ति का पाठ करे।

(१०) बन्धन (कारागार आदि) से मुक्ति हेतु पचीस आवृतिपाठ करे।

(११) कोई भयंकर संकट आने पर, कोई विशेष चिकित्सा के (आपरेशन के) समय, सन्तानहानि, रोगवृद्धि, शत्रुवृद्धि, कुलक्षय, विविध उत्पात आदि में सौ आवृत्ति (शतचण्डी) का पाठ करे।

(१२) एक सौ आठ आवृत्ति पाठ से मनोकामना पूर्ण होती है।

(१३) एक हजार आवृत्ति पाठ से लोक व परलोक दोनों सिद्ध होते हैं।

सप्तशती पाठ के विभिन्न क्रम

नवरात्र आदि में सम्पूर्ण पाठ न कर सकने की स्थिति में इस प्रकार पाठ करने का विधान है—

(अ) प्रथम दिन —कवच आदि प्रारंभ से प्रथम अध्याय।

द्वितीय—द्वितीय व तृतीय अध्याय।

तृतीय—चतुर्थ अध्याय।

चतुर्थ—पंचम से अष्टम तक।

पंचम—नवम व दशम अध्याय।

षष्ठ—एकादश अध्याय।

सप्तम—द्वादश व त्रयोदश अध्याय।

तथा मूर्तित्रय रहस्य आदि अंत तक।

इस प्रकार सात दिन में पाठ समाप्त कर अष्टमी को पूजन, नवमी को होम व बलिदान।

(आ) दूसरा मत इस प्रकार है—

1 2 1 3 2 1 2 1
'पा ठो यं व र का र क' अर्थात्

प्रथम दिन—प्रारंभ से एक अध्याय तक।

द्वितीय—द्वितीय व तृतीय अध्याय।

तृतीय—चतुर्थ अध्याय।

चतुर्थ—पंचम, षष्ठ, सप्तम अध्याय।

पंचम—अष्टम व नवम अध्याय।

षष्ठ—दशम अध्याय।

सप्तम—एकादश व द्वादश।

अष्टम—त्रयोदश अध्याय व मूर्तित्रय रहस्य आदि अन्त तक।*

नवम—पूजन, हवन व बलिदान।

सृष्टि स्थिति और संहार क्रम

सप्तशती पाठ के तीन क्रम उपलब्ध हैं :—

---

* यह मत अधिक प्रामाणिक है।

(अ) **सृष्टि क्रम** – यथास्थिति प्रथम अध्याय से त्रयोदश अध्याय तक का क्रमशः पाठ सृष्टिक्रम है। यह पाठ हर प्रकार की शान्ति कारक श्रेष्ट है।

(आ) **स्थिति क्रम**—इसमें कवचादि प्रारम्भिक क्रिया के बाद क्रमशः पंचम अध्याय से पाठ प्रारम्भ करके चतुर्थ अध्याय तक का पाठ (५, ६, ७, ८, ६, १०, ११, १२, १३, १, २, ३, ४) स्थिति बनाये रखने में सहायक है और इसी उद्देश्य से इसका पाठ होता है।

(इ) **संहार क्रम**—इसमें त्रयोदश अध्याय के अन्तिम श्लोक से पाठ प्रारम्भ करके (अर्थात् विपरीत क्रम से) प्रथम श्लोक पर पाठ समाप्त होता है। जैसा कि इसका नाम है यह पाठ शत्रु के संहार तथा शत्रु को हानि पहुँचाने के उद्देश्य से किया जाता है।

संपुट पाठ के दो क्रम

संपुष्ट पाठ के भी दो क्रम होते हैं—

(अ) **उदय क्रम**—अर्थात् पहले संपुष्ट मंत्र + सप्तशतीश्लोक + संपुष्ट मंत्र। लाभ, सुख सफलता के निमित्त यही क्रम ग्राह्य है—

मंत्रमादौ पुनः श्लोक मंते मंत्रं पुनः पठेत्।
पुनर्मन्त्रं पुनः श्लोकं क्रमो ऽयमुदयेस्मृतः॥
उदयोत्कर्ष लाभाय संपुटोयमुदाहृतः।

(आ) **अस्त क्रम**—पहले संपुष्ट मंत्र + सप्तशतीश्लोक + संपुष्ट मंत्र का विपरीत पाठ। उदाहरण जैसे संपुट मंत्र "हुंफट्" हो तो पाठ इस प्रकार होगा—

'हुंफट् + ॐ ऐं मार्कण्डेय उवाच + फट्हुं"

अस्तक्रम का संपुट पाठ मारण, उच्चाटन, बन्धन आदि कार्य हेतु किया जाता है—

मंत्रमादौपुनः श्लोकमंते मंत्र विपर्ययं।
मारणोच्चाटनेबंधे संपुटोय मुदाहृतः॥

कालीकवच प्रयोग*

आत्मरक्षा, शत्रुपराजय तथा शत्रुओं के विनाश हेतु 'कालीकवच' का भी प्रयोग होता है।

---

* रुद्रयामलतंत्र।

छन्द :—

अस्य श्री कालिका कवचस्य श्री भैरव ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्री कालिका देवता ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः।

ध्यान

ॐध्यायेत्कालीं महामायां त्रिनेत्रां बहुरूपिणीम्।
चतुर्भुजां ललज्जिह्वां पूर्णचंद्रनिभाननां।
नीलोत्पलदलप्रख्यां शत्रुसंघविदारिणीम्।

नरमुण्डं तथा खड्गंकमलं च वरंतथा।
बिभ्राणां रक्तवसनांदंष्ट्रयालींघोररूपिणीम्।

अट्टाटहासनिरतांसर्वदा च दिगम्बराम्।
शवासनस्थिता देवीं मुण्डमाला विभूषिताम्।

मंत्र

ॐ कालिकाघोररूपाढ्या सर्वकामप्रदाशुभा।
सर्वदेवस्तुतादेवी शत्रुनाशं करोतु मे।

ह्रीं ह्रीं स्वरूपिणीचैव ह्रां ह्रां हूँ रूपिणी तथा।
ह्रीं ह्रीं क्षें क्षें स्वरूपा सा सदाशत्रून्विदारयेत्।

श्रीं ह्रीं ऐं रूपिणीदेवी भवबंधविमोचनी।
हस्कूल ह्रींह्रीं रिपून्साहरतुदेवी सर्वदा।

ययाशुम्भो हतो दैत्यो निशुम्भश्च महासुरः।
वैरिनाशाय वंदे तां कालिकां शंकरप्रियाम्।

ब्राह्मी शैवी वैष्णवी च वाराही नारसिंहिका।
कौमार्यैन्द्री च चामुण्डा खादयन्तु ममद्विषः।

सुरेश्वरी घोररूपा चण्डमुण्ड विनाशिनी।
मुण्डमालावृतांगी च सर्वतः पातुमाम् सदा।

ह्रीं ह्रीं कालिके घोरदंष्ट्रे रुधिर प्रिये रुधिर पूर्ण-वक्त्रे रुधिरावृतस्तनि मम शत्रून्खादय २ हिंसय २ मारय २ भिंदि २ छिंधि २ उच्चाटय २ द्रावय २ शोषय २ स्वाहा ह्रीं ह्रीं कालिकायैमदीय शत्रू समर्पयामि स्वाहा ॐ जय २ किरि २ किटि २ कुट २ कट्ट २ मर्दय २ मोहय २ हर २ ममरिपून्ध्वंसय २ भक्षय २ त्रोटय २ यातुधानि चामुण्डे सर्व जनान्राज्ञो राजपुरुषां (स्त्रि) योषाः रिपून्मम-

वश्यान्कुरु २ तनु २ धान्यंधनमश्वान्गजान् रत्नानिदिव्यकामिनी: पुत्रपौत्रान्राजश्रियं देहि २ यक्ष २ क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः स्वाहा।

सर्वप्रथम इस मंत्र के एक हजार पाठ करके मंत्र सिद्ध होता है। सिद्ध हो जाने पर इसके दो प्रयोग हैं—

(अ) इस मंत्र को गोरोचन, अष्टगंध आदि से भूर्जपत्र पर लिखकर प्रतिष्ठा करके कवच (तावीज) में डालकर धारण करने से शत्रुओं से तथा अल्पमृत्यु से रक्षा होती है।

(आ) श्मशान में जाकर चिता का कोयला लाये उसमें काला रंग मिलाकर बायें पैर से पानी के साथ पीसे। इस स्याही से भूमि पर अपने शत्रु की आकृति (चित्र) बनाये, इस आकृति का शिर उत्तर की ओर पैर दक्षिण की ओर हों, हाथ छाती में हों। आकृति ऐसी बनाये कि शत्रु ऐसा दिखे जैसे अपंग व हीन रूप का हो। तदन्तर इस आकृति में शत्रु का आवाहन कर उसकी प्राण प्रतिष्ठा करे।

तदनन्तर इस मंत्र का आठ बार पाठ करके क्रोध पूर्वक शस्त्र (चाकू) से इस आकृति के गले व छाती में प्रहार करके खण्ड-खण्ड कर दे। इस क्रिया से शत्रु का पराजय तथा नाश होता है।

अर्गला स्तोत्र के सिद्ध प्रयोग

माँ दुर्गा का अर्गला स्तोत्र एक सिद्ध स्तोत्र है, इसके कुल २५ श्लोकों में से २० श्लोक तांत्रिक दृष्टि से सिद्ध व चमत्कारी हैं। तंत्रशास्त्र में इस स्तोत्र के मंत्रों के साथ दुर्गा सप्तशती के संपुटित पाठों के कुछ सिद्ध प्रयोग वर्णित हैं. जो इस प्रकार हैं :—

(१) 'जयन्ती मंगला काली०' इस श्लोक से सप्तशती का संपुटित पाठ करने से महामारी तथा संक्रामक रोगों की शान्ति होती है। सभी प्रकार के उपद्रव भी शान्त होते हैं।

(२) 'मधुकैटभ विद्रावि०' मंत्र के साथ सम्पुटित पाठ करने से चोर भय, राजभय का निवारण होता है।

(३) 'महिषासुर निर्नाश०' मंत्र से सम्पुटित पाठ करने से शत्रु पराजय व शत्रुओं का विनाश होता है।

(४) 'वन्दिताङ्घ्रियुगे०' मंत्र से सम्पुटित पाठ करने से राजसम्मान प्राप्त होता है।

(५) 'रक्त बीज बधे०' मंत्र से सम्पुटित पाठ शत्रु भय का निवारण कारक है।

(६) 'अचिन्त्य रूप चरिते०' इस मंत्र से सम्पुटित पाठ करने से रोग शान्ति आरोग्य की प्राप्ति होती है।

(७) 'नतेभ्यः सर्वदाभक्त्या०' मंत्र से सम्पुटित पाठ हर प्रकार की विपदाओं से रक्षाकारक है।

(८) 'स्तुवद्भ्यो भक्ति पूर्वं०' मंत्र से सम्पुटित पाठ सम्पूर्ण रोगों से मुक्ति-दायक व आरोग्यदायक है।

इस मंत्र के जप का भी यही प्रभाव है।

(९) 'चण्डिके सततं०' मंत्र से सप्तशती का सम्पुटित पाठ हर प्रकार सुख-शान्तिदायक है।

(१०) 'देहि सौभाग्य०' मंत्र से सम्पुटित पाठ आरोग्य, सुख-शान्ति, तथा सौभाग्य में वृद्धिकारक है।

इस मंत्र के जप से भी यही फल प्राप्त होगा।

(११) 'विधेहि द्विषतां नाशं०' इस मंत्र से सम्पुट पाठ निश्चित रूप से शत्रुओं का नाश व पराजय कारक है। इस मंत्र के जप का भी यही प्रभाव है।

(१२) 'विधेहि देवि कल्याणं०' मंत्र से सम्पुटित पाठ समस्त आपदाओं के निराकरणपूर्वक पारिवारिक सुख, समृद्धि व शान्ति कारक है।

(१३) विद्यावन्तं यशस्वन्तं०' मंत्र से सम्पुटित पाठ बुद्धिवर्धक, शिक्षा में सफलतादायक, यश व सम्पत्तिदायक है।

(१४) 'प्रचण्ड दैत्य दर्पघ्ने०' मंत्र से सम्पुटित पाठ विवाद (मुकद्दमे) तथा व्यवहार, चुनाव आदि में विजयदायक है।

(१५) 'चतुर्भुजे०' इस मंत्र से सप्तशती का सम्पुटित पाठ धर्म, अर्थ काम व मोक्ष चतुर्वर्ग की सिद्धि कारक है।

(१६) 'पत्नीं मनोरमां देहि०' का सम्पुटित पाठ पुरुषों के विवाह में सहायक है तथा पत्नी के सुख-सहयोग में भी अभिवृद्धिकारक है।

(१७) 'कृष्णेन संस्तुते०' मंत्र से सप्तशती का सम्पुटित पाठ पौरुषार्थ में सफलता अर्थात् कार्यसिद्धिकारक है ।

(१८) 'इन्द्राणी पति सद्भाव०' मंत्र से सप्तशती का सम्पुटित पाठ मानसिक रोगों में शान्तिदायक है । पति सुख में अभिवृद्धिकारक भी ।

(१९) 'देवी प्रचण्ड०' मंत्र से सम्पुटित पाठ जलोदर रोग की शान्तिकारक है ।

(२०) 'देवी भक्तजनों०' मंत्र से सम्पुटित पाठ वर्षाकारक है ।

'कात्यायनी तंत्र' में वर्णित सिद्ध प्रयोग

श्री दुर्गा सप्तशती मात्र मार्कण्डेय पुराण का एक अंश नहीं है अपितु तंत्र की दृष्टि से भी इसमें अनेक सिद्ध मंत्र हैं, 'कात्यायनी तंत्र' में इनके प्रभाव व प्रयोग की विधि इस प्रकार वर्णित है—

(१) दुर्गा सप्तशती के प्रत्येक मंत्र के साथ आदि व अन्त में प्रणव (ॐ) जोड़कर सौ बार पाठ करने से मंत्र सिद्धि होती है। श्री नागेश भट्ट के मतानुसार मंत्र के आदि में प्रणव सहित व्याहृति (ॐ भूर्भुवः स्वः) तथा मंत्र के अन्त में इसका विलोम (स्वः भुवः भूः ॐ) करके जोड़कर पाठ करने (सौ आवृति पाठ करने) से अतिशीघ्र सिद्धि प्राप्त होती है।

(२) दुर्गा सप्तशती के प्रत्येक मंत्र के प्रारम्भ में निम्न वैदिक मंत्र जोड़कर पाठ करने से प्रत्येक काम सिद्ध होते हैं—

"ॐ जातवेदसेसुनवामसोममरातीयतोनिदहातिवेदः,
सनः पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेवसिन्धुन्दुरितात्यग्निः"

(३) रोगशान्ति, मृत्यभय के निवारण, शारीरिक कष्ट, अपमृत्यु के निवारण हेतु त्र्यम्बकमंत्र का संम्पुटपाठ (प्रत्येक श्लोक के आदि व अन्त में) निम्न मंत्र का पाठ सिद्ध प्रयोग है—

"ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनं।
उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ।।

(४) प्रत्येक श्लोक को सप्तशती के ही 'शरणागतदीनार्त०' इस मंत्र से संपुटित कर पाठ करने से भी प्रत्येक कार्य में सिद्धि होती है।

(५) प्रत्येक श्लोक को करोतुसानः शुभ हेतु०' सप्तशती के इस मंत्र से संपुटित कर पाठ करने से भी इच्छित कार्य सिद्ध होता है।

(६) अविवाहित कन्याओं को इच्छित वर (पति) की प्राप्ति हेतु निम्नमंत्र से सप्तशती का संपुटित पाठ करना सिद्धि दायक है—

"एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ।
सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भवितामनुः ।।

अथवा मात्र इसमंत्र के आधे 'एवं ·· ····· क्षत्रियर्षभः' का जप करने/करवाने से भी शीघ्र व इच्छित विवाह होता है ।

(७) किसी भी प्रकार की आपदा का निराकरण तथा दरिद्रता का निवारण हेतु (आर्थिक स्थिति में सुधार हेतु) 'दुर्गस्मृता०" इस सप्तशती मंत्र से सम्पुटित पाठ करने/अथवा केवल इस मंत्र का दशहजार जप करना सिद्धिदायक है ।

(८) सप्तशती के 'सर्वाबाधा विनिर्मुक्तो' शीर्षक मंत्र से सम्पुटित पाठ करने से भी सभी प्रकार के संकटों, समस्याओं का समाधान होता है । अथवा इस मंत्र का एक लाख जप करने से भी यही प्रभाव होता है ।

(९) सप्तशती के इसी 'सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो०' मंत्र का जप सन्तानदायक भी है ।

(१०) 'इत्थं यदायदाबाधा०' मंत्र से संपुटित पाठ करने से महामारी इत्यादि संक्रामक रोगों की शान्ति होती है ।

(११) 'ततो वव्रेनृपो राज्य०' इस मंत्र का एक लाख जप करने से (निलम्वन समाप्त होकर) पुनः सेवा की प्राप्ति होगी । इसी प्रकार 'स्वल्पैरहोभि०' इस मंत्र से संपुटित पाठ करने या इस मंत्र का एक लाख जप करने से भी आरोपों से मुक्ति पूर्वक पुनः नियुक्ति मिलेगी ।

(१२) छोटे बच्चों को कुदृष्टि (नजर) लगने, भूत-प्रेतादि की छाया से ग्रसित होने पर मां दुर्गा के सन्मुख चावल + उड़द + दही की बलि देकर 'हिनस्ति दैत्य तेजांसि०" इस मंत्र का पाठ करते हुए घण्टा बजाने से दोष शान्त होकर शिशु स्वस्थ्य हो जाता है ।

(१३) दुर्गासप्तशती का पाठ सर्वप्रथम विपरीत क्रम से अन्तिम श्लोक से प्रथम श्लोक तक, पुनः सीधे क्रम से और पुनः विपरीत क्रम से—इस प्रकार तीन आवृत्ति सप्तशती के पाठ से प्रत्येक इच्छित कार्य शीघ्र सिद्ध होता है ।

(१४) प्रत्येक आपदा/समस्या का निराकरण हेतु निम्नमंत्र का दस हजार संख्या में जप करना सिद्धिदायक है—

"दुर्गस्मृताहरसिभीतिमशेषजन्तोः स्वस्थै स्मृतामति—
मतीवशुभांददासि, यदन्तियच्चदूरकेभयंविन्दति
मामिह पवमान वितज्जहि, दारिद्रयदुःखभयहारिणी
का त्वदन्या सर्वोपकार करणाय सदार्द्रचित्ता"

(१५) निम्नमंत्र से सप्तशती का संपुटित पाठ करने से ऋण से मुक्ति मिलती है और आर्थिक स्थिति सुधरती है :—

अनृणा अस्मिन्ननृणाः परस्मिन् तृतीयेलोके अनृणाः श्याम ।
ये देवयानाः पितृयाणाश्चलोकाः सर्वान्यथो अनृणा आक्षियं ।।

(१६) निम्न मंत्र से सप्तशती का सम्पुटित पाठ करने से भी धन की प्राप्ति होती है और आर्थिक स्थिति में सुधार होता है :—

कांस्मोस्मितां हिरण्यप्रकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्प्पयन्तीं ।
पद्मेस्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वयेश्रियं ।।

(१७) किसी के मारण हेतु प्रयोग करना हो तो 'समुत्पतति०' सप्तशती के इस आधे मंत्र के साथ सप्तशती का सम्पुटित पाठ करना सिद्धि दायक है ।

(१८) 'सर्वबाधाप्रशमनं' सप्तशती के इस मंत्र से ही सप्तशती का सम्पुट पाठ शत्रुनाशक तथा समस्त आपदाओं से रक्षा कारक है । इसका एक लाख जप का पुरश्चरण भी होता है ।

(१९) ज्ञानिनामपि चेतांसि०' इस मंत्र का जप मोहन कारक है । अनुभव सिद्ध इसी मंत्र से सप्तशती का संपुट पाठ का भी यही प्रभाव है ।

(२०) 'रोगानशेषा०' इस मंत्र के जप अथवा इस मंत्र से सप्तशती का संपुटित पाठ रोग से मुक्तिदायक है ।

(२१) 'इत्युक्ता सा तदा देवी०' इस मंत्र का जप करने, अथवा इस मंत्र से सप्तशती का सम्पुटपाठ विद्या का विकास, परीक्षा में सफलता, विद्याध्ययन में आने वाले विघ्नों तथा वाणीदोष का निराकरण कारक है ।

(२२) मेधे सरस्वति वरे०' मंत्र का जप या सम्पुटपाठ भी शिक्षा में उन्नति व सफलता दायक है ।

(२३) सप्तशती के चतुर्थ अध्याय के ३४ से ३७ तक "भगवत्या कृतं सर्वं ... सर्वदाम्बिके" का यह ११२ अक्षरों का मंत्र (जप या पाठ) सभी आपदाओं, संकष्टों का निवारण और प्रत्येक कार्य में सफलतादायक है। सवा लाख मंत्र जप का विधान है।

(२४) 'देवी प्रपन्नार्तिहरेप्रसीद०' मंत्र के सवा लाख जप अथवा इस मंत्र से सम्पुट पाठ भी समस्त समस्याओं, आपदाओं का निराकरणपूर्वक समस्त कामों में सिद्धिदायक है।

(२५) 'देवीप्रसीद०' इस मंत्र का जप या इस मंत्र से सम्पुट पाठ से भी शत्रु नाश व सभी प्रकार के उत्पातों, उपद्रवों की शान्ति होती है।

(२६) 'हरगौरी तंत्र' के अनुसार 'वञ्चिताभ्यामिति०' मंत्र का जप जलवृष्टि (वर्षा) कारक है।

(२७) यजुर्वेद के निम्न मंत्र का पाठ/जप भी वर्षाकारक है—

"इन्द्रोपऽओजसा पर्ज्जन्योबृष्टि माइवस्तो भैर्वत्सस्यवादृधे, उपयाम गृहीतोसि महेन्द्रा यत्वैषते योनि र्महेन्द्रायत्व"

(२८) अतिवृष्टि होने पर उसको रोकने के निमित्त अथवा ओलावृष्टि रोकने के निमित्त निम्न मंत्र का पाठ या जप करना सिद्धिदायक है।

"ओं समुद्रंगच्छ स्वाहान्तरिक्षंगच्छ स्वाहा देवं सवितारं गच्छ स्वाहा मित्रावरुणौ गच्छ स्वाहा होरात्रेगच्छ स्वाहा सोमं गच्छ स्वाहा दिव्यंन भोगच्छाग्निं वैश्वानरं गच्छ स्वाहा मनोमेहार्दियच्छ दिवन्ते धूमोगच्छतु स्वर्ज्योतिः पृथिवीम्भस्मनापृण स्वाहा"

(२९) महिलाओं को पति सुख, अखण्ड सौभाग्य, पति के योगक्षेम की कामना से अथवा बिछुड़े हुए पति (पति द्वारा त्यागे जाने की स्थिति आदि में) के पुनः प्राप्ति हेतु निम्न मंत्र से सप्तशती का सम्पुट पाठ करना। करवाना चाहिए :—(यह मंत्र श्री माँ वैष्णो देवी से सम्बन्धित है)।

"ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मानयति कश्चनः। ससस्त्यश्यकः सुभद्रिकां कांपील वासिनीं।"

(३०) 'यत्प्रार्थ्यते त्वया भूप०' इस मंत्र के जप अथवा सम्पुटित पाठ से मनो-वांछित कार्य सिद्ध होता है।

निष्काम उपासना की दृष्टि से भी यह प्रयोग माँ की प्रसन्नतार्थ श्रेष्ठ है।

(३१) 'शंख चक्र गदा शार्ङ्गि०" यह मंत्र भी मनोवांछित सफलतादायक तथा निष्काम कामना की दृष्टि से भी माँ से साक्षात्कार एवं माँ की कृपा दृष्टि प्रदायक, सिद्धिदायक है।

'सर्वबाधा प्रशमनं०' मंत्रानुष्ठान का प्रयोग

'कात्यायन तंत्र' में दुर्गा सप्तशती के जितने भी प्रयोग वर्णित हैं उन सब में 'सर्वाबाधा' मंत्र का जन समुदाय में व्यापक प्रचलन है अतः इस मंत्र के अनुष्ठान की विस्तृत विधि प्रस्तुत है* :—

छन्द — अस्य श्री मार्कण्डेय पुराणान्तर्गत सर्वबाधा इति मंत्रस्य, वेद व्यास ऋषिः, अनुष्टुप छन्दः माँ दुर्गा देवता मम (यहाँ पर शत्रु का नाम लें) नामक रिपु नाशार्थे (रोग शमनार्थे) वा अभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः।

करन्यास व हृदयादि न्यास

ॐ सर्वा — अंगुष्ठकाभ्यां नमः/हृदयाय नमः।

ॐ बाधा प्रशमनं — तर्जनीभ्यां स्वाहा/शिरसे स्वाहा।

ॐ त्रलोक्यस्याखिलेश्वरी — मध्यमाभ्यां वषट्/शिखायैवषट्।

ॐ एवमेव इति — अनामिकाभ्यां हुम्/कवचाय हुम्।

ॐ त्वयाकार्य इति — कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्/नेत्र त्रयाय वौषट्।

ॐ अस्मद् वैरिविनाशनं इति — करतल करपृष्ठाभ्यां फट्/अस्त्राय फट्।

(प्रथम करन्यास कर इसी प्रकार हृदयादि न्यास करे)

वर्ण न्यास

ॐ सं नमः मूर्ध्नि, वीं नमः ललाटे, वां—दक्षिणकर्णे धां—वामकर्णे, प्रं—दक्षिण नासिकायां, शं—वामनासायां, मं—उत्तरोष्ठे, नं—अधरोष्ठे, त्रैं—उर्ध्वदन्तपंक्तौ, लों—अधोदन्तपंक्तौ, क्यं—जिह्वायां, स्यां—कण्ठे, खि—दक्षऊरौ लें—वाम ऊरौ, श्वं—दक्षिणमणि वन्धे, रिं—वाममणिवन्धे, एं—दक्षकरतले, वं—वामकरतले, में—दक्षिण कर पल्लवे, वं—वाम करपल्लवे, त्वं—हृदये, यां—उदरे, कां नाभौ र्यं—गुह्ये, अं—दक्षिण कुक्षिमूले, स्मत्—वामकुक्षिमूले, वैं—दक्षिण जानुनि, रिं—वामजान्वो, विं—दक्षिण तथा वाम जंघयो, नां—दक्षिण पादांगुलयो, शं—वामपादांगुलीषु, नं—इति पादयोः।

---

* उत्तराखण्ड से प्राप्त दुर्लभ हस्तलिखित ग्रंथ से। इसका प्रयोग शत्रु नाश, शत्रु पराजय व रोग शांति हेतु किया जाता है।

प्रार्थना

पाणिग्रन्थनमीलतो रिपुगणान्निघ्नन्त्यभीक्ष्णं मुहुः।
विघ्नध्वंसन कारिणी निजपद प्राप्तां भवन्तो जनान्॥

भक्तत्राण परायणा भयकारीं विद्वेषिणां सर्वतो।
भूयान्मे भव भूतये भगवतीं दुर्गारिगर्वोपहां॥

अर्थात् माँ दुर्गा दोनों हाथों के बीच मलकर शत्रुओं का संहार कर रही हैं, विघ्नों का निराकरण करने वाली, भक्तों को अभय देने वाली रक्षा करने वाली हैं, शत्रुओं के निमित्त भयकारी हैं। ऐसी दुर्गा माँ जो शत्रुओं के अहँकार को नष्ट करने वाली हैं, मेरे निमित्त मंगलकारी हों।

यथा सम्भव पूजा/व मानसिक पूजा कर मंत्र का एक लाख संख्या में जप करने के उपरान्त होम, तर्पणादि सम्पन्न करे।

मंत्र

ॐ सर्वबाधा प्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद् वैरि विनाशनं॥

शिव और उनके सिद्ध मंत्र

शिव के अर्थ हैं—शिवं करोति इति शिवयति अर्थात् जो सबका कल्याण करें वही शिव है। वास्तव में भगवान शिव यथानाम विश्व के कल्याण के ही कारण हैं। तैंतीस करोड़ देवी-देवताओं की पंक्ति में एक शिव ही ऐसे देवता हैं जो सभी की इच्छापूर्ण करते हैं। वेदों, उपनिषदों, पुराणों से लेकर लोककथाओं तक अनन्तकाल से भगवान शिव जी से सम्बन्धित जो भी साहित्य एवं कथानक मिलता है उससे स्पष्ट है कि शिव ही एक ऐसे व्यक्तित्व वाले देवता हैं जिनका किसी से बैर नहीं, जबकि अन्य देवता असुरों के शत्रु हैं, उनका परस्पर विरोध है, लेकिन भगवान शिव देवों, दानवों, असुरों, राक्षसों, यक्षों किन्नरों, गन्धर्वों आदि सभी के देतता हैं, सभी का उनके प्रति सम्मान है। देवताओं से विरोध होते भी दैत्यों ने यदि किसी की उपासना या तपस्या की है तो वह शिव की ही की है, वे सभी के विश्वास पात्र तथा पक्षपात रहित हैं और भगवान शिव ने भी "देव" और "दानवों" के विभेद से परे विरोध होते हुए भी सभी के प्रति समान रूप से कृपा की है। तभी तो महाबली रावण ने अपने मस्तक तक काटकर उन्हें अर्पित कर दिये। अत: उनका "शिव" नाम सर्वथा सार्थक है।

भारतीय संस्कृति में, जन मानस में भगवान शिव के इसी नि:स्वार्थ व्यक्तित्व का प्रतिबिम्ब है। उनमें न कोई स्वार्थ है न पक्षपात। वे स्वयं त्याग की आदर्श मूर्ति हैं। हैं तो वे त्रिलोकपति लेकिन वास्तव में उनके पास कुछ भी नहीं है.... श्मशान की उनका घर है, भूत-पिशाच ही उनके गण एवं सहचर हैं, पहनने को वस्त्र तक नहीं-चिता की भस्म का लेप करते हैं। दिशायें ही उनके वस्त्र हैं। मुण्डमाला ही आभूषण हैं, भाँग-धतूरा और विष का पान करते हैं। जहरीले साँपों को भी गले में शरण देते हैं। वर्तनों के रूप में मात्र खप्पर का प्रयोग करते हैं। ऐसे नि:स्वार्थ, त्यागी दिगम्बर शिव स्वयं मंगल एवं कल्याण के प्रतीक बन गये हैं। स्वार्थ और पक्षपात ही अनर्थों का मूल है, इनका परित्याग करने से ही देवत्व, धर्मत्व और अमरत्व की प्राप्त होती है। इनसे परे देवता तो क्या मनुष्य स्वयं भी देवता बन जाता है। फिर भगवान शिव तो इसके साक्षात प्रतीक हैं। क्या तैंतीस करोड़ देवी-देवताओं में ऐसा कोई और भी त्यागी देवता है?

क्या कमी है, जगदीश्वर शिव के पास, त्रैलोक्यपति होते भी ऐसा अमंगल रूप धारण करने की क्या आवश्यकता थी। इसके पीछे भी भगवान शंकर की लोक हितकारी मंगलकामना, शिव कामना ही है। प्रिय एवं आकर्षक वस्तु तो सभी को प्रिय होती है, सभी उनके निमित्त लालायित रहते हैं, अतः भगवान शिव ने समस्त सुख वैभव का लोकहित एवं जनहित में परित्याग कर अपने प्रयोग में ऐसे वस्तुओं को ग्रहण किया है जिसे अन्य परित्याग कर देते हैं। समुद्र मंथन से चौदह रत्नों का प्रादुर्भाव हुआ और उनके निमित्त देवता और दानवों में परस्पर छीनाझपटी हुई, इन्हीं में से निकला था एक विष कालकूट भी-जिसे न देवता लेना चाहते थे और न असुर ही अपितु दोनों ही इस महाविष से भयभीत थे। इस भयानक लोक सहारकारी विष को भगवान शंकर ने स्वयं पीकर न केवल विश्व को अभयदान दिया अपितु यह उनके त्यागमय एवं लोक कल्याण-कारी रूप का एक ज्वलन्त उदाहरण है। दूसरों को अमृत पिलाकर स्वयं विषपान करने वाला क्या और कोई है? विश्व, देश, या कुटम्ब के प्रमुख व्यक्ति का यह कर्तव्य होना ही चाहिए कि वह उत्तम वस्तुयें तथा सुख-सुविधायें दूसरों को प्रदान कर अपने लिए त्याग, परिश्रम व कठिनाइयों को रखें। इस आदर्श को प्रस्थापित कर भगवान शँकर ने देवताओं में भी सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया है। यदि शिव इस कालकूट को ग्रहण न करते तो वैमनस्य से देवताओं तथा दानवों समेत सभी का सर्वनाश निश्चय था। भगवान शिव ने इस विष को न तो पेट में उतारा और न वमन ही किया अपितु उसे कण्ठ में ही रोक कर 'नीलकँठ" हो गये। इस प्रकार लोक कल्याण की भावना से जो विभूति विषपान से भी नहीं हिचकता, ऐसी विभूति ही तीनों लोकों का ईश्वर हो सकती है। इस प्रकार भगवान शिव वास्तव में 'शिव" का एक प्रतीक बन गये हैं। उनका यह उदाहरण आज भी एक आदर्श रूप में, एक प्रतीक के रूप में नैतिक, सामाजिक राजनैतिक, पारिवारिक प्रत्येक क्षेत्र में अनेक प्रकार की शिक्षा दायक है। भगवान "शिव" के चरित्र से यदि समाज और राष्ट्र का नेतृत्व त्याग और निःस्वार्थ सेवा का आदर्श ग्रहण करें तो आज भी इस धरा पर स्वर्ग उतर सकता है।

यही कारण है कि भारतीय जन मानस में अनादिकाल से शिव जी के इस "शिव" रूप पर असीम श्रद्धा तथा विश्वास है। कोटि-कोटि जनता के हृदय में वे परमपूज्य रूप में विराजमान हैं। उनके लोक कल्याणकारी चरित्रों से वेद, उपनिषद, पुराण आदि भरे पड़े हैं। हड़प्पा तथा मोहनजोदड़ों आदि प्राचीनतम

उत्खननों से भी शिवपूजा की प्राचीनता सिद्ध हो चुकी है। कुछ लोगों का यह कहना कि शिवपूजा अवैदिक है—सर्वथा मूर्खता पूर्ण है, वास्तविक स्थिति तो यह है कि चारों वेद शिव जी की प्रशंसा एवं उनके कल्याणकारी रूप के वर्णन से भरे पड़े हैं। इसके विपरीत वास्तविकता तो यह है कि क्रिश्चियन तथा इस्लाम धर्म के जन्म लेने से पहले भारतेतरदेशों एवं विश्व में सर्वत्र शिव पूजा का व्यापक प्रचलन था, इस तथ्य को प्राचीन सभ्यता के विश्व विख्यात आलोचक डा० डूराँटविण्टरनित्ज आदि पश्चिमी विद्वान भी स्वीकार करते हैं। सुप्रसिद्ध पाश्चात्य विचारक एवं लेखक कर्नल राडने तो सप्रमाण यह सिद्ध किया है कि क्रिश्चियन तथा इस्लाम धर्म की स्थापना से पहले रोम, यूनान, मिश्र जापान, योरोप तथा अमरीका में शिव पूजा का व्यापक प्रचार था। विद्वानों का यह भी कथन है कि इस्लाम धर्म के प्रधानतीर्थ 'मक्का'' में स्थित पाषाणखंड ''संगे-असवद'' भी ''शिव'' का ही प्रतीक है। यहाँ पर बिना सिले एक वस्त्र धारण कर परिक्रमा करने का जो विधान है उससे इसकी पुष्टि होती है क्योंकि इस्लाम में परिक्रमा अर्थात प्रदक्षिणा का कोई विधान नहीं है।

शैव मंत्र

पुराणों में तथा तंत्रशास्त्र में भी सर्वत्र भगवान शिव के मंत्रों में 'पंचाक्षर' या 'षडक्षर मंत्र' को ही सर्वोपरि कहा गया है। इसमें ओंकार (ॐ) को जोड़कर छह अक्षर होते है अन्यथा पाँच अक्षर होते हैं। किन्तु जप में ओंकार लगाना आवश्यक है। शिव महापुराण के विश्वेश्वर संहिता अध्याय १०, में इस मंत्र के महत्व का वर्णन है। इसी महापुराण में (विश्वेश्वर सँहिता, अध्याय १७, से १९) इस मंत्र के अनुष्ठान की पूर्ण विधि का वर्णन हुआ है और वायवीय सँहिता, अध्याय १२, १३, १४ में इसके पँचाक्षर व षडक्षर का भेद, इसकी महिमा, न्यास आदि का विस्तार से वर्णन है। कहा है—''यह षडक्षरमँत्र सम्पूर्ण विद्याओं (मँत्रों) का मूल (बीज) है, जैसे वट बीज में महान वृक्ष छिपा हुआ है, उसी प्रकार अत्यन्त सूक्ष्म होने पर भी इस मँत्र को महान अर्थ से परिपूर्ण समझना चाहिए,''

तांत्रिक ग्रँथ 'मँत्र महार्णव' में भी इस मँत्र को ही सर्वश्रेष्ठ कहा गया है।

षडक्षर मंत्र

''ॐ नमः शिवाय''

विनियोग—ॐ अस्य शिवषडक्षरमँत्रस्यवामदेव ऋषिः, पँक्तिश्छन्दः, श्री

सदाशिवो देवता ॐ बीजं नमः शक्तिः शिवायेतिकीलकं, अभीष्ट सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। ×

न्यासाः—

वामदेव ऋषये नमः शिरसि, पंक्तिच्छन्दसे नमः मुखे, ॐ सदाशिव देवतायै नमः हृदये, ॐ बीजाय नमः गुह्ये, नमः शक्तये नमः पादौ, शिवायेति कीलकाय नमः सर्वांगे।

ॐ ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ नः तर्जनीभ्यां नमः

ॐ मं मध्यमाभ्यां नमः ॐ शिं अनामिकाभ्यां नमः,

ॐ वां कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॐ यं करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः

ॐ ॐ हृदयायनमः, ॐ नः शिरसे स्वाहा,

ॐ मं शिखायै वौषट, ॐ शिं कवचायहुम,

ॐ वां नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ यं अस्त्रायफट्।

दशाक्षर मंत्र

परमार्थिक दृष्टि से दक्षिणमार्गी साधना में भगवान शिव का 'दशाक्षर' मंत्र भी प्रसिद्ध है।

"ॐ नमो भगवते रुद्राय"

विनियोग—अस्य ॐ नमो भगवते रुद्राय इति दशाक्षर मंत्रस्य प्रजापति ऋषिः, विराटछन्दः, श्री रुद्रो देवता अभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः।

न्यास—ॐ ओं नमः शिरसि, ॐ नं नमः नासिकायां ॐ मों नमः ललाटे, ॐ भं नमः मुखे, ॐ गं नमः कण्ठे, ॐ वं नमः हृदये ॐ तें नमः दक्षिणहस्ते, ॐ रुं नमः वामहस्ते, ॐ द्रां नमः नाभौ, ॐ यं नमः पादयो।

इसमें हृदयादि न्यास तथा करन्यास वांछित नहीं हैं।

इसके अलावा भी एक और मंत्र उपलब्ध होता है, जो शिव की उपासना जगन्माता उमा जी के साथ करते हैं निम्न 'दशाक्षरी मंत्र' उपयुक्त है—

'ॐ उमामहेश्वराभ्यां नमः'

यह दशाक्षरी मंत्र उन साधकों के लिये महत्व का है जो सांसारिक कामनाओं के उद्देश्य से आराधना करते हैं।

× उपरोक्त विनियोग 'मंत्र-महार्णव' में बतलाया गया है।

'शिवमहापुराण' में विनियोग कुछ भिन्न है—'मं बीजं, यं शक्तिः, वां कीलकं' वर्णन है (वायवीय संहिता, अध्याय १३)।

भगवान शिव की उपासना में लिंगार्चन व जलाभिषेक का विशेष विधान है। विभिन्न कामनाओं के अनुसार विभिन्न द्रव्यों से लिंगों का निर्माण किया जाता है और इसी प्रकार विभिन्न कामनाओं के अनुसार विभिन्न द्रव्यों से अभिषेक का विधान है।

लिंग निर्माण हेतु कामनानुसार द्रव्य+

(अ) दीर्घायु हेतु हीरे से, रोगशान्ति हेतु मोती से, सुख हेतु हाथी से उत्पन्न गजमुक्ता से, शत्रुपराजय हेतु माणिक्य से, धन प्राप्ति हेतु पोखराज से यश हेतु नीलम से, शारीरिक पुष्टि हेतु पन्ने से सभी काममाओं की सिद्धि हेतु स्फटिक से बने शिवलिंग की पूजा अर्चना करें।

(आ) सौभाग्य प्राप्ति हेतु या सौभाग्य वृद्धि हेतु नमक (मिट्टी में नमक मिलाकर), सभी कामनाओं की सिद्धि हेतु मिट्टी के, काम (सांसारिक सुख) सुख हेतु तिलों के आटे का मारण हेतु तुष का, अन्न समृद्धि हेतु भस्म का प्रेम में वृद्धि हेतु गुड़ का, यश हेतु चन्दनपिष्ट आदि सुगन्धित गन्ध का, सुखहेतु शर्करा का, वंशवृद्धि एवं सन्तान कामना हेतु बाँस वृक्ष के अंकुरों का, रोगशान्ति हेतु गोबर का, शत्रुनाश हेतु हड्डी तथा बालों का, स्तंभन हेतु हल्दी के चूर्ण का बुद्धि-विद्या हेतु चावल के आटे का, यश सुख व धन हेतु दूध अथवा दही का दिव्य भोगों की प्राप्ति हेतु पुष्पों का शारीरिक पुष्टि हेतु आँवले के चूर्ण का कीर्ति व सौभाग्य हेतु नवनीत का अल्प मृत्यु निवारण हेतु दूब और गुरच का उच्चाटन हेतु पाकर का, ज्वरशान्ति हेतु चन्दन पिष्ट का, शान्ति हेतु कपूर का, धन की कामना से कस्तूरी का, रूप तथा सौन्दर्य की कामना से गोरोचन का, शान्ति हेतु कुंकुम व केशर का स्मृति तथा बुद्धि के विकास हेतु सफेद अगर का, धारणा शक्ति हेतु काले अगर का गौ समृद्धि हेतु गेहूँ के आटे का इष्ट-काम की सिद्धि हेतु मूंग की दाल का, बुद्धि के विकास हेतु चने के दाल का— शिवलिंग निर्माण कर प्रतिष्ठा, प्राणप्रतिष्ठा, पंचदश संस्कार करके विधिवत् अर्चना करें।×

\+ रुद्राभिषेक भास्करे, हेमाद्रिः।

× अनेक वस्तु ऐसी हैं जिनसे लिंग बनना संभव नहीं, जैसे नमक, दूध, दही आदि, अतः ऐसी वस्तुओं को मिट्टी या किसी अनुकूल द्रव्य के आटे में मिलाकर लिंग निर्माण करें।

लिंग निर्माण

ॐ हरायनमः (यह उच्चारण करते हुए लिंग निर्माण हेतु उपलब्ध सामग्री ग्रहण करे—हाथ में)।

ॐ आपो ज्योति रसोमृतं (पीण्डी बनाये)।

ॐ महेश्वरायनमः (लिंग रूप बनाये)।

ॐ शूलपाणये नमः (यथास्थान स्थापित करें) ।

ॐ पिनाकपाणये नमः (आवाहन अर्थात् स्वागत करें) ।

शुद्धभूमि पर अथवा सफेद शुद्ध वस्त्र के ऊपर 'शिवपीठ' (चन्दन आदि से) या अष्टकोण बनाकर उसके ऊपर लिंग स्थापन करे । चारों दिशाओं में शिवगणों की भी स्थापना करे (पूर्व में नन्दी, दक्षिण में गणेश वायव्य में स्कँद और उत्तर में उमा (पार्वती) को स्थापित करे) । तदुपरान्त विधि पूर्वक पूजा करे ।

शिव पूजन में रुद्राक्ष और भस्म (त्रिपुण्ड्र) धारण तथा विल्वपत्रों से पूजन आवश्यक है ।+ भस्म धारण की विधि यह है कि प्रातःकाल हो तो भस्म में जल मिलाकर, मध्याह्न में भस्म में गन्ध मिलाकर और सायँकाल सूखे भस्म से ही त्रिपुण्ड्र करे । ×

अभिषेक द्रव्य ÷

कामना विशेष के अनुसार अभिषेक द्रव्य इस प्रकार हैं :—

वर्षा की कामना से जल से, रोगशान्ति हेतु कुशा व जल से, सन्तान व पशु सुख प्राप्ति हेतु दही से, धन की कामना में गन्ने के रस से, धन की कामना से ही घी तथा शहद मिलाकर भी मोक्षकामना हेतु तीर्थ के जल से (जैसा कि काँवर धारी सुदूर तीर्थ स्थान से जल ले जाकर मन्दिरों में जलाभिषेक करते हैं), पुत्र की कामना में दूध से, शिव जी का अभिषेक करे ।

'महाकाल सँहिता' के अनुसार जल से शिव का जलाभिषेक करने से ज्वरशान्ति तो होती ही है साथ ही इससे सभी मनोकामना पूर्ण होती हैं ।

\+ बिना भस्म त्रिपुण्डेन बिना रुद्राक्षमालया ।
बिना मालूर पत्रेण नार्चयेत् पार्थिवं शिवं ।।

× प्रातः ससलिलं भस्म मध्यान्हे गन्ध मिश्रितं ।
सायान्हे निर्जलं भस्म एवं भस्म विलेपयेत् ।।

÷ पार्थिव चिन्तामणि [रुद्राभिषेक भास्करे सँग्रहीतं . ।

'शिवपुराण' के अनुसार एक हजार बार मंत्र पढ़कर घी की धारा से शिव जी का अभिषेक करने से वंश का विस्तार होता है। इसी प्रकार एक हजार बार मंत्र पढ़कर दूध से अभिषेक करने से जड़ता समाप्त होकर बुद्धि का विकास होता है। मानसिक तथा पारिवारिक उच्चाटन हो या पति-पत्नी में कलह हो तो भी दूध से इसी प्रकार अभिषेक करना चाहिए। शत्रुपराजय या शत्रुनाश हेतु एक हजार बार मंत्र पढ़ते हुए सरसों के तेल से अभिषेक करे। इसी प्रकार शहद से अभिषेक करने से आर्थिक लाभ होता है। गंगाजल का अभिषेक भोग व मोक्ष दोनों दायक है। गन्ने के रस से अभिषेक सुख, आनन्द व सभी मनोरथ पूर्ण करता है।

महर्षि 'पाराशर' के अनुसार पापों से मुक्ति हेतु शहद से, नीरोगता हेतु घी से, दीर्घायु हेतु दूध से सांसारिक कामोपभोग हेतु गन्ने के रस से, सन्तान की कामना से जल में शक्कर मिलाकर जल से, पदावनति होने पर पुनः पद प्राप्ति या पदच्युत होने पर पुनः पद प्राप्ति हेतु नारियल के जल से अथवा आम के फलों के रस से शिवाभिषेक करना चाहिए।

उत्तरोत्तर महत्व

केवल जलाभिषेक से यदि एक गुणा फल (पुण्य) की कल्पना करें तो गन्धोदक (चन्दन, कस्तूरी आदि गन्ध युक्त जल) या पंचगव्य या तिलोदक (तिल मिले जल) से अभिषेक का फल सौ गुणा होता है। दूध से अभिषेक हजार गुणा और यदि कपिला गाय का दूध हो तो लाख गुणा फल होता है। घी से अभिषेक का भी लाख गुणा फल प्राप्त होता है।

महामंत्र गायत्री

गायत्री मंत्र एक दिव्य महामंत्र है, इसके महत्व का यदि विस्तार से वर्णन किया जाय तो इसी विषय पर अनेक ग्रंथ बन सकते हैं। संक्षेप में इतना कहना ही पर्याप्त है कि यह मंत्र भौतिक सुख (धन, स्त्री, पति, पुत्रादि सुख, सम्पत्ति) तथा पारलौकिक सफलता (मोक्ष) दायक भी है। यही कारण है कि द्विजातियों के निमित्त समाज में त्रिकाल संध्या की व्यवस्था की होगी। गायत्री की महिमा से समस्त तंत्र शास्त्र, वेद, पुराण, उपनिषद भरे पड़े हैं।

यद्यपि गायत्री उपासना का विस्तृत विधान है, किन्तु गायत्री मंत्र जप का ही महत्व है।

गायत्री मंत्र का अर्थ देखे :—

"तत् (उस) सवितुः (प्रकाशमान) वरेण्यं (जो उपासना करने योग्य श्रेष्ठ) भर्गो (भर्गः = महान तेजस्वी शक्तिशाली) देवस्य (ईश्वर तत्व का) धीमहि (ध्यान करते हैं) धियो (धियः = बुद्धि को) यो (जो) नः (हमारी) प्रचोदयात् (प्रेरित करता है, प्रेरित करे)।"

अर्थात् परम तेजस्वी शक्तिशाली उस प्रकाशमान ईश्वर तत्व का जो सर्वथा उपासना करने योग्य श्रेष्ठ है, का ध्यान एवं उपासना करते हैं जो हमारी बुद्धि को सत्प्रेरित करे।*

तात्पर्य यह है कि मनुष्य अज्ञान होता है क्या काम उसके अनुकूल है क्या प्रतिकूल है, उसे क्या करना चाहिए क्या नहीं, किस कार्य से उसे लाभ या सफलता मिलेगी और किससे असफलता या हानि—वह कल्पना भले ही कर ले परिणाम नहीं जान सकता। अतः इस उपासना द्वारा वह ईश्वर से प्रार्थना करता है कि मेरे हित में जो हो उसी ओर मेरी बुद्धि को प्रेरित करें। अतः निश्चित है कि जब ईश्वर की कृपा होगी (उपासना साधना से) तब ईश्वर

---

* विस्तृत रूप से गायत्री मंत्र की व्याख्या देखनी हो तो महानिर्वाण तंत्र, भरद्वाज स्मृति, गायत्री व्याख्या, संध्या दर्पण आदि ग्रंथ देखें।

स्वयं उसकी बुद्धि को इस प्रकार प्रेषित एवं संचालित करेंगे कि जो उसके हित में हो, लाभ व सफलतादायक हो, रक्षाकारी हो, लोक व परलोक में हितकारी हो। छोटा शिशु किसी वस्तु का उपयोग नहीं जानता, वह केवल उसके रूपाकर्षण से प्रभावित होकर अभिभावकों से उसे मांगने का हठ करता है, परन्तु स्वयं अभिभावक उसे जो वस्तु देंगे—वह निश्चय ही उसके निमित्त हितकारक होगी।

इस प्रकार जिसका दिशा निर्देशक स्वयं ईश्वर हो उसे क्या कष्ट, क्या चिन्ता, क्या भय और क्या अभाव हो सकता है ?

नित्यप्रति की जाने वाली संध्योपासना रूपी गायत्री तथा 'गायत्री पुरश्चरण' एवं प्रयोग में भिन्नता है।

पुरश्चरण में मात्र 'तत्सवितुर्वरेण्यं— प्रचोदयात्' मंत्र का जप होता है (अर्थात् ॐ भूर्भुवः स्वः) जोड़ने की आवश्यकता नहीं है।*

विनियोग—ॐ तत्सवितुरिति मंत्रस्य विश्वामित्र ऋषिः, सविता देवता, गायत्री छन्दः अभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः।

देह न्यास—विश्वामित्र ऋषये नमः शिरसि,

गायत्री छन्द से नमः मुखे सवितृ देवताय नमः हृदये।

करन्यास व अंगन्यास

तत्सवितुरिति—अंगुष्ठाभ्यां नमः (हृदयायनमः)
वरेण्यं—तर्जनीभ्यां नमः (शिरसे स्वाहा)
भर्गोदेवस्य—मध्यमाभ्यां नमः (शिखायै वौषट्)
धीमहि—अनामिकाभ्यां नमः (कवचाय हुम्)
धियोयोनः—कनिष्ठिकाभ्यां नमः (नेत्रत्रयाय वौषट्)
प्रचोदयात्—करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः (अस्त्रायफट्)।

पुरश्चरण की संख्या के बारे में विभिन्न मत हैं।

ऋग्विधान ग्रंथ के अनुसार तीन लाख, निर्वाण तंत्र के अनुसार बत्तीस लाख, अनन्तदेव के अनुसार चौबीस लाख मंत्र जपने से मंत्र सिद्ध होता है। मेरे मत से गायत्री तंत्र का मत अर्थात् ३२००,००० जप ही सिद्धदायक है।

---

* देखें - धर्म सिन्धु।

हविष्यान्न का अल्पाहार करते हुए पुरश्चरण करना उचित है। तीर्थस्थल में, वेल वृक्ष के नीचे जप करना सफलतादायक है।

(ॐ भूर्भुवः स्वः) तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धिमहि।
धियो योनः प्रचोदयात् ।।

विभिन्न कामनाओं के अनुसार भी गायत्री पुरश्चरण की सौ से अधिक विधियाँ हैं, इनसे विभिन्न प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त करने की और पुरश्चरण की विधि 'गायत्री तंत्र' में विस्तार से वर्णित है।

गायत्री उपासना सम्बन्धी अन्य साहित्य गायत्री यंत्र, पूजा विधि, मुद्रा, शापमोचन, अस्त्रोपसंहरण, गायत्री कवच, गायत्री हृदय, पंजर, स्तोत्र, सहस्त्र-नाम इत्यादि साहित्य गायत्री तंत्र, उपेन्द्र निवेदनम्, संध्यादर्पण, धर्मसिन्धु, वशिष्ठ संहिता आदि ग्रंथों में उपलब्ध हैं।

कामना विशेष हेतु प्रयोग

उपरोक्त प्रकार से पुरश्चरण द्वारा गायत्री मंत्र सिद्ध हो जाने के उपरान्त समय-समय पर इस मंत्र के द्वारा अनेक प्रयोग किये जा सकते हैं, प्रमुख प्रयोग इस प्रकार हैं : —

(१) आग, आँधी आदि का भय होने पर सौ बार गायत्री मंत्र पढ़कर उस दिशा को पत्थर या मिट्टी का ढेला फेंकने से आँधी का भय शान्त हो जाता है।

(२) बन्धन में पड़ा व्यक्ति मानसिक रूप से गायत्री का जप करे।

(३) रोग बाधा, विष बाधा, भूत बाधा में कुशा द्वारा गायत्री मंत्र से झाड़ने या गायत्री मंत्र से मंत्रित जल पिलाने से शान्ति होती है। अथवा भस्म को अभिमंत्रित कर शिर में धारण करने से भी यही प्रभाव होता है।

(४) सात दिन तक केवल दूध पीकर इस मंत्र को जपने से, अथवा तीन दिन व तीन रातों निरन्तर भूखा रहकर इस मंत्र को जपने से, या न्यूनतम १०० बार प्रतिदिन एक माह तक जल में (कण्ठ तक) बैठकर मंत्र जपने से अपमृत्यु भय से रक्षा व आयु में वृद्धि होती है।

(५) वेल वृक्ष के नीचे बैठकर जप करने से पद लाभ होता है।

(६) गायत्री मंत्र से अभिमंत्रित कर ब्राह्मी रस सेवन से बुद्धि तीव्र होती है।

(७) एक माह तक प्रतिदिन एक हजार गायत्री जप से आयु वृद्धि होती है। निरन्तर तीन माह तक जपने से आर्थिक लाभ होता है।

(८) रात में हविष्यान्न करते हुए एक पैर से खड़ा होकर हाथों को ऊपर उठाकर साल भर तक प्रतिदिन तीन सौ बार मंत्र जपने से अथवा प्रतिदिन एक हजार एक सौ जपने से कामना पूर्ण होती है।

एक वर्ष से लेकर ग्यारह वर्षों तक यह प्रयोग किया जा सकता है, इससे उत्तरोत्तर सिद्धियाँ प्राप्त होती जाती हैं।

(९) प्राणायाम क्रिया द्वारा (प्राण व अपानवायु को रोक कर) प्रतिदिन ३०० बार एक महीने भर जपने से अथवा १३०० जपने से कार्य सिद्ध होता है।

(१०) विभिन्न पापों से मुक्ति हेतु प्रायश्चित रूप में भी गायत्री मंत्र का जप समस्त पापों से मुक्ति देने वाला है।*

दिव्यास्त्रों में गायत्री मंत्र का प्रयोग

आज आणविक शस्त्रों का युग है। पुराणकाल में विभिन्न दिव्यास्त्रों (मंत्रमुक्त शस्त्रों) का वर्णन पाया जाता है—ब्रह्मास्त्र, आग्नेयास्त्र, वायव्यास्त्र, पाशुपतास्त्र आदि। यह सब दिव्यास्त्र 'गायत्री मन्त्र' से ही अभिमंत्रित होते थे। यद्यपि आज के युग में बात काल्पनिक लगती है लेकिन क्या वर्तमान में कोई ऐसा व्यक्ति भी है जो इस प्रकार कठोर मंत्र साधना कर सके ?

कुछ दिव्यास्त्रों और उनसे सम्बन्धित गायत्री मन्त्र की कठोर साधना इस प्रकार उपलब्ध होती है। इससे गायत्री मंत्र की महत्ता पर प्रकाश पड़ता है।*

ब्रह्मास्त्र—शत्रु को व्यक्तिगत रूप से अथवा सैन्य का सामूहिक रूप से मारक, महान संहारक आयुध।

ब्रह्मदण्ड—सामूहिक रूप से शत्रु सेना संहारक आयुध।

ब्रह्मशिर—ब्रह्मदण्ड के ही समान कुछ कम प्रभाव का।

पाशुपतास्त्र—सामूहिक रूप से शत्रु सेना संहारक।

वायव्यास्त्र—सामूहिक रूप से शत्रु सेना संहारक। इस आयुध के प्रयोग से शत्रु सेना में प्रचण्ड वायु (आँधी) चलकर सेना नष्ट कर डालती थी।

---

* गायत्री तंत्र।

* देखें—मातृ का विलास (१८६६ ई० का दुर्लभ संस्करण)।

आग्नेयास्त्र—महान संहारक, आधुनिक अणु शस्त्रों के समान शत्रु सेना में अग्नि लगा देने वाला।

नारसिंहास्त्र—इसके प्रयोग से सैकड़ों सिंह स्वयमेव प्रकट होकर शत्रु सेना का सफाया करते थे, शत्रु सेना में भगदड़ मच जाती थी।

वारुणास्त्र—शत्रु सेना में भयँकर जल एवं वर्षा तथा बाढ़ द्वारा भगदड़ मचा देने वाला।

सर्पास्त्र—इसमें प्रयोग से असंख्य सर्प स्वयमेव प्रकट होकर शत्रु सेना को काटते थे। इससे भगदड़ मच जाती थी।

गरुड़ास्त्र—इसके प्रयोग से सैकड़ों गरुड़ स्वयमेव उत्पन्न होकर शत्रु सेना को नोच खाने लगते थे।

वैष्णवास्त्र—इसका प्रयोग गरुड़ास्त्र के शान्त्यर्थ किया जाता था, यह यह शान्ति अस्त्र है।

ब्रह्मास्त्रं प्रथमं प्रोक्तं द्वितीयं ब्रह्मदण्डकम्।
ब्रह्मशिरस्तृतीयं च चतुर्थं पाशुपतं मतम्॥
वायव्यं पंचमं प्रोक्तमाग्नेयं षष्टकं स्मृतं।
नारसिंह सप्तमं च तेषां भेदाह्यनन्तकाः॥

जैसा कहा गया है कि तेषां भेदाह्यनन्तकाः, यह शस्त्रों का रूप मात्र है, इनमें से प्रत्येक के सैकड़ों भेद होते थे।

प्रयोग विधि

'धनुर्वेद' में इन शस्त्रों के प्रयोग का भी वर्णन है। इन सब में मुख्यतः गायत्री-मंत्र की प्रधानता है। उसके निर्धारित संख्या मे जप और निर्दिष्ट विधि से मंत्रणा करने पर जो कि प्रत्येक शस्त्र के हेतु भिन्न-भिन्न है, शस्त्र प्रयोग का विधान है।

ब्रह्मास्त्र

दादिदन्ता गायत्री (ॐ दयादचोप्रनोयोयोधिहिमधीस्य वदेर्गोभण्यं-रेर्वतुविसतदस्वोवर्भुभूरोम्) का विपरीत क्रम से पहले दस खरब जप करके, पश्चात् बाण को इसी मंत्र से अभिमंत्रित करे—

दादिदन्ताश्च सावित्री विपरीतां जपेत्सुधीः।
जप्त्वा पूर्वं निखर्वंचाभिमन्त्र्य विधिवच्छरम्॥

संहार (ब्रह्मास्त्र को वापस लेने, शान्त्यर्थ अथवा उसे काटने, प्रभावहीन करने) को यथाक्रम दादिदन्ता गायत्री का पूर्ववत् (ॐ भूर्भुवः स्वः द्तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्द्) क्रम से जप करके मंत्रित शर छोड़े।

ब्रह्मदण्ड

"ॐ प्रचोदयात् + यो नो धियः + धीमहिदेवस्य + भर्गोवरेणियम् + सवितुस्तत् + अमुक शत्रु + हन हन हुं फट्" मंत्र को प्रथम दो लाख जप करके मंत्रित शर छोड़े—

ब्रह्मदण्डं प्रवक्ष्यामि प्रणवं पूर्वमुच्चरेत् ।
ततः प्रचोदयाज्जेयं ततो नो यो धियःक्रमात् ॥
ततो धीमहिदेवस्य ततो भर्गो वरेणियम् ।
सवितुस्तच्च योक्तव्यममुकशत्रुं तथैव च ॥
ततो हन हन हुं फट् जप्त्वा पूर्व द्विलक्षकम् ।
अभिमंत्र्य शरं तद्वद् प्रक्षिपेच्छत्रुषु स्फुटम् ॥
नश्यन्ति शत्रवः सर्वेयमतुल्या अपि ध्रुवम् ।
एतदेव विपर्यस्तं जपेत्संहार सिद्धये ॥

यहाँ भी इस शस्त्र को प्रभावहीन करने के हेतु पूर्वोक्त मंत्र को विपरीत जपना चाहिये। इसी प्रकार ब्रह्मशिर के सम्बन्ध में कथन है।

ब्रह्मशिरः प्रवक्ष्यामि प्रणवं पूर्वमुच्चरेत् ।
धियो योनः प्रचोदयाद्भर्गोदेवस्य धीमहि ॥
तत्सवितुर्वरेणियं शत्रून्मे हनहनेति च ।
हुं फट् चैव प्रयोक्तव्यं क्षिपेद् ब्रह्मशिरस्ततः ॥
पुरश्चर्या पुरःकृत्वा त्रिलक्ष नियतः शुचिः ।
नश्यन्ति सर्वे रिपवः सर्वे देवासुरा अपि ॥
इदमेव विपर्यस्तं प्रयोक्तव्यं विकर्षणे ॥

"ॐ धियो योनः प्रचोदयात्, भर्गोदेवस्य धीमहि, तत्सवितुर्वरेणियं, शत्रुन्मेहनहन, हुं फट्"—मंत्र तीन लाख जप के बाद प्रयोग होता है। संहारार्थ (शान्त्यर्थ) इन पदों को विपरीत जपें।

पाशुपतास्त्र

दादिदन्ताश्च सावित्री प्रोच्य प्रणवमेवच ।
श्लींपशुहुँफट् अमुक शत्रुन् हन हन हुँ फट् ।।
जप्त्वापूर्व द्विलक्षं च ततः पाशुपतंक्षिपेत् ।
पुनस्तदेव व्यस्तं स्यात्संहारे तां नियोजयेत् ।।

'ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ द तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात्दश्लीं पशुहुंफट् अमुक शत्रुन हन हनहुँ फट्' मंत्र दो लाख जपने पर प्रयोग होता है ।

संहारार्थः (शान्त्यर्थ) हेतु इसी को उलटे क्रम से जपे ।

वायव्यास्त्र

ॐ वायव्ययावायव्यायाण्यौर्वाययावा (तथा) ।
'अमुकशत्रून्हनहन हुं फट्' चैव प्रकीर्तयेत् ।।
पूर्वमेव तथा जप्त्वा नियुतंद्वितयं तथा ।
पुनः संहाररूपेण संहारं च प्रकल्पयेत् ।।
अस्त्र वायव्यकं नाम देवानामपि वारणम् ।।

अर्थ स्पष्ट है। उपर्युक्त मंत्र दो करोड़ जपने पर प्रयोग होता है ।

आग्नेयास्त्र

ओमग्निस्त्यतादृदुभूं च शिवंवनाश्वाविणि,
दृगादुतिदशरूपनः सदवेतिहादतितोयतिराम—
मसोहिवावान सुसेदवेबया, अमुक शत्रून्,
पूर्वोक्तां च पुरश्चर्या कृत्वाशस्त्रोभि योजयेत ।
इमं मंत्रं पुनर्व्यस्त संहारे चैव योजयेत ।।

नारसिंहास्त्र

'ॐ वज्रनख वज्रद्रष्टायुधाय महासिंहाय हुँ फट्' इसको एक लाख जपकर प्रयोग करें। शान्त्यर्थ विपरीत क्रम से, इत्यादि ।

शस्त्राभ्यासी के हेतु इन शस्त्रों का प्रयोग (शत्रु पर प्रयोग) और संहार (शत्रुपक्ष द्वारा इन शस्त्रों का अपने ऊपर प्रयोग होने पर उनसे बचाव एवं शान्त्यर्थ), दोनों क्रियाओं में निष्णात होना आवश्यक है। यह एक संक्षिप्त

भूमिका है, वास्तव में इनके पीछे बड़ी जटिल क्रियाएँ हैं, जो जन-सामान्य के वश की बात नहीं, कहीं भी थोड़ी-सी क्रिया में त्रुटि होने पर स्वयं अपने और अपने पक्ष के हित में अनिष्ट हो सकता है।

यह उल्लेखनीय है कि गुरु लोग कड़ी साधना और परीक्षा के बाद इनकी गुप्त क्रियाओं को बतलाते थे। पुराण, रामायण और महाभारत में ऐसी कथाएँ यत्र-तत्र हैं। महाभारत के नायक अर्जुन को पाशुपतास्त्र की क्रिया कितनी साधना से प्राप्त हुई। शिष्य के धैर्य की परीक्षा और सहनशीलता का परीक्षण आवश्यक है, अन्यथा कहीं दुरुपयोग न हो। इस प्रकार के शस्त्रों का प्रयोग आपातकाल में अन्तिम अवस्था में होता था, यह पुराण महाभारतादि से स्पष्ट है, सामान्यतः ये शस्त्र युद्ध में प्रयोग नहीं होते थे।

दूसरी ओर युद्धाभ्यासी को संहार-क्रिया का भी पूर्ण ज्ञान होना चाहिये।

प्रतिघातक शस्त्र

शत्रुपक्ष द्वारा प्रयोग में लाये गये शस्त्रों का जिन शस्त्रों से रक्षा हो, उन्हें प्रतिघातक शस्त्र कहते हैं। प्रतिघातक-शस्त्र (दिव्यास्त्रों के) दो प्रकार के हैं—

उसी शस्त्र की संहार-क्रिया द्वारा शांति।

दूसरे प्रकार का दिव्यास्त्र छोड़कर प्रतिघात जैसे—

(अ) आग्नेयास्त्र का वारुणास्त्र से (आग पानी से बुझेगी)।

(आ) वारुणास्त्र का वायव्यास्त्र से (वायु से बादल हटेंगे)।

(इ) वायव्यास्त्र का सर्पास्त्र से।

(ई) सर्पास्त्र का गारुड़ास्त्र से।

(उ) गारुड़ास्त्र का वैष्णवास्त्र से।

(ऊ) पाशुपतास्त्र का ब्रह्मास्त्र से इत्यादि।

आधुनिक युग में इन दिव्यास्त्रों को कुछ कोरी कल्पना भी मानते हैं, परन्तु वास्तव में यह कल्पना नहीं है, सत्य है : हाँ आधुनिक मानव के लिए यह वास्तव में काल्पनिक हो गये हैं, क्योंकि इतनी साधना इतनी सहनशीलता, इतना व्यापक ज्ञान, इन जटिल क्रियाओं का ज्ञान आज के मानव में नहीं है। यह महानतम साधना है।

वैष्णव मंत्र

वैष्णव तंत्र एक शुद्ध तंत्र है जिसमें वाममार्गी साधना एवं षट्कर्मों का कोई स्थान नहीं है, केवल सात्विक एवं परमार्थ को समर्थित उपासना पद्धति है। इस तंत्र में श्री वासुदेव (विष्णु) तथा उनके दशावतारों (राम, कृष्ण, बामन, नृसिंह आदि) की उपासना होती है. बौद्ध उपासना पद्धति में (महायान में) मान्य भक्ति साधना' भी वैष्णव प्रभाव से अभिभूत है।

दर्शन शास्त्र के 'आत्मबत् सर्व भूतेषु'' ''शुनिः चैवश्वपाके च पण्डिता: समदर्शिनः'' सिद्धान्तों के आधार पर जीव मात्र को ईश्वर का अँश मानकर सम्पूर्ण जीवों में समानता, सेवा, परोपकार को ही प्रधान कर्तव्य माना गया है। ''जीवो ब्रह्मेव नापरः'' यदि जीव ही ब्रह्म का अँश है, तो समस्त राग, द्वेष, क्रोध, मत्सरता त्याग कर जीव मात्र का हित, परोपकार ही सर्वोत्तम साधन है। इसी कारण वैष्णवों के उपास्य देव श्री कृष्ण का चरित्र भी परोपकार का एक आदर्श है। गायों और गोपालों को चारों ओर से घेरने वाले दावानल को वे स्वयँ पी जाते हैं, यमुना के विषधर कालिया का वे मंथन करते हैं, गोवर्धन पर्वत को छत्र रूप में धारण कर इन्द्र के कोप से गोकुल की रक्षा करते हैं, अत्याचारी कंस और कौरवों तथा अन्यान्य दुष्टों का संहार कर कोटि-कोटि जनता को संकट से मुक्त करते हैं, वही कृष्ण विष्णु रूप में एक गज की पुकार पर बैकुण्ठ से दौड़ पड़ते हैं, इत्यादि पग-पग पर उनका कर्तव्य, परोपकार, पर हित भावना से ओतप्रोत है।

सर्वव्यापी प्रेम ही परम धर्म है, इसी भावना से पुराणों से पुंडरीक, अम्ब-रीष, रुक्माँगद आदि सैकड़ों भागवत पुरुषों के चरित्र का उज्वल वर्णन हुआ है। सम्राट रन्तिदेव का अकाल में अड़तालीस दिनों के उपवासोपरांत प्राप्त थोड़ा सा अन्न भी भूखे लोगों को बांट देना और लोटे का जल भी स्वयँ प्यासा रहकर प्रसन्नता पूर्वक एक चाण्डाल को पिला देना और यह कहना कि ''मुझे न तो मोक्ष की कामना है, न अष्ट सिद्धि आदि भौतिक समृद्धि की। पुनर्जन्म भी रहे या न रहे इसकी भी चिन्ता नहीं है, मैं तो केवल इतना चाहता हूँ कि किसी

प्रकार दुखी लोगों के दुख निवारण में सहायक हो सकूं' परहित की भावना कितनी बलवती है। राजा महीरथ तो यहाँ तक कहते हैं कि 'भाई, मुझे इन दुखी लोगों से अलग मत करो, इन्हें छोड़कर मैं बैकुण्ठ नहीं जाना चाहता। संसार में वह मनुष्य पापी है जो समर्थ होकर भी आर्तों का संताप न हरे।... संसार में दुखी जनों का दुख नाश किये विना जो सुख मिलता हो इस से तो नरक अच्छा है।" राजा शिवि का चरित्र भी ऐसा ही उज्वल है, जिसने शरणागत कबूतर की रक्षा के निमित्त स्वयं अपने देह का मांस काटकर बाज को दिया, उनका कथन है कि चलते, बैठते सोते सभी अवस्थाओं में परोपकार, परदुख निराकरण ही धर्म है जो परहित चिंतक नहीं है वह मानव नहीं पशु है। वास्तव में जो पुण्य, जो सुख आर्तजनों के दुख दूर करने पर प्राप्त होता है उसके आगे स्वर्ग और मोक्ष कुछ भी नहीं है -

न स्वर्गे नापवर्गेऽपि तत्सुखं लभते नरः।
यदार्त्तजन्तु निर्वाणदानोत्थमिति मे मति ॥

वैष्णव सम्प्रदाय में परमार्थिक (मोक्ष) कामना से 'द्वादशाक्षर मंत्र' और 'अष्टाक्षर मंत्र' ही मुख्य है।

द्वादशाक्षर मंत्र इस प्रकार है —

"ॐ **नमो भगवते वासुदेवाय**"

कुछ ग्रन्थों में 'ॐ **नमो भगवते वासुदेवाय नमः**' ऐसा भी उल्लेख मिलता है (अग्नि पुराण, अ. २५)।

अष्टाक्षर मंत्र इस प्रकार है —

"ॐ **नमो नारायणाय**"

इसके न्यासादि इस प्रकार हैं—

विनियोग—अस्य श्री नारायणाष्टाक्षर मंत्रस्य साध्यनारायणऋषि-गायत्री छन्द :, श्री परमात्मा देवता वं बीजं, आयेतिशक्तिः, नमः इतिकीलकं, न्यासे तथा अभीष्ट सिद्धये जपे च विनियोगः।

न्यासा -

देहन्यास—साध्य नारायण ऋषये नमः शिरसि, गायत्रीछन्दसेनमः मुखे,
श्री परमात्मा देवताय नमः हृदि, वं बीजाय नमः गुह्ये,
आयेति शक्तये नमः पादयोः, नमः कीलकाय इतिसर्वांगे।

करन्यास – ॐ ॐ नँ क्रुद्धोल्काय—अँगुष्ठाभ्यांनमः।

ॐ मों महोल्काय—तर्जनीभ्यां नमः।

ॐ नाँ वीरोल्काय—मध्यमाभ्यां नमः :

ॐ राँ विद्युदुल्काय—अनामिकाभ्यां नमः।

ॐ यँ सहस्त्रोल्काय—कनिष्ठिकाभ्यां नमः।

ॐ णाँ यँ करतल करपृष्ठाभ्यां नमः।

हृदयादिन्यास—ॐ ॐ नँ क्रुद्धोल्काय शुक्लवर्णाय हृदयायनमः।

ॐ मों महोल्काय हिरण्य वर्णाय शिरसे स्वाहा।

ॐ नाँ वीरोल्काय कृष्णवर्णाय शिखायै वौषट्।

ॐ राँ विद्युल्काय रक्तवर्णाय कवचाय हुम्।

ॐ यँ सहस्त्रोल्काय कुंकुम वर्णाय नेत्रत्रयाय वौषट्।

ॐ णाँ यँ अस्त्राय फट्।

कुछ अन्य मंत्र इस प्रकार हैं :—

ब्रह्मा जी का मंत्र—'ॐ तत्सद् ब्रह्मणे ॐ नमः'

विष्णु मंत्र—'ॐ विष्णवे नमः'

नृसिंह मंत्र—'ॐ क्ष्रौं ॐ नमो भगवते नरसिंहाय नमः'

वराह मंत्र—'ॐ भूर्नमो भगवते वाराहाय'

न्यास – सामान्यतः जहाँ मंत्रों का न्यास नहीं दिया गया है, वहां पर यह विधान है कि मंत्र के आरम्भ में जो अक्षर (व्यंजन) हो, उसमें क्रमशः आ, ई, ऊ, ऐ, औ, अः की मात्रा संयुक्त कर अँगन्यास व करन्यास किया जाता है, जैसे 'ॐ नमोनारायणाय' मंत्र में इस प्रकार भी न्यास कर सकते हैं। ॐ नां—अँगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ नीं—तर्जनीभ्यां नमः, ॐ नूं मध्यमाभ्यां नमः, ॐ नैं अनामिकाभ्यां नमः, ॐ नौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः, ॐ नः करतल करपृष्ठाभ्यां नमः। इसी प्रकार हृदयादि न्यास भी कर सकते हैं। अथवा मात्र 'ॐ' कार से ही न्यास कर सकते हैं।

वैसे तो वैष्णव सम्प्रदाय में दश मुख्य अवतार हैं और विष्णु ही क्या सभी देवताओं के सहस्त्र नाम हैं, इन नामों में से किसी भी नाम का मंत्र रूप में जप किया जा सकता है। इन सहस्त्र नामों में भी मुख्य (१२) जपनीय नाम (मंत्र) इस प्रकार हैं—

ॐ मधुसूदनायनमः, ॐ पद्मनाभाय नमः,

ॐ त्रिविक्रमाय नमः, ॐ दामोदराप नमः,

ॐ वामनाय नमः, ॐ केशवाय नमः,

ॐ श्रीधराय नमः, ॐ नारायणाय नमः,

ॐ हृषीकेशाय नमः, ॐ माधवाय नमः,

ॐ गोविन्दाय नमः, ॐ विष्णवे नमः,

श्री राम मंत्र—श्री राम का षडक्षर मंत्र प्रसिद्ध है। जिसका मंत्रोद्धार इस प्रकार है : —

अनन्तो न्यासतः सेन्दु बीजं रामाय हृन्मनुः।
षडक्षरोयमादिष्टो भजतां कामदोर्मणिः ।।

विनियोग – ॐ अस्य श्री राम षडक्षर मंत्रस्य, ब्रह्माऋषी गायत्री छन्दः, श्री रामो देवता, रां बीजं नमः इति शक्तिः, य इति कीलकं सर्वाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः ।

न्यासा—
ॐ रां—अंगुष्ठाभ्यां नमः/हृदयाय नमः ।
ॐ रीं—तर्जनीभ्यां नमः/ शिरसे स्वाहा ।
ॐ रूं—मध्यमाभ्यां नमः/शिखायै वौषट् ।
ऊ रैं —अनामिकाभ्यां नम./कवचाय हुम् ।
ॐ रौं —कनिष्ठिकाभ्यां नमः/नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ॐ रः—करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः/अस्त्राय फट् :

षडक्षर मंत्र—'रां रामायनमः

इसके अतिरिक्त श्री राम के निम्न दो मंत्र भी सिद्ध एवं प्रभावकारी हैं।

(अ) "श्री राम जय राम जय जय राम"

यह एक महामंत्र है, इसके २१ बार जप करने से ही ब्रह्महत्यादि महा-पातकों से मुक्ति मिल जाती है—

श्रीशब्द पूर्वं जप शब्द पूर्वं जपद्वयेनापि पुनः प्रयुक्तं ।
त्रिःसप्तकृत्वो रघुनाथ नाम जपान्निहन्याद्विजकोटि हत्याः ।।

(आ) 'राम'

यह द्वयक्षर मंत्र ही महामंत्र है : —

उल्टा नाम जपत जग जाना,
वाल्मीकि भे ब्रह्म समाना ।

श्री रामनामामृत मंत्र बीज संजीवनी चेम्मनसि प्रविष्टा ।
हालाहलं वा प्रलयानलं वा मृत्योर्मुखं वा विशतांकुतो भीः ॥

निष्काम एवं परमार्थिक उपासना में (मोक्ष कामना से) उपरोक्त मंत्रों का जप ही उत्तम है। लेकिन वैष्णव धर्म में दीक्षित जो गृहस्थ परिवार आर्थिक व स्त्री पुत्रादि सुख आदि सांसारिक कामना से उपासना करें उन्हें शक्ति से समन्वित मंत्र का जप करना चाहिए, जैसे—

राधा कृष्ण, सीता राम,
लक्ष्मी नारायणाय नमः, इत्यादि।

माँ सीता और राधा जी के मंत्र

माँ सीता जी श्री राम जी की तथा माँ राधा श्री श्रीकृष्ण जी की परम शक्तियाँ हैं। अतः शक्ति रूप में इनकी उपासना भी वैष्णव सम्प्रदाय में विशेष स्थान रखता है। वास्तव में राधा तथा सीता जी महामाया आदि शक्ति का ही रूप हैं, नारद पंचरात्र (२-३-३८) में कहा गया है :—

रा शब्दोच्चारणाद् भवतो भवित मुक्ति च राति सः ।
धा शब्दोच्चारणेनैव धावत्येन हरेः पदं ॥

इसी प्रकार (२-३-५५ में—

"प्राणाधिष्ठात्रि या देवी राधा रूपा च सा मुने' कहा गया है।

इस प्रकार—राधा, सीता, सीता राम, राधा कृष्ण यह नाम मंत्र ही मुक्ति दायक सिद्ध मंत्र हैं।

'सीता गायत्री' और 'राधा गायत्री' मंत्र इस प्रकार हैं—

ॐ जनकनन्दिन्यै विद्महे, भूमिजायै धीमहि ।

तन्नो सीता प्रचोदयात् ।।

ॐ वृषभानुजायै विद्महे, कृष्ण प्रियायै धीमहि ।
तन्नो राधाः प्रचोदयात् ।।

सन्तान गोपाल मंत्र* (सन्तान प्राप्ति हेतु)

"ॐ ह्रीं जीं क्लीं ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ नमो भगवते वासुदेवाय,
देवकी सुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते,
देहि मे तनयं कृष्ण स्वामहं शरणं गतः"

---

* दुर्लभ प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथ पर आधारित ।

सात कुमार देवताओं के सिद्ध मंत्र

'भैरवीतंत्र' के अनुसार गणेश, कार्तिकेय, कार्तवीर्यार्जुन, हनुमान और भैरव यह पांच 'कुमार' देवता हैं—

हेरंबशरजन्मानौ कार्यवीर्यार्जुनस्तथा ।
हनुमान् भैरवश्चैव कथिताः पंचबालकाः ।।

जब कि 'वामकेश्वरतंत्र' ग्रंथ में महामृत्युंजय को भी कुमार देवताओं में सम्मिलित कर छह कुमार देवता कहे गये हैं—

हरेम्बशरजन्मानौमहामृत्युंजयस्तथा ।
कार्तवीर्यार्जुनश्चैव हनुमद्‌भैरवो तथा ।।
कुमाराः षट च सम्प्रोक्ता ।

'रुद्रयामल' नामक तंत्रग्रंथ के अनुसार कुमार देवताओं की संख्या सात है, इसमें सुग्रीव का नाम भी कुमार देवताओं में सम्मिलित है—

गणेशो बटुकश्चैव स्कंदोमृत्युंजयस्तथा ।
कार्तवीर्यार्जुनश्चैव सुग्रीवो हनुमांस्तथा ।।
कुमाराः सप्त विख्याता ।

इन कुमार देवताओं के सिद्धमंत्र इस प्रकार प्राप्त होते हैं—

गणेश मंत्र

श्री गणेश देवताओं में सर्व प्रथम पूज्य तथा समस्त विघ्नबाधाओं का निराकरण कर कार्य सिद्ध करने वाले हैं।

प्रणवं कमल लज्जा कन्दर्पमठबीजकं ।
शंकर षट्‌शिरो मंत्र ततः पल्लवमुद्धरेत् ।।
गणपते ततः पश्चाद्वरवरदमेवच ।

सर्वं जनं ततः पश्चान्मेवशमानयेति च ॥
अन्त्ये ऽपि ठद्वयं ज्ञेयमष्टविंशाक्षरोमनुः ।

—रुद्रयामले

इस सूत्र के अनुसार श्री गणेश जी का सिद्धमंत्र अठाईस अक्षरों का इस प्रकार बनता है :—

"ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये
वर वरद सर्वंजनं मे वशमानय स्वाहा"

इस मंत्र को सवालाख जपने से कार्य सिद्धि होती है।

श्री गणेश जी का ध्यान इस प्रकार है—

एकदन्तं शूर्पकर्णं गजवक्त्रं चतुर्भुजं ।
पाशांकुशधरं देवं ध्यायेत्सिद्धि विनायकं ॥

अर्थात् धड़ के ऊपर हाथी का शिर है, एक दांत है, चार हाथ हैं एक हाथ में अंकुश व एक हाथ में पाश है, एक हाथ से अभयदान दे रहे हैं, तथा एक हाथ वरद मुद्रा में है।

इसके अलावा भी गणेश जी के अनेक रूप हैं।

श्री गणेश जी के अन्य सिद्ध मंत्र निम्न हैं :—

(अ) **ओं वक्रतुण्डैकद्रंष्टाय क्लीं ह्रीं श्रीं गंगणपतये**
वरवरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा ।
मोहन तथा वशीकरण में यह मंत्र विशेष प्रभावी है।

(आ) **ओं श्रीं गं सौम्याय गणपतये वरवरद सर्वंजनं**
मे वशमानय स्वाहा ।

(इ) **ओं हुं गं ग्लौं हरिद्रागणपतये वरवरद सर्वजन**
हृदयं स्तंभय स्तंभय स्वाहा ।

(ई) **ओं वक्रदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डायधीमहि ।**
तन्नो दन्ती प्रचोदयात् । (इसी मंत्र को गणेश गायत्री भी कहा जाता है) ।

(उ) **ओं नमो भगवते एक द्रंष्ट्राय हस्तिमुखाय लम्बोदराय**
उच्छिष्ट महात्मने आं क्रौं ह्रीं गं घें घें स्वाहा ।

इस मंत्र से सम्बन्धित एक विशेष प्रयोग भी है, भाद्र कृष्ण अष्टमी से लेकर भाद्रशुक्ल चतुर्थी तक नियमित नित्यप्रति चार हजार जप करे। पंचमी के दिन नीम की समिधा जलाकर घी में धतूरे के फूलों को मिलाकर हवन करे। इससे मनोवांछित कार्य सिद्ध होता है।

(ऊ) "ओं हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा।"

इस मंत्र से सम्बन्धित भी एक विशेष प्रयोग है लालचन्दन से अथवा सफेद आक के जड़ से गणेश जी की मूर्ति बनाकर (अंगूठे के बराबर) पूजन करे। तदुपरान्त एक लाख जप संख्या पूर्ण होने पर इच्छित कार्य सफल होता है।

(ए) ओं नमः उच्छिष्ट गणेशाय हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा।

(ऐ) ओं ह्रीं ग्रीं ह्रीं।

(ओ) ओं वक्रतुण्डाय हुं।

गणेश जी के अनेकों स्तोत्र हैं।

उपनिषद साहित्य में "गणेशाथर्व शीर्ष" सूक्त प्रसिद्ध है।

क्षिप्रप्रसादन श्री गणपति मंत्र

(शीघ्र प्रसन्न होने वाले गणपति)—

"ॐ गां गीं गूं गैं गौं गः गणपतये नमः

किसी भी कार्य के सिद्धि के निमित्त इसका अनुष्ठान करना सार्थक होगा।

विनियोग—ॐ अस्य क्षिप्रप्रसादन गणपति मंत्रस्य गणक ऋषिः, विराट छन्दः, क्षिप्रप्रसादन गणपतिर्देवता, गं बीजं, नमः इति शक्तिः, गणपतये इति कीलकं अभीष्ट सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

अंगन्यास—ॐ गणक ऋषये नमः शिरसि, विराट छन्दसे नमः मुखे, क्षिप्रप्रसादन गणपति देवतायै नमः हृदये, गं बीजाय नमो गुह्ये, नमः इति शक्तये नमः पादयोः, ॐ गणपतये इति कीलकाय नमः सर्वांगे।

करन्यास	हृदयादिन्यास
ॐ गां अंगुष्ठाभ्यां नमः	ॐ गां हृदयायनमः
ॐ गीं तर्जनीभ्यां नमः	ॐ गीं शिरसे स्वाहा

ॐ गूं मध्यमाभ्यां नमः ॐ गूं शिखायै बौषट्
ॐ गैं अनामिकाभ्यां नमः ॐ गैं कवचाय हुम
ॐ गौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॐ गौं नेत्रत्रयाय बौषट
ॐ गः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॐ गः अस्त्राय फट्

सकल संकष्टहर श्री गणपति मंत्र

"ॐ नमो भगवते हेरम्ब मद मोदित
मम संकष्टं निवारय निवारय स्वाहा"

इस मंत्र का अनुष्ठान समस्त कष्टों, संकटों, विघ्नों पर विजय दायक है।

विघ्न निवारण प्रयोग

किसी भी माह कृष्णपक्ष गणेश चतुर्थी को उपवास रहे सायंकाल चन्द्रमा के उदय हो जाने पर श्री गणेश जी तथा चन्द्रमा का पूजन कर निम्न नाम (आठ पत्रों/कागजों) में साफ-साफ लिखे —

ॐ वक्रतुण्डायनमः, ॐ एकदन्तायनमः
ॐ कृष्णपिंगाक्षायनमः, ॐ गजवक्त्रायनमः
ॐ लम्बोदरायनमः, ॐ विकटाय नमः,
ॐ विघ्नराजाय नमः, ॐ धूम्रवर्णाय नमः,
ॐ भालचन्द्राय नमः, ॐ विनायकायनमः,
ॐ गणपतये नमः, ॐ गजाननाय नमः ।।

इन नामों का नित्य पाठ करने के अनुरोध के साथ यह आठों पत्र आठ अलग-अलग ऐसे व्यक्तियों को भिजवा दे या स्वयं दे दे, जो श्री गणेश जी के उपासक या भक्त हों।

स्वयं भी नित्य प्रति एक वर्ष तक लगातार बिना नागा तीन बार इन नामों का पाठ करे।

प्रत्येक कार्य निर्विघ्न व निश्चित होगा।

श्री कार्तिकेय मंत्र

श्री कार्तिकेय समस्तभयों का निवारण कर रक्षाकारक, शत्रुनाशक हैं। युद्ध या वाद (मुकद्दमे) में भी विजय दाता हैं, देवताओं के सेनापति हैं। विशेष रूप से शिशुओं की रक्षा करते हैं, इसी कारण किसी भी शिशु के जन्म होने पर

षष्ठी देवी के साथ श्री स्कंद (कार्तिकेय) का पूजन किया जाता है। सन्तान की कामना, तथा सन्तान की सुख समृद्धि एवं दीर्घायु की कामना से भी कार्तिकेय की उपासना होती है।

इनका ध्यान इस प्रकार है—

मयूरवरमारूढो द्विभुजो वालरूपधृक् ।
मुग्दरं वामहस्ते तु शक्ति दक्षिणतो न्यसेत् ।।
वराभयकर: साक्षाद्विभुज शिखिलांछन ।
किरीटी कुण्डली देवो दिव्याभरण भूषित: ।।

अर्थात् वालक रूप कार्तिकेय के छह शिर हैं, दो हाथ हैं, वायें हाथ में मृद्गर तथा दायें हाथ में शक्ति है किरीट कुण्डल तथा दिव्यवस्त्राभूषणों से विभूषित हैं, साक्षात् अभय व वरदान देने वाले हैं।

श्री कार्तिकेय की उपासना के साथ माँ षष्ठी तथा मातृरूपा षट्कृतिकाओं सम्भूति, सन्नति, प्रीति, अनुसूया, शिवा और क्षमा की भी उपासना की जाती है।

प्रणवं छविबीजं च मंत्रश्च द्विशिर: स्मृतं ।
मध्ये कुमारायनम: अन्तेनीरमुदाहृतं ।।

—कुल चूड़ामणितंत्र

इस सूत्र के अनुसार श्री कार्तिकेय जी का मंत्र इस प्रकार सिद्ध होता है—

"ओं ह्रां कुमाराय नम: स्वाहा"

कार्तवीर्यार्जुन का मंत्र

श्री कार्तवीर्य का वीरतापूर्ण कथानक पुराणों में उपलब्ध होता है, इनके एक हजार हाथों का वर्णन है—

'कार्तवीर्यार्जुनोनाम राजावाहुसहस्त्रवान् ।
'तस्यास्मरण मात्रेण गतं नष्ट च लभ्यते ।।'

इसी कारण इनका नाम 'सहस्त्र वाहु' भी है।

सभी प्रकार के भयों का निराकरण, शत्रुबाधाशान्ति, शत्रुपराजय, वाद आदि में जय, कारागार आदि बन्धनों से मुक्ति, चोरी हुए या नष्ट हुए धन सम्पत्ति की पुन: प्राप्ति हेतु किसी खोये या दूरदेशस्थ व्यक्ति के वापसी हेतु भी कार्तवीर्य की उपासना का महत्व है।

प्रणवं वायुपूज्यौ च चारुकं मन्मथस्तथा ।
शुक्रबीजं तथा शून्यं कमलां रसनां तथा ।।
चन्द्रं डिबं च कूलं च तुरगं च सुरेश्वरि ।
मध्ये तन्नाम विज्ञेयं कार्तवीर्यार्जुनाय च ।।
अन्ते पयो मनुः प्रोक्त एकविंशाक्षरोशिवे ।

—डामर तंत्र

उपरोक्त सूत्रानुसार इक्कीस अक्षरों वाला श्री कार्तवीर्यार्जुन का सिद्धमंत्र इस प्रकार स्पष्ट होता है :—

"ओं प्रीं छ्रीं क्लीं व्रों आं श्रीं क्रौं ऐं ह्लां हुं फट् कार्तवीर्यार्जुनाय स्वाहा ।"

श्री हनुमान मंत्र

श्री हनुमान जी के बल पौरुष से सभी परिचित हैं। समस्त भयों, भूतप्रेतादि से रक्षा, प्रत्येक कार्यों की सिद्धि हेतु श्री हनुमान जी की उपासना का महत्व है। श्री हनुमान जी की साधना से दूर संचार एवं दूरश्रवण (दूर की बातें परोक्षरूप से ज्ञात होने) की सिद्धि भी प्राप्त होती है। श्री राम को भी हनुमान जी की सहायता से ही सफलता मिली थी। इनकी उपासना प्रत्येक क्षेत्र में सहायक व सफलता दायक होती है।

इनका ध्यान स्पष्ट है। लालरंग है मर्कट का शरीर है, वज्र के समान बलिष्ठ शरीर है।

प्रणवंमूर्द्धं बीजं च विभूतिस्तदनन्तरम् ।
हनुमते ततः पश्चाद्रामदूताय वै ततः ।।
लंकाविध्वंसनायैवमंजनीगर्भ संभव ।
भूतायशाकिनी चैव डाकिनी तदनन्तरं ।।
विध्वंसनाय किलिद्वी बुबुकारेण वै ततः ।
विभिषणायहनुमद्देवाय तदनन्तरम् ।।
त्यक्षंमाया हरिणाक्षी व्योषः स्कंदं तथैवच ।
पुरमापस्तथांते च सप्तषष्टक्षरो मनुः ।।

—कुलचूडामणितंत्रे

इस सूत्र के अनुसार श्री हनुमान जी का सढसठ अक्षरों का सिद्ध मंत्र इस प्रकार बनता है—

"ॐ ह्रीं हनुमते रामदूताय लंकाविध्वंसनायांजनीगर्भसंभूताय शाकिनी डाकिनी विध्वंशनाय किलिकिलि बुबुकारेण विभीषणाय-हनुमद्देवाय ॐ ह्रीं श्रीं ह्रौं ह्रां फट् स्वाहा ।।

श्री भैरव मंत्र

श्री भैरव भूत प्रेत पिशाच आदि बाधाओं से रक्षाकारक, विजयदायक, भय निवारक के रूप में विख्यात हैं। शासन से कार्य सिद्धि, रोग से मुक्ति, कारागार आदि बन्धन से मुक्ति दायक भी हैं।

प्रणवं मन्मथं चैवमभ्र बीज समन्वितं ।
अब्धिबीजं कल्पबीजंशत्रुघ्नी बीज संयुतम् ।।
मायांमध्येऽपि वटुकभैरवायाश्मरी तथा ।
अन्ते यो भैरवस्यायंमनुरष्टादशाक्षरः ।।
— रुद्रयामल तंत्र

इस सूत्र के अनुसार श्री भैरव जी का सिद्धमंत्र अठारह अक्षरों इस प्रकार बनता है—

"ॐ क्लीं वीं हं ध्रुं घ्नीं ह्रीं बटुक भैरवायनमः स्वाहा"

'रुद्रयामल' तंत्र में ही श्री बटुक भैरव का एक और मंत्र भी प्राप्त होता है, इसका सूत्र इस प्रकार है :—

प्रणवं पूर्व मुद्धृत्य देवी प्रणव मुद्धरेत् ।
वटुकायेति वै पश्चाद्दापदुद्धारणाय च ।।
कुरुद्वयं ततः पश्चाद् बटुकायेति वै पुनः ।
देवी प्रणव मुद्धृत्य मंत्रोद्धार मिमं प्रिये ।।

इस सूत्र के अनुसार मंत्र इस प्रकार सिद्ध होता है :—

"ओं ह्रीं वटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्रीं"

यद्यपि श्री भैरव जी के अनेक रूप व अनेक नाम हैं, लेकिन वे सभी भैरव

'बटुक' ब्रह्मचारी रूप हैं, अतः कोई भी भैरव हों उपरोक्त दोनों मंत्र सभी भैरवों की उपासना के माध्यम हैं।*

मुख्यरूप से आठ भैरव हैं – असितांग भैरव, रुरु चण्ड (काल), क्रोध, उन्मत्त, कपालि, भीषण और संहार भैरव।**

श्री भैरव देव के मन्दिर अनेक स्थानों में हैं लेकिन काशीस्थित श्री काल भैरव की मान्यता सर्वोपरि है इसे सिद्धस्थल माना गया है। श्री भैरव की उपासना हेतु यह सर्वोत्तम सिद्धस्थल है।

"काश्यां वै भैरवो देवः संसारभय नाशनः"

श्री भैरव का ध्यान इस प्रकार हैं :—

कर कलित कपालः कुण्डलीं दण्डपाणिः ।
तरुणतिमिरनील व्यालयज्ञोपवीतिः ।

ऋतु समय समर्था द्विघ्न विच्छेद हेतु—

जंयति बटुकनाथः सिद्धिदः साधकानाम् ॥

अथवा —कपालहस्तं भुजगोपवीतं कृष्णच्छविदण्डधरंत्रिनेत्रं ।
अचिन्त्यमाद्यंमधुपानसक्तं हृदिस्मरेद् भैरवमिष्टदतम ॥

अर्थात् —हाथ में खोपड़ी है दूसरे हाथ में दण्ड है, कृष्णवर्ण है, दिगम्बर

---

* विनियोग– ॐ श्री बटुक भैरव मंत्रस्य बृहद्वाख्यकोनाम ऋषि, ह्रीं बीजं, प्रणव कीलकं, बटुकायेति शक्ति अभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः ।
षडंगन्यास इस प्रकार हैं –
ॐ ह्रां वां अंगुष्ठकाभ्यां नमः, ॐ ह्रीं वीं तर्जनीभ्यां नमः,
ॐ ह्रूं वूं मध्यमाभ्यां नमः, ॐ ह्रैं वैं अनामिकाभ्यां नमः ।
ॐ ह्रौं वौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ,
ॐ ह्रः वः करताल करपृष्ठाभ्यां नमः ।
ॐ ह्रां वां हृदयायनमः ॐ ह्रीं वीं शिरसे स्वाहा,
ॐ ह्रूं वूं शिखायै वौषट्, ॐ ह्रैं वैं कवचायहुम्,
ॐ ह्रौं वौं नेत्रत्रयाय वौषट्
ॐ ह्रः वः अस्त्रायफट् ।

** मंत्रमहोदधि १/५४

हैं, पद्मासन लगाये हैं, बड़े दांत हैं, सर्पों को गले में यज्ञोपवीत रूप में पहने हैं, तीन नेत्र हैं। ललाट पर चन्द्रमा शोभित है, सिर के बाल ऊपर को उठे हैं (व्योमकेश), नेत्र लाल हैं, जीभ बाहर निकली है, गले में मुण्डमाला है, पैरों तथा कमर में घूंघरूं बंधे हैं चार हाथ हैं, तीसरे हाथ में कुण्डी, और चौथे हाथ में कोड़ा है (मतान्तर से तीसरे व चौथे हाथ में शूल व तलवार है)।

इनका वाहन श्वान (कुत्ता) है।

तेल में पके उड़द के बड़े इन्हें विशेष प्रिय हैं, यही इनको नैवेद्य (भोजन) रूप से दिये जाते हैं।

कामना विशेष से सात्विक रूप हरेक कामना की दृष्टि से शुभ है, शत्रुनाश की कामना से तामस रूप का ध्यान होता है। सात्विक, राजस व तापस रूप में भैरव जी के रूप की कल्पना की जाती है।

कुछ विद्वान ब्रह्माणी आदि आठ महाशक्तियों के साथ आठ भैरवों को मान्यता देते हैं[1] तो कुछ साधक चौंसठ योगिनियों के साथ भैरव को मान्यता देते हैं[2] 'अग्निमहापुराण' के अनुसार योगिनियों के साथ जिस भैरव का पूजन होता है उनके बारह हाथ होते हैं ऊँचे दांत, सिर पर जटा व चन्द्रमा शोभित होता है। दाहिने हाथों में क्रमश तलवार, अंकुश, परशु, वाण और अभय मुद्रा का प्रदर्शन तथा वायें हाथों में धनुष, त्रिशूल, खट्वांग, पाशकार्ध तथा वरदमुद्रा प्रदर्शित होता है, शेष दो हाथों में हाथी का चर्म ग्रहण किये होते हैं। गजचर्म ही भैरव जी का वस्त्र है। सर्पों से विभूषित हैं, मातृकाओं (योगिनियों) के मध्य में प्रेत (शव) पर आसन लगाये स्थित होते हैं।* यह एक मुखी या पंचमुखी होते हैं। पूर्व दिशा से लेकर विपरीत क्रम से (पूर्व, ईशान, उत्तर, आदि क्रम से) आग्नेय तक आठ दिशाओं में आठ भैरवों को स्थापित किया जाता है।

'दाक्षायणीतंत्र', 'तंत्र चूड़ामणि' तथा योगिनी हृदयतंत्र' आदि के अनुसार माँ सती के देह के अंग या आभूषण जिन ५१ (कुछ के मत से ५२) स्थानों पर गिरे थे, वे सभी सिद्ध 'शक्तिपीठ' हैं और प्रत्येक 'शक्तिपीठ' में माँ के साथ एक भैरव विद्यमान है। देवी के अर्चना साधना के साथ ही उक्त

---

[1] मंत्र महोदधि।

[2] अग्निमहापुराण, अध्याय ५२

* कहीं पर बैल पर विराजमान भी माने गये हैं।

शक्तिपीठ से सम्बन्धित भैरव की पूजा अर्चना करना भी आवश्यक है। विभिन्न शक्तिपीठों से सम्बन्धित बावन भैरवों के नाम व उनके स्थान का वर्णन अन्यत्र शक्तिपीठों के वर्णन के साथ हो चुका है। भगवान भैरव शिव ही का रूप है, महाकाल के दस अवतारों में एक अवतार ही भैरव रूप है। सात्विक, राजस, तामस आदि विभिन्न स्वरूपों में श्री भैरव जी के रूप की कल्पना होते हुए भी मंदिरों इनकी मूर्ति प्रायः नहीं मिलती है, एक चिमटा तथा धूनी ही इनके प्रतीक चिह्न हैं, इन्हीं की पूजा की जाती है।

श्री महामृत्युंजय मंत्र

श्री मृत्युंजय आयु के देवता हैं जो मृत्यु पर विजय देते हैं। अतः रोग से मुक्ति तथा जीवन में आने वाले किसी प्रकार के संकट से रक्षा और आयु की वृद्धि (दीर्घायु) कामना से मृत्युंजय की उपासना सर्वोपरि है।

श्री महामृत्युंजय के अनेक मंत्र तंत्र समाज में प्रचलित हैं, 'आगम लहरी' नामक तंत्र ग्रन्थ के अनुसार श्री महामृत्युंजय का प्रभावकारी सिद्ध मंत्र का सूत्र इस प्रकार है—

स्वक्षं हज्जंशक्तिशोभेऽपि शंका, मा तस्माद्वै पालयद्वेतथैव च।
तस्माच्छक्तिः खं शरद्धज्जत्नासौ मंत्रोद्धार देवमृत्युंजयश्च।।

तदनुसार मंत्र का स्वरूप इस प्रकार है—

"ओं जूंसः हंसः मां पालयपालय सो हंसः जूं ओं"

श्री महामृत्युंजय के वैदिक तथा तांत्रिक और भी विभिन्न मंत्र हैं।

श्री सुग्रीव मंत्र

तारं माया वाग्भवं मन्मथं च, शक्तिर्मध्येनाभत्यत्वा तथान्ते।
कालीपद्यौ कूर्चपद्यौ समस्तापद्योनीरं ह्येष सुग्रीव मंत्र.।।

—आगम शिरोमणि

इस सूत्र के अनुसार श्री सुग्रीव का सिद्ध मंत्र इस प्रकार बनता है—

"ओं ह्रीं ऐं क्लीं सः सुग्रीव दैवताय क्रीं ठः हूं ठः स्वाहा"

श्री हनुमान जी की तरह ही कपिराज सुग्रीव भी सर्व प्रकार से रक्षाकारक व सफलतादायक हैं। इनकी उपासना से मित्रों का भी यथेच्छ सुख-सहयोग प्राप्त होता है। मित्रता में वृद्धि, यश-प्रतिष्ठा में वृद्धि होती है।

नवग्रहों के तंत्रोक्त सिद्धमंत्र

रुद्रयामल तंत्र के अनुसार सूर्य बुध शुक्र गुरु और चन्द्र यह पाँच पंचतत्वात्मक आकाशीय देवता हैं। मंगल शनि और राहु भगवान शिव के तीन नेत्र रूप ग्रह हैं तथा केतु भूमि का देवता है—

आदित्येन्दुज शुक्राश्च गुर्वीन्दू परमेश्वरी।
एते पंचमहेशानि पंचेषोर्वाण देवता: ॥
भौमार्कि राहवश्चैव त्रये एते मुनीश्वरा:।
देवस्यखण्डपरशो र्लोचन त्रय देवता: ॥
केतुश्च परमेशानि भूमेर्देव: प्रकीर्तित:।

लोमश संहिता में ग्रहों को देवता के रूप में मान्यता देकर उन्हें विभिन्न अवतारों का प्रतीक कहा गया है।

सूर्य राम का, चन्द्र कृष्ण का, मंगल नृसिंह का, बुध बुद्ध का, गुरु वामन का, शुक्र परशुराम का, शनि कूर्म का, राहु वराह का और केतु को मत्स्यावतार का प्रतीक कहा है—

रामावतार सूर्यस्य चन्द्रश्च यदुनन्दन:।
नृसिंहो भूमि पुत्रस्य वौद्धो सोमसुतस्य च ॥
वामनो विवुधेज्यश्च भार्गवो भार्गवस्य च।
कूर्मो भास्करपुत्रस्य सौंहिकेयस्य सूकर: ॥
केतोमीनावतारश्च ये चान्ये तेपि खेटजा: ।

तंत्रशास्त्रों में सूर्यादि नवग्रहों के अनेक मंत्र उपलब्ध होते हैं। ग्रहों की मान्यता केवल वेदों पुराणों में ही नहीं तंत्रशास्त्र में भी व्यापक रूप से है, इससे ग्रहों की उपासना व मान्यता की प्राचीनता सिद्ध होती है। विभिन्न तंत्रग्रन्थों में सूर्यादि नवग्रहों के कुछ विशिष्ट सिद्ध मंत्र इस प्रकार उपलब्ध होते हैं—

सूर्य मंत्र

प्रणवं वाम्वरं लक्ष्मी व्योमबीजं तथैव च।
बीजं तुर्यशिरोज्ञेयं मनुर्द्यष्टाक्षरः स्मृतः ॥

—विश्वनाथ सारोद्धारतंत्र

तदनुसार मंत्र—

"ओं ह्सौः श्रीं आं ग्रहाधिराजायादित्याय स्वाहा"

चन्द्र मंत्र

क्षयक्षं च हरिणाक्षी च कुंतीबीज समन्वितं।
हरेति शब्दं संयोज्य शून्यानुस्वार संयुतं ॥

नाद्यबीजं ततो मध्ये चन्द्रायान्तेश्मरी स्मृताः।

—कालीपटले

तदनुसार मंत्र का स्वरूप यह है :—

"ॐ श्रीं क्रीं ह्रां ह्मौं चं चन्द्राय नमः"

मंगल मंत्र

चारणं हरिणी बीजं रुक्मिणी शर्वरीपतिः।
वेधो बीजं ततो मध्ये ग्रहाधिपति वै ततः ॥

भौमायान्ते पयः प्रोक्तो मनुपंचदशाक्षरः।

—शारदाटीका

इस सूत्र के अनुसार मंगल के पन्द्रह अक्षरों का मंत्रोद्धार इस प्रकार है :—

"ऐं ह्सौः श्रीं द्रां कं ग्रहाधिपतिभौमाय नमः"

बुध मंत्र

प्रणवं च तथा स्कंदं रसज्ञा च षडाननः।
मध्येऽपि ग्रहनाथाय बुधाय च ततः परं ॥

नीरं च सोम पुत्रश्च मनुर्चतुर्दशाक्षरः।

—स्वतंत्र तंत्रे

तदनुसार युध का चौदह अक्षरों का सिद्धमंत्र इस प्रकार बनता है :—

"ॐ ह्रां क्रीं टं ग्रहनाथाय बुधाय स्वाहा"

बृहस्पति मंत्र

ष्यक्षं मायापि सौभाग्या सुरासुर नमस्कृते ।
तरंगवेश्ये संयोज्य चार्वांगी हिंगुबीजकम् ।।

ऊर्ध्वं च षट् शिरोबीजं ततः पल्लव मुद्धरेत् ।
ततो ग्रहाधिपतये बृहस्पतये एवं च ।।

ततो वारिवहश्चैव पद्मं लक्ष्मीं तु नीरजम् ।
वासना पंकजं चैवमंते प्रोक्तं मनः शिवे ।।

—त्रिपुरा तिलक

इस सूत्र के अनुसार बृहस्पति का सिद्ध मंत्र इस प्रकार बनता है—

"ॐ ह्रीं श्रीं ख्लींऐं ग्लौं ग्रहाधिपतये
बृहस्पतये वीं ठः श्रीं ठः स्वाहा"

शुक्र मंत्र

प्रणवं मूर्ध्वबीजं च स्तनबीज समन्वितं ।
शिवबीजं ततो मध्ये ग्रहेश्वराय वै पुनः ।।

शुक्रायाग्तेश्मरी चैव बालश्चर्तुदशाक्षरः ।

—आगम शिरोमणि

इस सूत्र के अनुसार चौदह अक्षरों का शुक्र का सिद्ध मंत्र इस प्रकार है:—

"ॐ ऐं जं गं ग्रहेश्वराय शुक्राय नमः"

शनि मंत्र

तारं लज्जां श्रियं चैव बीजं त्रिशिरमूर्ध्वतः ।
ग्रहचक्रवर्तिनेऽपि शनैश्चराय वै ततः ।।

मदनं वासनाशक्ति रंतेनीर मुदाहृतं ।
शनैश्चरस्य देवेशि मनुर्विशाक्षरोः स्मृतः ।।

—आगम लहरी

इस सूत्र के अनुसार शनिश्चर का बीस अक्षरों का सिद्ध मंत्र इस प्रकार है:—

"ॐ ह्रीं श्रीं ग्रहचक्रवर्तिने शनैश्चराय क्लीं ऐं सः स्वाहा"

राहु मंत्र

प्रणवं रसना युग्मं तट्युग्मं च गर्जितं ।
ततष्टंक धारिणे च राहवे हव्यवाहनः ॥
लज्जा लक्ष्मीस्तथा भीमाह्यंते वनमुदाहृतं ।
राहोर्विंशाक्षरो वालो यथाभीष्ट फलप्रदः ॥
—आगम लहरी

इस सूत्र के अनुसार राहु का बीस अक्षरों का सिद्ध मंत्र यह बनता है :—

"ॐ क्रीं क्रीं हूं हूं टं टंकधारिणे राहवे रं ह्रीं श्रीं भैं स्वाहा"

केतु मंत्र

प्रणवं साधको वृष्टिस्ततोऽपि क्रूररूपिणे ।
केतवेऽपि ततः पश्चाच्चन्द्र शंकापयस्तथा ॥
केतोरयं महामंत्रो देवि पंचदशाक्षरः ।
—तंत्र मुक्तावली

इस सूत्र के अनुसार केतु का पन्द्रह अक्षरों का सिद्ध मंत्र इस प्रकार है :—

"ॐ ह्रीं क्रूं क्रूररूपिणे केतवे ऐंसौः स्वाहा"

उपरोक्त नवग्रहों के सिद्ध मंत्र जिन तंत्रग्रन्थों से दिये गये हैं, इनमें से अधिकांश ग्रन्थ आज दुर्लभ ही नहीं बहुधा अप्राप्य हैं । मेरे पास उपलब्ध डेढ़ सौ वर्ष पुराने एक ग्रन्थ में यह संग्रह उपलब्ध है ।

यद्यपि उच्चारण में क्लिष्ट तथा बड़े रूप में होने से जन सामान्य को इन मंत्रों का जप करने में प्रारम्भिक रूप में कठिनाई अवश्य होगी लेकिन 'सिद्ध मंत्र' होने के कारण यह मंत्र विशेष प्रभावकारी और प्रत्यक्ष फलदायक हैं ।

मतान्तर से ग्रहों के तांत्रिकमंत्र*

'तंत्रसार' नामक ग्रंथ में वर्णित निम्नलिखित बीज मंत्र संक्षिप्त होने से जप करने में सुविधाजनक हैं।

सूर्यमंत्र :—(ॐ घृणि सूर्य आदित्यों) अथवा (ॐ घृणि सूर्यायनमः)

छन्दः (जललेकर छोड़ना)

ॐ अस्यसूर्य मंत्रस्य देवभार्गवऋषिः गायत्रीछन्दः सूर्योदेवता, ॐ बीजं, ह्रीं शक्तिः, अभीष्टसिद्धये जपे विनियोगः।

न्यासा :—

देवभार्गवऋषयेनमः (शिर), गायत्रीछन्दसेनमः (मुखे) श्री सूर्यदेवतायनमः (हृदय), ॐ वीजायनमः (गुह्यस्थान) ह्रीं शक्तये नमः (पादयो) ॥

मूल षडंगन्यासाः

	प्रथमवार	द्वितीयवार
ॐ ह्रां घृं —	अंगुष्ठकाभ्यांनमः	(हृदयायनमः)
ॐ ह्रीं णीं—	तर्जनीभ्यांनमः	(शिरसेस्वाहा)
ॐ ह्रूं—	मध्यमाभ्यां नमः	(शिखायै वौषट्)
ॐ ह्रैं —	अनामिकाभ्यांनमः	(कवचायहुम्)
ॐ ह्रौं—	कनिष्ठिकाभ्यांनमः	(नेत्रत्रयाय वौषट्)
[ॐ ह्रः— आदित्यों	करतल करपृष्ठाभ्यांनमः	(अस्त्रायफट्)।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः इतिदिग्वन्धः

(अपने चारों तरफ दिशाओं में हाथ जोड़ें)

मूलमंत्र से (ॐ घृणि सूर्य आदित्यों) ३ वार (सर्वांग)

व्यापक न्यास करे।

---

* तंत्रसार नामक ग्रंथानुसार।

ध्यान—

क्षीराम्भोरुहसंस्थितं त्रिनयनं देवत्रयी विग्रहं

दानाम्भोज युगाभयानिदधतं हस्तैः प्रवालप्रभं ।

केयूरांगदहारकंकणधरं कर्णोल्लसत्कुण्डलं,

लोकोत्पत्तिविनाशपालनकरं सूर्यंगुणाब्धिभजे ।।

चन्द्रमंत्र :—(ॐ सों सोमायनमः)

छन्दः— (हाथ में जल लेकर छोड़ना)

ॐ अस्य सोमस्यमंत्रस्य ऋषिभृगुः पंक्तिश्छन्दः सोमो देवता सौं बीजं आपेति शक्तिः नमः इति कीलकम् सोम प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

न्यासा :—

भृगु ऋषयेनमः (शिर) पंक्तिश्छन्दसेनमः (मुख) सोमदेवतायनमः (हृदय) सौं बीजायनमः (गुह्यस्थान) आपेति शक्तयेनमः (पद) नमः कीलकायनमः (सर्वांग) ।

षडंगन्यासः —

ॐ सां—अंगुष्ठकाभ्यांनमः (हृदयायनमः)
ॐ सीं—तर्जनीभ्यांनमः (शिरसेस्वाहा)
ॐ सूं—मध्यमाभ्यांनमः (शिखायै वौषट्)
ॐ सैं—अनामिकाभ्यांनमः (कवचायहुम्)
ॐ सौं—कनिष्ठिकाभ्यांनमः (नेत्रत्रयाय वौषट्)
ॐ सः—करतल करपृष्ठाभ्यांनमः (अस्त्रायकट्)

दिग्बन्धः (दशदिशायें) —

ॐ सां सीं सूं सैं सौं सः ।

मूलमंत्र (ॐ सों सोमायनमः) से ३ वार व्यापक न्यास (सर्वांगन्यास) करना चाहिए ।

ध्यान—

शुचिकमलसंस्थ सुप्रसन्नाननेन्दुः

वरदकुमुदहस्तश्चारुहारादिभूष. ।

स्फटिकरजतवर्णो वांञ्छितप्राप्तये ना,

भवति चिरमभीष्टः द्योतितांक शशांकः ।।

भौममंत्र

(ॐ अं अंगारकाय नमः)

छन्दः (हाथ में जल लेकर छोड़ना)—

अस्यांगारकमंत्रस्य ब्रह्माऋषीर्गायत्रीछन्दः अंगारको देवता ॐ बीजं आपेति शक्तिः अभीष्ट सिद्धयूर्थे जपे विनियोग।

न्यासा :—

ब्रह्मर्षयेनमः (शिर) गायत्रीछन्दसेनमः (मुख) अंगारक देवतायै नमः (हृदय), ॐ बीजायनमः (गुह्यस्थान) आपेति शक्तये नमः (पाद)। (षडंगन्यासः द्वितीयमतसे—ॐ आं अंगुष्ठकाभ्यांनमः, ॐ ईं तर्जनीभ्यां स्वाहाः, ॐ ऊं मध्यमाभ्यां वौषट् ॐ ऐं अनामिकाभ्यां हुम्, ॐ औं कनिष्टिकाभ्यां वौषट्, ॐ अः कर तल करपृष्ठाभ्यां फट्,। शेष हृदयादि न्यास एकसे हैं, द्वितीयमत में सिर्फ इतना अन्तर है कि प्रथम मत में जहाँ सब जगह "भ्यांनमः" है द्वितीयमत से हृदयादि न्यास के ही समान वौषट् फट्, स्वाहा, हुम्, आदि शब्द हैं]।

षडंगन्यासाः—

ॐ आं—अंगुष्ठकाभ्यांनमः	(हृदयायनमः)
ॐ ईं—तर्जनीभ्यां नमः	(शिरसेस्वाहा)
ॐ ऊं—मध्यमाभ्यांनमः	(शिखायै वौषट्)
ॐ ऐं—अनामिकाभ्यांनमः	(कवचायहुम्)
ॐ औं—कनिष्ठिकाभ्यां नमः	(नेत्रत्याय वौषट्)
ॐ अः—करतल कर पृष्ठाभ्यांनमः	(अस्त्रायफट्)

दिग्बन्धः (दशों दिशाओं में)—

ॐ आं ईं ऊं ऐं औं अः।

मूलमंत्र (ॐ अं अंगारकायनमः) से ३ वार व्यापक (सर्वांग) न्यास करे।

ध्यानं—

नमाम्यंगारकंदेवं रक्ताभाम्बरभूषणम्।
जानुस्थ वामहस्ताढ्यं वरदाभयपाणिनम्॥

बुधमंत्र : – (ॐ बुं बुधायनमः)

छन्द :—(हाथ में जल लेकर छोड़ना)—

ॐ अस्यबुधमंत्रस्य ब्रह्माऋषिः पंक्तिश्छन्दो—बुधोदेवता बुं बीजं आपेति-शक्तिः बुधप्रीतयेजपे विनियोगः। न्यासाः—

ब्रह्मर्षये नमः (शिर) पंक्तिश्छन्दसेनमः (मुख) बुधदेवतायनमः (हृदय) बुं बीजायनमः (गुह्यस्थान) आपेति शक्तयेनमः (पाद) ।

षडंगन्यास :—

ॐ ब्रां—अंगुष्ठकाभ्यांनमः (हृदयायनमः)

ॐ ब्रीं —तर्जनीभ्यांनमः (शिरसेस्वाहा)

ॐ ब्रूं—मध्यमाभ्यांनमः (शिखायैवौषट्)

ॐ ब्रैं—अनामिकाभ्यांनमः (कवचाय हुम्)

ॐ ब्रौं —कनिष्ठिकाभ्यांनमः (नेत्रत्रयाय वौषट्)

ॐ ब्रः—करतल करपृष्ठाभ्यांनमः (अस्त्रायफट्)

दिग्बन्धः (दशों दिशा में) —

ॐ ब्रां ब्रीं ब्रूं ब्रैं ब्रौं ब्रः ।

मूलमंत्रसे (ॐ बुं बुधायनमः) ३ बार व्यापक अर्थात् सर्वांग न्यास करना ।

ध्यानं—

वन्दे बुधंसदा देवं पीताम्बर विभूषणं ।
जानुस्थ वामहस्तेन साभयेतर पाणिनम् ।।

बृहस्पति मंत्र

ॐ बृं बृहस्पतयेनमः

छन्द :— (हाथ में जल लेकर छोड़ना)

ॐ अस्य बृहस्पतिमंत्रस्य ब्रह्माऋषिः अनुष्टुपछन्दः बृहस्पति देवता बृं बीजं नमः शक्तिः बृहस्पति प्रीतये जपे विनियोगः ।

न्यासा :—ब्रह्मर्षयेनमः (शिरसि), अनुष्टुपछन्दसेनमः (मुख), बृहस्पति देवतायै नमः (हृदय) बृं बीजाय नमः (गुह्यस्थान), नमः शक्तये नमः (पादयो) ।

षडंगन्यासा:—

ॐ ब्रां—अंगुष्ठकाभ्यांनमः (हृदयायनमः)

ॐ ब्रीं—तर्जनीभ्यांनमः (शिरसेस्वाहा)

ॐ ब्रूं—मध्यमाभ्यांनमः (शिखायैवौषट्)

ॐ ब्रैं—अनामिकाभ्यांनमः (कवचायहुम्)

ॐ ब्रौं —कनिष्ठिकाभ्यांनमः (नेत्रत्रयायवौषट्)

ॐ ब्रः—करतलकरपृष्ठाभ्यांनमः (अस्त्रायफट्)

दिग्बन्धः (दशों दिशा में)—

ॐ ब्रां ब्रीं ब्रूं ब्रैं ब्रौं ब्रः ।

मूलमंत्र (ॐ वृं बृहस्पतयेनमः) से ३ बार व्यापक (सर्वांगन्यास करे)

ध्यानं—

रक्तोष्टापद वस्त्रराशिममलं दक्षातिमरंतकराः ।
आसीनं विपणौ करं निदधतं रत्नादिदाशोपरं ।
पीतालेपन वस्त्रपुष्पमखिलालंकारसम्भूषितं ।
विद्यासागर पारगं सुरगुरुं बन्दे सुवर्ण द्युतिम् ॥

शुक्रमंत्र

[ॐ शुं शुक्रायनमः]

छन्द :—[हाथ में जल लेकर छोड़ना]—

ॐ अस्य शुक्रमंत्रस्य ब्रह्मा ऋषीर्विराट् छन्दः शुक्रो देवता ॐ शुं वीजं स्वाहेतिशक्तिः शुक्र प्रीतये जपे विनियोगः ।

न्यासा—ब्रह्मर्षयेनमः [शिर], विराट्छन्दसेनम. [मुख], शुक्रदेवतायनमः [हृदय], ॐ शुं वीजाय नमः [गुह्यस्थान], स्वाहेति शक्तयेनमः [पाद] ।

षडंगन्यासा —

ॐ आं—अंगुष्ठकाभ्यांनमः [हृदयायनमः]
ॐ इं—तर्जनीभ्यांनमः [शिरसे स्वाहा]
ॐ ऊँ—मध्यमाभ्यांनमः [शिखायै बौषट्]
ॐ ऐं—अनामिकाभ्यांनमः [कवचायहुम्]
ॐ औं—कनिष्ठिकाभ्यांनमः [नेत्रत्रयायबौषट्]
ॐ अः—करतल करपृष्ठाभ्यांनमः [अस्त्राय फट्]

दिग्वन्धः [दशों दिशायें]—

ॐ आँ इं ऊं ऐं औं अः

मूलमंत्र [ॐ शुं शुक्रायनमः] से ३ बार व्यापक [सर्वांग] न्यास करना चाहिए ।

न्यास—

श्वेताम्भोज निषण्णमापणतटेश्वेताम्वरालेपनं ।
नित्यभक्तजनाय संप्रदद बासोमणिन हारकं ॥
बामैनैव करेणदक्षिकरे व्याख्यान मुद्रांकितम् ।
शुक्र दैत्यबरार्चितंस्मितमुखं वन्दे सितांशुप्रभम् ॥

शनिमंत्र

[ॐ शं शनैश्चराय नमः]]

छन्द :—[हाथ में जल लेकर छोड़ना]

ॐ अस्य शनैश्चर मंत्रस्य ब्रह्माऋषी गायत्रीछन्दः शनिर्देवता शं वीजं आपेतिशक्तिः शनिप्रीतये जपे विनियोगः ।

न्यासा :—ब्रह्मर्षयेनमः [शिर] गायत्री छन्द से नमः [मुख], शनैश्चर देवतायनमः [हृदय] शं बीजायनमः [गुह्यस्थान], आपेति शक्तये नमः [पाद] ।

षडंगन्यासा :—

ॐ शां--अंगुष्ठकाभ्यांनम. [हृदयायनमः]
ॐ शीं —तर्जनीभ्यांनमः [शिरसेस्वाहा]
ॐ शूं—मध्यमाभ्यांनमः [शिखायै वौषट्]
ॐ शैं—अनाभिकाभ्यांनमः [कवचायहुम्]
ॐ शौं—कनिष्ठिकाभ्यांनमः [नेत्रत्रयाय वौषट्]
ॐ शः—करतल करपृष्ठाभ्याँनमः [अस्त्रायफट्]

दिग्वंधः [दशों दिशा में नमस्कार]

ॐ शां शीं शूं शैं शौं शः ।

मूलमंत्र [ॐ शं शनैंश्चरायनमः] से ३ बार व्यापक [सर्बांग] न्यास करे।

ध्यानं--वन्देशनैश्चरं वक्र द्रंष्ट्रं नीलाभ्रभूषणं ।

जानुस्थ वामहस्तेन साभयं वरपाणिनम् ।

राहुमंत्र

[ॐ रां राहवे नमः]

छन्द :–हाथ में जल लेकर छोड़ना—

अस्यराहु मंत्रस्य ब्रह्माऋषिः पंक्तिश्छन्दः राहुर्देवता रां बीजं नमः शक्तिः राहुप्रीतये जपे विनियोग ।

न्यासाः —

ब्रह्मर्षये नमः [शिर], पंक्तिश्छन्दसेनमः [मुख], राहुर्देवतायनमः [हृदय], रां बीजायनमः [गुह्यस्थान] नमः शक्तयेनमः [पाद] ॥

षडंगन्यासाः —

ॐ रां—अंगुष्ठकाभ्यांनमः [हृदयायनमः]
ॐ रीं—तर्जनीभ्यांनमः [शिरसेस्वाहा]

ॐ रूं—मध्यमाभ्यांनमः [शिखायै वौषट्]
ॐ रैं—अनामिकाभ्यांनमः]कवचायहुम्]
ॐ रौं—कनिष्ठिकाभ्यांनमः [नेत्रत्रयाय वौषट्]
ॐ रः—करतल करपृष्ठाभ्यांनम. [अस्त्रायफट्]

दिग्बन्धः --[दशों दिशा में नमस्कार]

ॐ रां रीं रूं रैं रौं रः ।

मूलमंत्र [ॐ रां राहवेनमः]से ३ वार पढ़कर व्यापक [सर्वांगन्यास]करें ।

ध्यानं— वन्देराहुं कृष्णवर्णं महाकाल करालकम् ।
बराभयकरं साक्षात् कृष्णालंकार मन्वहम् ।।

केतु मंत्र

[ॐ कें केतवेनमः]

छन्दः [हाथ में जल लेकर छोड़ना]

ॐ अस्य केतु मंत्रस्य ब्रह्माऋषीः पंक्तिश्छन्दः केतुर्देवता कें बीजं नमः शक्तिः केतु प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः । न्यासाः—

ब्रह्मर्षये नमः [शिर], पंक्तिश्छन्दसेनमः [मुख] केतुदेवतायनमः [हृदय], कें वीजायनमः [गुह्य०], नमः शक्तयेनमः [पाद] ।

षडंगन्यासाः

ॐ कां—अंगुष्ठकाभ्यांनमः [हृदयायनमः]
ॐ कीं—तर्जनीभ्यांनमः [शिर से स्वाहा]
ॐ कूं—मध्यमाभ्यांनमः [शिखायैवौषट्]
ॐ कैं—अनामिकाभ्यांनमः [कवचाय हुम्]
ॐ कौं—कनिष्ठिकाभ्यांनम. [नेत्रत्रयायवौषट्
ॐ कः—करतल कर पृष्ठाभ्यांनमः [अस्त्रायफट्]

दिग्वन्धः—ॐ कां कीं कूं कैं कौं कः ।।

मूलमंत्र से [ॐ कें केतवेनमः] ३ व्यापकन्यास ।

ध्यानं—वन्दे केतुं धूम्रवर्णंमहाकायं कृतांजलिम् ।

विकृताश्वं रक्तनेत्रंधूम्रालंकार भूषितम् ।।

ग्रहों के बीजमंत्र

ग्रहों के बीज मंत्र इस प्रकार भी उपलब्ध होते हैं। बीजमंत्रों का भी जप किया जाता है—

सूर्यः	ॐ ह्रीं ह्रौं सूर्याय नमः।
चन्द्रः	ॐ ऐं क्लीं सोमाय नमः।
भौमः	ॐ हूं श्रीं भौमाय नमः।
बुधः	ॐ ऐं श्रीं श्रीं बुधाय नमः।
बृहः	ॐ ह्रीं क्लीं हूँ बृहस्पतये नमः
शुक्रः	ॐ ह्रीं श्रीं शुक्राय नमः।
शनिः	ॐ ऐं ह्रीं श्रीं शनैश्चराय नमः।
राहुः	ॐ ऐं ह्रीं राहवे नमः।
केतुः	ॐ ह्रीं ऐं केतवे नमः।

जप संख्या

सूर्य का जप—७०००, चन्द्रमा—११०००, मंगल—१००००, बुध—९०००, बृहस्पति—१९०००, शुक्र—१६०००, शनि—२३०००, राहु—१८०००, और केतु का जप—१७००० होता है।

कलियुग में इसका चौगुना जप करने को कहा गया है, जैसे सूर्य ७००० × ४ = २८००० जप करना उचित है।

बीज पल्लव सहित वैदिक नवग्रह मंत्र

सूर्य मंत्र

(हाथ में जल लेकर छोड़ना) -- ॐ आकृष्णेनेति हिरण्यस्तूपऋषिः त्रिष्टुप छन्दः सविता देवता सूर्य प्रीतये जपे विनियोगः ।

न्यासा : (मंत्र पढ़ते हुए छूते जाना)

मंत्र	प्रथम बार छूना	द्वितीय बार
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं सः ॐ भूर्भुव : स्व. ॐ आकृष्णेन	अंगुष्ठकाभ्यां नमः	हृदयाय नम,
रजसा	तर्जनीभ्यां नमः,	(शिरसे स्वाहा)
वर्तमानो निवेशयन्	मध्यमाभ्यां नमः,	(शिखायै वौषट्)
अमृतंमर्त्यञ्च	अनामिकाभ्यां नमः,	(कवचायहुम्)
हिरण्ययेन सवितारथेन	कनिष्ठिकाभ्यां नमः,	(नेत्रत्रयाय वौषट्)
आदेवोयाति भुवनानिपश्यन् ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः ह्रूं ह्रीं ह्रां ॐ	करतल करपृष्ठाभ्यां नमः,	(अस्त्रायफट्)

सर्वांगन्यासः—

(निम्न मंत्र पढ़कर लिखे बदन को छूना)

ॐ आकृष्णेन (शिर छूना), रजसा—(ललाट), वर्तमानः (मुख), निवेशयन् (हृदय), अमृतम्—(नाभिः), मर्त्यञ्च—(कमर), हिरण्ययेन सविता (जांघ), रथेन (ऊरू), आदेवोयाति (जान्वोः), भुवनानि पश्यन् (पाद) ।

सूर्य का ध्यान करे :—

दो हाथ हैं, कमल का आसन है, हाथ में भी कमल का फूल है, कमल पुष्प के समान देह की शोभा है, सात घोड़ों वाले रथ पर सवार मुकुटधारी सूर्य का ध्यान करे।

मंत्र:—ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं सः, ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ आकृष्णेनरजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च, हिरण्ययेन सविता रथेनादेवोयाति भुवनानि पश्यन् ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः ह्रूं ह्रीं ह्रां ॐ ॥

चन्द्र मंत्र

हाथ से जल छोड़ना (छन्दः)—इमन्देवेतिमंत्रस्य गौतम ऋषिः, द्विपदा-विराट् छन्दः, सोमोदेवता, चन्द्रप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

न्यासा : (मंत्र पढ़कर बदन छूते जाना)।

	प्रथम बार	द्वितीय बार
ॐ श्रां श्रीं श्रूं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ इमन्दे वा अस- पत्नं सुवध्यं	अँगुष्ठकाभ्यां नमः	हृदयायनमः
महते क्षत्राय महते ज्ज्यैष्ठाय	तर्जनीभ्यां नमः,	(शिरसे स्वाहा)
महते जान्राज्याये- न्द्रस्येन्द्रियाय	मध्यमाभ्यां नमः,	(शिखायै वौषट्)
इमममुष्य पुत्र ममुष्यै पुत्र	अनामिकाभ्यां नमः,	(कवचायहुम्)
अस्यैविषऽएषवो- मीराजा	कनिष्ठिकाभ्यां नमः,	(नेत्रत्रयाय वौषट्)
सोमोस्माकं व्राह्मणा- नां राजा ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः श्रूं श्रीं श्रां ॐ	करतलकर- पृष्ठाभ्यां नमः	(अस्त्रायफट्)

सर्वांगन्यासा: (मंत्र पढ़कर बदन छूना)

इमदेवेति [शिर छूना], असपत्नं [ललाट], सुवध्वं [मुख], महतेक्षत्राय [हृदय], महते ज्यैष्ठ्याय [नाभी], महते जान्राज्याय [कमर], इन्द्रस्येन्द्रियाय [जांघ], इदममुष्यपुत्रम् [ऊरू], अमुष्यैपुत्र [जान्वो], अस्यैविष एषवोमीराजा सोमोस्मांकं ब्राह्मणानां राजा [पाद]।

चन्द्रमाकाध्यान करना—

सफेद उज्वल वर्ण के, श्वेत वस्त्र और श्वेत आभूषण धारण किये दो हाथों वाले हाथ में दण्ड लिए चन्द्रमा को नमस्कार है, इसी रूप का चिन्तन करे।

मंत्र

ॐ श्रां श्रीं श्रूं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ इमन्देवा असपत्नं सुवध्वं महतेक्षत्राय महते ज्यैष्ठ्याय महते जान् राज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय, इमममुष्यपुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै विश एषवोमी राजा सोमोस्माकं ब्राह्मणानां राजा ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः श्रूं श्रीं श्रां ॐ ॥*

मंगल मंत्र

छन्दः—[हाथ में जल लेकर छोड़ना]—

ॐ अग्निर्मूर्धेति विरूपाक्ष ऋषिः गायत्री—त्रिष्टुप छन्दः भौमोदेवता भौमप्रीतये जपे विनियोगः।

न्यासा : (मंत्र पढ़कर अँग स्पर्श करना)—

मंत्र	प्रथम बार	द्वितीय बार
ॐ क्रां क्रीं क्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः अग्निर्मूर्धा	अँगुष्ठकाभ्यां नमः,	(हृदयाय नम.)
दिवः ककुत्	तर्जनीभ्यां नमः	(शिरसे स्वाहा)

* वैदिक व्याकरण के अनुसार असपत्नं' का 'असपत्नग्वं' और ब्राह्मणानां' का 'ब्राह्मणानाग्वं' उच्चारण होगा।

पतिः पृथिव्या अयम्	मध्यमाभ्यां नमः	(शिखायै वौषट्)
अपां	अनामिकाभ्यां नमः,	(कवचायहुम्)
रेतां सि	कनिष्ठिकाभ्यां नमः,	(नेत्रत्रयाय वौषट्)
जिन्वति ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः क्रौं क्रीं क्रां ॐ	करतल करपृष्ठाभ्यां नमः	(अस्त्रायफट्)

सर्वांगन्यासाः

अग्निरिति शिरसि [शिर छूना], मूर्धा [ललाट] दिवः [मुख], ककुद् [हृदय], पतिः [नाभौः], पृथिव्या [कमर], अयम् [उरू], अपां [जानु], रेतांसि [गुल्फ, टंकने], जिन्वति [पादयोः ॥

ध्यान—

रक्त वर्ण शरीर की आभा वाले, रक्त वस्त्र धारण करने वाले, पृथ्वी के पुत्र, मेष के ऊपर बैठे, चार हाथ वाले, गदा, शक्ति और शूल हाथों में लिये मंगलदेव को नमस्कार है, इसी रूप का चिन्तन करना चाहिए।

मंत्र—

ॐ क्रां क्रीं क्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ अग्निर्मूर्धादिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम्। अपां रेतां सि जिन्वति ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः क्रौं क्रीं क्रां ॐ ॥*

बुध मंत्र

छन्दः (हाथ में जल लेकर छोड़ना)—

ॐ उद्बुध्यस्वेति परमेष्ठी ऋषिः, त्रिष्टुप छन्दः
बुधो देवता बुध प्रीतये जपे विनियोगः।

---

* यहाँ भी वैदिक व्याकरण के अनुसार "अपां रेतां सि" के स्थान पर मंत्र का उच्चारण "अपा ग्वं रेता ग्वं सि" होगा।

न्यासा : (मंत्र पढ़कर अँग स्पर्श करना)—

मंत्र	प्रथम बार	द्वितीय बार
ॐ ब्रां ब्रीं ब्रौं स: ॐ भूर्भुव: स्व: ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजाग्रहीति	अँगुष्ठकाभ्यां नम:	(हृदयाय नम:)
त्वमिष्ठापूर्ते सं मिति	तर्जनीभ्यां नम:,	(शिरसे स्वाहा),
सृजेथा मयञ्च	मध्यमाभ्यां नम:,	(शिखायै वौषट्)
अस्मिनत्सधस्थे	अनामिकाभ्यां नम:	(कवचाय हुम्)
अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा	कनिष्ठिकाभ्यां नम:	(नेत्रत्रयाय वौषट्)
यजमानश्च सीदत ॐ स्व: भुव: भू ॐ स: ब्रौं ब्रीं ब्रां ॐ	करतल कर पृष्ठाभ्यां नम:	(अस्त्राय फट्)

सर्वांगन्यासा

उदुबुध्यस्व (शिर), अग्नेप्रति (ललाट), जाग्रहीत्वं (मुख), इष्टापूर्ते सं (हृदय), सृजेथामयञ्च (नाभि), अस्मिनत्सधस्थे (कमर), अध्युत्तरस्मिन् उर्वो: (उरु:), विश्वेदेवा (जानु), यजमानश्च (पैर), सीदत (सर्वांग)।

ध्यान—

सिंह पर बैठे, पीले वर्ण की आभा वाले, पीले वस्त्र धारण किये, चार हाथों वाले, मुकुटधारी दण्ड और तलवार हाथ में लिए बुध को नमस्कार है, इस स्वरूप का चिन्तन करना चाहिए।

मंत्र :—

ॐ **ब्रां ब्रीं ब्रौं स: ॐ भूर्भुव: स्व: ॐ उद्बुध्य स्वाग्ने प्रति जाग्रही त्वमिष्टापूर्ते सं सृजेथा मयञ्च। अस्मिनत्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत ॐ स्व: भुव: भू: ॐ स: ब्रौं ब्रीं ब्रां ॐ।***

---

* 'पूर्ते सं' का उच्चारण 'पूर्ते स ग्वं' होगा।

गुरु मंत्र—

छन्द : (हाथ में जल लेकर छोड़ना)

ॐ वृहस्पतेति गृत्समद् ऋषिः त्रिष्टुप छन्दः वृहस्पति देवता वृहस्पति प्रीतये जपे विनियोगः ।

न्यासा : (मंत्र पढ़कर अँग स्पर्श करना)

ॐ ज्रां ज्रीं ज्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ वृहस्पते अति अदर्यो]	अँगुष्ठकाभ्यां नमः	(हृदयाय नमः)
३ र्हाद्यु मद्विभाति	तर्जनीभ्यां नमः	(शिरसे स्वाहा)
ऋतुमज्ज़नेषु	मध्यमाभ्यां नमः	(शिखायै वौषट्)
यद्दीदयच्छवस	अनामिकाभ्यां नमः	(कवचाय हुम्)
ऋतप्रजात	कनिष्ठिकाभ्यां नमः	(नेत्रत्रयाय वौषट्)
तदस्मासुद्रविणं धेहिचित्रम ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः ज्रौं ज्रीं ज्रां ॐ]	करतल करपृष्ठाभ्यां नमः	(अस्त्राय फट्)

सर्वांगन्यासा : (मंत्र पढ़कर अँग स्पर्श करे)—

वृहस्पते (शिर) अति अदर्यो (ललाट), अर्हाद्यु मद् (मुख), विभाति (हृदय), ऋतुमज्जनेषु (नाभि), यद्दीदयत् (कमर), छवसऋतप्रजात (ऊरूः) तदस्मासुद्रविणं धेहिचित्रम् (पाद) ।।

ध्यानं —

पीले वर्ण शरीर की आभा वाले पीले वस्त्र तथा मुकुटधारी चार हाथों वाले, हाथों में दण्ड, कमण्डलु रुद्राक्ष की माला लिए देवताओं के गुरू वृहस्पति को नमस्कार है (इसी रूप का चिन्तन करे)।

मंत्र—

ॐ ज्रां ज्रीं ज्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ वृहस्पते अति अदर्यो अर्हाद्युमद्विभाति ऋतुमज्जनेषु । यद्दीदयच्छ वस ऋत प्रजात तदस्मासुद्रविणं धेहि चित्रम् ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः ज्रौं ज्रीं ज्रां ॐ ।।

शुक्र मंत्र—

छन्द :—(हाथ में जल लेकर छोड़ना)—

ॐ अन्नात्परिश्रुत इति अश्विसरस्वतीन्द्रा ऋषयः अतिजगती छन्दः, शुक्रो देवता शुक्रप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

न्यासाः (मंत्र पढ़कर अँग स्पर्श करना)

मंत्र	प्रथम बार छूना	द्वितीय बार
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ अन्नात्परिश्रुतोरसं	अंगुष्ठकाभ्यां नमः	(हृदयाय नमः)
ब्रह्मणाव्यपिवत्	तर्जनीभ्यां नमः,	(शिरसे स्वाहा)
क्षत्रंपयः सोमं प्रजापतिः	मध्यमाभ्यां नमः,	(शिखायै वौषट्)
ऋतेनसत्यमिन्द्रियं विपानं	अनामिकाभ्यां नमः,	(कवचायहुम्)
शुक्रमन्धस इन्द्र स्येन्द्रिय	कनिष्ठिकाभ्यां नमः,	(नेत्रत्रयाय वौषट्)
इदंपयोऽमृतं मधु ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः ह्रौं ह्रीं ह्रां ॐ	करतल करपृष्ठाभ्यांनमः	(अस्त्राय फट्)

सर्वांगन्यासा :—(मंत्र पढ़कर अँग स्पर्श)

ॐ अन्नात्परिश्रुत (शिर), रसं ब्रह्मणा (ललाट), व्यपिवत्क्षत्र (मुख), पयः सोमं (हृदय), प्रजापतिः (नाभि), ऋतेनसत्यम् (कमर), इन्द्रियं विपानं (गुदे), शुक्रम् (वृषण, अण्डकोष), अन्धस (ऊरू), इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोः (जानु) अमृतंमधु (पाद) ।

ध्यानं—

श्वेत वर्ण वाले, श्वेत वस्त्र और मुकुटधारी, चार हाथ वाले, हाथों में दण्ड, कमण्डलु, रूद्राक्ष की माला लिये शान्तमूर्ति दैत्यों के गुरू शुक्र को नमस्कार है ।

(इसी स्वरूप का चिन्तन करे)

मंत्र

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ अन्नात्परिश्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिवत् क्षत्रंपयः सोमं प्रजापतिः ऋतेन शुक्रमिन्द्रियं विपानं शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधुः ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः ह्रौं ह्रीं ह्रां ॐ ॥*

शनि मंत्र

छन्दः (हाथ में जल लेकर छोड़ना) —

ॐ शन्नोदेवीति दध्यंगाथर्वण ऋषिः, गायत्री छन्दः शनिर्देवता शनिप्रीतये जपे विनियोगः।

न्यासाः —

(मंत्र पढ़कर अँग स्पर्श करना)

मंत्र	प्रथम बार	द्वितीय बार
ॐ खां खीं खौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ शन्नो देवी	अंगुष्ठकाभ्यांनमः	(हृदयाय नमः)
अभीष्टये	तर्जनीभ्यांनमः	(शिरसे स्वाहा)
आपोभवन्तु	मध्यमाभ्यांनमः	(शिखायै वौषट्)
पीतये	अनामिकाभ्यांनमः	(कवचायहुम्)
शंयोरभि	कनिष्ठिकाभ्यांनमः	(नेत्रत्रयाय वौषट्)
स्त्रवन्तुनः ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः खौं खीं खां ॐ	करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः	(अस्त्राय फट्)

सर्वांगन्यासा : (मंत्र पढ़कर अँग स्पर्श करना)

शन्नः (शिर), देवी (ललाट), अभीष्टय (मुख), आपोभवन्तु (नाभि), पीतये (कमर), शंयो (ऊरू), अभि (जानु), स्त्रवन्तुनः (पाद) ॥

---

* 'विपानं' का उच्चारण 'विपान ग्वं' होगा।

ध्यानं—

नीली आभा वाले, नीले वस्त्रधारी, मुकुट पहिने, गृद्ध के ऊपर बैठे, चार हाथों वाले, हाथों में शूल, शस्त्र धनुष धारण करने वाले सूर्य के पुत्र शनिश्चर को नमस्कार है।

[इसी स्वरूप का चिन्तन करे]

मंत्र

ॐ खां खीं खौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ शन्नो देवी रभिष्टय आपो भवन्तु पीतये शंयो रभि स्त्रवन्तुनः ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः खौं खीं खां ॐ ।।

राहु मंत्र

छन्द :—[हाथ में जल लेकर छोड़ना]

कयानमिति मंत्रस्य वामदेव ऋषिः गायत्री छन्दः राहुर्देवता राहुप्रीतये जपे विनियोग. ।

न्यासा : [मंत्र पढ़कर अँग स्पर्श करना]

मंत्र	प्रथम बार	द्वितीय बार
ॐ भ्रां भ्रीं भ्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः कयानः	अंगुष्ठकाभ्यां नमः	[हृदयाय नमः]
चित्र आभुव	तर्जनीभ्यां नमः	[शिरसे स्वाहा]
दूती सदावृधः	मध्यमाभ्यांनमः	[शिखायै बौषट्]
सखा	अनामिकाभ्यांनमः	[कवचाय हुम्]
कया	कनिष्ठिकाभ्यांनमः	[नेत्रत्रयाय बौषट्]
शचिष्ठयावृताः ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः भ्रौं भ्रीं भ्रां ॐ	करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः	[अस्त्रायफट्]

सर्वांगन्यासा : [मंत्र पढ़कर अँग स्पर्श करे]

कयेति [शिर], नः [ललाटे], चित्र [मुखे], आभुवत् [हृदयं], दूती

[नाभौ], सदावृधः [कमर], सखा [ऊरू], कया [जानु], शचिष्ठया]टंकने], वृताः [पाद] ।।

ध्यान—

सिंहासन पर बैठे, नीली आभा वाले, नील वस्त्र तथा मुकुटधारी, विकराल मुख वाले, चार हाथ वाले, हाथों में तलवार, शूल, चर्म धारण करने वाले राहु को नमस्कार है [इस स्वरूप का चिन्तन करे]।

मंत्र

ॐ भ्रां भ्रीं भ्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ कयानश्चित्र आभुवदूती सदावृधः सखाकया सचिष्ठया वृता ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः भ्रौं भ्रीं भ्रां ॐ ।।

केतु मंत्र

छन्द : [हाथ में जल लेकर छोडना]

ॐ केतुंकृन्वन्निति मधुच्छन्दा ऋषिः गायत्री छन्दः केतु देवता केतु प्रीतये जपे विनियोगः ।

न्यासा : [मंत्र पढ़कर अँग स्पर्श करना]

मंत्र	प्रथम बार	द्वितीय बार
ॐ प्रां प्रीं प्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः केतुं कृन्वन्	अंगुष्ठकाभ्यांनम.	[हृदयाय नमः]
अकेतवे	तर्जनीभ्यांनमः	[शिरसे स्वाहा]
पेशोमर्या	मध्यमाभ्यांनमः	[शिखायै वौषट्]
अपेशशे	अनामिकाभ्यांनमः	[कवचायहुम्]
समुषद्भिः	कनिष्ठिकाभ्यांनमः	[नेत्रत्रयाय वौषट्]
अजायथाः ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः प्रौं प्रीं प्रां ॐ	करतल करपृष्ठाभ्यांनमः	[अस्त्रायफट्]

सर्वांगन्यासाः—

[मंत्र पढ़कर अँग स्पर्श करना]

केतुमिति [शिर], कृन्वन् [ललाट], अकेतवे [मुख], पेशो: [हृदय], मर्या [नाभि], अपेशसे [कमर], स [ऊरू], उषद्‌भि: [जानु], अजायथा [पाद] ।।

ध्यान :—

धूम्र वर्ण वाले, दो हाथ वाले, गृद्ध के ऊपर सवार, विकराल मुख वाले, किरीट केयूर से विभूषित, वरदायक केतु को नमस्कार है ।

[इसी स्वरूप का चिन्तन करना चाहिए[

मंत्र

ॐ **प्रां प्रीं प्रौं सः** ॐ **भूर्भुवः स्वः** ॐ **केतुंकृन्वन्नकेतवे पेशोमर्या अपेशसे, समुषद्‌भिः रजायथा** ॐ **स्वः भुवः भूः** ॐ **सः प्रौं प्रीं प्रां** ॐ ।।

श्री मृत्युंजय जप प्रयोग

भगवान मृत्युंजय शिव मृत्यु पर विजय प्राप्त कर आरोग्य तथा दीर्घायु प्रदान करने वाले देवता हैं। अतः व्यक्ति के रोगग्रस्त होने, अपमृत्यु का संदेह होने अथवा जन्मकुण्डली में मारकेश की दशा होने आदि की स्थिति में आरोग्य-लाभ व दीर्घायु की कामना से श्री मृत्युंजय के जप का विधान है। यह तीन प्रकार का है :—

(अ) लघु या त्र्यक्षर मंत्र (तांत्रिक)।

(आ) वैदिक मंत्र (सामान्य मंत्र)।

(इ) बीज पल्लव सहित वैदिक मंत्र अर्थात् महामृत्युंजय।

(ई) तंत्रोक्त सिद्ध मंत्र, जिसका वर्णन हो चुका है।

अपनी सामर्थ्य एवं सुविधानुसार इन तीनों में से किसी एक मंत्र का जप हो सकता है। महामृत्युंजय मंत्र सर्वश्रेष्ठ है।

लघु (त्र्यक्षर) मृत्युंजय मंत्र

छन्दः (जललेकर छोड़ना)—अस्य श्री त्र्यक्षरमहामृत्युंजय मंत्रस्य कहोलऋषीः, देवी गायत्री छन्दः, मृत्युञ्जयो देवता, ॐ बीजं, राः शक्तिः, मृत्युञ्जय प्रीतये जपे विनियोगः।

न्यासा :—

कहोलऋषयेनमः (शिरसि), देवी गायत्री छन्दसेनमः (मुखे), मृत्युंजय देवताय नमः (हृदये) ॐ बीजायनम. (नाभौ) ॐ राः शक्तयेनमः (पादौ)।

षडंगन्यासाः —

ॐ सां—अंगुष्ठकाभ्यांनमः [हृदयायनमः]

ॐ सीं—तर्जनीभ्यांनमः [शिर से स्वाहा]

ॐ सूं—मध्यमाभ्यांनमः [शिखायैवौषट्]

ॐ सैं—अनामिकाभ्यांनमः [कवचाय हुम्]

ॐ सौं—कनिष्ठिकाभ्यांनम. [नेत्रत्रयायवौषट्]

ॐ सः—करतल कर पृष्ठाभ्यांनमः [अस्त्रायफट्]

ॐ सां सीं सूं सैं सौं सः इति दिग्बन्धः ।
मूलमंत्रसे ३ व्यापकन्यास करके तब ध्यान करे ।

ध्यानं —

चन्द्रार्काग्नि विलोचनं स्मितमुखं, पद्मद्वयान्तिस्थितं,
मुद्रापाशमृगाक्षसूत्रविलसत्, पाणि हिमांशुप्रभम् ।
कोटीन्दुप्रगलत्सुधाप्लुततनुं, हारादिभूषोज्वलम्,
कान्त्याविश्वविमोहनं पशुपतिं, मृत्युञ्जयं भावये ।।

भगवान श्री मृत्युंजय का ध्यान इस प्रकार है—

तीन आखें हैं, विश्व को मोहित करने वाला दिव्य कान्तियुक्त शरीर है। मस्तक पर चन्द्रमा से अमृत की वर्षा हो रही है। समस्त शरीर अमृत वर्षा से गीला है। हाथों में पाश, रुद्राक्षमाला तथा कमलपुष्प धारण किये हैं प्रसन्न मुख-मुद्रा है। गले में सुवर्ण की हार आदि दिव्य आभूषण धारण किये हैं। ऐसे मृत्युंजय शिव को मेरा प्रणाम।

तदुपरान्त मानसोपचार से पूजन कर मंत्र का जप करे—

"ॐ जूं सः"

(प्रतिदिन यथाशक्ति करना, ३ लाख जप होने पर सिद्ध होता है, जप पूरा होने पर होमादि करे।

महामृत्युंजय मंत्र

(यह विषय केवल विद्वान पण्डितों का है इसलिए इसमें हिन्दी विधि नहीं दी है और इसी हेतु संक्षिप्त रूप में दिया है क्योंकि विद्वान् सर्वज्ञ हैं)

छन्दः

अस्यश्रीमहामृत्युञ्जयमन्त्रस्य वामदेवकहोलवशिष्ठाऋषयः पंक्तिगायत्र्युष्णि-मनुष्टुप्छन्दांसि सदाशिवमहामृत्युञ्जयरुद्रोदेवता ह्रींशक्तिः श्रीं बीजं महामृत्युंजय प्रीतयेममाभीष्टसिद्ध्यर्थेजपेविनियोगः ।

ऋष्यादिन्यासा ।। वामदेवकहोलवशिष्ठाऋषयः मूर्ध्नि ।। पंक्तिगायत्री अनुष्टुप्छंदांसि वक्त्रे ।। सदाशिवमहामृत्युञ्जयरुद्रदेवतायै नमः हृदि ।। ह्रींशक्तये नमो लिंगे । श्रींबीजाय नमः पादयोः ।।

षडंगन्यासा:

(अधोलिखित मंत्रों से पहले करन्यास करलेना चाहिए तदुपरान्त हृदयादि न्यास करने चाहिए यहाँ केवल हृदयादि षडंग न्यास ही लिखे गये हैं) —

ॐ हौं ॐ जूं स: भूर्भूव: स्व: त्र्यम्बकं ॐ नमो भगवतेरुद्राय शूलपाणयेस्वाहा हृदयायनम: ।।

ॐ हौं ॐ जूं स: भूर्भुव: स्व: यजामहे ॐ नमोभगवतेरुद्राय अमृतमूर्त्तयेमां-जीवय शिरसिस्वाहा ।

ॐ हौं ॐ जूं स: भूर्भुव: सुगन्धिपुष्टिवर्धनं ॐ नमोभगवतेरुद्राय चन्द्रशिरसेजटिनं स्वाहा शिखायै वौषट् ।।

ॐ हौं ॐ जूं स: भूर्भुव: स्व: उर्वारुकमिव बन्धनात् ॐ नमोभगवतेरुद्राय त्रिपुरान्तकायहौं कवचायहुं ।।

ॐ हौं ॐ जूं स: भूर्भुव: स्व: मृत्योर्मुक्षीय ॐ नमोभगवतेरुद्रायत्रिलोचनाय ऋग्यजु:साममंत्रत्रयायनेत्रत्रयायवौषट् ।।

ॐ हौं ॐ जूंस:भूर्भुव: स्व:मामृतात् ॐ नमोभगवतेरुद्राय ॐ अग्नित्रयाय उज्ज्वलज्वालाय मां रक्ष रक्ष अघोराय अस्त्रायफट् ।।

देहन्यास

त्र्यम्बकं शिरसि । यजामहे भ्रूवो: । सुगन्धि नेत्रयो: । पुष्टिवर्द्धनं मुखे । उर्वारुकं गण्डयो: । मिव हृदये । बंधनात् जठरे । मृत्योर्लिंगे । मुक्षीय उर्वो: । माँ जान्वो: । अमृतात् पादयो: ।। इति पदन्यास: ।। मूलेनव्यापकंकृत्वा ध्यानं कुर्यात् ।

अथध्यानं

हस्तांभोजयुगस्थकुम्भयुगलादुद्धृत्यतोयंशिर: सिचंतं करयोर्युगेनदधतंस्वां-केसकुम्भौकरौ ।।

अक्षस्रग् मृगहस्तमंबुजगतंमूर्द्धस्थचंद्रस्रवत्पीयूषोन्नतनुंभजेसगिरिजं मृत्युज्जयं-त्र्यम्बकम् ।। १ ।।

चंद्रोद्भासितमूर्धजंसुरपतिपीयूषपात्रंवहद्धस्ताब्जेनदधत् सुदिव्यममलं हास्यास्यकेरुहम् ।

सूर्येन्द्वग्निन्त्रिलोचनं करतले पाशाक्षसूत्रांकुशाम्भोजंबिभ्रतमक्षयं पशुपतिमृत्युं-जयंसंस्मरे ।। २ ।।

मानसोपचारैः संपूज्य ।। ॐ लंपृथिव्यात्मकं गन्धंसमर्पयामि ।। ॐ हंआकाशात्मकं पुष्पंसमर्पयामि ।। ॐ यंवाय्वात्मकंधूपं समर्पयामि ।। ॐ रं तेजसात्मकंदीपंसमर्पयामि ।। ॐ वं अमृतात्मकं नैवेद्यंसमर्पयामि ।। ॐ सं सर्वात्मकं मंत्रपुष्पंसमर्पयामि ।

मंत्र

ॐ हौं ॐ जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिपुष्टि वर्धनं उर्वारुकमिव बंधनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् भूर्भुवः स्वरों जूं सः हौं ॐ ।।

अथहोमार्थशताक्षरागायत्रीमन्त्रः ।। ॐ तत्सवितुर्बरेण्यंभर्गोदेवस्यधीमहि धियोयोनः प्रचोदयात् ।। ॐ जातवेदसेसुनवामसोममरातीयतोनीदहातिवेदः सनः पर्षदतिदुर्गाणिविश्वानावेवसिन्धुंदुरितात्यग्निः ।। ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगंधिपुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् (स्वाहा) ।।

वैदिक मंत्र जप विधि

इसमें पूजन ध्यान आदि पूर्ववत् है । विनियोग—

अस्य त्र्यम्बकमितिमंत्रस्य, वसिष्ठऋषिः अनुष्टुपछन्दः श्री मृत्युंजयो देवता, सर्वारिष्ट परिहारपूर्वक आरोग्य प्राप्तये, दीर्घायु हेतवे जपे विनियोगः ।

जप मंत्र

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ।।

वन्दा के विविध प्रयोग

तंत्रशास्त्र में 'वन्दा' एक अतिदुर्लभ चमत्कारी महत्वपूर्ण वनस्पति है, मुख्यतः आम के वृक्ष में प्राप्त होती है। अन्यवृक्षों में बहुत ही कम मिलती है अतः देश प्रदेश का परिभ्रमण कर कठिन परिश्रम से ईश्वर की कृपा से ही प्राप्त हो सकती है। इसके पत्ते जामुन के पत्तों के तरह लेकिन उससे चौड़े तथा मोटे होते हैं। यह वनस्पति भूमि पर उत्पन्न नहीं होती, किसी भी वृक्ष की शाखा में स्वतः उत्पन्न होती है और ४/५ फुट तक लम्बी हो सकती है। प्रायः कार्तिक से फालगुन तक जाड़ों में इस क्षुप पर गुच्छे के रूप में लालफूल (गुड़हल की तरह, किन्तु पतले) जो एक-दो इन्च लम्बे होते हैं निकलते हैं।

संस्कृत में इसे 'वन्दा' और हिन्दी में 'बाँदा' कहा जाता है।* वनस्पति को जिस तिथि एवं दिन में ग्रहण व उपयोग का जैसा विधान है, उसी प्रकार ग्रहण व उपयोग करना चाहिए। जहाँ कोई स्पष्ट उल्लेख न हो, वहाँ जिस दिन रविवार+पुष्य नक्षत्र का योग हो उसमें ग्रहण करें। कुछ प्रयोग इस प्रकार हैं:—

१— चम्पा वृक्ष में उत्पन्न वन्दा भरणी या पुष्यनक्षत्र में ग्रहण कर दायें मणिवन्ध पर बाँधें, जिससे अधिकारी/न्यायाधिकारी की उस पर दृष्टि पड़े। राजद्वार तथा न्यायालय सम्बन्धी मामलों में सफलता दायक है।

(मंत्र—ॐ ह्रीं सः अमुकं मे वशमानय स्वाहा)

---

* जब बांदा का प्रयोग हेतु उपयोग करना हो, पहले दिन सूर्यास्त के बाद सायंकाल (अथवा उसी दिन प्रातःकाल) वृक्ष के जड़पर शिव जी का पूजन कर वृक्ष का पूजन करने के बाद वृक्ष को निमंत्रण दे कि जनहित की कामना से मैं तुम्हें ग्रहण कर रहा हूँ।

'ॐ ह्रीं चण्डे हूं फट् स्वाहा' कहकर तोड़े। तदनन्तर निम्न मंत्र पढ़कर (सातवार) अभिमंत्रित करें—**ॐ ह्रीं ॐ फट् स्वाहा, ॐ वनदण्डे महादण्डाय स्वाहा, ॐ शूद्री कपाल मालिनी स्वाहा।**

२— पुष्यनक्षत्र में महुवे के वृक्ष का वन्दा लेकर सभा में फेंकने से सभा का स्तंभन होगा।

(ह्रीं रक्षे चामुण्डे तुरु-तुरु अमुकं वशमानय स्वाहा)

३ — कृत्तिका नक्षत्र में सेहुण्ड वृक्ष से वन्दा ग्रहण कर भुजा में धारण करने से व्यक्ति सत्यवक्ता (सत्य भविष्यवाणी करने की शक्ति) होता है।

स्वाती नक्षत्र में बेर वृक्ष की वन्दा धारण करने से भी यही प्रभाव होता है, इस प्रयोग में "ॐ **तं अन्तरिक्षाय स्वाहा**" का जप करके वन्दा ग्रहण करे।

४ - शाखोट वृक्ष का वन्दा + आम के वृक्ष का वन्दा + गोखरू + नमक (अंशमात्र) + बकरी का दूध इन सबको पीसकर तिलक करने से व्यक्ति को गुप्त वस्तु गुप्त धन व गुप्तजीव आदि का दर्शन होता है।*

अथवा जब शनिवार को अश्लेषा नक्षत्र हो दाड़िम के बीज का रस और मंगलवार अष्टमी को कमल की जड़ व शतावरी का रस लेकर अंजन करे।

५— हस्तनक्षत्र में निर्गुण्डी वृक्ष का वन्दा ग्रहण कर कोषागार में स्थापित करने से सम्पत्ति में निरन्तर वृद्धि होती है।

अथवा पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में दाड़िमी वृक्ष का वन्दा स्थापित करने से यही प्रभाव होता है, दोनों में ('ॐ **नमो धनदाय स्वाहा**') का जप है।

६— भरणी नक्षत्र में कपास में उत्पन्न वन्दा भुजा में धारण करने से व्यक्ति अदृश्य हो सकता है (कोई उसे देख नहीं पाता)।

अथवा अनुराधा नक्षत्र में रोहतक का वन्दा मुख में धारण करने से भी अदृश्य होता है। (पहले निम्न मंत्र को दस हजार जप कर सिद्ध करें— 'ॐ हूं फट् स्वाहा काली महाकाली मांस शोणित भक्षिणि रक्त कृष्णमुखे देवी मामेपश्यतिमानुषेति ॐ हूँ फट् स्वाहा)

---

* प्रयोग सं० ४ व ६ में अगस्त्यवृक्ष की पादुका धारण करना आवश्यक है, पादुका मंत्रित करने का मंत्र यह है—
ॐ **नमो भगवते उड्डामरेश्वराय शिलिशिलि धूहरे नाग वेतालिनी स्वाहा।**

७ -- अश्विनी नक्षत्र में बेल का वन्दा ग्रहण कर दूध के साथ सेवन करने से सन्तान होती है। पुत्र प्राप्त हो।

८— पलाश वृक्ष का वन्दा आर्द्रानिक्षत्र में ग्रहण कर मूल नक्षत्र में भण्डार में रक्खें। भण्डार भरे रहेंगे।

६— चित्रा नक्षत्र में नारंगी का वन्दा अथवा विशाखानक्षत्र में पलाश का वन्दा लाकर उसको जलाकर उसमें तांवा तपाकर (गलाकर) डालने से तांवे से सोना बनता है।

१०—पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में वट वृक्ष का वन्दा, अथवा अश्विनी नक्षत्र में कदम्ब वृक्ष का वन्दा ग्रहण कर धारण करने से वन्ध्या को सन्तति प्राप्त होती है। मेरे विचार में अथर्ववेदोक्त विधानानुसार इस वन्दा का सेबन करना भी संतानदायक है।*

११—शाखोट वृक्ष का वन्दा अनुराधानक्षत्र में ग्रहण कर गोरोचन के साथ पीसकर अंजन करने से गुप्त वस्तुयें दृष्टि गोचर होती हैं अथवा तुलसी मूल शनिवार को पुष्यनक्षत्र में ग्रहण कर कांजी में डालकर पश्चात घी के साथ अंजन करने से भी यही प्रभाव होता है। अंजन को १०८ बार इस मंत्र से अभिमंत्रित करे—

"ॐ नमो भगवते रुद्राय कज्जल लेपांजनं दर्शय दर्शय स्वाहा ठः ठः"
(प्रयोग सं. ४, ६ की तरह यहाँ भी अगस्त्य वृक्ष की पादुका धारण आवश्यक है)।

---

* वेदोक्त विधानों का वर्णन पहले हो चुका है।

षट्कर्म प्रयोग

मारणं न वृथा कार्यं यस्य कस्य कदाचन ।
प्राणान्तसंकटे जाते कर्तव्यं भूतिमिच्छता ।।

षट्कर्मों को यद्यपि तंत्रशास्त्रों में गर्हित एवं वर्जित माना गया है क्योंकि इनका प्रयोग बहुधा किसी को कष्ट, भय या हानि पहुँचाने के उद्देश्य से ही होता है और 'पापाय परपीडनं' दूसरों का उत्पीड़न ही पाप है अत: ऐसे प्रयोगों को आत्मरक्षार्थ एवं जीवन पर संकट आने पर अनिवार्य परिस्थितियों में ही किया जाता है। लेकिन जैसे सांप का विष एक मृत्युकारी तीव्र विष है किन्तु औषधि रूप में सेवन से यही विष अमृत का काम करता है इसी प्रकार विषम परिस्थितियों में यदा-कदा ऐसे प्रयोगों की आवश्यकता भी होती है। हमारे शास्त्रों में छह प्रकार के आततायियों का वर्गीकरण है –

अग्निदो गरदश्चैव धनहारी च सुप्तघः ।
क्षेत्र दारापहारी च षडैते आततायिनः ।।

अर्थात् पराये घर में आग लगाने वाला, विष देने वाला, धन का अपहरण करने वाला, सोते में हत्या करने वाला, भूमि का अपहरण करने वाला और स्त्री का अपहरण करने वाला व्यक्ति आततायी है और आततायी व्यक्ति के प्रति षट्कर्मों का प्रयोग नि:संकोच किया जा सकता है, इसमें कोई पाप नहीं है।

अहिंसका न हन्तव्या आततायी वधार्हणः ।

कहीं-कहीं पर इनका प्रयोग जनहित एवं लोक कल्याण की भावना से भी होता है। षट्कर्मों से सम्बन्धित तंत्रशास्त्र में सैकड़ों ग्रन्थ हैं और प्रत्येक ग्रन्थ में सैकड़ों प्रयोग हैं अत: उन सभी प्रयोगों का वर्णन किया जाय तो इसी पर अनेक ग्रन्थ तैयार होंगे। अत: यहाँ पर केवल कुछ प्रसिद्ध प्रयोगों का ही वर्णन किया जा रहा है। जिन्हें विस्तार से जानने की अभिरुचि हो उन्हें तंत्र-ग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिये।

मारण प्रयोग

शत्रु ने जमीन पर जहाँ पैर (नग्न पैर) रक्खा हो, वहाँ की मिट्टी (शत्रु के पैर की धूल) गुप्त रूप से मंगलवार को प्राप्त करे। इस मिट्टी में गोमूत्र मिलाकर शत्रु की मूर्ति बनाये निर्जन व एकान्त स्थान में स्थापित कर उसकी विधिवत प्रतिष्ठा—प्राण प्रतिष्ठा करे, मूर्ति के सामने सरसों के तेल का अखण्ड दीपक प्रज्वलित करे, ग्यारह बटुकों (बालकों) को श्रेष्ठ भोजन कराये। मूर्ति के छाती में लोहे का त्रिशूल गाड़ दे और मूर्ति के बायें ओर बलि देकर प्रतिदिन काल भैरव की पूजा करे। शेर की छाल के आसन में दक्षिण को मुख कर बैठे और सावधानीपूर्वक रात्रि में निरन्तर (२९) उन्तीस दिन तक प्रतिदिन दस हजार बार निम्न मंत्र का जप करे--

"ॐ नमो भगवते महाकाल भैरवाय कालाग्नितेजसे (अमुकं-यहां शत्रु के नाम का उच्चारण करे) मे शत्रुं मारय मारय पोथय पोथय हूँ फट् स्वाहा"

यह उत्तम प्रयोग है।

(२) पहले निम्न मंत्र का सवा लाख जप कर पुरश्चरण कर ले। तदुपरान्त अश्विनी नक्षत्र में चार अँगुल लम्बी घोड़े की हड्डी लेकर शत्रु के घर के भीतर गाड़ दे—

"हुँ हुँ फट् स्वाहा"

यह प्रयोग कठिन है, शत्रु के घर में जाना और घर में हड्डी गाड़ना असम्भव नहीं तो दुष्कर है फिर पक्के मकानों में तो यह सम्भव नहीं है।

(३) रात में श्मशान में जाकर सभी वस्त्र उतारकर एकदम नंग-धड़ंग, शिखा खोलकर, दक्षिण मुख बैठकर जलती हुई चिता में मनुष्य का माँस, मनुष्य का रक्त, विष, भूसी और हड्डी के टुकड़े मिलाकर शत्रु का नाम लेकर एक सौ आठ बार निम्न मंत्र से आहुति देने से शत्रु पराजय व शत्रु रोग-ग्रस्त हो—

"ॐ नमो भगवति कौमारि लल लल लालय लालय घण्टादेवि .. (शत्रु का नाम) मारय मारय सहसा नमोऽस्तु ते भगवति विद्ये स्वाहा"

(४) सर्वसिद्धि प्रदायक शत्रुनाशक श्री हनुमान मंत्र– निम्न मंत्र का ३८०० बार जप करने से मंत्र सिद्ध होगा। मंत्र सिद्ध होने पर इस मंत्र से अनेक काम

सिद्ध होते हैं। कपड़े पर हनुमान जी की मूर्ति बनाकर उस पर यह मंत्र लिख कर वह वस्त्र शत्रु के घर डाल देने या शत्रु को दिखा देने से शत्रु नाश होगा—

"ॐ वज्रकाय वज्रतुण्ड कपिल पिंगल कराल वदनोर्ध्वकेश महाबल रक्त मुख तडिज्जिह्व महारौद्र दंष्ट्रोत्कट कट करालिन् महा दृढ़प्रहार लंकेश्वर सेतुबन्ध शैलप्रवाह गगनचर एह्येहि भगवन्महाबल पराक्रम भैरवो ज्ञापयति एह्येहि महारौद्र दीर्घ लांगूलेन (शत्रु नाम) वेष्टय वेष्टय जम्भय जम्भय खन खन वैते हूं फट्"

मोहन

मोहन का अर्थ है मोहित करना (हिप्टोनिज्म) एक प्रकार से वशीकरण ही है, अर्थात् व्यक्ति किंकर्तव्य विमूढ़ हो जाय अथवा लोग उसके व्यक्तित्व से प्रभावित हों, विरोधी भी विरोध न कर सके— इत्यादि। मोहन के विविध प्रयोग हैं—

(१) सर्वप्रथम निम्न मंत्र का सवा लाख पुरश्चरण कर मंत्र सिद्ध कर ले, तदन्तर जब प्रयोग करना हो, प्रयोग कर ले।

"ॐ रक्त चामुण्डे सजर्वनान् मोहय मोहय मम वश्यं कुरु कुरु स्वाहा"

(अ) सहदेवी के रस में तुलसी के बीज पीसकर मंत्रित कर तिलक (अपना) करे।

(आ) असगन्ध, हरताल और गोरोचन को केले के पत्तों के रस में पीसकर उक्त मंत्र से अभिमंत्रित कर अपना तिलक करे।

(इ) चन्दन, कूट, काकड़ासिंगी और वच का धूप बनाकर, मंत्रित कर इस धूप से अपने वस्त्रों व शरीर पर धूप करे।

(ई) मैनसिल और कपूर को केले के रस में पीसकर मंत्रित कर तिलक करे।

(उ) सिन्दूर, कुंकुम, गोरोचन और आंवले के रस को मिलाकर मंत्रित कर तिलक करे।

(ऊ) सफेद आंक की जड़ और सफेद चन्दन को मिलाकर मंत्रित कर तिलक करे।

(ए) भांग, वच और सरसों मिलाकर मंत्रित कर शरीर में उबटन लगाये।

(ए) गूलर के फूल की बत्ती बनाकर मक्खन से उसे जलाकर काजल तैयार करे और इस काजल को मंत्रित कर प्रयोग करे।

(२) पहले सवा लाख पुरश्चरण कर मंत्र सिद्ध करने के उपरान्त प्रयोग करे।

"ॐ अं आं इं ईं ऊं ऊँ ऋं हुं फट्"

(अ) इस मंत्र से मंत्रित कर जिस व्यक्ति को पान खाने को दें वह आप पर मोहित होगा।

(आ) प्रियंगु की जड़ और बीज, लाल चन्दन, इलायची के बीज पीसकर मंत्रित कर पान में रखकर अपने हाथ से खाने को दें. जिसे दें वह मोहित होगा।

स्तंभन

स्तंभन का अर्थ है रोकना अर्थात् जो जिस स्थिति में है, उसी स्थिति में उसे बनाये रखना, प्रभावहीन करना इत्यादि। स्तंभन अनेक प्रकार से होता है जैसे शस्त्र स्तंभन, मुख स्तंभन, चोर की गति स्तंभन, अग्नि स्तंभन (आग को रोकना, आग का प्रभाव न होना) जल स्तंभन (अति वर्षा या बाढ़ को रोकना) बुद्धि स्तंभन (शत्रु की बुद्धि का स्तंभन), निद्रा स्तंभन (नींद रोकना) इत्यादि, यहाँ पर कुछ उपयोगी प्रयोगों का उल्लेख कर रहे हैं।

(१) घीगुवार का गूदा, तेल, केले का रस, आँक का दूध—इनको मिलाकर लेप करने से शरीर पर आग का प्रभाव नहीं होता। प्रयोग से पहले निम्न मंत्र का सवा लाख पुरश्चरण आवश्यक है—

"नमो अग्निरूपाय मम शरीरे स्तंभनं कुरु कुरु स्वाहा"

(२) नागरमोथा की जड़ चाँदी में लपेट कर मंत्रित कर मुख में रखने से शत्रु के मुख का स्तंभन होगा अर्थात् न्यायालय, सभा आदि में शत्रु कुछ बोल नहीं पायेगा, जो बात उसके हित में है उसे सही रूप में प्रभावी ढँग से कह नहीं पायेगा। सर्वप्रथम निम्न मंत्र का सवालक्ष जप करके पुरश्चरण कर ले।

"ॐ ह्रीं रक्ष चामुण्डे तुरु तुरु
(शत्रु का नाम) वशमानय स्वाहा"

(३) मनुष्य की खोपड़ी में सफेद गुंजा (घुघुची) के बीज बोना, गाय के दूध से निरन्तर उसे सींचे, इस बेल को मंत्रित कर जिस व्यक्ति के शरीर में डाला जायेगा, उसका आसन (स्थान, पद) का स्तंभन होगा। यहाँ पर स्तंभन का अर्थ आसन पद या स्थान से वंचित करना ही होगा, अर्थात् आसन प्राप्त करने से रोकना।

अथवा

जिस व्यक्ति का नाम लेकर श्मशान में किसी मुर्दे की चिता पर नमक से १०८ बार निम्न मंत्र से हवन किया जाय उसका भी आसन स्तंभन होगा।

प्रयोग करने से पहले पुरश्चरण द्वारा मंत्र की सिद्धि प्राप्त करना आवश्यक है।

"ॐ नमो दिगम्बराय ... (जिस व्यक्ति पर प्रयोग करना हो उसका नाम) आसनं स्तंभय स्तंभय फट् स्वाहा"

(४) उल्लू या वानर की विष्ठा सावधानी पूर्वक मंत्रित करके जिसे भी पान में रखकर खिला दिया जाय उसकी बुद्धि का स्तंभन (बुद्धि भ्रष्ट) होता है। सर्वप्रथम सवा लाख जप करके मंत्र सिद्ध कर ले।

"ॐ नमो भगवते नृसिंहाय (शत्रु का नाम) ... बुद्धि स्तंभनं कुरु कुरु फट् स्वाहा"

प्रयोग से पहले सवा लक्ष जप द्वारा मंत्र सिद्ध करना होगा।

"ॐ नमो भगवते महानृसिंहाय सर्व स्तंभन कर्त्रे सर्व स्तंभनं कुरु कुरु स्वाहा"

(५) निम्न प्रयोगों में—

(अ) रविवार के दिन जब पुष्य नक्षत्र हो उस समय काले धतूरे की जड़ लाकर रख ले। जब प्रयोग करना तो तब इसे अभिमंत्रित कर गर्भिणी के कमर में बाँधने से गर्भ स्तंभन होता है अर्थात् गर्भपात नहीं होता। प्रसव के समय इसे उतार देना आवश्यक है।

(आ) शहद में कंटकारी की जड़ घिसकर आँखों में लगाने से निद्रा स्तंभन होगा।

(इ) रजस्वला स्त्री के रक्त से सने वस्त्र पर जिस व्यक्ति की आकृति गोरोचन से बनाकर, उस पर इस मंत्र को लिखकर उस व्यक्ति का नाम लेकर पानी के घड़े में डाले, वह व्यक्ति स्तम्भित होगा।

(ई) चिता के कोयले पर कपूर से व्यक्ति का नाम लिखकर जमीन में गाड़ दे।

(६) निम्न मंत्र जपते हुए श्मशान से पत्थर की सात कंकर उठावे, इनमें से चार अपनी मुट्ठी में बांधे और ३ कमर में—इससे चोर की गति का स्तंभन होता है। पहले पुरश्चरण करके मंत्र सिद्ध कर लें—

"ॐ नमो ब्रह्म विद्वेषिनी शिवे रक्ष रक्ष ठः ठः"

शत्रु मुख स्तंभन

पहले नवरात्रों में निम्न मंत्र को सिद्ध कर ले, बाद में आवश्यकतानुसार प्रयोग करे। वाद-विवाद के समय सात बार यह मंत्र जपने से शत्रु की बोलती बन्द हो—

"ॐ वातले वितले विडालमुखि इन्द्र पुत्रि उद्भवो वायुवेगेन खीली आजी हाजा मयि वाह इहादि दुःख नित्यकण्ठोच्चैर्मुहूर्तान्वया अह मां यस्मह मुपाडि ॐ भेलखि ॐ स्वाहा"

वशीकरण में राई के प्रयोग

आसुरी अर्थात् राई के तंत्रशास्त्र में अनेक प्रयोग हैं। वशीकरण में इसका विशेष महत्व है। सर्वप्रथम विधि पूर्वक दस हजार जप करके पुरश्चरण करने के उपरान्त इसका प्रयोग किया जाता है।

छन्द :—ॐ अस्य श्रीमदासुरी महामंत्रस्य अंगिरा ऋषिः, अनुष्टुप विराट् छन्दः, आसुरी देवता, ॐ बीजं, आपः स्वाहेति शक्तिः इच्छित कार्य सिद्धयेजपे विनियोगः।

न्यास :—अंगिरा ऋषये नमः शिरसि, अनुष्टुप विराट छन्द से नमः मुखे, आसुरी देवतायै नमः हृदये, ॐ बीजाय नमः नाभौ, आपः स्वाहेति शक्तयेनमः पादौ।

करन्यास व हृदयादि न्यास

ॐ कटुके कटुकपत्रे हुं फट् स्वाहा—	अगुंष्ठाभ्यां नमः / हृदयायनमः
सुभगे आसुरी हुं फट् स्वाहा—	तर्जनीभ्यां नमः / शिरसेस्वाहा

रक्ते रक्त वाससि हुं फट् स्वाहा— मध्यमाभ्यां नमः / शिखायै वौषट्
अथर्वणस्य दुहिते हुं फट् स्वाहा— अनामिकाभ्यां नमः/कवचायहुम्
अघोरे अघोर कर्म कारिके हुं फट् स्वाहा—कनिष्ठिकाभ्यां नमः/नेत्रत्रयाय वौषट्

[(जिसे वश में करना हो उसका नाम)
गति दहदह हन हन पचपच
मथ मथ तावद्दहदह यावन्मे वश
मानय स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः /अस्त्राय फट्

ध्यान —श्वेतवर्ण, बड़े नेत्र, हृदय और शरीर रक्तवर्ण, नागों की माला पहने, आभूषणों से भूषित, दाहिने हाथों में त्रिशूल और वरद मुद्रा, वायें हाथों में थाली और अंकुश धारण किये, चतुर्भुजा, पद्मासन पर विराजमान आसुरी देवी का ध्यान करे।

प्रयोग

[१] राई को कूट पीसकर चूर्ण बनाले, इसमें घी मिलाकर एक मनुष्याकृति (जिसे बश में करना हो) मूर्ति बनाले और इसकी प्रतिष्ठा-प्राणप्रतिष्ठा करले। आक की समिधा जलाकर (बाल खोलकर, लाल कपड़े पहनकर, दक्षिण मुख करके) मूर्ति को दाहिने पैर से दबाकर फट् पल्लव लगाकर (मंत्र के अन्त में 'फट्' उच्चारण कर) छुरी से मूर्ति को काटकाटकर एक सौ आठ आहुति होम करे।

निरन्तर सात दिन ऐसा करने से वश में होगा।

[२] तगर, कूट, मांसी, राई के फूल समभाग लेकर चूर्ण करे, इसे एक सौ आठ बार अभिमंत्रित करे। इस चूर्ण को हाथों में मलकर जिससे हाथ मिलाये—वह वश में हो।

[३] राई का पंचांग (मूल, पत्ते फूल, फल डंडे), मैनसिल, मालकांगनी, तगर, नागकेशर, मदिरा—इन सबको मिलाकर कूट कर चूर्ण तैयार करे। इस चूर्ण को एक सौ आठ बार मंत्रितकर हाथों में मलकर जिससे भी हाथ मिलाये—वह वश में हो।

मंत्र इस प्रकार है –

"ॐ कटुके कटुक पत्रे सुभगे आसुरी रक्ते रक्तवाससी अथर्वणस्य दुहिते अघोरे अघोरकर्म कारिके (अमुकस्य—शत्रुका नाम) गति दहदह हनहन पचपच मथमथ तावद्दहदह यावन्मे वश मानय स्वाहा"

युद्ध व विवादादि में वशीकरण कारक कुछ अन्य प्रयोग —

[१] सुभगा (नीलीदूब), मैनसिल, हरताल — इन्हें लाख में मिलाकर स्त्री के दूध में घोटकर तिलक करे — जो देखे वश में हो।

[२] विष्णुक्रान्ता (अपराजिता), सर्पाक्षी (महिपकन्द), सहदेवी और गोरोचन — इन्हें बकरी के दूध में घोटकर तिलक करे।

[३] नागकेशर कुंकुम, कूठ चमेली, तगर और घी को मिलाकर तिलक करे।

[४] गोरोचन, रक्तचन्दन, हल्दी, मैनसिल, हरताल, नागकेशर, सरसों, चमेली, दूब, अपराजिता, सहदेवी और जटामांसी इनको धतूरे [illegible] व नीबू के रस में पीसकर तिलक करे।

[५ मजीठ, रक्तचन्दन सहजन, विलासिनी, पुनर्नवा [illegible] शरीर में लेप (उबटन) करे।

[६ चन्दन, चम्पा, मजीठ, तगर, वच, लोध्र, नागकेशर, रजनी (हल्दी और जटामांसी — इन सबको पकाकर (तेल में) इस तेल का शरीर पर लेप करे।

विद्वेषण या द्वेषण

परस्पर व्यक्तियों में द्वेषभाव (शत्रुभाव) उत्पन्न करना ही विद्वेषण है। दो मित्रों, पिता-पुत्र, पति-पत्नी, पुत्र व माँ, स्वामी-सेवक आदि किसी में भी शत्रुता का भाव उत्पन्न किया जा सकता है। इस सिद्धि के निमित्त सर्वप्रथम निम्न मंत्र का चार लाख जप करके पुरश्चरण सिद्ध कर लेना आवश्यक है —

"ॐ नमो नारदाय ·· (उन दोनों का नाम लें
जिनके बीच द्वेष करना है ······) विद्वेषं कुरु कुरु
ऐं ह्रीं क्लीं फट् स्वाहा"

[१] दोनों के पैर तले की अलग अलग मिट्टी लें। एक में बिलाव की विष्ठा और दूसरे में चूहे की विष्ठा मिलाकर दोनों के अलग अलग पुतले बनाये। इनकी प्राणप्रतिष्ठा कर सौ-सौ बार मंत्र पढ़कर इन्हें अभिमंत्रित करे। पुतलों को नीले कपड़े में लपेट कर उनके घर में गाड़ दे।

[२] सांप और नेवले के दांत अलग-अलग पीसकर रक्खे, दोनों में श्मशान से चिता की राख लाकर मिलाये, दोनों के अलग अलग पुतले बनाकर प्राण प्रतिष्ठा करे। अलग-अलग उनका नाम लेकर उपरोक्त मंत्र पढ़कर सौ-सौ बार पानी के छींटे दे। अन्त में दोनों को जमीन में कहीं गाड़ दे।

[३] हाथी और शेर के दांतों को पीस कर रक्खे, इसमें नमक और मक्खन मिलाकर एक सौ आठ आहुति उपरोक्त मंत्र पढ़कर हवन करे।

[४] हाथी का दांत और शेर का दांत पीसकर इसमें मक्खन मिलायें और इसे चन्दन या कुंकुम में मिलाकर इससे जिन दो व्यक्तियों के बीच वैर (फूट) डालनी हो —उनके तिलक लगवा दे।

पहले एक हजार बार इस मंत्र से चन्दन को अभिमंत्रित कर लें—

"ॐ नमो नारायणाय .... [अमुक और अमुक व्यक्ति में—दोनों का नाम लें] ... .. सह विद्वेषं कुरु-कुरु स्वाहा"

उच्चाटन

मानसिक अशान्ति, निराशा, हताशा, भय उत्पन्न कर मन-मस्तिष्क को प्रभावित व विकृत करना ही उच्चाटन है।

[अ] सर्वप्रथम निम्न मंत्र का अनुष्ठान कर इसे सिद्ध कर ले।

"ॐ नमो भगवते रुद्राय .. .. व्यक्ति का नाम—जिस पर प्रयोग करना हो .... ग्रह ग्रह पच पच त्रासय त्रासय त्रोटय त्रोटय नाशय नाशय पशुपति र ज्ञापयति ठः ठः"

[१] सरसों + शिव निर्माल्य सौ बार मंत्रितकर घर में गाड़ दे।

[२] कलिहारी की जड़ सौ बार मंत्रित कर घर में गाड़ दे।

[आ] पहले निम्न मंत्र को सवा लाख जप कर सिद्ध करे। तदनन्तर यथासमय प्रयोग करे—

[१] ब्रह्मदण्डी चिता की राख और सरसों का शनिवार को शिवलिंग पर लेप करे, पश्चात् दूसरे शनिवार को वह लेप शत्रु के घर में (सौ बार मंत्रित करके) फेंक दे।

[२] कौवा और उल्लू के पंख मिलाकर रविवार के दिन (सौ बार मंत्रित कर) शत्रु के चूल्हे के नीचे गाड़ दे।

[३] गूलर की गीली लकड़ी से चार अंगुल की कील बनाकर शत्रु की चारपाई में ठोंक दे (सौ बार मंत्रित कर)।

[४] सौ बार मंत्रित कर उल्लू की विष्ठा का लेप शत्रु के पलंग पर कर दे।

"ॐ नमो भगवते महारुद्राय रौद्ररूपाय ·· ···(नाम) ······ सपरिवारस्योच्चाटनं कुरु कुरु फट् स्वाहा"

वशीकरण

किसी भी व्यक्ति को अपने अनुकूल आज्ञाकारी बनाना ही वशीकरण है। वशीकरण के विविध प्रयोग हैं।

सामान्य वशीकरण

अर्थात् जनसाधारण को प्रभावित करने हेतु, जिससे जनसाधारण के मन में उसके प्रति विश्वास जगे, समाज में उसकी बात मानी जाय, समाज उसका अनुसरण करे। चुनावों आदि में जनसाधारण उसके पक्ष में हों इत्यादि।

(अ) गोरोचन, सहदेई और अपामार्ग की जड़ें घिसकर चन्दन तैयार करे, इस चन्दन सौ १०८ बार मंत्रित कर तिलक करे, इस तिलक को जो देखे, वह वशीभूत होगा।

मंत्र—

ॐ नमः कन्दर्पशिर बिजालिनि मालिनि सर्वलोक वशंकरी स्वाहा"

(आ) सर्वप्रथम निम्न मंत्र का सवा लाख पुरश्चरण कर मंत्र सिद्ध करने के उपरान्त प्रयोग करें।

[१] ब्रह्मदण्डी, वच, कूट इन तीनों का चूरा १०८ बार मंत्रित कर पान में जिसे खाने को दे, वह वशीभूत हो।

[२] जिस दिन पुष्य नक्षत्र व रविवार हो—उसदिन सहदेई लाकर छाया में सुखाकर चूर्ण बना लें। इसे मंत्रितकर पान में खाने को दें।

[३] देवदाली और सरसों को पीसकर गोली बनायें। इसे मंत्रितकर मुख में रखकर वार्तालाप व भाषण करें, जन सामान्य प्रभावित व वशीभूत होगा।

[४] केशर, तगर, कूट, हरताल, मैंनशिल—इस सबका चूर्ण बनाकर पीस लें, इसमें अपनी अनामिका अंगुली से रक्त निकालकर मिलाये, फिर इसे मंत्रित करे तिलक करे। जो इस तिलक को देखे वह वशीभूत होगा।

"ॐ ह्रीं नमो मोहिन्यै सर्वलोकान्मे वशं कुरु कुरु हुं फट् स्वाहा"

(इ) नीलकमल की जड़ गोरोचन के साथ तांबे के बर्तन में पीसे **"ॐ पिंगलायै नमः"** मंत्र से १०८ बार मंत्रित कर इसका आखों में अंजन करे।

व्यक्ति विशेष का वशीकरण

[१ जिस व्यक्ति का वशीकरण करना हो उस व्यक्ति का नाम लेकर भोजन का ग्रास "ॐ नमः कट विकट रूपिणी स्वाहा" इस मंत्र को सात बार पढ़कर भोजन करें। निरन्तर सात दिनों तक यह क्रम जारी रक्खे।

[२] सुदर्शना की जड़ को **"ॐ ह्रीं सः.......... [नाम] ...... मे वश मानय स्वाहा'** इस मंत्र से १०८ बार मंत्रित कर दाहिने हाथ में बांधे।

स्त्रीवशीकरण

यह प्रयोग अपनी पत्नी के प्रति है, पत्नी अनुकूल रहे।

[१] काली अपराजिता की जड़ **"ॐ हूँ स्वाहा"** मंत्र से अभिमंत्रित कर, स्त्री + पुरुष दोनों का नाम लेकर पान में खाने को देना।

[२] अपने हाथ और पैर के नाखूनों का भस्म बनाकर रविवार को मंत्रितकर पान में रखकर खाने को दे।

प्रयोग करने से पूर्व निम्नमंत्र का सवालाख पुरश्चरण करना आवश्यक है—

"ॐ नमः कामाक्ष्यै देव्यै ...... (स्त्री का नाम)........ मे वशं कुरु कुरु फट् स्वाहा"

पतिवशीकरण

चीते (चित्रक) के फूल शहद में मिलाकर निम्नमंत्र से १०८ बार मंत्रित कर भोजन या पान में डालकर खाने को देना।

"ॐ काम कामिनी पति मे वशमानय ठः ठः"

राजवशीकरण

राजा या शासन में किसी अधिकारी अथवा अपनेअधिकारी को वशीभूत कर, अपने अनुकूल (पक्ष) में करने हेतु सर्वप्रथम निम्न मंत्र का सवा लाख जप करके मंत्र सिद्धि के उपरान्त प्रयोग करे—

[१] जिस वर्ष सोमवार को दीपावली पड़े, दीपावली की आधीरात के समय विष्णुक्रान्ता के बीजों के तेल से दीपक जलाये (इस तेल की पहले से व्यवस्था कर ले), इस दीपक से सोने की साफ कटोरी में काजल तैयार करे। इस काजल को मंत्रित कर आखों में लगाकर राजा या अधिकारी के के पास जाने से वह वशीभूत होगा।

[२] अमावास्या जब मंगलवार को हो, उस दिन नित्यकर्म करके विद्वान ब्राह्मण को साथ लेकर पवित्र होकर वन में जाकर उत्तर को मुख करके अपामार्ग के पौधे का विधिवत् पूजन करे और चार तोला सोना दान करे (वर्षाऋतु के अन्त में ही यह कार्य करे जिन दिनों अपामार्ग के पौधे पर बीज पके मिलें)। ब्राह्मण के हाथों अपामार्ग के बीज तुड़वा कर चुपचाप अपने घर में ले आये। छीलकर उन्हें साफ कर ले। इन बीजों को मंत्रितकर भोजन, पान या किसी भी प्रकार से राजा/अधिकारी को खिला देने से सदैव अपने अनुकूल वशीभूत रहेगा।

"ॐ नमो भास्कराय जगदात्मने राजानं वशमानय कार्यं कुरु कुरु फट् स्वाहा"

परस्त्रीवशीकरण

तंत्रशास्त्र में परस्त्री वशीकरण के भी विविध प्रयोग वर्णित हैं, लेकिन यह कार्य किसी भी रूप में लोकहित में नहीं है और सर्वथा इसका दुरुपयोग ही होता है अतः पापमूलक व अनावश्यक होने से इस विषय के प्रयोग देना उचित नहीं है।

आकर्षण

किसी व्यक्ति को अपने प्रति आकर्षित करना अथवा किसी दूर स्थित व्यक्ति को इच्छित स्थान पर बुलाना आकर्षण है।

(अ) निम्न मंत्र का दशहजार जप करने से आकर्षण होता है—

"ॐ ह्रीं चामुण्डे ·········· (जिसका आकर्षण करना हो उसका नाम ·········) आकर्षय आकर्षय ह्रीं ह्रीं"

(आ) निम्न मंत्र का तीन लाख जप करके मंत्र सिद्ध हो जाने के बाद निम्न प्रयोग करे—

[१] काले धतूरे के पत्तों के रस में गोरोचन मिलाकर भूर्जपत्र के ऊपर पन्द्रह का यंत्र लिखे (कनेर की लेखनी से), खैर की लकड़ियों की आंच में इस

६	१	८
७	५	३
२	९	४

यंत्र को तपाने से आकर्षण होगा।

[२] अथवा गोरोचन और कुंकुम घोलकर मनुष्य की खोपड़ी में पन्द्रह का यंत्र लिखकर पूर्ववत् खदिर (खैर) की आंच में तपाने से आकर्षण होगा।

[३] रविवार के दिन जब पुष्यनक्षत्र हो ब्रह्मदण्डी लाकर उसका चूर्ण करे और इसे १०८ बार मंत्रित कर जिसके शिर में डाले उसका आकर्षण हो (यह प्रयोग विशेषतः किसी स्त्री को अपने प्रति आकर्षित करने हेतु है)।

"ॐ नमो बीरवेतालाय मंदराचलवासिने ·········· [नाम] ······ आकर्षय आकर्षय ह्रीं क्लीं फट् स्वाहा"

गोरखपंथी सिद्ध मंत्र

तंत्र-मंत्र केवल देवभाषा (संस्कृत) में ही हो, यह आवश्यक नहीं है. मुख्य बात यह है कि मंत्र सुपरीक्षित व सिद्ध हो। शैव सम्प्रदाय में श्री गोरखनाथ जी एक सिद्ध तांत्रिक हो चुके हैं, स्कंद पुराण में इनका जीवन वृत्त भी प्राप्त होता है। नेपाल में आपके नाम से अनेक आश्रम हैं। नेपाली राजमुद्रा में आप ही अंकित हैं। जहाँ आपको साक्षात् पशुपतिनाथ ही माना जाता है। सिद्ध सिद्धांत पद्धति, विवेक मार्तण्ड, दत्त गोरक्ष संहिता, दत्त गोरक्ष गोष्ठी आपके प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं। भारत में गोरखपुर नगर आपके ही नाम पर बसा है। इस सम्प्रदाय में गुरू श्री आदिनाथ, मत्स्येन्द्र नाथ, जालन्धर नाथ, कानिफ नाथ, उमा, मैनावती, चौरंगी नाथ, गैनी नाथ, भैरव नाथ, फुटिग नाथ आदि अनेक सिद्ध तांत्रिक हुए हैं।

इस सम्प्रदाय के सिद्ध मंत्र लोक भाषा में हैं और अप्रकाशित हैं। नेपाल, कामरूप (आसाम), उत्तराखण्ड (उ० प्र०) और महाराष्ट्र में इन मंत्रों का व्यापक प्रचलन है।

इन मंत्रों में अधिकांश 'ॐ नमो गुरू जी का आदेश' से प्रारम्भ होते हैं। मध्य मे गुरू गोरखनाथ, मत्स्येन्द्र नाथ, चौरंगी नाथ, आदिनाथ, श्री महादेव-पार्वती नारसिंह, हनुमंत (हनुमान) भैरवनाथ आदि का भी उल्लेख आता है।

गुरूदेव की असीम कृपा से नेपाल तथा उत्तराखण्ड में बहुत से हस्तलिखित ग्रन्थ (गोरखपंथी सिद्ध मंत्रों से सम्बन्धित) मुझे कठिन परिश्रम व खोज से प्राप्त हो सकी हैं। इनमें कतिपय मंत्र दो-दो तीन पृष्ठ के बहुत लम्बे हैं, कुछेक की साधना प्रणाली भी अत्यन्त कठिन है। यदि इन सभी मंत्रों का वर्णन किया जाय तो इसी विषय पर अनेक ग्रन्थ बन जायेंगे। यह हस्तलिखित ग्रन्थ एक तो जीर्ण-शीर्ण अवस्था में हैं और इनको पढ़ पाना भी एक कठिन कार्य है। इनमें से कुछ प्रमुख मंत्रों को ही प्रस्तुत कर रहे हैं।

बाल रक्षा मंत्र

रीठे के बीज को रविवार या बुधवार के दिन निम्न मंत्र से सात बार

मंत्रित कर तागे में पिरोकर बच्चों को गले में पहना देने से भूत-प्रेतादि बाधा, रोग, कुदृष्टि (नजर) आदि से रक्षा होती है—

"ॐ नमो गुरू को आदेश, ॐ नमो गुरू को आदेश, ॐ नमो गुरू को आदेश, गुरूदेव को आदेश, गुरूदेव को आदेश, गुरूदेव को आदेश, आई देवी जल फूटी नौ नाड़ी बहत्तर कोठा को ज्वर, हँकार डाकिनी साकिनी भूतनी पिशाचनी लग गों पठायों निकाली देवे न निकालै तो गुरू गुरू गोरखनाथ की द्वाई फुलमंत्र ईश्वरोवाच: ॐ ह्रीं जीं श्रीं क्लीं खं खं स्वाहा"

वशीकरण सिन्दूर

"ॐ नमो गुरू जी को आदेश, ॐ नमो गुरू जी को आदेश, ॐ नमो गुरूजी को आदेश, ॐ नमो तिलक चन्दनी जगत मोहनी तिलवाह पाठ चार खोला वार जात तेहि पर बैठे ला पठायूँ योगिनी के चार पूत, चार पूत कौन-कौन एक राम एक जै राम एक सत एक असत जूनी लोहल्याबीर हाथी के हलय की मोह ल्या धंत के राजा को मोहल्या, पत्र की योगिनी को मोहल्या जोहि जोहि मोहि मोहि हमरे दाहिने अँग बाँये पैर तले न लाये तो माता अपनी की द्वाई, काली इष्ट पिता महादेव की द्वाई, माता छुरी लगाई मेरा इतना काम न करै तो हनुमंत बीर गुरू अजपालनाथ की द्वाई चारबी चोर की नाथ की द्वाई फुल मंत्र ईश्वरोवाच ।"

हाथ में सिन्दूर रखकर इस मंत्र से आठ बार मंत्र कर कपाल में लगाने से जो देखे वह वशीभूत हो ।

पुरुष/पति वशीकरण

जिस पुरुष (पति) को वश में करना हो उसके मूत्र में एक साबूत सुपारी का दाना ७ वार उबाले (सात बार अलग-अलग) बाद में उस सुपारी को आग में जलाकर उसकी राख (कूटकर) बना ले । इसके बाद इस राख को सात बार निम्न मंत्र से मंत्रित कर गुड़ या किसी अन्य खाने के वस्तु में मिलाकर बुधबार या इतबार को गुपचुप खिला दे—

'ॐ श्री गुरुभ्यो नमः, ॐ नमो गुरु जी को आदेश ॐ नमो गुरू जी को आदेश, ॐ नमो गुरू जी को आदेश, पेड़ जमता आया साखा फटती आई, फूल

फूलता आया फल लगता आया ····. (स्त्री का नाम) ·· स्त्री अमुकना* की माया कटती आई, · . (पुरुष का नाम) · · की माया लगती आई फुल मंत्र ईश्वरोवाच''

मोहनकारी सिन्दूर

निम्न मंत्र मंगलवार को सात बार सिन्दूर मंत्र कर चुपचाप तिलक करे। जो देखे सो मोहित हो मुकदमे आदि में यह तिलक करके जाने से, राजद्वार, सभा आदि सर्वत्र वातावरण अपने अनुकूल बने, सभी मोहित हों—

'ॐ नमो गुरू जी को जुहरा विद्या माता को नमस्कार मन मोहनी जहाँ बसै मन तहाँ तमानी हम बसै तो माया तुम्हारी तीन तीन तीन तारा और तीन भेस सिन्दूरा धूलि लगाऊँ इस सिन्दूरा धूलि को तीन लोक में चलाऊँ तीनों लोक मोही मेरा वश कर लावै शिर में जाग जाग मोहनी तू मेरा शिर में जाग, तू मेरी माता मैं तेरो पूत जहाँ मैं चलाऊँ तहाँ न चले तो द्वाई पीतामृगी द्वाई द्वाई अँजनीपूत हनुमन्त जी, इस सिन्दूरा धूलि को राज दरबार को चलाऊँ, राज दरबार मोही, राजा को सिंहासन मोही, राजा की दवात स्याही कलम मोही कागजात सभा लैला मोही चलती गंगा को लैला मोही, रानी की लैला मोही, सब मोही माही मेरा बश नहीं करलावै तो लाख लाख गुरू की द्वाई, गुरू महादेव की द्वाई, नौ लाख चौरासी सिद्धों की द्वाई कुल मोही माही मेरा बश नहीं करलावै तो सोलह सौ गरुड़ी लूला ठूनी बज्रमुनी की द्वाई आन दाड़ी पुजी कइया लोहार आन शव्द सांचा पिण्डकांचा फुल मंत्रो ईश्वरोवाच।''

जादू आदि उलटा फिराना

ऐसी शंका होने पर कि अपने ऊपर किसी ने जादू-टोना आदि तंत्र-मंत्र किया है, निम्न क्रिया करने से जिसने भी टोना-टोटका आदि किया हो वह वापस उसी पर चला जायगा।

पीली सरसों, राई और नमक निम्न मंत्र से १०८ बार या ८ बार मंत्रित कर अपने शिर में सात बार घुमाकर आग में डाल दे—

* यदि वर्तमान में उस पुरुष का किसी अन्य स्त्री से सम्बन्ध हों तो यहाँ उस स्त्री का नाम आयगा।

"एक ठो सरसों सोला राई मोरो पटवल को रोजाई खाय खाय पड़े भार जे करे ते मरे उलट विद्या ताही पर परे, शब्द सांचा पिण्ड कांचा फुलो मंत्र ईश्वरोवाच ॥"

दाँत पीड़ा का मंत्र

(अ) 'इड़ा बांधु पीड़ा बांधु सात तालाब का कीड़ा बांधु मेरे बांधे न बांधै तो विधाता की द्वाई"

इस मंत्र को पढ़ते हुए एक सौ गुड़ की गोली बनाकर नदी या तालाब में फेंकता जाय। तब यह मंत्र सिद्ध होगा। मंत्र सिद्ध हो जाने पर जब आवश्यकता हो तब प्रयोग करे —

(१) इस मंत्र से बैंगन का टुकड़ा सात बार मंत्र कर दाँत से दबा दे।

(२) स्यालनाभि (शरद ऋतु में घास के मैदानों में प्राप्त, 'तारा का गू') को मंत्रित कर उसकी धूप दाँत में दे।

(३) नीबू का रस मंत्रकर सुई से दाँत में लगा दे।

(आ) इक्कीस बार निम्न मंत्र से सुई के द्वारा नीबू के रस को मंत्र कर दाँत में लगा दे।

"ॐ सौमण गिद्धवती सौमण लोही खाई, चट खाई हाड़ हाड़ मासू चाम चाम लोही खाई बहत्तर कोठा जाई अष्टदगर करे अष्ट भैरों का चक्र पाणी भरै (नाम) ... अंग पिंड में रहै तो तल धरती की द्वाई, पुर धर्मराज की द्वाई, ताराजिती शुक्र द्वाई मल्ला जिती पार्वती की द्वाई वीरजती हनोमान की द्वाई फुल मंत्र ईश्वरोवाच"

सिद्ध काजल श्री हनुमान जी का

किसी भी महिने पहले रविवार से लेकर अगले रविवार तक आठ दिन गंगा जी के किनारे अगरबत्ती का धूप जलाकर प्रतिदिन सन्ध्याकाल १०८ बार जपने से मंत्र सिद्ध होगा। मंत्र सिद्ध होने पर बाद में प्रयोग करे।

"या हजरत खाजै जमुले पीर मुझ गरीब पर हो दातागेरू। आगे हमारा काम करो बाद रकाब में पाँव रक्खो हीरका हनूमान सदाबरस का ज्वान हाथ में लड्डू मुख में पान। आओ जी हनुमंता भले जी बलवन्ता टोड़ो जी गढ़ लंका छोटे शरी का हनुमंता अंजनी का पूत सुनो मेरे ऐंश अंजन जल्दी जल्दी चले आओ।"

प्रयोग—दीपावली की चर्तुदशी के दिन सायंकाल काले धतूरे के पेड़ में जल चढ़ाकर, कलावा बांधकर उसे निमंत्रण दे। दीपावली की सुबह अंधेरे में ही जड़ समेत उसे उखाड़ ले, इसे कूटकर इसके रस में रुई भिगाना, रुई सुखाकर वत्ती बनाना और तिल के तेल में जलाना, कांसे की थाली से ढककर काजल तैयार करना, इस काजल को ईन (रेंडी) के तेल में मिलाकर काजल तैयार कर लेना।

जब कभी उपयोग करना हो जमीन को लीप पोत कर खड़िया से अष्टदलकमल जमीन पर बनाना, आठों कोठों में ५ का अंक लिखना आठों खानों में भेंट व पान सुपारी रखना। रात के समय ऊँचे स्थान पर तिल के तेल का दीपक जलाना, कमरे में हवा न आ सके ऐसा प्रबन्ध करना (बन्द कमरे में प्रयोग करे)। किसी ८ से बारह वर्ष तक के आयु के चतुर बालक को पास बुलाना।

पहले उपरोक्त मंत्र को एक बार पढ़कर सामने कपूर की टिकड़ी जलाकर आरती करना। अब उपरोक्त सिद्ध हुआ काजल या तो बालक के हथेली में चुपड़े या पान के पत्ते पर, बालक टकटकी लगाये एकाग्र होकर उस काजल को देखता रहे। तिल के तेल की जो बत्ती जल रही है, उसका प्रतिविम्ब काजल पर पड़ना चाहिए—इस प्रकार रखे। थोड़ी देर में बालक को उस काजल पर जमीन व पेड़ दिखाई देंगे। पुनः कपूर जलाकर एक बार मंत्र पढ़े। बालक टकटकी लगाये वहाँ देखता रहे, अब काजल मे बालक को श्री हनुमान जी के दर्शन होंगे। पुनः कपूर जलाकर मंत्र पढ़ना। अब बालक टकटकी लगाये श्री हनुमान जी से प्रश्न पूछे, नजर न हटाये। बालक जो प्रश्न पूछेगा— उसका उत्तर संकेत द्वारा बालक को काजल पर ही दिखाई देगा।

जैसे—चोरी हुई हो तो चोर कौन कौन है, कोई विदेश गया है, खो गया है तो कहाँ है, जीवित है या नहीं हैं ? जमीन में गड़ा धन कहाँ पर है, इत्यादि। काजल में दिखलाई देगा।

सिद्ध काजल वैसा की खोपड़ी का

यह अघोरपंथी साधना है। दीपावली के दिन वैसा की खोपरी लाकर उसी रात श्मशान में जाकर मसान जगाकर उसकी पूजा करे, बलि दे, फिर

उस खोपड़ी में काजल पाड़कर काजल घर में ले आय। यह काजल चमत्कारी है* —

(१) सफेद आंक की जड़ के साथ काजल घिसकर इसे मनुष्य के मूत्र के साथ आँख में अँजन लगाने से—भूत, भविष्य, वर्तमान तीनों काल की घटनाओं को देखे। किसी के जीवन, किसी के घर भूमि, गड़ा धन, परदेश गये व्यक्ति आदि के बारे में सब कुछ ज्ञात हो।

(२) स्वयँ अदृष्ट हो।

(३) यह काजल जिस किसी स्त्री-पुरुष के लगाये वह वश हो।

(४) काजल को सहदेई के रस में मिलाकर अँजन करे, जो देखे वह वशीभूत हो।

(५) मालूर रस में काजल मिलाकर जिसके लगा दे वह गुमशुम हो। पागल हो। सुधबुध खो वैठे।

(६) मधु ज्येष्ठी के रस में काजल मिला अँजन करने से अग्नि भय न हो। आग से जले नहीं।

(७) रुद्रवंती के रस में काजल मिला अँजन करने से जलभय नहीं हो।

व्यापार में बिक्री बढ़ाने का मंत्र

रविवार को काला उड़द (साबूत) २१ बार मंत्रकर दूकान में डाल दे, निरन्तर चार रविवारों तक ऐसा करता रहे।

'भँवर वीर तू चेला मेरा खोल दुकान कहाकर मेरा उठे जो डण्डी विकै जो माल भँवर वीर सोखे नहि जाय''

पुरुष वशीकरण

पुरुष को वश में करने हेतु स्त्री अपने ऋतुकाल में चार लौंग चार दिनों तक निरन्तर अपने रज में भिगोकर रक्खे। बाद में इन्हें पीसकर १०८ बार मंत्रित कर पुरुष को खिला दे—

'ॐ नमो गुरू जी कट कट करो, कालिका भड़ भड़ करो, मसासा उजड़ खड़े का हनुमान ·· (पुरुष का नाम) ·· कामा गड़दे मचो व घनश्याम इतना काम न करे तो दूध अँजली कह राम।''

---

* कोई मंत्र नहीं है। त्रोटक है।

ससुराल में सुखी रहे

सांभर नमक की १०८ कांकरी निम्न मंत्र से १०८ बार मंत्रकर लड़की कमर में बांधे रहे तो ससुराल में सुखपूर्वक रहे, ससुराल में कोई दुख न हो। नमक की कांकरी पानी-पसीने से पिघलें नहीं एतदर्थ इन्हें कवच (ताबीज) में रखकर बांधे या प्लास्टिक आदि से सुदृढ़ लपेट ले—

"ॐ नमो भीमराज भयँकर पीर भूप सुतई धरई जो दीखेमार करन्ता, सो-सो दीखे पाब परन्ता ॐ नमो ठः ठः स्वाहा।"

पत्थर वर्षा हो

शनिवार को श्मशान में जाकर ७ कंकर निम्न मंत्र से १०८ बार मंत्रकर चिता में डाल दे, बाद में ३ घड़ी बाद (१ घण्टा १२ मिनट बाद) जाकर इन कंकरों को निकाल लाये। जहाँ यह कंकर रखे जांय—वहाँ पत्थर वर्षा हो, निकालने पर बन्द हो—

"ॐ उच्छिष्ट चाण्डालिनी देवी महापिचाशिनी वली ठः ठः स्वाहा।"

ताँबे से सोना बनाना

गोमूत्र (लाल रंग की गाय का), गंधक (लाल रंग), हरताल और मैनसिल—इन चार चीजों को बराबर भाग में लेकर जब तक सूखे नहीं, खरल में घोंटते रहे। तदुपरान्त इसे ग्यारह दिन तक सुरक्षित रखे। प्रयोग एकान्त में शिवालय के समीप शुक्लपक्ष, शुभ दिन, अनुकूल चन्द्रमा होने पर प्रारम्भ करे। 'त्र्यम्बकं यजामहे०' इत्यादि मृत्युंजय मंत्र का दशहजार जप करे और ग्यारह दिनों तक ग्यारह विद्वानों को भोजन कराये। उपरोक्त द्रव्यों को घोंटते समय निम्न मंत्र का भी दश हजार जप करे—

'ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वर्णादीनामीशाय रसायनस्य सिद्धि कुरु कुरु फट् स्वाहा"

बारहवें दिन ताँबे का पतला पत्र लेकर उसके ऊपर उपरोक्त द्रव्य लपेट दे, इसके बाहर चार अँगुल मिट्टी लगाकर बाहर से कपड़ा आदि बाँधकर सुदृढ़ बनाकर सुखा ले।

भूमि में गहरा गड्ढा खोदकर उसमें नारंगी और पलाश ढाक की लकड़ी व कोयलों से भर दे। उपरोक्त गोले को इसके बीचों बीच रखकर आग जला

दे। अपने आप जब आग पूरी तौर पर बुझ व ठण्डी हो जाय तब इस गोले को निकाले। इसमें रखा गया तांबा इस राख के रगड़ने पर सोने के रूप में प्राप्त होगा।

रखवाली का मंत्र

मसाण भूत, प्रेतादि बाधा, ज्वर आदि में इसका प्रयोग होता है—

निम्न मंत्र पढ़कर कपाल में विभूति लगावें। रोगी के मुंह पर पानी के छींटें दें, और एकलवीर नामक पौधे की जड़ और आजी (अपामार्ग) की जड़ तागे से रोगी के गले में बांधे।

ॐ नमो आदेश गुरू जी कौं, शरसौं-शरसौं तू शरसौं कहाँ उत्पन्न भयो, ढोला समुद्र भया ईशर्यु का हालुं, मड उत्पन्न मासाण उत्पन्नी मड मारूं मासाण मारूं, कैलो मासाण मारूं, पट्करिया मासाण मारूं, गौरिया मासाण मारूं, लउदिया मासाण मारूं, बिरलिया मासाण मारूं, अशिरिया मासाण मारूं, सेलिया मासाण मारूं, पूर्व दिशा को भूत मारूं, दक्षिण दिशा को प्रेत मारूं, पश्चिम दिशा को पिशाच मारूं, उत्तर दिशा को बेताल मारूं, डाकिनी मारूं, गाड़ को लोडिया मारू, भेल का चोटिया मारू, ईशरसेत बोया हंकिनी डंकिनी नारसिंह मारी आयो, हणमन्त बीर हाकंतो आयो, डायणी डंकिनी भाजयन्ती आई, अपणा वाला भकंति आई, पराया वाला रखन्ती आई भाज रे भाज रे मशाण, डंकिनी भूतिणी छल छिद्र म रिहालु, अब आयो राजा रामचन्द्र, लंका को काल, परवटी आयो. अजैपाल वाऊँ हाथ समेरन्तो आयो, काल धरमड़िया भूत मारूँ, छप्पन कोटि राकश मारूँ, लुवागिरि दांणू मारूँ, गाड़ को मसाण मारूँ, भेल को भुषुणिया मारूँ, डंकिणि मारूँ, कैलावाल फिकारी आई छै, बत्तीस दाँत झलकौनी अैछै, किश की तू लाई छै, किसकी तू वाला जाङ जन्मी छै, किसकी कोखी जन्मी छै राजा रावण की जाङ जन्मी छौं, राणी मन्दोदरी का कोखी जन्मी छौं, हिलावीर विलावीर द्वी छन भाई, चौषाणी मानमा में छूं लाई, भाज भाज डंकिणी आला की पाती बुकाबणा छूं, तातातवा वैठणा छूं, लुवा का चाणा बुकाबण छयूं सातै शरस्युं, आठै राई, मड़ मासाण झाड़ी झूड़ी, नरसिंह की द्वाई गोरखनाथ की वाचा फुरै, ईश्वर महादेव की आज्ञा लागै, गोचरै गोवर शरै, सूर्यमुख सूकै, अग्नि मुख जलै, विभूत लाइनू गुरू की शक्ति सूं चलै फूल मंत्र ईश्वरोवाच, ... रोगी का नाम ... के आङ में रहै तो

महादेव पार्वती की द्वाई, वाच्या छोड़ी अवाच्या जाई तो कुंभी नरक जाई, गुरू की शक्ति, मेरी भक्ति फुल मंत्र ईश्वरोवाच ।"

शत्रु मोहन मंत्र

पयावृक्ष (उत्तराखण्ड आदि पर्वतीय प्रदेश में होने वाला एक वृक्ष) की लकड़ी* (कील जैसी बनाकर) सात बार निम्न मंत्र से मंत्रित कर चौराहे में गाड़ देने से शत्रु का मोहन होगा ।

'ॐ नमो रू रू भू भू कलुवा आयो, मेरा वैरी कों मोही ल्यायो, साक मोही भाक मोही, त्रिणी मोही, गिणी मोही, जोगिणी मोही, जा जा बालबुद भैरूँ, कलुवा चाकर चलाऊँ जां पठाई तां जाई अँग बैठै, अँग मोह हाड़ मोह मास मोह हाथ मोह गात मोह मोह करतो बीर कलुवा आयो, अग्निकुण्डा मोही ल्यायो, ऋदखदी ल्यायो, चलदा पद बंदू, देखती आँखी बंदू, फटकनी पुछड़ी बंदू, सुड़दाकान बंदू, हलको बंदू, हलिया को बंदू, ग्याली वमा कूं बंदू, तोड़े कूं बंदू, तोपजे कूं बंदू, गाई कूं बंदू, ग्वाली कूं बंदू, गोडाली कूं बंदू चमारी कूं बंदू, कुडाई कूं चन्द्रमाता चंडाली तू जा, तू मोही, तू वंद जी, तू खाई, तू जाई फूल फट् स्वाहा ।"

स्त्री वशोकरण-मोहन

अपने शरीर का मैल (जीभ दाँत, नाक, कान, गुदा तथा लिंग का मल) और चौराहे की धूल मिलाकर निम्न मंत्र से इक्कीस २१ बार मंत्रित कर स्त्री के शिर में डालने से स्त्री वश हो—मोहित हो ।

"धूली धूली चौबाटा की धूली, चौघाटा की धूली, किजोसार जा मेरे मन लागै, ता दी जै बी चाट पैले मोहं, भूकता कुत्ता तद मोहं हांकन्ता पहरी सावा जाई राजामोही द्वाजा बैठी राणी मोही जो आवै मुझको मार मार करंता सो मेरे पाऊँ परंता जोहिल्या वीर घाले जाल मोहिल्या वीर करे मार, जोहिल्या बीर जोहि ल्यावै, मोहिल्या बीर मोहि ल्यावै, जोही जाहां मोही माही मेरा दैना भुजा व वां पगतल ल्याई, अष्ठांगुली आत्मा मोही ल्याई, सात अँगुल को शरीर मोही, चार अँगुल ललाट मोही ल्याई जैसा काम मैं कराऊँ तैसा काम करी ई ल्याई, इतना काम नी करै त जोहिनी मोहिनी वैणा को पाप जाई

---

* अथवा लोहे की कील प्रयोग कर सकते हैं ।

आज्ञा वीर बैताल भैरूँ की द्वाई, फुटिगनाथ नरसिंह की द्वाई, गुरू गोरखनाथ तुम्हारी द्वाई, सत्ये सत्ये सत्ये फुलमंत्र ईश्वरा की छाई।"

कीलन/रक्षा मंत्र

घर, दूकान आदि के बाहर आठों दिशाओं में पया के लकड़ी की कीलें या लोहे की बड़ी कीलें निम्न मंत्र से इक्कीस बार मंत्र कर गाड़ देने से रक्षा होती है। चोरी, डकैती आदि से तथा सभी प्रकार से अपनी रक्षा होगी।

'ॐ श्री गुरुभ्यो नमः, एक फूल एक कली कीलुं, माहाद्यो आगे घरी कीलूं विष्णुकीलुं, इन्द्रकीलुं सहस्त्रकला गोविन्द किलुं आसन मां भैरू कीलुं, अयिरू मासाणल्याऊं परलागी हनुमंत की आन आवागाट पवागाट तेजुकीलुं तीनों गाठ पूर्वदिशा वबरी कीलुं, पश्चिम दिशा किलुं किलुं बज्र केवाड़ कीलुं, नारायण किलुं, अञ्जीतारा दाड़ दात सिंह ब्याघ्र किलुं ले कैंकुंचि तारा उपर तारा अमरी नीचे अमकणी कीलुं किलुं बज्रकेवाड़, ईश्वर से गौरा कहे किलुं, कील बजरंग माटा की मटको लणी ऊपर बज्र पारानी भुमैरो कीलुं, हनुमंत रखवाला दीन राखैसी सूर्य रात राखै चन्द्रमा, महादेव पार्वती तेरी आन पड़ी।"

बशीकरण (स्त्री पुरुष-परस्पर वशीकरण)

तीन पुष्प निम्नमंत्र से इक्कीस २१ बार मंत्र कर जिस स्त्री को सूंघने को दे वह स्त्री वश हो, स्त्री पुरुष को दे तो पुरुष वश में हो।

'ॐ नमो आदेश गुरु जी कों, कावर देश की कमला देवी तहाँ बैठे राङला जोगी की वाड़ी, फूल सूंङै लुटगा चमारी फूल इणौ सै, फूल बिणौं सै तैं फूल मसीङ बैठें, जो सूंङै मेरा फूल की वास सो आवै मेरा पास आप छूटी, बाबछूटी पीठी वन्दी भाई घटी तुरन्त उठी आई, छाती फोड़ी मरी मुला चक्रते आई, मुलाचक्र तेरी आन पड़ी, जाई मात कालिगा तेरी आन पड़ी जाई, गुरु भैरवनाथ तुम्हारी आन पड़ी जाई, जैकणी मैं बुलाई तैकणी ली आई नीं ल्याई त भैरवनाथ की द्वाई फुलमंत्र ईश्वरोवाच"

रक्षामंत्र

(अ) निम्नमंत्र से विभूति (भस्म) मंत्रितकर तिलक करने से सर्वथा आत्मरक्षा होगी। भूत-प्रेतादि भय भी दूर होगा।

"ॐ नमो आदेश महादेव पार्वती को, आसण बंदी, आपणी काया जागतो मसाण बंधी कलविछ की छाया काटी बूटी समुद्रपार देऊ हराई यो पिंड छोड़ी और पिंड जाई, वेरी जो जोगिणी तेरी द्वाई, शिखराखै दामोधर, आगे राखै अगियावेताल, पीछे राखै काला गौरा, क्षेत्रपाल देणूं राखै, श्री नरसिंह वीर ववां राखै, बनवीर हृदय राखै, हणमंत वीर फुरमंत्र ईश्वरोवाच, फुर फट स्वाहा"

(आ) इसी प्रकार विभूति मंत्रित करने का एक अन्य रक्षा मंत्र है—

"ॐ नमो आदेश गुरु जी कौं, वभूत का मंत्र वभूत को वरण वज्र की काया कोई वज्र जटा छत्तीसधार जो करै वज्र कोटा, उलटा वज्र उसी कौं खाई माई सालनी का पूत, मारा न खावै, मदम पेवै, छत्तीस गला मटाधार उलटा वज्र उसी को खाई, हस्ती का तोल तोलै, चाऊमूठ चलाऊँ चोठ हमारे पीड़कौं चारवीर को आड़ो, हणोमान को आड़ो, मरद वीर को आड़ो, अभकैटा वीर को आड़ो, भैरूँ को आड़ो, मेरीभक्ति गुरू की शक्ति फुर मंत्र ईश्वर के वाच्या फुरै"

श्री नृसिंह मंत्र (उपसर्ग शान्ति कारक)

निम्न मंत्र से इक्कीसबार मोरपंख से झाड़ने से भूत-प्रेतादि बाधा शान्त होगी।

इसके अलावा यदि किसी व्यक्ति ने कोई तंत्र-मंत्र, जादू-टोना इत्यादि किया हो तो उसकी भी शान्ति होगी।

"ॐ नमो आदेश, गुरु जी को आदेश, जलफाटी थलफूटी आई देवी आदि चक्र चले नृसिंह वीर गरुड़वाण आदिबन्दी, ईश्वर कि आंख पैली फटाऊ जल तब फटाऊ, बादल फोट फाट इस घट पिंडी की घात अहंकार जैकार को कल्पण नाटक चेटक कुजंत्र फुमंत्र डैणी जोगणी भूत पिशाच फाटै, नै फाटै तो ब्रह्मा को कुश वाणटूटै, नारायण को चक्र फूटै, पार्वती को शाड़ोटूटै फुरमंत्र फट् स्वाहा। ॐ नृसिंहाय विद्महे तीक्ष्णद्रंष्ट्राय धीमहि। तन्नो नृसिंह प्रचोदयात् ॐ नृं नृं नृं नृसिंहाय नम.।"

वशीकरण मंत्र

निम्न मंत्र से रविवार को सातबार सिन्दूर, रोरी और तेल मंत्रित कर स्त्री या पुरुष जिसके लगाया जाय, वश में हो—

"ॐ नमो आदेश गुरु जी को, रो रो जागणी, रो रो वाली ब्रह्मा की बेटी, इन्द्र की शाली, सुका घट जावै ताली चौसठ जोगिणी, अंग अंग मोड़ी अस्त्री पुरुष लगावै संग तेल, रै तेल क्या करै खेल अंगनीभिजि माया निलगीत चौसठ योगिनी की आण पड़ै, छोड़ छोड़ गौरी हौरों की वाट आवै, जौरी हमारी खाट मोह मंत्र छूटा जाई तो गुरू गोरखनाथ को मास खाई फुरोमंत्र ईश्वरोवाच"

स्त्रीवशीकरण श्री हनुमान मंत्र

बायें चूल्हे की मिट्टी, चौराहे की धूल और लाल सिन्दूर इन तीनों को इक्कीस बार मंत्रकर गुप्त रूप से स्त्री के शिर डालने से वशीकरण हो—

"ॐ हनुमंत हों मोहं लट बटं लटबटं ॐ हनुमतं सर्बजन मोहनं क्लीं क्लीं क्लीं ॐ हनुमंत फट् स्वाहा"

बिद्वेषण (स्त्रीपुरुष में फूट डालने का मंत्र)

यह अनुभव सिद्ध प्रयोग है। इसका प्रयोग वाममार्ग में भी होता है। (किसी भी स्त्री पुरुष, पति-पत्नी में फूट डालने हेतु) जो पापमूलक व निन्दित है। यदि किसी स्त्री-पुरुष में परस्पर अनुचित सम्बन्ध हों तो लोक हित एवं जनहित की दृष्ट्रि से दोनों के सम्बन्धों को समाप्त करने के उद्देश्य से इसका प्रयोग वांछित है।

पहले चूहे की पूंछ प्राप्त कर उसकी राख तैयार करे। फिर सांप की पूंछ प्राप्त कर उसकी भी अलग से राख तैयार करे। निम्न मंत्र से दोनों राखों को अलग-अलग १०८/१०८ बार मंत्रित करे। साँप की राख स्त्री के शिर में और चूहे की राख पुरुष के शिर में गुप्त रूप से डाल दे। डलवा दें, दोनों में परस्पर वैर हो जायगा, अनुचित सम्बन्ध कुछ दिनों बाद समाप्त हो जायगा।

"ॐ नमो गुरू जी कौं आदेश, ॐ तारा तिरपुरा सिंदूर तीने बसे कपाल नक्षेत्री नाचण बैठे, देली द्वार नाचण बैठे, अस्त्री भर्तार एक मन का द्वौ मन करै एक चित्त का द्वौ चित्त करै, नि करै तो उलटा क्षेत्रपाल तेरी आन पड़ै, ॐ वहैरा करौं, कोहेड़ा करौं तमोरा ··(स्त्री व पुरुष दोनों के नाम··फलाना फलानै···) सौं करै विछोड़ा ॐ हं फट् स्वाहा।"

कमला वायु (पीलिया) का मंत्र

कांसे की थाली में कड़वा तेल, एक तिहाई पानी एक तांबे का पैसा लेकर दूब से प्रातः सूर्योदय के समय, सात दिन तक ७+५+६ बार झाड़ने से पीलिया ठीक हो जाता है—

मंत्र—"दाव तेल पानी, कमला की भेंट आँखी कमला उपज्यो अमूस पुन्यू की रात देख कमला की तेरी जात, कान पड़े, पूछ झड़, मेरी भक्ति गुरू की शक्ति फुलमंत्र ईश्वरोवाच"

दांत पीड़ा का मंत्र

निम्न मंत्र से चार अँगुल लम्बी लोहे की कील सात बार मंत्रित कर उस कील से कीड़ा लगे दाँत पर मारे, जब दांत से कील बज जाय, तब इस कील को किसी पेड़ में गाढ़ दे—

"ॐ कुंकशारू कुकुमारू दाड़ि मुड़ बैटे कीड़ा बरा बर्ष कीड़ा चबक करै तो श्री महादेव पारवती की आण पड़ै"

भूत आदि उतारने का मंत्र

निम्न मंत्रों से मोर पंख से रोगी (भूतादि ग्रस्त) को झाड़ने से भूत उतर जायगा—

[अ] "ॐ नमो ॐ ह्रीं ह्रीं हूं नमो भूतनायक समस्त भुवन भूतानि साधय साधय हूं हूं हूं"

[आ] "ॐ नमो नृसिहाय हिरण्यकशिपु वक्ष स्थल विदारणाय त्रिभुवन व्यापकाय भूत प्रेत, पिशाच, शाकिनी कीलोन्मूलनाय स्तंभोद्भव समस्त दोषान हन हन सर सर चल चल कंप कंप, मथ मथ हुंफट् हुंफट् हुंफट् ठः ठः महारुद्रो ज्ञापयति"

चोर का पता करना : घड़ा चलाना

ऐसी स्थिति में जब चोरी किसी पारिवारिक या निकटवर्ती व्यक्ति ने ही की हो, चोर का पता निम्न प्रयोग से चल सकता है—

नीचे भूमि पर साबूत काले उड़द स्थापित करे, इसके ऊपर तांबे की पराद रक्खे, पराद में फिर साबूत उड़द रक्खे, इसके ऊपर तांबे का घड़ा रक्खे। उड़द और चावल मिलाकर निम्न मंत्र से २१ बार मंत्र कर जिस-जिस व्यक्ति पर चोरी का संदेह हो—एक-एक करके उनका नाम लेकर चावल व उड़द घड़े पर मारे, चोर के नाम से घड़े पर उड़द चावल मारने से घड़ा घूमेगा—

"ॐ श्री बद्रीनाथ जी चलै, अचल चलै, मेरू चलै, मन्दिर चलै, गिरि चलै, कविलाश चलै, सात समुद्र चलै, मध्ये ज्वाला चलै, अर्जुन का बाण चलै,

सहदेव की खड़ी चलै, दुरपता को हार चलै, भीम की गदा चलै, कन्हश्याम की आज्ञा चलै महादेव को त्रिशूल चलै, नारायण को चक्र चलै, आगे नीं चली पीछे आई चोर का पैंडा निचलित श्री राजा अजेपाल तेरी द्वाई, झुटा आई त कालिका माता की दुधिपाई, झूटा जाई त कैलमारी धौवा कुंडा जाई नौ नौ रता की पूजा नीं पाई, धर्मनाथ को धूप नीं पाई, झूटा जाई त सांकी भांणजी का कुबोल जाई, मेरी भक्ति गुरू की शक्ति फुरमंत्र ईश्वरोवाच"

शत्रु पीड़ाकारी प्रयोग

आक (मदार) के दो पत्तों में अलग-अलग शत्रु का नाम चिता के कोयले से लिखे। इन पत्तों में लोहे की कील ठोंक कर गड्ढे में गाड़कर ऊपर से पत्थर से दबा दे, शत्रु को पीड़ा होगी।

"हूँ मारय मारय ..[नाम] मारय मारय हूँ"

शत्रुमारण का महाप्रयोग

भूतकेश, सिवालीं सांप की कंचुली, सर्पजीव, बेरी की जड़, उगल, कम्बल का तागा, लाल मिर्च, तात्री की जड़, भीली की जड़, कड़ई की जड़, रजस्वला स्त्री का पहना हुआ रक्त से सना कपड़े का टुकड़ा, एकन वीर की जड़, राई, काली सरसों, मैण, जड़मोरा, गुणी की विष्टा, रती [रतांगुली] की जड़ मड़ा की हड्डी, कछुवा की हड्डी इन २१ वस्तुओं को इकट्ठा कर कृष्णपक्ष चतुर्दशी या अमावस की रात निम्न मंत्र से १२१ बार मंत्र कर किसी हांडी आदि में रख कर शत्रु के घर में डाल दे, गाड़ दे या ऐसी भूमि पर गाड़ दे जिस पर शत्रु का स्वामित्व हो [भूमि शत्रु के नाम पर हो]।

"ॐ नमो आदेश गुरू जी कों, ॐ नमोरे बाबा वीर बेताल भैराऊँ तू जे सुमिरौं औंसी चौंदशी की रातीं मेरा वैरी के छाती देखदा कलुवा मैं जाऊँ अध्यांरी राती मेरा बैरी तेरा भक हाड़ छोड़ी कलेजा चख, चल वै वीर बेताल भैराऊँ ग्रीक विनास तोड़ो, पाषाण जैसो तोड़ो, तैसो शत्रु का मस्तिष्क फोड़ो, ईड़ पिंड सौड़ी की बलि देलो, शिर जाई गुदी खाई, पेट वैशी कलेजा खाई, चल रे बीर बैताल मेरा भाई, औगड़ नरसिंह तू चलि आई, मेरा वैरी मड़घाट ल्याई, धुंवा लग देखाई, तौड़ो धौण अघोरी नारसिंह धौण तोड़ा मणम मोड़ा नारसिंह तु आसमैणिया जाप तु, चल काली का पूत तू चल, माता काली तू चल मेरा वैरी कूं दीन दोवरा ले जाई, बिली का भेस सेज बैठी जाई, नाक बैठी,

रक्त सुकाई, मुख बैठी ब्रह्माण्डी खाई, काली सीण मोती यछुलागा भूला ना जाई, मेरा शत्रु मड़वाट धुंवा लूंगनीदे खाई तो भूत हतगरी का पाप जाई, काम नी करीलो त परसुरी क पाप जाई, जलोनरी का पाप जाई, गागण गधेली को रक्त पेई, थिवरथ घड़ी विरजाई, नरसिंग धुवारी को मास खाई फुर मंत्र फट् स्वाहा''

प्रश्न ज्ञान मंत्र

किसी व्यक्ति को भूत प्रेतादि बाधा हो, या कोई अन्य शारीरिक मानसिक रोग हो तो उसे वास्तव में क्या रोग या क्या दोष है? ठीक होने का क्या उपाय है इत्यादि अनेक प्रश्न उसी व्यक्ति से कर सकते हैं और उसके सत्य उत्तर स्वयं उसी व्यक्ति से प्राप्त हो सकते हैं। अन्य किसी व्यक्ति के बारे में भी प्रश्न करके उत्तर प्राप्त कर सकते हैं।

ऐसे व्यक्ति को बिठाकर निम्न मंत्र से गाय के घी में गूगल मिलाकर बहुत सारी धूप दे और इसी मंत्र से साबूत काली उड़द मंत्रकर उसके मारे और उससे प्रश्न पूछे—उससे सत्य सत्य उत्तर प्राप्त होंगे।

बाद में उसे वास्तविक स्थिति में लाने के निमित्त धूप में नीम के पात और सर्पकंचुकी डालकर धूप दे।

''ॐ नमो भगवते भूतेश्वराय किलि किलि किलि तरवाय रौद्र द्रष्टाकराल वक्त्राय त्रिनयन भूषिताय धगधगित पिशंग ललाट नेत्राय तीव्र कोपानलायामित तेजसे पाश शूल खट्वांग डमरूक धनुर्बाण मुदगर भूपदण्ड त्रास मुद्रा व्यग्रदश दोर्दण्ड मंडिताय कपिल जटाजूटार्ध चन्द्रधारिणे भस्मराग रंजित विग्रहाय, उग्र-फणिपति घटाटोप कंठदेशाय जय जय भूतडामरस आत्म रूपं दर्शय दर्शय, नृत्य नृत्य, सर सर, चल चल, पाशेन बँध बंध हुंकारेण त्राशय त्राशय, वज्रदण्डेन हन हन, निसित खड्गेन छिंदि छिंदि, शूलाग्रेण भिन्दि भिन्दि, मुद्गरेण चूर्णय चूर्णय सर्वग्रहाणां आवेशय आवेशय''

शत्रु उच्चाटन

रेंडी के वृक्ष की चार अँगुल कील सात बार मंत्रित कर शत्रु के घर में डालने से उच्चाटन हो।

''ॐ क्रीं टं टं स्वाहा''

सर्प भय न हो

वालचुड़ा पक्षी का कलेजा अपने पास रखने से सर्प भय नहीं होता।

साँप द्वारा काटे गये व्यक्ति को वालचुड़ा के कलेजा में काली मिर्च मिलाकर खिलाने से तत्काल लाभ हो प्राण छूट गये हों—वह भी ठीक हो।

हूक का मंत्र

बाँस या पया की लकड़ी को पीड़ा वाले स्थान पर लगाकर ऊपर से मंत्र पढ़कर हाथ से मारे। इससे पीड़ा वाला स्थान हटता जायगा जिस ओर को दर्द का स्थान हटता जाय [जिधर को दर्द हो, उसी ओर लकड़ी हटाकर निम्नमंत्र से ५/७ या ६ बार (प्रत्येक स्थान पर) यह क्रिया करे—

"ॐ श्री गुरुभ्योनमः ॐ श्री गुरुभ्योनम. ॐ श्री गुरुभ्यो नमः। सात समुद्र पार लुलुभाट आग छालो लाई पन्या लोहरण वरण हूक चषकै वलटै नारसिंह पलेटे हनुमंत देंणी तीर नारसिंह वाँई तीर हनुमंत सर हूक ततः ततः क्षण क्षण फुरमंत्र ईश्वरोवाच"

स्त्री वशीकरण मंत्र

सर्व प्रथम निम्नमंत्र १०,००० जपकर सिद्ध कर ले। तदनन्तर जिह्वामैल, दंतमैल, नाकमैल, कानमैल, गुदामैल, लिंगमैल इन सबको मंत्रित कर मद्य में मिलाकर स्त्री को खाने को दे बशीकरण हो—

"ॐ नमः भवायै नमः शर्वाण्ये ······· (स्त्री का नाम) ········ वश्यमानय स्वाहा"

स्त्रीबशीकरण तैल का मंत्र

निम्नमंत्र से २१ बार तेल मंत्रकर स्त्री के शिर में डालने से स्त्री बश में हो—

"ॐ नमो आदेश गुरू जी को, तेल मंद मस्तक चढ़ै, रुटो राजा ओं पड़ै, थैली हनुमंत बसै कपाल अब्जी बब्जी की बाट बज कीलु, दशा द्वार कावर देश सों आई मोहनी हाथ लिया तेल की दहनी चलो, मोहनी राजा का घर चली चलंती अघा वैजाई हाट को बाट मोहों, ········ (स्त्री का नाम) ········ स्त्री को मोहों, साम शत्रु मित्र धाय, नहीं घाये तो गुरु गोरखनाथ की आज्ञा लागै,

ॐ नमो आदेश गुरू जी को तेल मंद मस्तक चड़े, रूटो राजा ओं पड़े है, थैली हनुमंत बसे भैरों बो कपाल चार दिशा की जी हूँ कीलो वो डोलीदेऊँ, ललाट, ॐ नमो आदेश गुरू को हनुमंत नगरी बेटा खेल करंता, जो नर अस्त्री आवै सार सार करंता, सो नर अस्त्री आई .... (पुरुष का नाम) .... बॉयाँ अंग तला लगाई, माई माई महामाई मेरा कार्य सिद्ध करै, न करै तो राजा रामचन्द्र तुम्हारी द्वाई, मेरी भक्ति गुरु की शक्ति फुरमंत्र ईश्वरोवाच''

स्त्रीवशीकरण सिन्दूर

काफल (पर्वतीय प्रदेश में होने वाला एक जंगली फल) के पेड़ की छाल, मैण, मकड़ो का जाला, मछली पकड़ने वाली जाल का टुकड़ा, शिव की मिट्टी और सिन्दूर—इन्हें मिला कर १०८ बार निम्न मंत्र से मंत्रित करे (उपरोक्त सभी वस्तुएं प्राप्त न हो सकें तो केवल सिन्दूर लें) तदुपरान्त इसे तेल में मिलाकर तेल स्त्री के शिर में डाले—

''ॐ नमो गुरू जी को आदेश, सिन्दूरी सिन्दूरा तू बड़ो राणो जहाँ बोलूलो तहाँ को लेयाणों तू कहाँ हो किजगे सिन्दूरा राणी मोंहो पाणी मोंहों, सेज की नारी मोंहों, पार्वती को पिंडी मोंहों मोही माही...... (पुरुष का नाम.....) का बयाँजंग तला लगाई, गला कंठप्रीति लगाई देई, ओं दुहं .... (स्त्री का नाम) ....बस माने फट् स्वाहा''

मंत्र तंत्र का निराकरण

यदि शत्रु ने कोई जादू, तंत्र-मंत्र, टोना-टोटका किया हो तो प्रभावित व्यक्ति को मोरपंख के द्वारा निम्न मंत्र से इक्कीस बार झाड़ने से कुप्रभाव दूर होगा—जटामांसी व गूगल से धूप करे।

''ॐ नमो गुरू जी को आदेश, आदि समुद्र बसे महाकाली, महाकालिका की उपजे बालिका, बालिका का भई मधोदरी, मदोदरी की भई अँडकी, अँकी ते उपजीगे षंड, षंड ते उपजी गे नौखंड, वसुधारा तहाँ उत्पन्न भई, मदोदरी राणी मदोरी राणी ते उपजीगे कालिका देवी, कालिका देवी को भयो काल भैरूँ, काल भैरूँ भयो उर्ध्वकेश, रक्तनेत्र विकट विकराल, अहो काल भैरों इस घट पिण्ड का दृष्ट अदृष्ट का भैरों उखेल, नीलघनीलनाथ भैरों उखेल, हसंदा भैरों उखेल, रोल भैरों उखेलों घोर अघोरनाथ भैरूँ उखेल चण्ड प्रचण्डनाथ भैरूँ उखेलौं, फोड़िनिजाई भैरूँ उखेलौं आदि भैरूँ उखेलौं, अनादि भैरों उखेलौं, जुगादि भैरों

उखेलौं, व्रह्मादि भैरूँ उखेलौं, वैष्णवादि भैरौं उखेलौं, रुद्रादि भैरूँ उखेलौं, विवादि भैरों उखेलौं, संख भैरूँ उखेलों, संखचूड़ा भैरूँ उखेलौं, गोरियल भैरूँ उखैलौं, नरसिंह भैरूँ उखेलौं, हणमन्त भैरूँ उखेलों, काल भैरों उखेलौं, कंकाल भैरूँ उखेलौं, कलपेटा भैरूँ उखेलौं लुलावेला भैरूँ उखेलौं, देखौं रे भैरों तेरा चंचल का रूप आगे राखौ मासि गोगुल का धूप, तुमे चण्ड तुमे प्रचण्ड, कटार-मारी करौं, वृषण्ड दिन रात खेलीले पंचरिष्यों को वेद सुण, होगणी जे मनशा-देविका जाखानिनने स्वर्ग इन्द्र पाताल वासुकि उपाया सातखण्ड समुद्र, नौखण्ड वसुन्धरा, उपाया अठारभार वनस्पति, उपाया नौनाथ सिद्धौं का आहार पुराया चौरासी चेड़ा को कलि उपाई ले कांध काली कुर्गट माजिरी मेंडा बली छेली वलिपायां भैरासुर धायां कालगोरा क्षेत्रपाल घटि घटिका विघ्नटाल ईन्द्रबन्थौं ईन्द्रजाल बन्थौं इस मसाण संत का पिण्ड को लायो लगलो कुडक वट कुजंत्र कुमंत्र लायो लगायो बारविथाघाले सवित पाताल फुरमंत्र ईश्वरोवाच ।"

साँप के काटे का मंत्र

किसी व्यक्ति को साँप द्वारा काटे जाने पर निम्न मंत्र से मोर पंख या पीपल की टहनी से इक्कीस बार निम्न मंत्र से झाड़ें -

'ॐ नमो आदेश गुरू जी कौं, चौगंगा पार काली बाढ़ी, चरनी दूर्बा ढाली, हगै, मूतै गोंवर माटी पिड़ी तहां उपजी शिमला डाली, डाली नौ हात डाली दशहात पात तहाँ उपजा गरुड़ का टांठ, गरुड़ ले देई धात, उठौ रे गरुड़ो विष मारी ऊँला, क्या-क्या विष मारूँला, एक पांखा विष मारूँला, दो पांखा विष मारूँला, तीन पंख विष मारूँला, चौपांख विष मारूँला, सतुवा विष मारूँ रतुवा विष मारूँ, रुणकिया विष मारूँ, हुणकिय विष मारूँ, कालीकुट मारों, धतूरो विष मारूँ, बांजो विष मारों, अयार विष मारों पयार विष मारौं, लौलौज विष मारौं, मटिया विष मारौं, किड़ो कठकीड़ो विष मारूँ, विशया विष मारूँ, तारोड़ो विष मारूँ, विसणो विष मारूँ, भटूलौ विष मारूँ, समया विष मारूँ, सटयासौ डाली कौ विष मारूँ, मौलना विष मारूँ, चडना विष मारूँ देउ ताल मारौं विष घांलूं सातौ पाताल झल्ली गरुड़ ले देई ताल मारौं विष घालूं सातौं पाताल, मलिया गरुण लै झल्ली मुण्ड गरुड़ लै लुवा ठुंडी, गरुड़ ले वज्रमुंडी, गरुड़ लै नीलौ गरुड़ नील पंखी, गरुड़ हडी गरुड़ हन्ड फोड़ गरुड़ रातौ गरुड़ कालौ, गरुड़ शेतौ, गरुड़ भानमत्ती, गरुड़ सुवापंखी गरुड़ चौंसठ गरुड़ डौलें दई ताल मारौं बिष हालूं शक्ती पाताल जनु गरुड़ो की ठूडी

नामलोक छन, पृष्टी माथ लोक छन, पाप आकाश लोक छन शो गरुड़ विष की मुण्डी खानी, वैशना बिष की वुड़ी खानी, नयैनखचीरी खानी जीवीजीव चाटी खानी, टूडै टूड फोड़ी खानी, पांखोपांख सोरियानी मारे विष जागेरेहंस शिर-चडै पेट फडै श्री महादेव पार्वती हनमन्त बीर गो गोच हानि अैली मटकैली पीर नीला पत्थर की कलिया लुहारन्नृति लुहार तेरी आन पड़े, ब्रह्माण्ड चड़े ब्रह्म की आन पड़ें, गुदा चड़े गोरखनाथ की आन पड़े, ललाट चड़े विष्णु भगवान की आन पड़े, भौं चड़े भवानी की आन पड़े, नेत्र चड़े, सूर्य की आन पड़े, नाक चड़े नाकार्जुन की आन पड़े, बष्टतोला चड़े, बष्टतोला की आन पड़े थुंडी चड़े, भवानी की आन पड़े, दातौं चड़े यम की आन पड़े, जिह्वा चड़े, सरस्वती की आन पड़े, ग्रीवा चडै, बासुकी की आन पड़े, हृदय चड़ै आदित्य की आन पड़े: कण्ठ चड़ै, कुमारी की आन पड़े, वाहु चडै नारायण की आन पड़े, पृष्टि चडै चन्द्रमा की आन, जितुम चड़े जगन्नाथ की आन, कलेजी चड़ै कालिका की आन, फाबिसा चड़ै साविती की आन, कुकुडी चड़ै मालिका की आन, करंगी चड़ै कर्तार की आन गुह्ये चड़ै महादेव की आन, जंघा चड़े ज्वाला की आन घुण्डी चड़ै घुंडिका की आन, फिनरा चड़ै चण्डिका की आन, पाया चड़ै गंगा की आन, अँगुष्ठ चड़ै सन्ध्या की आन, अँगुष्ठि चड़ै अँग भैरव की आन, नौ नाड़ी बहत्तर कोठा चड़ै चौरासी सिद्धों की आन पड़ै, मेरी भक्ति, गुरू की शक्ति फुरमन्त्र ईश्बरोवाच।"

दाँत पीड़ा का मंत्र

यह मंत्र विशेष प्रभावकारी है। दाँत के कारण विष फैलने (सेप्टिक) से भी रक्षा होगी। लोहे की कील से बीस बार निम्न मंत्र से दाँत झाड़ें और २०, १९, १८, १७, १६, १५, १४, १३, १२, ११, १०, ९, ८, ७, ६, ५, ४, ३, २, १ इस प्रकार उलटी गिनती करे—

"ॐ नमो आदेश गुरू जी कौं, मनभारत समज समज, लोहा कील सात समुद्र पार उपजी वासिड़ा डाली विसिड़ा डाली ते उपजो काली नाग, काली नाग ते भया छत्तीस नाग, कालोनाग पिंगलो नाग हरियों नाग लालनाग ललप-ल्यादि नाग तू खा वैरे नाग, चार दाढ़ी में झांडू रे नाग, बत्तीस दाढ़ी झाड़ी-झूड़ी घालं सात समुद्र पार मेरी भक्ति गुरू की शक्ति फुरमन्त्रो ईश्वरोवाच, इस पिंड पर विष चड़ै तो महादेब पार्वती की द्वाई वासुकी नाग द्वाई सखा सौ गरुड़ौं की आन पड़ै, गुरू गोरखनाथ की द्वाई, गुरू स्वागनाथ की द्वाई, फुरोमंत्र ईश्वरोवाच।।"

स्वप्न साधना*

मंत्र साधना द्वारा रात्रि में स्वप्न द्वारा भूत, भविष्य व वर्तमान (त्रिकाल) की घटनाओं के बारे में ज्ञात किया जाता है। इस सम्बन्ध में उपलब्ध कुछ मंत्र इस प्रकार हैं—

(अ) शिव साधना

निम्न मंत्र का १०८ बार पाठ करके सो जावें, स्वप्न में शुभाशुभ ज्ञात होगा—

ॐ भगवन् देव देवेश शूलभृत् वृष वाहन।
इष्टानिष्टं समाचक्ष्व मम स्वप्नस्य शाश्वत ।।
ॐ नमोऽजाय त्रिनेत्राय पिंगलाय महात्मने ।
वामाय विश्वरूपाय स्वप्नाधिपतये नमः ।।
स्वप्ने कथय मे तथ्यं सर्वकार्येष्वशेशतः ।
क्रियासिद्धि विधास्यामि त्वत्प्रसादात् महेश्वर ।।

(आ) स्वप्न वाराही साधना

विनियोग—

अस्य स्वप्नवाराही मंत्रस्य, ईश्वरऋषिः, जगतीछन्दः, स्वप्नवाराही देवता, ॐ बीजं, ह्रीं शक्तिः, ठः ठः कीलकं, मम अभीष्ट स्वप्नार्थे जपे विनियोगः।

न्यासा		प्रथम बार	द्वितीय बार
ॐ ईश्वर ऋषये नमः	—	शिरसि,	अँगुष्ठाभ्यां नमः
जगती छन्दसे नमः	—	मुखे,	तर्जनीभ्यां नमः
बाराही देवतायै नमः	—	हृदये,	मध्यमाभ्यां नमः
ॐ बीजाय नमः	—	गुह्ये,	अनामिकाभ्यां नमः
ह्रीं शक्तये नमः	—	पादयोः,	कनिष्ठाभ्यां नमः
ठः ठः कीलकाय नमः	—	नाभौ।	करतल करपृष्ठाभ्यां नमः।

* 'लोक हितकारी विविध यंत्र' शीर्षक में भी देखें।

इसी प्रकार हृदयादि न्यास करे।

निम्न मंत्र को ग्यारह दिनों तक रात्रि में प्रतिदिन ग्यारह सौ (११००) जप करने से सिद्धि होगी।

मंत्र इस प्रकार है—

'ॐ ह्रीं वाराही अघोरे स्वप्नं दर्शय ठः ठः स्वाहा'

(इ) सरस्वती साधन

निम्न मंत्र 'सरस्वती अष्टक' है। यथाशक्ति इसका जप कर सो जावे। स्वप्न में शुभाशुभ ज्ञात होगा—

ॐ नमः पद्मासने शब्दरूपे ऐं ह्रीं क्लीं वद-वद वाग्वादिनि स्वाहा।

ॐ वद वद चित्रेश्वरी ऐं स्वाहा।

ॐ ऐं कुलजे ऐं सरस्वती स्वाहा।

ऐं ह्रीं श्रीं वद वद कीर्तीश्वरी स्वाहा।

ऐं ह्रीं अन्तरिक्ष सरस्वती स्वाहा।

ब्लूं वें वद वद त्रीं हूं फट् ऐं हैं ह्रीं क्लीं क्लीं क्लीं विच्चे।

ह्रं सं फें हसौः ष्फ्रीं ऐं ह्रीं श्रीं द्रां ह्रीं क्लीं ब्लूं सः।

घट सरस्वती घटे वद वद तर तर रुद्राज्ञयाममाभिलाषं कुरु कुरु स्वाहा।

यक्षिणी साधन

तंत्र शास्त्र में यक्षिणी साधन से अनेक प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त करने का विधान मिलता है, इनकी संख्या चौबीस (२४) कही जाती है, यह विविध प्रकार की सिद्धियाँ प्रदान करती हैं।

यक्षिणी साधन आषाढ़ शुक्ल पौर्णमासी से प्रारम्भ किया जाता है। पौर्णमासी के दिन, जब कि गुरु या शुक्र अस्त न हो और शरीर स्वस्थ्य हो सर्वप्रथम मुण्डन आदि करके यक्षिणी साधन हेतु तत्पर रहे। श्रावण शुक्ल प्रतिपदा को गोचर में चन्द्रमा अनुकूल होना चाहिए, इस दिन से निरन्तर तीन माह तक अर्थात् आश्विन शुक्ल पौर्णमासी (शरद पौर्णमासी) तक उपासना व पुरश्चरण करें। बीच में कभी भी क्रम नहीं टूटे, साधना निर्विघ्न सम्पन्न हो ऐसी व्यवस्था करे।

किसी एकान्त स्थान में (ताकि कोई विघ्न न हो) बेल के वृक्ष के नीचे साधना करनी चाहिए। पूरी साधना में ब्रह्मचारी और मौन रहे और हविष्य/फलाहारी भोजन करें। नित्य प्रति तीन कुमारी कन्याओं को शुद्ध भोजन कराये। प्रतिदिन दिन में भगवान शिव और कुबेर जी का पूजन करे और "त्र्यम्बकं यजामहे०" इस वेदोक्त मंत्र का नित्यप्रति पांच हजार जप करे। धनाध्यक्ष श्री कुबेर जी से प्रार्थना करे—

यक्षराज नमस्तुभ्यं शंकरप्रिय बान्धव।
एकां मे वशगां नित्यं यक्षिणी कुरु ते नमः॥

इस मंत्र को भी प्रतिदिन एक सौ आठ (१०८) बार जपे।

रात्रि में दूसरे तथा तीसरे पहर (अर्थात् लगभग ९ बजे से ३ बजे रात) निद्रा त्यागकर बेल के वृक्ष के ऊपर बैठकर यह मंत्र जपे—

"ॐ क्लीं ह्रीं ऐं ॐ श्री महायक्षिण्यै सर्वैश्वर्य
प्रदात्र्यै नमः श्रीं क्लीं ह्रीं ऐं ॐ स्वाहा"

इन ६ घंटों में प्रतिदिन ३००० बार यह मंत्र जपे।

यह बाममार्गी तथा कठिन साधना है। अतः निडर व्यक्ति को ही यह साधना करनी चाहिये। पुरश्चरण के मध्य में यदि व्यक्ति भयभीत हो जाय या डर जाय तो उसके विक्षिप्त (पागल) होने या मृत्यु का भी डर होता है परन्तु निडरता पूर्बक साधना पूरी कर लेने से समस्त सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।

जप के समय रात्रि में नित्य ही देवी यक्षिणी के निमित्त मद्य (शराब) व मांस तैयार रक्खे। इन साधना के दिनों में यक्षिणी कभी भी उपस्थित होकर दर्शन दे सकती है। उसे देखकर किंचित भी भय न करते हुये अपना जप करता रहे। जिस दिन यक्षिणी बलि (मद्य और मांस) का आहार कर बरदान देना चाहे, उससे अपनी इच्छानुसार जो चाहे बरदान मांग ले। प्रायः साधक अनेक प्रकार के 'बरदान' मांग लेते हैं और यक्षिणी भी उससे कुछ बचन लेती है अर्थात् यक्षिणी उनकी मनोकामना पूरी करेगी और साथ ही उस व्यक्ति को भी जो नियम वह बतलाये उनका पालन करना होगा। जैसे नित्यप्रति पंचमकार का सेवन, सिद्धि का अपने व्यक्तिगत हित हेतु दुरुपयोग न करना आदि।

यक्षिणी साधन से जो सिद्धियाँ प्राप्त की जाती हैं उनमें मुख्य इस प्रकार हैं—

[अ] किसी न किसी के माध्यम से जीबन निर्वाह हेतु धन प्राप्त होता रहे।

[आ] कोई आत्मा साधक के अधीन रहे जो जनहित में उसके काम करता रहे।

[इ] सांसारिक भोग या स्त्री सुख (कोई सम्पन्न, सुरूप, नवयौवना उसके वश में हो जाय)।

[ई] राजा या शासन में अपना वर्चस्व स्थापित रहे।

[उ] किसी भी व्यक्ति के सम्बन्ध में भूतकालिक सभी बातें--विवरण उसके कान में (जब चाहे) सुनायी दें। यही सिद्धि 'कर्ण पिशाची' कही जाती है।

[ऊ] हवा में हाथ उठाकर जिस बस्तु को चाहे उपलब्ध हो जाय।

[ए] कौन व्यक्ति क्या सोच रहा है? उसकी क्या समस्या है, इसका उत्तर छपकर आ जाय।

इसके अलावा भी जिस प्रकार की सिद्धि चाहे (यश, शक्ति, विद्या आदि) वह प्राप्त होती है।

स्वयं असमर्थ होने पर विद्वानों के द्वारा (अपने सामने) भी यह साधना की जा सकती है।

यक्षिणी सिद्धि हो जाने पर जो नियम व आचार निर्धारित हुये हैं उनका निरन्तर पालन करता रहे और इस सिद्धि के द्वारा जो धन प्राप्त हो उसे सत्कार्यों में ही व्यय करे। सिद्धि से प्राप्त शक्ति और धन का दुरुपयोग करने से सिद्धि समाप्त हो जाती है और देवी यक्षिणी द्वारा जो नियम, आचार का अनुबन्ध किया गया है उनका पालन न करने से अकालमृत्यु भी संभव है।

धनदा यक्षिणी मंत्र

विनियोग—

अस्य धनदा यक्षिणी मंत्रस्य कुबेर ऋषिः पंक्तिश्छन्दः, रतिप्रिया देवता अभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः।

न्यासा :

ह्रां—अंगुष्ठाभ्यां नमः। हृदयायनमः।

ह्रीं—तर्जनीभ्यां नमः। शिरसे स्वाहा।

ह्रूं—मध्यमाभ्यां नमः। शिखायै वौषट्।

ह्रैं—अनामिकाभ्यां नमः। कवचाय हुम्।

ह्रौं—कनिष्ठिकाभ्यां नमः। नेत्रत्रयाय वौषट्।

ह्रः—करतल करपृष्ठाभ्यां नमः।—अस्त्रायफट्।

ध्यान—

देवी धनदा सुवर्ण के समान तेजस्वी हैं, रत्नों से विभूषित हैं, गले में सर्प की हार है, तीन आंखें हैं, दो हाथ हैं, एक हाथ से अभयदान दे रही हैं और एक हाथ में अंकुश है।

ध्यान करके मानसिक रूप से पूजा करे।

लक्ष्मी, पद्मा, श्रिया, हरिप्रिया, भवा, कमला, अरजा, चंचला, और लोला—इन नौ नामों से भी मानसिक पूजा करे।

मंत्र—"धं श्रीं ह्रीं रतिप्रिये स्वाहा"

विधि पूर्वक सवालाख जपने से मंत्र सिद्ध होगा। मंत्र सिद्ध होने से कहीं से भी, किसी भी माध्यम से अनवरत धन की प्राप्ति होती रहेगी। कोई अर्थसंकट नहीं होगा।*

कवच—

धनदा कवच के पाठ से भी धन की प्राप्ति होती है तथा इस कवच को भूर्जपत्र में गोरोचन अष्टगंध से लिखकर सोने के कवच में रखकर धारण करने से (पुरुष दायें भुजा में, महिलायें बायें भुजा में) भी धन सम्पत्ति में वृद्धि होती है।

धनदा कवचम

श्री देव्युवाच ।। धनदाया महाविद्या कथिता न प्रकाशिता ।।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि कवचं पूर्व सूचितं ।। १ ।।
श्री शिव उवाच ।। शृणुदेवि प्रवक्ष्यामि कवचं मंत्र विग्रहं ।।
सारात्सारतरं देवि कवचंमन्मुखोदितम् ।। २ ।।
धनदा कवचस्यास्य कुबेर ऋषिरीरितः ।।
पङ्क्तिश्छन्दोदेवता च धनदा सिद्धिदा सदा ।। ३ ।।
धर्म्मार्थ काममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः ।।
धं बीजं मे शिरः पातु ह्रीं बीजं मे ललाटकं ।। ४ ।
श्रीं बीजं मे मुखंपातुरकारंहृदिमेवतु ।।
तिकारं पातु जठरं प्रिकारं पृष्ठतोऽवतु ।। ५ ।।
ये कारंजंघयोर्युग्मेस्वाकारं पादयोर्युगे ।।
शीर्षादि पाद पर्यन्तंहाकारं सर्वतोऽवतु ।। ६ ।।
इत्येतत्कथितं कान्ते कवचं सर्व सिद्धिदं ।।
गुरुमभ्यर्च्य विधिवत्कवचं प्रपठेद्यदि ।। ७ ।।
शतवर्ष सहस्राणां पूजायाः फलमाप्नुयात् ।।
गुरु पूजां विनादेवि नहि सिद्धिः प्रजायते ।। ८ ।।
गुरुपूजापरोभूत्वा कवचं प्रपठेत्ततः ।।
सर्वसिद्धि युतोभूत्वांविचरेद्भैरवोयथा ।। ९ ।।
प्रातःकाले पठेद्यस्तुमन्त्रजाप पुरः सरं ।।

---

* गुप्तसाधन तंत्र

सोभीष्ट फलमाप्नोति सत्यं सत्यं न संशयः ॥ १० ॥
पूजाकाले पठेद्यस्तु देवींध्यात्वा हृदाम्बुजे ॥
षण्मासाभ्यन्तरेसिद्धिनात्रकार्याविचारणा ॥ ११ ॥
सायंकाले पठेद्यस्तु सशिवोनात्र संशयः ॥
भूर्जेविलिख्य गुटिकां स्वर्णस्यां धारयेद्यदि ॥ १२ ॥
पुरुषो दक्षिणे वाहौयोषिद्वामभुजे तथा ॥
सर्वसिद्धियुतो भूत्वा धनवान्पुत्रवान्भवेत् ॥ १३ ॥
इदं कवचमज्ञात्वायोजपेद्धनदांशुभे ॥
सशस्त्रघातमाप्नोति सोचिरान्मृत्युमाप्नुयात् ॥ १४ ॥
कवचेनावृतोनित्यं यत्र यत्रैव गच्छति ॥
अतएव महादेवि संपूज्योनात्र संशयः ॥ १५ ॥
समाप्तं कवचं देविकिमन्यच्छोतुमिच्छसि ॥ १६ ॥

कर्णपिशाचिनी यक्षिणी साधन

कर्णपिशाचिनी यक्षिणी साधन का एक सरल प्रयोग भी उपलब्ध होता है।

"ॐ क्रीं स नामशक्ति भगवति कर्ण पिशाचिनि चण्डरूपेक्षणी वद वद स्वाहा"

यह मंत्र विधिपूर्वक दश हजार जपने से सिद्ध होता है।

तदुपरान्त घीगुवार के पेड़ को अभिमंत्रित कर उसका रस हाथ व पैरों में लगाने के बाद किसी भी व्यक्ति या किसी भी विषय पर भूत तथा बर्तमान का पूर्ण विवरण कान में सुनायी देगा।*

एक और मंत्र : कर्णपिशाच साधना

पुष्यनक्षत्र में कड़वी तुम्वी की जड़ और (सर्पाक्षी) तुलसी का जड़ ग्रहण करके लालतागे या वस्त्र में लपेटकर शिर में धारण करने से शुभाशुभ घटनाओं का ज्ञान होता है। प्रयोग से पहले दोनों जड़ों को निम्नमंत्र से १०,००० बार मंत्रित कर ले—

"ॐ नमो भगवते रुद्राय कर्णपिशाचाय स्वाहा"

---

* इस क्रिया को करके सो जाने से स्वप्न में भी वर्तमान तथा भूत कालीन घटनाओं के दर्शन होंगे।

तंत्र के बहुमूल्य सुगम प्रयोग

विशेष प्रयोगों के अलावा दैनन्दिन जीवन में भी तंत्र के छोटे-मोटे सरल किन्तु प्रभावकारी प्रयोग होते हैं, इनको जीवन में प्रयोग कर जीवन सुखमय हो सकता है ऐसे ही कुछ प्रयोगों का वर्णन यहाँ कर रहे हैं। जो बहुत ही उपयोगी हैं। इतने सुगम हितकारी सफल प्रयोग होते भी हम इनकी उपेक्षा कर देते हैं और इस लाभ से हम वंचित रहते हैं।

जयदायक प्रयोग

किसी वाद-विवाद में, समस्या में, कभी भी जिस व्यक्ति के सामने "ॐ हूं फट्" (उसे देखते हुए) सौ वार जपने से उसकी पराजय व अपनी जय होगी।

सुख-समृद्धि

[अ] चन्द्रग्रहण में सफेद चीते की जड़ उखाड़कर लायें, शहद में इसे पीसकर तिलक करें—घर में सुख-शान्ति, समृद्धि व सौभाग्य होगा।

[आ] अथवा पुष्य नक्षत्र में सफेद आँक की जड़ उखाड़ कर दाहिने भुजामें बांधे।

दैवी आपदाओं की शान्ति

"ॐ शान्ति प्रशान्ते सर्वक्रुद्धोपशमनि स्वाहा"

इस मंत्र को सात बार जपने से अनेक उपद्रव शान्त हो जाते हैं।

आरोग्य प्राप्ति

[अ] चैत्र शुक्ल प्रतिपदा, कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा और चैत्र कृष्ण प्रतिपदा (होली) पर शरीर पर तैल मलकर ही स्नान करे। इससे रोगों का शरीर पर आक्रमण नहीं होता और आरोग्य की प्राप्ति होती है।

[आ] चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को ही बकाइन (मीठी नीम) की कोमल पत्तियाँ व फूल, काली मिर्च, हींग, सेधा नमक, जीरा, अजवायन—इन छह वस्तुओं को यथोचित अनुपात में लेकर खा लेने से ग्रीष्म व वर्षा ऋतु में अनेक रोगों से रक्षा होती है।

[इ] चैत्र शुक्ला अष्टमी को अशोक की कोपलें खा लेने से शोक नहीं होता।

[ई] चैत्र कृष्ण प्रतिपदा (होली) के दिन आम की कोमल बौर को थोड़ी मात्रा में खा लेने से ग्रीष्मकालीन रोगों से रक्षा होती है।

बाल रक्षा

[अ] चन्द्रग्रहण के समय कलिहारी की जड़ लाकर बच्चे के गले में बाँध दें। स्वस्थ्य रहेगा।

[आ] शिरस, नीम के पत्ते, गौ के सींग की छाल, बच. बाँस की छाल, मोर पंख, मालकाँगनी और घी—इन वस्तुओं को मिलाकर इस मंत्र से मंत्रित कर धूप देने से बच्चों की नजर व भूतादि बाधा शान्त होती है—

"ॐ द्रुतं मुंच मुंच डुड्डा महेश्वर आज्ञापयति स्वाहा"

चोर भय से रक्षा

विष्णु क्रान्ता की जड़ भुजा में बाँधने से चोर भय नहीं होगा।

अरिष्ट निवारण

जब सूर्य पुष्य नक्षत्र में हो (यह स्थिति प्रतिवर्ष लगभग २१ जुलाई से २ अगस्त तक होती है) सफेद आंक की जड़ लाकर भुजा में बांधने से अल्प मृत्यु आदि अनेक अरिष्टों, अनिष्टों से रक्षा होती है।

पशु-पक्षियों-कीड़ों आदि से रक्षा

आधुनिक विज्ञान के युग में भी इन प्रयोगों का महत्व निर्विवाद रूप से लाभकारी है। विशेषतः ग्रामीण क्षेत्रों में जहां कीड़े, साँप, मच्छर, बाघ, शेर, चीता, हाथी आदि जीव जन्तुओं से नित्य ही भय बना रहता है यह प्रयोग सुगम व लाभकारी हैं—

[अ] गुड़, आंक का दूध, कुलथी उड़द, तिल इनका चूर्ण बनाकर आंक के पत्ते पर घर में रख देने से चूहे नष्ट होंगे।

[आ] मोथा, सरसों, भिलावा, करंज के बीज, गुड़, आँक के फल और वनरख (स्यालरात) मिलाकर इनका धूप देने से खटमल, मच्छर, साँप, चूहे, कीड़े आदि भाग जाते हैं।

[इ] जब सूर्य मेष राशि में हो (यह प्रतिवर्ष प्रायः १४ अप्रैल से १४ मई तक होता है) तब मसूर का एक साबूत दाना नीम के दो पत्तों में रखकर खा लेने से व्यक्ति को वर्ष पर्यन्त सर्प भय नहीं होता।

[ई] गिरगिट के दाँत सफेद तागे या कपड़े में लपेट कर हाथ में बँधे होने से सर्प भय नहीं होता।

[उ] कदाचित् साँप घर में घुस जाय तो निम्न मंत्र से सात बार मिट्टी मंत्र कर घर में डाल देने से सर्प भाग जायगा।

"ॐ श्लः सर्प कुलाय स्वाहा"

[ऊ] सर्प भय से रक्षा हेतु निम्न मंत्र के अनेक प्रयोग हैं —

[१] इसे भूर्ज पत्र पर लिखकर हाथ में बाँधने में।

[२] साँप के काटे व्यक्ति को इस मंत्र से झाड़ने में।

[३] इस मंत्र का तीन बार उच्चारण करने से सर्प भय दूर होता है—

ॐ सर्पासर्प अभद्रंते दूरं गच्छ महाविषः।
जनमेजयस्य यज्ञान्ते आस्तीक वचनं स्मर।।
ॐ आस्तीक, आस्तीक, आस्तीक ।।

[ए] कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को कलिहारी की जड़ ग्रहण कर हाथ में बाँधने या मुख में रखने से सिंह का भय नहीं होता।

[ऐ] सफेद विष्णुक्रान्ता की जड़ हाथ में रखने/बाँधने से हाथी से भय नहीं होता।

वर्षाकारी प्रयोग

"ह्रुं श्रीं ह्रुं" कमर तक पानी में स्थिर होकर यह मंत्र एक लाख जपने से वर्षा होगी।

कार्यसिद्धि प्रयोग

किसी भी कार्य की सिद्धि हेतु पुष्यनक्षत्र में सफेद आक की जड़ ग्रहण करे, इसकी एक मूर्ति गणेश जी की (अँगूठे भर लम्बी) बनवाकर इसकी प्रतिष्ठा, प्राणप्रतिष्ठा, १५ संस्कार आदि करके जितेन्द्रिय व संयमित जीवन पूर्वक निरन्तर एक माह तक "ॐ पञ्चान्तकं ॐ अन्तरिक्षाय स्वाहा" मंत्र से भक्तिपूर्वक पूजन करने से कार्य सिद्ध होगा।

सतीत्व रक्षा

पूर्वी इलायची और इन्द्रगोप का चूर्ण गोपनीय रूप से पत्नी के प्रजननांग के अन्दर डाल देने से पत्नी के सतीत्व की रक्षा होगी।

बालक नाल—का अमूल्य प्रयोग

[अ] किसी बच्चे की नाल जैसे ही सूखकर गिरे, गुप्त रूप से उसे किसी प्रकार प्राप्त कर लें,। इसे चुपचाप किसी वंध्या स्त्री को किसी वस्तु में मिलाकर खिला दें, वंध्या पुत्रवती होगी।

[आ] बालक का नाल अपने घर में कहीं ऊँचे स्थान में (आले आदि में) सुरक्षित रखने से बालक का घर के प्रति विशेष मोह बना रहता है। बच्चे घर से भागते नहीं।

दाँत का चमत्कारी प्रयोग

बच्चे का जब पहले दाँत (दूध के दाँत) गिर रहे हों, तब दाँत तोड़कर सुरक्षित रख लें (टूट कर जमीन पर न गिरे) इसे कवच (ताबीज) में रखकर धारण करने से अनेक काम सिद्ध होते हैं—

[अ] पति या पत्नी वश में रहे।

[आ] सन्तान सुख, सन्तान की प्राप्ति हो।

[इ] कोई स्त्री इस दाँत को कमर में बाँधे तो गर्भ स्थापन न हो। परिवार नियोजन का तांत्रिक उपाय।

[ई] राजद्वार में सफलता, विजय व शत्रु पराजय हो।

बिल्ली की नाल का प्रयोग

बिल्ली की नाल को प्राप्त करना, वह भी एक निश्चित दिन प्राप्त करना बहुत कठिन कार्य है, परन्तु इसका प्रभाव भी विलक्षण है—

[अ] रविवार को बिल्ली की नाल लेकर जिस वस्तु में (भण्डार) रख दें, वहाँ हमेशा भण्डार भरा रहेगा। कोषागार में रख दें, धन की कमी नहीं होगी।

[आ] कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को काली बिल्ली की नाल प्राप्त करके उसे सोना, चाँदी या ताँबे के कवच (ताबीज) में बन्द करके हाथ में बाँधने से अदृश्य हो जायगा अर्थात् उस व्यक्ति को कोई देख नहीं सकेगा।

युद्ध, विवादादि में विजय

[अ] चण्डी, इन्द्राणी (सिन्धुवार), वाराहीकन्द, मूशली, अपराजिता, बला (कूट), अतिबला (कंघी) क्षीरी (सिर खोला) मल्लिका (मोतिया), जाती, यूथिका (जूही) सफेद मदार, शतावरी, गुरुच और बागुरी—इन औषधियों को शरीर में धारण करना युद्ध तथा वाद-विवाद में विजय-दायक है।

[आ] किसी वाद-विवाद या युद्धादि के समय निम्न मंत्र का जप करके, इसी मंत्र से शिखा बांधे, विजय प्राप्त हो—

"ॐ नमो भैरवाय खड्गपरशुहस्ताय ॐ ह्रूं विघ्नविनाशाय ॐ ह्रूं फट्"

[इ] ग्रहण के समय में उखाड़कर (कूट) अतिबला (कंघी), भीरू (शतावरी या कंटकारी), मूसली, सहदेवी, जाती, मल्लिका (मोतिया) जूही, गारुड़ी, भृंगराज, चक्रऱूपा—इनमें से कोई औषधि ग्रहण करके धारण करने से युद्ध व विवाद आदि में विजय प्राप्त होती है।

रक्षाकारी औषधियाँ

ग्रहण के समय में महाकाली, चण्डी, वाराही (विदारीकन्द) ईश्वरी, सुदर्शना, इन्द्राणी (सिंधुवार)—इनमें से किसी को भी उखाड़कर धारण करने से आत्म रक्षा होती है।

सर्वारिष्ट शान्ति

"श्रीं फट्" इसको ५०० बार जपने से रोग व अरिष्ट शान्ति होती है।

अपमृत्यु निवारक

जब सूर्य पुष्य नक्षत्र में हो और रविवार को पुष्य नक्षत्र भी हो तब गिलोय की जड़ आठ तोला पीसकर गरम पानी से पीने से अपमृत्यु का निवारण होता है। इस पेय को पीने से पहले उसे निम्न मंत्र से १०८ बार मंत्रित करे—

ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोर घोरतरेभ्यः।
सर्वेभ्यः सर्व सर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥

आत्मरक्षाकारी अपराजिता मंत्र

[१] पुष्य नक्षत्र में शरपुंखिका (सरफोंका) नामक औषधि की जड़ उखाड़कर निम्न मंत्र से मंत्रित कर गले या भुजा में बाँधने से—

[२] अथवा पुष्य नक्षत्र में 'अपराजिता' की जड़ उखाड़कर मंत्रित कर धारण करने से—

[३] अथवा पुष्य नक्षत्र में 'पाठा' नामक औषधि की जड़ उखाड़ कर मंत्रित कर धारण करने से—

शत्रु के अस्त्र-शस्त्रों से भय नहीं होता। साथ ही ग्रहपीड़ा, भूत बाधा, ज्वर आदि से भी रक्षा होती है।

मंत्र इस प्रकार है—

ॐ नमो भगवति वज्र श्रृंखले हन हन ॐ भक्ष भक्ष, ॐ खाद ॐ अरे रक्त पिब कपालेन रक्ताक्षि रक्तपटे भस्मांगि भस्मलिप्त शरीरे वज्रायुधे वज्रप्राकारनिचिते पूर्वां दिशं बन्ध बन्ध ॐ दक्षिणां दिशं बन्ध बन्ध, ॐ पश्चिमां दिशं बन्ध बन्ध ॐ उत्तरां दिशं बन्ध बन्ध, नागान् बन्ध बन्ध, नागपत्नीर्बन्ध बन्ध, ॐ असुरान् बन्ध बन्ध, ॐ यक्ष राक्षस पिशाचान्, बन्ध बन्ध, ॐ भूत-प्रेत गन्धर्वादयो ये केचिद्रुपद्रवा स्तेभ्यो रक्ष रक्ष, उर्ध्वं रक्ष रक्ष, ॐ अधो रक्ष रक्ष, ॐ क्षुरिकं बन्ध बन्ध, ॐ ज्वल महाबले, घटि घटि, ॐ मोटि मोटि सटावलिवज्राग्नि वज्रप्राकारे हुं फट्, ह्रीं हूं श्रीं फट्, ह्रीं हः फूं फें फः सर्व ग्रहेभ्यः सर्व व्याधिभ्यः सर्वदुष्टोपद्रवेभ्यो ह्रीं अशेषेभ्यो रक्ष रक्ष।।

बंध्या को सन्तान प्राप्ति

[अ] रविवार को जड़ सहित तुलसी का पेड़ उखाड़ लें, इसे एक रंग की गाय के दूध में पिसवा कर ऋतुकाल में पाँच दिन नित्य ४/४ तोला पिये (कुमारी कन्या के हाथ से पिसवा कर उसी के हाथ से पिये, कन्या १० वर्ष से कम आयु की हो)।

[आ] अथवा ऋतुकाल के पाँच दिनों में प्रतिदिन एक तोला तुलसी और एक रुद्राक्ष एक रंग वाली गाय के दूध के साथ उपरोक्त विधि से (कुमारी कन्या से पिसवा कर उसी के हाथ से) सेवन करे।

संतान प्राप्ति

[१] मूल नक्षत्र में सैंही (सियालु) के पेड़ की (जिसमें सफेद फूल हों, नीले फूल वाला नहीं) जड़ उखाड़कर उसे पीसकर उसका रस मासिक धर्म के

चौथे दिन सूर्यास्त के बाद रात्रि में, निम्न मंत्र में अभिमंत्रित कर (एक दो चम्मच) दाहिने नाक से पत्नी को पिला दे। ध्यान रहे कि मासिक धर्म से चौथे दिन के आसपास मूल नक्षत्र हो।

'इयमौषधी स्त्रायमाणा सहमाना सरस्वती।
अस्या अहं वृहत्याः पुत्रः पितुरिव जाग्रभम्।।

[२] विधिवत् पिण्डदान सहित श्राद्ध करे। श्राद्ध के उपरान्त बीच का पिण्ड (पितामह के नाम का पिण्ड) पत्नी निम्न मंत्र से मंत्रित कर स्वयँ खा ले—

"ॐ आधत्त पितरो गर्भंकुमारं पुष्करस्रजं, यथेह पुरुषोसवत्"

वज्रपात से रक्षा

ज्येष्ठ शुक्ल दशमी (गंगा दशहरा) के दिन निम्न मंत्र किसी कागज आदि पर लिखकर प्रतिष्ठा करके घर के अन्दर स्थापित कर देने से घर में वज्रपात का भय नहीं होता। प्रति वर्ष आकाशीय विद्युत गिरने (वज्रपात) से हजारों व्यक्ति मृत्यु के ग्रास बनते हैं। जिस प्रकार आधुनिक बड़े-बड़े भवनों में वज्रपात से रक्षा हेतु विद्युत निरोधक/विद्युत चालक स्थापित किया जाता है, उसी प्रकार यह वैदिक प्रयोग है। नेपाल, उत्तराखण्ड, हिमांचल प्रदेश आदि में जहाँ जंगल प्रायः ऊँचे पर्वतीय प्रदेशों में वज्रपात का विशेष भय बना रहता है, पुरातन काल से इस मंत्र को घरों में प्रस्थापित करने की परम्परा आज भी विद्यमान है और इतिहास साक्षी है कि जिन घरों में यह मंत्र विद्यमान रहता है—वहाँ कभी वज्रपात नहीं हुआ—

ॐ अगस्त्यश्च पुलस्त्यश्च वैशम्पायन मेवच।
जैमिनेश्च सुमन्तुश्च पंचैते वज्र वारकाः।।
मुने कल्याण मित्रस्य जैमिनेश्चानु कीर्तनात्।
विद्युद्ग्निभयं नास्ति लिखिते च गृहोदरे।।
यत्रानुयायि भगवान् हृद्यास्ते हरीश्वरः।
भंगोभवति वज्रस्य तत्र शूलस्य का कथा।।

लोकोपकारी विविध यंत्र

तंत्रशास्त्र में यंत्रों का विशेष महत्व है, क्योंकि तंत्रशास्त्र का यह एक अभिन्न अंग है। तंत्र + मंत्र + यंत्र—इन तीनों के योग से ही तंत्र शास्त्र पूर्ण होता है। क्योंकि यंत्र में इन तीनों का समावेश होता है अतः विधि पूर्वक साधित यंत्र शीघ्र प्रभावकारी होते हैं। यंत्रों के विभिन्न रूप 'तंत्रशास्त्र' में वर्णित हैं—

(अ) केवल चित्र या रेखाचित्र के रूप में।

(आ) रेखाओं/कोष्ठकों तथा अंकों के संयोग से।

(इ) रेखाओं/कोष्ठकों तथा अंकों के साथ मंत्रों का भी इनमें समावेश होता है।

(ई) केवल मंत्र रूप में।

(उ) रेखाओं/कोष्ठकों तथा मंत्रों के संयोग से।

अंकों और शब्दों का एक विशेष योग एक शक्ति का प्रतीक है।

आइये, पहले आपको यह बतलाये कि मूल अंक ९ ही क्यों हैं? ९ के अंक का विशेष महत्व है साथ ही चमत्कारिक भी। गणित में यह सबसे बड़ी संख्या है क्योंकि ९ से आगे जितनी भी संख्यायें बनती हैं वे सब या तो शून्य के संयोग से बनती हैं अथवा परस्पर दो अंकों के योग से अतः ९ की संख्या अँकशास्त्र की परम सीमा है। इसीलिये इस संख्या को 'सृष्टि' का स्वरूप का माना गया है अर्थात इस सँख्या से परे कुछ नहीं।

अब देखिये ९ की सँख्या का चमत्कार। इसका पहाड़ा पढ़िये, इसकी मूल सँख्या प्रत्येक में विद्यमान है—

९ गुणा १ = ९

९ गुणा २ = १८ अर्थात १ धन ८ = ९

इसी प्रकार

२७ = २ धन ७ = ९

३६ = ३ धन ६ = ९

४५ = ४ धन ५ = ९

५४ = ५ धन ४ = ९
६३ = ६ धन ३ = ९
७२ = ७ धन २ = ९
८१ = ८ धन १ = ९
९० = ९ धन ० = ९

उल्लेखनीय है कि जगत अर्थात सृष्टि सदैव विद्यमान रहती है, प्रलय के बाद भी उसका स्वरूप बदल जाता है, नाश नहीं होता। सृष्टि के भाँति ही ९ की सँख्या अविनाशी है, इसी हेतु गोस्बामी तुलसीदास जी ने ९ की सँख्या को सृष्टि का रूप माना है और कहा है कि जैसे प्रत्येक परिस्थिति में ९ का मूल अँक अबिनाशी रहता है इसी प्रकार जो परमात्मा राम का आश्रय लेता है उसका विषम परिस्थितियों में भी अधः पतन नहीं होता—

रामचरण अवलम्ब गहु, छांड़ि सकल उपचार।
जैसे घटत न अंक नव, नव के लिखत पहार॥

क्योंकि ९ का अंक सृष्टि का प्रतीक है इसलिये उसका आध्यात्मिक दृष्टि से भी महत्व है। गीता में (अध्याय ७ श्लोक ४/५ में) स्वयं भगवान ने बतलाया है कि मेरी दो प्रकृतियां हैं अर्थात यह समस्त सृष्टि मूलतः दो तत्वों में विभाजित है।

१—अपरा अर्थात जड़ जो पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार इन आठ तत्वों में विभाजित है।

२—परा-प्राण वायु रूप चेतना तत्व। अतः दर्शन शास्त्र के मत से यह समस्त सृष्टि अपरा प्रकृति के ८ तथा परा प्रकृति के १ कुल ९ तत्वों से बनी है, इन ९ तत्वों के अलावा इस सृष्टि में और कुछ नहीं।

भूमि रापोऽनलो वायुः खंमनो बुद्धिरेवच।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा।
अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्॥
जीवभूतांमहाबाहो ययेदं धार्यते जगत्॥

इस सिद्धांत से चेतन और जड़ प्रकृति से उत्पन्न होने के कारण मनुष्यों तथा प्राणियों की प्रतीक संख्या १८ हुई। इसलिये प्राणियों के कल्याणार्थ एवं प्राणियों के सांसारिक हित के शास्त्रों से १८ का घनिष्ट सम्बन्ध है, जैसे १८ पुराण, १८ उप पुराण, १८ स्मृतियां, गीता के १८ अध्याय, महाभारत के १८ पर्व इत्यादि।

आपको विदित होगा कि सिद्ध महात्माओं, सन्तों के आगे १०८ की पवित्र संख्या लिखी जाती है, माला में १०८ दाने होते हैं, आध्यात्मिक ज्ञान के ग्रन्थ उपनिषदों की संख्या भी १०८ है इस पर भी विचार करें, यों तो १०८ की सख्या का मूल भी १ + ० + ८ = ९ ही होता है। इसके अलावा एक प्रतीक है चेतन प्रकृति का और ८ है जड़ प्रकृति का मध्य में बिन्दु इस बात का प्रतीक है कि १ रूपी चेतन प्रकृति ने माया रूपी ८ जड़ प्रकृतियों पर विजय प्राप्त कर सिद्धि प्राप्त कर ली है। अथवा ऐसा प्राणी ऐसा ज्ञान जो ८ तत्वों वाली माया नामक अपने प्रकृति से मुक्त है।

भगवान को प्राप्त करने की भक्ति भी ९ प्रकार की हैं।

देवताओं की निधियां भी ९ हैं।

मंत्र एवं तन्त्रशास्त्र में ९ को विशेष महत्व प्राप्त है, तन्त्रशास्त्र में जो यन्त्र बनाये जाते हैं प्राय: उनके ९ कोष्ठक होते हैं।

इसी प्रकार मन्त्रशास्त्र और तन्त्र में जो उपासना तथा अनुष्ठान के लिये सिद्ध मन्त्र होते हैं, उसके शब्दों की मूल संख्या ९ होती है।

कुछ प्रमुख सिद्ध मन्त्रों की मूल संख्या इस प्रकार होती है—

[अ] राधिका कृष्ण = योग १०८ = ९

[आ] नमः शिवाय = १३५ = ९

[इ] सीताराम = योग १०८ = ९

नवार्ण मन्त्र को जन-जन जानता है।

इसी प्रकार प्रत्येक अक्षर का भी अपना विशेष प्रभाव व महत्व है—

शब्द मय ब्रह्म

इस सिद्धांत के अनुसार प्रत्येक स्वर तथा वर्ण का अपनी संख्या के अनुसार ही संख्या होती है।

अथ प्रसन्नो भगवान्महेशः परमेश्वरः ।
दिव्यं शब्दमयं रूपमाख्याय प्रहसंस्थितः ॥

अकारस्तस्य मूर्धा हि ...... इत्यादि।

[अ] मुण्ड से स्वरों का प्रादुर्भाव—

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ
१	२	३	४	५	६
ऋ	ॠ	ऌ	ॡ	ए	ऐ
७	८	९	१०	११	१२
ओ	औ	अं			
१३	१४	१५			

[आ] रुण्ड से व्यंजनों की उत्पत्ति—

क	ख	ग	घ	ङ
१	२	३	४	५
च	छ	ज	झ	ञ
६	७	८	९	१०
ट	ठ	ड	ढ	ण
११	१२	१३	१४	१५
त	थ	द	ध	न
१६	१७	१८	१९	२०
प	फ	ब	भ	म
२१	२२	२३	२४	२५
य	र	ल	व	
२६	२७	२८	२९	
श	ष	स	ह	क्ष
३०	३१	३२	३३	३४

इस प्रकार प्रत्येक अंक व अक्षर एक विशेष शक्ति के सूचक हैं।

कहा गया है 'यंत्रात्मकं हि दैवतम्' अर्थात् यन्त्र देवता का ही रूप है। यन्त्र विभिन्न प्रकार के मापों, रेखाओं, अंकों, मन्त्रों, द्रव्यों, कोष्ठकों द्वारा निर्मित होते हैं जो एक वैज्ञानिक तथ्य है। प्रामाणिक मन्त्रों हेतु मन्त्र महार्णव,

मंत्र महोदधि, यन्त्र चिन्तामणि सौन्दर्य लहरी, शिव तरंग आदि ग्रन्थों का अध्ययन व मनन करना चाहिए।१

न मालूम कब किस यंत्र की आवश्यकता कहाँ पड़ जाय ? अतः लोकहित की दृष्टि से साधक को समय मिलने पर ग्रहण, सोमवती अमावास्या, संक्रान्ति, आदि सिद्ध तिथियों एवं शुभ मुहूर्त में एक-एक करके यंत्र सिद्ध कर लेना चाहिए। यंत्र सिद्ध हो जाने पर यथा समय इनका उपपयोग किया जा सकेगा।२

सामान्यतः यंत्रों को भोजपत्र पर अष्ट गंध के घोल से अनार की लेखनी द्वारा लिखने का विधान है, लेकिन भोजपत्र प्रायः फट जाता है और उसमें यंत्र स्पष्ट नहीं लिखा जा सकता है अतः स्वच्छ कागज पर यंत्र लिखकर उसमें थोड़ा भोजपत्र रख देना उचित होगा।३ कुछ यंत्रों को गोरोचन से लिखने का विधान है लेकिन आजकल शुद्ध गोरोचन प्राप्त होना कठिन है अतः शुद्ध गोरोचन न प्राप्त होने से यंत्र प्रभावहीन होगा। इसके अलावा कुछ यंत्र भिन्न वस्तुओं से भी लिखे जाते हैं जिसका उल्लेख यंत्र के साथ प्राप्त होता है। निर्दिष्ट विधि के अनुसार ही यंत्र का निर्माण होना चाहिए।

सामान्य नियम यह है कि ग्रहण आदि पर्व पर शुभ मुहूर्त में न्यूनतम एक सौ आठ बार यंत्र को लिखे, इससे यंत्र सिद्ध हो जाता है परन्तु यह नियम सभी यंत्रों पर प्रभावी नहीं है। जिसका जैसा विधान हो तदनुसार ही यंत्र सिद्ध करना चाहिए।

---

१ तन्त्रशास्त्र के नाम पर आजकल बाजार से बहुत से काल्पनिक ग्रन्थ प्राप्त होते हैं। जिनमें अप्रामाणिक मिथ्या सामग्री रहती है। इन प्रयोगों को करने के बाद सफलता न मिलने पर तन्त्र शास्त्र से विश्वास उठना स्वाभाविक है। अतः केवल प्रामाणिक, प्राचीन, मौलिक ग्रन्थों को ही देखना चाहिए। कुछ अज्ञानी लोगों का यह प्रचार सही नहीं है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्रों के निमित्त मन्त्र लिखने का क्रम अलग-अलग है। सभी के लिये समान नियम हैं किसी भी मौलिक ग्रन्थ में भिन्न-भिन्न जातियों के निमित्त भिन्न क्रम से मन्त्र लिखने का वर्णन नहीं है।

२ दीक्षा ग्रहण हेतु जो शुभ मुहूर्त सिद्ध तिथियाँ वर्णित की हैं, उनमें भी मंत्र सिद्ध किये जा सकते हैं।

३ कपूर, कुंकुम, कस्तूरी, केशर, अगर, तगर, सफेद चन्दन और लाल चन्दन यह आठ वस्तुओं को मिलाकर 'अष्टगन्ध' होता है।

तदनन्तर विधिवत् प्रतिष्ठा, प्राण प्रतिष्ठा पंचदश संस्कार पूजन आदि करने से यंत्र पूर्ण होता है। कुछ यंत्रों में विशेष विधि विधान, जप, हवन आदि की विधियाँ होती हैं, जिस यंत्र की जो विधि हो, तदनुसार ही यंत्र सिद्ध करना चाहिए।

षट्कर्मों के निमित्त विभिन्न यन्त्र इस प्रकार बनाये जाते हैं।

यंत्रों में मंत्र प्रयोग की विधि

सामान्यत: षट्कर्मों के निमित्त यंत्र बनाने में छह प्रकार से मन्त्रों का प्रयोग होता है। चाहे जप हो, या होम हो, या यन्त्र निर्माण हो मन्त्रों का प्रयोग इस प्रकार होता है—

[१] उच्चाटन हेतु—पहले जिस व्यक्ति का उच्चाटन करना हो उसका नाम फिर उच्चाटन सम्बन्धी मन्त्र लिखे। इसे 'पल्लव' प्रक्रिया कहा जाता है।

[२] मारण हेतु—आदि में मन्त्र लिखकर फिर शत्रु नाम पुनः मन्त्र लिखे। इस प्रक्रिया का नाम 'योग' है।

[३) स्तम्भन में—पहले मन्त्र, फिर व्यक्ति का नाम, पुनः मन्त्र, पुनः व्यक्ति का नाम अन्त में पुनः मन्त्र लिखे। इस प्रक्रिया को 'रोधक' कहते हैं।

[४] वशीकरण व आकर्षण में—बीच में व्यक्ति का नाम लिखकर चारों ओर मन्त्र लिखे। इसे 'सम्पुट' प्रक्रिया कहते हैं।

[५] आकर्षण तथा वशीकरण में—इस कार्य हेतु 'ग्रन्थन' प्रक्रिया का भी प्रयोग होता है। तदनुसार पहले मन्त्र का एक अक्षर फिर व्यक्ति के नाम का एक अक्षर, फिर मन्त्र का द्वितीय अक्षर, फिर व्यक्ति के नाम का द्वितीय अक्षर इस प्रकार एक-एक अक्षर (मन्त्र और साध्य व्यक्ति के नामाक्षरों का गुंथन) लिखे। (मन्त्र या व्यक्ति के अक्षरों में कमी होने से—दुबारा लिखे)।

[६] छठी 'विदर्भ' नामक प्रक्रिया है। इसका प्रयोग भी वशीकरण व आकर्षण में होता है।

लेकिन यहां मंत्र के दो अक्षर, फिर व्यक्ति के नाम का एक अक्षर, फिर मंत्र के दो अक्षर, फिर नाम का एक अक्षर—इत्यादि क्रम से लिखा जाता है।

इन कार्यों हेतु मंत्रों का वर्णन 'तंत्रोक्त षट्कर्म प्रयोग' शीर्षक से हो चुका है।

इस प्रकार सुपूजित यंत्र में शेरनी की संतोषी, शेर का मूछ, भूतकेश, सरसों (पीली), दूब, जौं के अँकुर, अम्बर, उसीर, आम के पत्ते, तालीसपत्र, हल्दी, दारुहल्दी, मोर पँख, सर्पकंचुकी, गोमय—इन द्रव्यों का आंशिक समावेश करने के बाद यंत्र को मोड़कर तीन सूत के तागे से वेष्टित करने के उपरान्त सोना, चाँदी या तांबे के कवच (बीजक) में डालकर लाख या मोम आदि से बन्द करके (जिससे अन्दर पानी न जा सके) धारण करायें।

यहाँ कुछ प्रामाणिक एवं अनुभव सिद्ध यंत्रों का वर्णन दे रहे हैं—

बंधनकारी यंत्र

यन्त्र सिद्ध कर लेने के बाद शत्रु के पैर की धूल और गोरोचन इन दोनों को मिलाकर भोजपत्र पर यन्त्र लिखे। उसे किसी बर्तन या शीशी में डालकर ढक्कन बन्द कर दे। तदुपरान्त इसे श्मसान में गाड़ दे। शत्रु समस्याग्रस्त व बंधन ग्रस्त होगा। यंत्र सं० १

रुद्रबीसी और बीसायन्त्र

बीसा यंत्र तंत्र-शास्त्र में सबसे महत्वपूर्ण और दुर्लभ माना जाता है। इसकी अद्भुत सिद्धि जग-प्रसिद्ध है। यों आजकल लोग अनेक प्रकार से अंकों को जोड़कर बीसा यंत्र,तो बना लेते हैं, किंतु वह प्रामाणिक नहीं है। ऐसे अप्रामाणिक बीसा यंत्र सिद्धि रहित एवं निरर्थक हैं। दुर्लभ शास्त्रोक्त बीसा यंत्र क्या है और उसकी महत्ता का क्या कारण है ; यह जानना आवश्यक है।

रुद्र बीसी में भगवान शिव की संहार लीला प्रारम्भ हो जाती है इस बात को सभी जानते हैं। २० के अंक का क्या महत्व है और बीसायन्त्र के पूजन से क्यों कर कष्ट निवृत हो जाते हैं? कहीं यह यन्त्र अंकों में स्तोत्र तो नहीं लिखा है जो भगवान आशु तोष को प्रसन्न कर देता है? (देखें यंत्र सं० ८)।

इस प्रश्न पर विचार करते समय गोस्वामी तुलसी दास जी का एक दोहा याद आता है :—

१—कुछ यन्त्र केवल पूजा के निमित्त होते हैं, जिन्हें पूजागृह में स्थापित कर नित्य पूजा की जाती है। कुछ यन्त्र धारण करने हेतु होते हैं। पुरुषों को यन्त्र दाहिनी भुजा या गले में पहनना चाहिए और महिलाओं को गले में अथवा बायीं भुजा में धारण करना चाहिए।

अंक अगुन आखर सगुन समुझिअ उभय प्रकार।
खोएँ राखें आपुभल तुलसी चारु बिचार ॥२५१॥

अर्थात् निर्गुणब्रह्म अंक (१, २, ३) आदि से और सगुण भगवान अक्षर से लिखे जाते हैं। तो विचार उठता है कि यन्त्र में जो अंक लिख जाते हैं उनका क्या बिवेचन हो सकता है ?

अंक ८—श्री मद्भगवद्गीता अ० ७ श्लोक ४ में भगवान ने अपनी अपरा प्रकृति के आठ रूप गिनाये हैं।

भूमिरापोऽनलो वायु: खं मनो बुद्धिरेव च।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥४॥

तो ८ का अंक सर्वत्र प्रकृति माया देवी, या गौरी का सूचक रहा है। तुलसी दास जी जब जग के माया जाल से सावधान करते हैं तो इसी ८ के अक का दृष्टान्त देते हैं :—

तुलसी जग की प्रीति को, क्यों नहिं तजत निशंक।
घटत-घटत घट जात जिमि, आठ पहारे अंक ॥

८ = ८ × १ = ८
१६ = १ + ६ = ७
२४ = २ + ४ = ६
३२ = ३ + ३ = ५ इत्यादि

अर्थात् माया के जाल में फँसने से जीव सतत नीचे की ओर गिरता जाता है। सिद्ध हुआ कि ८ का अंक शक्ति या गौरी का प्रतीक है।

अंक ९—यह अंक ८ धन १ से बनता है। एक का अंक जीव रूप, जिसे परा अर्थात् चेतन प्रकृति का प्रतीक भगवान ने बतलाया है :

श्री मद्भगवद्गीता अ० ७ श्लोक ५—

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृति विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥

अर्थात् १ मेरी जीव रूपी परा या चेतना प्रकृति का है। अब ८ + १ (अपरा + परा) पूर्ण रूप ब्रह्म का प्रतीक ९ हुआ। इसी को शंकर जी का प्रतीक कह सकते हैं।

अंक ३—यह शिव जी के ऐश्वर्य का प्रतीक है और मंगल विधान के लिये स्मरण किया जाता है :— 'नेत्राणां त्रितयं शिवं पशुपतेरग्नित्रयं पावनं। यत्तद्विष्णुपदत्रयं त्रिभुवनं ख्यातं च रामत्रयम्। गङ्गावाहपथत्रयं सुविमलं देवत्रयं ब्राह्मणं। सन्ध्यानां त्रितयं द्विजैः सुविहितं कुर्वन्तु नो मङ्गलम्।" (कालिदास जी का मङ्गलाष्टाकस्तोत्र) और भी : "त्रयीं तिस्रो वृत्तिस्त्रिभुवनमयोत्रीनपि सुरानकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत्तीर्ण विकृतिः : तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरविरुंधान मनुभिः समस्तव्यस्तं त्वां शरणद गृणात्योमिति पदम्॥"

(पुष्पदन्त जी का महिम्न स्तोत्र)

तो ८।६।३ लिखने का मतलब हुआ कि हे सर्वशक्तिमान परम ऐश्वर्यशाली संहार शक्ति का रूप धारण करने वाले (८+६+३=२०) रुद्र बीसी में प्रगट होने वाले महाकालेश्वर भगवान शंकर आपकी जय हो।

आप कैसे हैं, २, ७, ११ रूपी

अंक २—इस लोक और परलोक के स्वामी

अंक ७—सप्तऋषियों के आराध्यदेव, सतोगुणी पुरुषों की परमगति

अंक ११—महा भयंकर एकादश रुद्र अर्थात् सम्पूर्ण तमोगुणीशक्तियों को नियन्त्रण में रखने वाले

आप १०, ४, ६ रूप धारण कर प्रसन्न हों अर्थात्

अंक १०—दशों दिशाओं से हमारे ऊपर आने वाली विपत्तियों का निवारण कर; हमें

अंक ४—वेद मार्ग पर चलने की शक्ति देते हुए

अंक ६—सभी रस भोगों को प्रदान कीजिये। हे बीस अङ्क से माया विस्तार करने वाले जगदीश्वर प्रसन्न होइए।

८+६+३=२०

२+७+११=२०

१०+४+६=२०

यही भाव इस श्लोक का है :—

वसु नन्द तथा शिवनेत्र यमं, मुनि रुद्र दिशापति वेद रसं।
किल विंशति यन्त्रमिदं लिखितं, धन धान्य प्रवर्द्ध करं कथितं॥

अर्थात् त्रिगुणात्मक शिव को प्रसन्न करने के लिये ३-३ कोठों में अङ्क लिखकर स्तोत्र रूप से सूक्ष्म रूप में प्रार्थना की जाती है जिसका निश्चय फल कष्टों की निवृत्ति है।

नव ग्रहों के यन्त्र*

नवग्रहों के यंत्र नौ कोष्ठकों में बनते हैं, जो ग्रहों द्वारा सूचित कुफल की शान्ति कारक होते हैं।

सूर्ययंत्र—इसमें १ से ६ तक अंकों का प्रयोग होता है और किसी भी तरफ से जोड़ें जोड़ १५ होता है। यंत्र सं० २

चन्द्र यंत्र—इसमें २ से १० तक के अंक प्रयोग होते हैं, सभी ओर से जोड़ १८ होता है। यंत्र सं० ३

मंगल का यंत्र—इसमें ३ से ११ तक के अंक इस प्रकार ६ कोष्ठकों में स्थापित होते हैं कि हर ओर से जोड़ २१ ही बने। यन्त्र सं० ४

बुधयंत्र—अंक संख्या ४ से १२ तक नौ कोष्ठकों में इस प्रकार स्थापित हों कि प्रत्येक ओर से जोड़ २४ हो। यंत्र सं० ५

गुरुयंत्र—अंक संख्या ५ से १३ तक नौ खानों में इस प्रकार स्थापित करें कि सभी ओर से जोड़ २७ ही हो। यंत्र सं० ६

शुक्रयंत्र—अंक संख्या ६ से १४ तक की स्थापना नौ कोष्ठकों में इस प्रकार स्थापित करें कि प्रत्येक ओर से जोड़ ३० ही बने। यन्त्र सं० ७

शनियंत्र—अंक संख्या ७ से १५ तक नौ कोष्ठकों में इस प्रकार स्थापित होते हैं कि प्रत्येक ओर से जोड़ ३३ ही बनता हो। यन्त्र सं० ८

राहुयंत्र—अंक संख्या ८ स १६ तक नौ कोष्ठकों में इस प्रकार स्थापित होते हैं कि सभी ओर से जोड़ ३६ ही होता है। यन्त्र सं० १०

केतुयंत्र—अंक संख्या ९ से १७ तक नौ कोष्ठकों में इस प्रकार लिखें कि प्रत्येक ओर से ३९ ही बने। यन्त्र सं० ११

---

* 'यन्त्र चिन्तामणि'

मिर्गी रोग की शान्ति हेतु यन्त्र—

इस यन्त्र में अंक संख्या १ से ८ तक और ४९९२ से ४९९९ तक यह सोलह संख्यायें इस प्रकार सोलह कोष्ठकों में लिखी जाती हैं कि प्रत्येक ओर से जोड़ १० ००० बने। यन्त्र सं० १२

ज्वर शामक यन्त्र—

(अ) अक संख्या १ से ८ तक दो-दो आवृति में सोलह कोष्ठकों में इस प्रकार स्थापित करें कि सभी ओर से जोड़ अठारह बने। सभी प्रकार के ज्वरों को शान्त करता है। यन्त्र सं० १३

(आ) अंक संख्या १ से ८ तक और ९२ से ९९ तक सोलह कोष्ठकों में इस प्रकार स्थापित करें कि प्रत्येक ओर से जोड़ २०० बने। यह एकान्तरी ज्वर (एक दिन छोड़कर आने वाले ज्वर) में विशेष लाभकारी है। यन्त्र सं० १४

(इ) तिजारी ज्वर में यह यन्त्र लाभकारी है। अंक संख्या १ से ८ तक और १४२ से १४९ तक इस प्रकार स्थापित करें कि सभी ओर से जोड़ ३०० हो। यन्त्र सं० १५

चौंतीसा यन्त्र—

(अ) किसी भी प्रकार की विपत्ति या भय के निवारण हेतु चौंतीसा यन्त्र का विशेष महत्व है। इस यन्त्र में अंक संख्या १ से १६ तक इस प्रकार लिखे जाते हैं। कि प्रत्येक ओर से जोड़ ३४ ही हो।

इसकी विशेष क्रिया भी है। ग्रहण आदि सिद्ध पर्व पर इस यन्त्र को ३४ बार लिखने से यन्त्र सिद्ध होता है। ग्रहण आदि सिद्ध पर्व न मिलने पर किसी भी शनिवार के दिन एक सौ आठ बार धोबी घाट पर बैठकर इस यन्त्र को लिखे और प्रत्येक बार यन्त्र लिखकर धोबी घाट के जलकुण्ड में डालता जाय, फिर बाद में इन सभी १०८ यन्त्रों को एकत्रित कर जल में प्रवाहित कर दें। इस प्रकार यन्त्र सिद्ध हो जाने पर बाद में जब आवश्यकता पड़े भोजपत्र पर अनार की कलम से यह यन्त्र अष्टगंध से लिखकर प्रतिष्ठा करके धूप देकर गले में बांध दिया जाय। यन्त्र सं० १६

[आ] चौंतीसा यंत्र दूसरे क्रम से भी बनता है अँक संख्या इसमें भी १ से १६ तक सोलह कोष्ठकों में स्थापित होते हैं लेकिन अँक स्थापन का क्रम भिन्न है।

यह यंत्र बच्चों के डब्बा रोग में लाभकारी है। भोजपत्र या पीपलके पत्ते पर यह यंत्र चार बार लाल चन्दन से अनार की लेखनी से लिखे, धूप दें, तदन्तर—

पहले यंत्र को जल से धोकर यह जल बच्चे की माँ को पिलायें। दूसरा यंत्र जल से धोकर वह जल माता के दूध के साथ बच्चे को पिला दें। तीसरा यंत्र दूसरे दिन और चौथा यंत्र चौथे दिन पूर्ववत धोकर माता के दूध के साथ बच्चे को पिला दें। यंत्र सं० १७

बहत्तर का यंत्र—सन्तान हेतु

यंत्र सिद्ध कर गोरोचन से भोजपत्र पर लिखकर भुजा में बाँधने से वन्ध्या स्त्री को सन्तति होती है। यंत्र सं० १८

सन्तानदाता यंत्र

सिद्ध करने के उपरान्त इस यंत्र को पीले रस में गोरोचन मिलाकर भोजपत्र पर लिखकर भुजा में धारण करने से भी बन्ध्या को सन्तान की प्राप्ति होती है। यंत्र संख्या १६

पंचदशी यंत्र

तन्त्रशास्त्र में पंचदशी यंत्र का विशेष महत्व है और समाज में बीसा तथा पंचदशी (पन्द्रह) यंत्रों का व्यापक प्रचलन भी है। समस्त व्यवसायिक प्रतिष्ठानों में दीपावली पर बीसा तथा पंचदशी यंत्र बनाये जाते हैं। यह लक्ष्मी में वृद्धि तथा मंगलकारी माना गया है। यंत्र सं० २ देखे।

पंचदशी यंत्र में अँक संख्या १ से ६ तक इस प्रकार स्थापित किये जाते हैं (नौ कोष्ठको में) कि प्रत्येक ओर से जोड़ १५ बने। ध्यान दें कि वैसे तो इस यंत्र को चार प्रकार से बनाया जा सकता है, जैसे कि ऊपर के कोष्ठकों में ६, १, ८ के बजाय ८, ३, ४ अथवा ४, ६, २ अथवा ६, ७, २ लिखकर भी यही संख्या (यंत्र) बनेगा, लेकिन यंत्रों में अँकों के क्रम का भी एक निश्चित विधान होता है। इसी क्रम में यंत्र प्रभावी होता है अन्यथा यंत्र निष्फल हो जायगा। पंचदशी यंत्र के सम्बन्ध में अँकों की स्थापना का यही विधान है—

"रसेन्दु नागा, नग बाण रामा,
युग्मांकवेदा नव कोष्ठ मध्ये।"

विभिन्न देवी-देवताओं के मंत्र के साथ संयुक्त करने से यंत्र और प्रभावी होता है, अतः यंत्रों में इष्ट देवी-देवता के बीज मंत्रों को भी यदा-कदा सम्मिलित किया जाता है। उदाहरण स्वरूप निम्न यंत्र देखे :—

नवार्ण संपुटित पंचदशी यन्त्र

इस पंचदशी यंत्र को नवार्ण मंत्र से सम्पुटित किया गया गया है। यह यंत्र विशेष प्रभावकारी है। यंत्र सं० २०

अपमृत्यु निवारक यन्त्र

यंत्र सिद्ध कर गोरोचन से भोजपत्र पर लिखकर भुजा में धारण करने से आत्मरक्षा होती है। यंत्र सं० २१

बीसा यन्त्र के दो और रूप

इसमें १ से १० तक अँक हैं, लेकिन ५ की संख्या नहीं है। यंत्र सं० २२ तथा २३ देंखे।

सर्वसिद्ध परब्रह्म यन्त्र

इस यंत्र में २५८ से २६६ तक अँकों का प्रयोग होता है और ९ कोष्टकों में इन्हें इस प्रकार स्थापित किया जाता है कि प्रत्येक ओर से योग ७८६ ही हो।

यह अँक परब्रह्म का प्रतीक है। इसके धारण से समस्त रोग, शोक, बिपत्तियों से मुक्ति तथा सुख-शान्ति, आरोग्य, लाभ, दीर्घायु, व्यवसाय में उन्नति, शत्रु पराजय, आत्म रक्षा आदि फल प्राप्त होते हैं।

इस्लामी एवं सूफी संत भी इस यंत्र को महत्वपूर्ण मानते हैं, ज्ञातव्य है कि ७८६ की संख्या इस्लाम में ॐ की तरह ही परम श्रेष्ठ परमात्मा का रूप माना जाता है। यंत्र सं० २४

जीववत्सा हो

इस यंत्र को सिद्ध कर भोजपत्र पर गोरोचन से लिखकर भुजा में बांधने से काकवन्ध्या गर्भवती हो। (काकवन्ध्या = जिसकी एक ही संतान हो)। यंत्र सं० २६

संततिदाता यन्त्र

इस यंत्र को सिद्ध करके भोजपत्र पर कुंकुम से लिखकर भुजा में बांधने से (जिस स्त्री को बच्चे होकर या गर्भ में ही मर जाते हैं) लाभ होता है। बच्चे जीवित रहते हैं। यंत्र सं० २५

पति-पत्नी में प्रेमकारी यंत्र

इस यंत्र को भोजपत्र में पाँच बार लिखकर गुगुल का धूप दे और स्त्री सहवास के मैले वस्त्र में (जिस वस्त्र पर सहवास का मल लगा हो) लपेट पर पानी के घड़े के नीचे गाड़ने से पति व पत्नी में परस्पर प्रेम बना रहेगा। यंत्र सं० २७

वचन सिद्धिकारी यंत्र

इस यंत्र को भोजपत्र पर कुलंजन से लिखकर कण्ठ में धारण करने से वचन सिद्धि होती है। यंत्र सं० २८

नपुंसकत्वहारी यंत्र

इस यंत्र को सिद्ध करके कमर में बाँधने से नपुंसकत्व दूर होगा। यंत्र सं० २९

शिशु का रोना बंद हो

कुछ बालक-बालिकायें बाल्यकाल में बहुत रोते हैं, इस यंत्र को भोजपत्र पर गोरोचन द्वारा लिखकर शिशु के गले में बाँधने से लाभ होता है। यंत्र सं० ३०

आकर्षणकारी एक अन्य यंत्र

इस यंत्र को गोरोचन और कुंकुम से भोजपत्र पर लिखे। इस प्रकार के आठ यंत्र लिखे, इन आठों को जमीन में गाढ़ दे। विदेश गया व्यक्ति वापस लौट आएगा। यंत्र सं० ३१

शत्रुवशीकरण यंत्र

इस यंत्र को गोरोचन और कुंकुम से भोजपत्र पर लिख गले में धारण करने से शत्रु व अन्य लोग वश में होते हैं। यंत्र ३२

शत्रुस्तंभन यंत्र

इस यंत्र को किसी पत्थर पर हल्दी के रस से लिखकर उलटा करके पृथ्वी में गाड़ देने से शत्रु स्तंभन होता है। यंत्र सं० ३३

अपमृत्यु निवारक यंत्र

भोजपत्रपर इस यंत्र को गोरोचन तथा कुंकुम से आठ बार (आठ पत्रों में) लिखकर धारण करने से समस्त कष्टों, विपदाओं, व अल्पमृत्यु भय से रक्षा होती है। यंत्र सं० ३४

स्वप्न पिशाचिनी यंत्र

इस यंत्र को भोजपत्र पर गोरोचन कुंकुम व दूध से लिखकर शिर में धारण करें। स्वप्न में त्रिकाल की बातें (भूत भविष्य वर्तमान) दृष्टिगोचर होंगी।

इससे पहले निम्न मंत्र दस हजार बार जपकर सिद्ध कर ले—

"ॐ ह्रीं चिंचि पिशाचिनि स्वाहा"

यंत्र सं० १५

पति-पत्नी में प्रीतिकारक यंत्र

इस बहत्तर के यंत्र को इत्र से भोजपत्र पर लिखकर कपूर से जला देने से पति-पत्नी में परस्पर प्रेम होगा। यंत्र सं० ३६

जगद्विजयरक्षाकारी वज्रपंजर रामभद्र यंत्र

महर्षि अगस्त्य द्वारा प्रतिपादित इस यंत्र को भूर्जपत्र आदि पर लिखकर सुवर्णयुक्त करके प्रतिष्ठा प्राणप्रतिष्ठापूर्बक कवच (तावीज) में स्थापित कर गले में धारण करने से सर्वत्र विजय, आत्मरक्षा तथा समस्त कार्यों में सिद्धि होती है। यंत्र सं० १७

रक्षा यंत्र

गोरोचन कुंकुमसे अथवा मलयागिरि चन्दन कर्पूर से भोजपत्रपर लिखे हुए चतुर्दल कमलकी कर्णिकामें अपना नाम लिखकर चारों दलों में ॐकार लिखे। आग्नेय आदि कोणों में हूँकार लिखे। उसके ऊपर षोडश दलों का कमल बनाये। उसके दलों में अकारादि षोडश स्वरोंको लिखें। फिर उसके ऊपर चौतीस दलोंका कमल बनाये। उसके दलों में 'क' से लेकर 'क्ष' तक अक्षरों को लिखे। उस यन्त्र को श्वेत सूत्र से वेष्टित करके रेशमी वस्त्र से आच्छादित कर कलशपर स्थापन करके उसका पूजन करे प्रतिष्ठा करके इस यन्त्र को धारण करने से सभी रोग शान्त होते हैं एवं शत्रुओं का विनाश होता है। यंत्र ३८

आकर्षणकारी चक्रव्यूह यंत्र

घर से रूठकर या भागकर परिस्थितियों वश व्यक्ति अज्ञात स्थल को चल देते हैं। ऐसी स्थिति में उक्त व्यक्ति की बुद्धि को प्रभावित कर और अपने घर लौटने को आकर्षित करने हेतु इस यंत्र का प्रयोग होता है। किन्तु इसके प्रयोग हेतु

उस व्यक्ति का पहना हुआ ऐसा वस्त्र उपलब्ध होना चाहिये, जिस पर उसका स्वेद (पसीना) लगा हो अर्थात् धुला न हो।

अष्टगंध या रक्त चन्दन से उस वस्त्र पर इस यंत्र को लिखकर यंत्र के नीचे जिस व्यक्ति को बुलाना हो उसका नाम तथा मंत्र "ह्रीं आकर्षय आकर्षय ह्रीं" भी लिखें। जैसे—"किशोरीलाल ह्रीं आकर्षय आकर्षय ह्रीं" इस यंत्र को किसी ऐसे स्थान पर रखदें जहाँ से उसे कोई इधर उधर न करे और इस वस्त्र के ऊपर बैटरी से चलने वाली कोई घड़ी रख दें।

यदि व्यक्ति किसी बन्धन आदि में न हो तो शीघ्र ही वापस आ जायगा।

यंत्र सं० ४४

बीसा यंत्र का एक अन्य स्वरूप

यह पंचदल बीसा यंत्र भी सर्वसिद्धि दायक है, इसमें अंक संख्या ५ से ९ तक प्रयुक्त होते हैं। यंत्र सं० ३९

इस यंत्र में पंचाक्षर मंत्र को भी समावेशित किया जाता है जो शंकर जी का सिद्ध मंत्र है। यंत्र सं० ४०

सर्वश्रेष्ठ नवार्ण संपुटित बीसा यंत्र के दो स्वरूप

यंत्र सं० ४१ व ४५ देखें।

बीसा यंत्र के दो और स्वरूप

देखें—यंत्र सं० ४२ तथा यंत्र सं ४३

नेत्रोपनिषद

आँखों के रोगों की शान्ति तथा आँखों की ज्योति में वृद्धिकारी निम्न अथर्ववेदोक्त नेत्रोपनिषद प्रभावकारी है।

इस पाठ की आठ प्रतियाँ हाथ से लिखकर आठ विद्वानो में वितरित करने से मंत्र सिद्ध होता है, अतः ऐसा करने के उपरान्त नित्य, नियमित रूप से इसका पाठ करना चाहिए—

ॐ श्री गणेशाय नमः ।। अथातश्चाक्षुषीं पठित सिद्धां चक्षुरोगहरां व्याख्यास्यामः ।। यथाचक्षुरोगाः सर्वतोनश्यंति चक्षुषो दीप्तिर्भवति तस्याह चाक्षुषी विद्यायाः अहिर्बुध्न्य ऋषिर्गायत्री छंदः श्रीसूर्योदेवता चक्षुरोग निवृत्तयेजपे विनियोगः ओ३म् चक्षुष् २ चक्षुषतेजः स्थिरोभव मां पाहि २ त्वरितं चक्षुरोगान् शमय २ ममजातरूपं तेजोदर्शय २ यथाहं अन्धोनस्याम् तथा कल्याणं कुरु २ येन पूर्वजन्मोपार्जितानि चक्षुः

प्रतिरोधक दुष्कृतानि तानि सर्वाणि निर्मूलय २ ओं नमश्चक्षुष्ते जोदात्रे दिव्यभास्कराय ।। ओंनमः करुणा करायामृताय ओंनमः श्री सूर्य्याय ओं नमो भगवतेसूर्यायाक्षितेजसे नमः ओं खेचराय नमः ओंमहते नमः ओंतपते नमः रजसे असतोमां सद्गमय तमसोमां ज्योतिर्गमय मृत्योर्माम-मृतंगमय उष्णोभगवान् शुचिरूपः हंसो भगवान् शुचिरप्रतिरूपः यद्रूपांचाक्षुष्मतीं विद्यांब्राह्मणोनित्यमधीते न तस्याक्षिरोगोभवति न तस्य कुलेन्धो भवति ।

अष्टौब्राह्मणान् ग्राहयित्वा विद्यासिद्धिंर्भवति ओं विश्वरूपं घृणिते जात वेदसे हिरमण्यं पुरुषं ज्योतिरूपं तं सहस्त्ररश्मि शतधा वर्त्तमानः प्राणः प्रजानामुदयस्येषः सूर्यः ओं नमो भगवते आदित्याय अहोवाहिन्यहोवाहिनोस्वाहा ।।

कतिपय वाममार्गी क्षुद्र साधनायें

बगलामुखी स्वप्न साधना

शनिवार या मंगलवार को हल्दी आदि पीले द्रव्यों से बगलामुखी का पूजन कर निम्नमंत्र का १०८ जप करे। रात्रि में स्वप्न द्वारा शुभाशुभ फल का दर्शन होगा—

"ॐ ह्लैं ह्लूं वाग्वादिनि सत्यं सत्यं ब्रूहि वद वद बगलामुखि ह्लैं ह्लूं नमः स्वाहा"

गृहगोधिका साधन

घरों में पायी जाने वाली चिड़िया (चेटक या गृहगोधिका) की साधना कर भूत-भविष्य की घटनाओं का ज्ञान होता है।

केश खोलकर चिता की अग्नि में बगलामुखी का पूजन कर और १००८ बार निम्न मंत्र का एकाग्रता पूर्वक जप करें—

'ॐ नमोबगले ह्लीं स्वाहा'

इसके बाद गृहगोधा (चिड़िया) को पकड़कर उसका पूजन करे और पुनः १००८ बार उपरोक्त मंत्र जप करे। निरन्तर कुछ दिनों ऐसा करने से उसे चिड़िया की भाषा का ज्ञान हो जायगा और चिड़िया उसे भूत भविष्य की बातें बता दिया करेगी।

स्त्री वशीकरण काजल

काले वर्ण की किसी वेश्या के घर से (जब उसके यहां आग जली हो) आग मांग लाये। इस आग से ठीक आधी रात के समय निम्न मंत्र का १०८ जप करते हुए काजल तैयार करे। इस काजल को आँखों में लगाने से वशीकरण होगा (देखने वाली स्त्री का)।

"ॐ बगलामुखि सर्वस्त्री हृदयं मम वश्यं कुरु ऐं ह्लीं स्वाहा"

(१)

नीं नीं नीं नीं

शत्रु का नाम

नीं नीं नीं

(२)

६	१	८
७	५	३
२	९	४

(३)

७	२	९
८	६	४
३	१०	५

(४)

८	३	१०
९	७	५
४	११	६

(५)

९	४	११
१०	८	६
५	१२	७

(६)

१०	५	१२
११	९	७
६	१३	८

(७)

११	६	१३
१२	१०	८
७	१४	९

(८)

८	९	३
२	७	११
१०	४	६

(९)

१२	७	१४
१३	११	९
८	१५	१०

(१०)

१३	८	१५
१४	१२	१०
९	१६	११

(११)

१४	९	१३
१५	१३	११
१०	१७	१२

(१२)

४९९२	४९९९	२	७
६	३	४९९६	४९९५
४९९८	४९९३	८	१
४	५	४९९४	४९९७

(१३)

१	८	२	७
६	३	५	४
७	२	८	१
४	५	३	६

(१४)

९२	९९	२	७
६	३	९६	९५
९८	९३	८	१
४	५	९४	९७

(१५)

१४२	१४९	२	७
६	३	१४६	१४५
१४८	१४३	८	१
४	५	१४४	१४७

(१६)

९	१६	५	४
७	२	११	१४
१२	१३	८	१
६	३	१०	१५

(१७)

९	१६	२	७
६	३	१३	१२
१५.	१०	८	१
४	५	११	१४

(१८)

८	१	३४	१९
३०	३३	४	५
२	७	२८	३५
३२	३१	९	३

(१९)



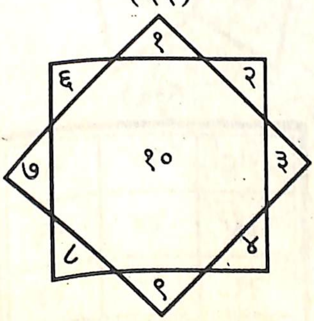
(२०)

६डा	१ऐं	८ वि
७यै	५ मुं	३क्लीं
२ह्रीं	९च्चे	४चा

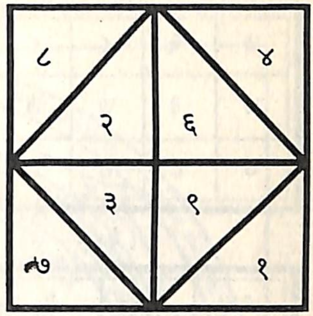
(२१)



(२२)



(२३)



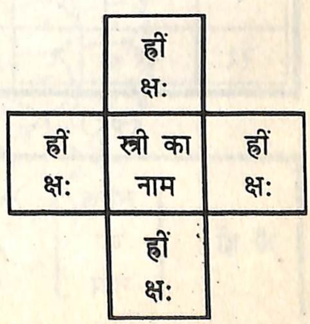
(२४)

२६३	२५८	२६५
२६४	२६२	२६०
२५९	२६६	२६१

(२५)



(२६)



(२७)

७	६	८	८	७
७	३	७	७	७
७	८	८	८	७

(२८)

६६	९३	२	८
७	३	९०	८९
९१	८६	९	१
४	६	८७	९८

(२९)

४	५	७४	७७
७९	७२	८	१
६	३	७६	९५
७२	३८	२	७

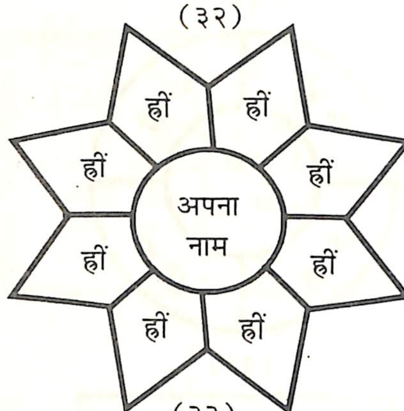
(३०)

८	१	२२	१९
१९	२२	४	५
२	७	१७	१४
२१	२०	९	३

(३१)

श्रीं ह्रीं	[व्यक्ति का नाम]	श्रीं ह्रीं

(३२)



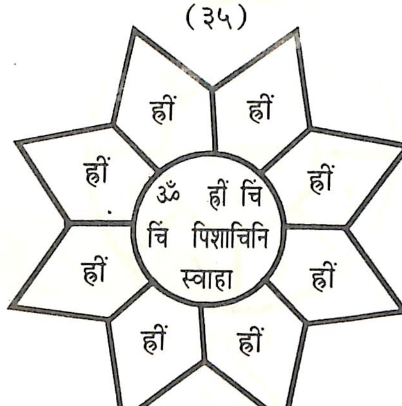
(३३)

श्रीं ह्रीं	[शत्रु का नाम]	ह्रीं श्रीं

(३४)

ॐ हूं सः (नाम) ॐ हूं सः

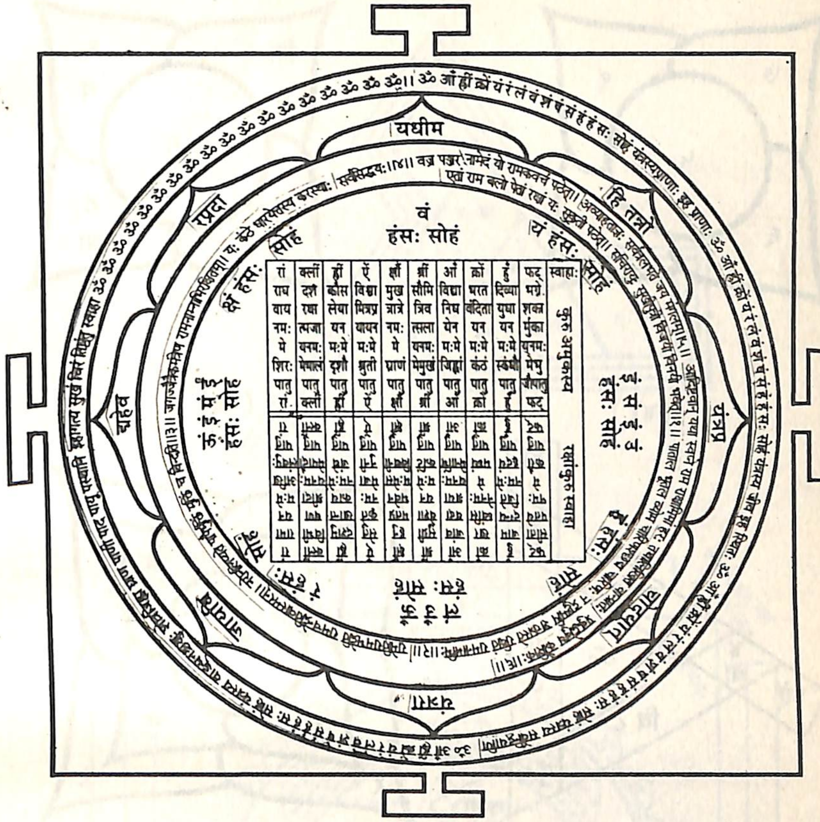
(३५)



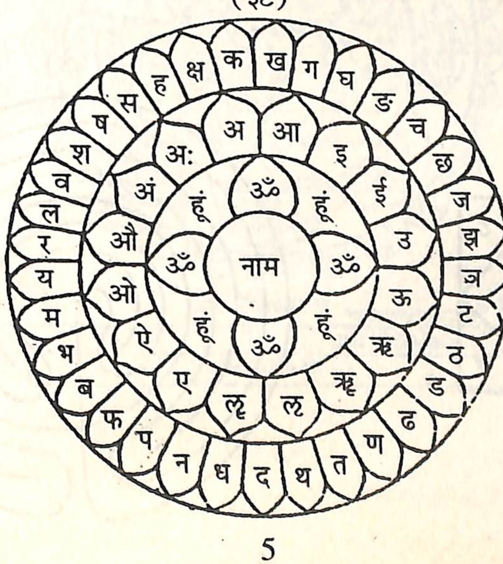
(३६)

२५	२०	२७
२६	२४	२२
२१	२८	२३

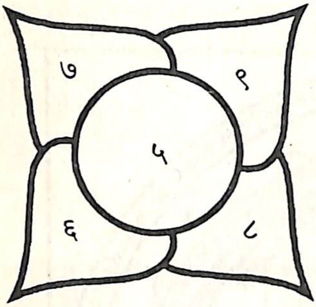
(३७)


यधीम
वं
हंसः सोहं
स्वाहाः

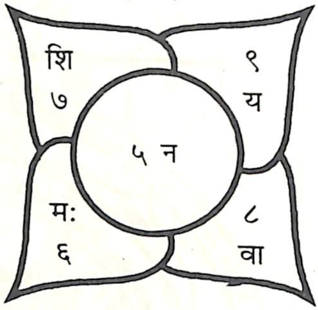
(३८)


नाम
ॐ
ॐ
ॐ
ॐ
हूं
हूं
हूं
हूं
अ
आ
इ
ई
उ
ऊ
ऋ
ॠ
ल
लृ
ए
ऐ
ओ
औ
अं
अः
क
ख
ग
घ
ङ
च
छ
ज
झ
ञ
ट
ठ
ड
ढ
ण
त
थ
द
ध
न
प
फ
ब
भ
म
य
र
ल
व
श
ष
स
ह
क्ष

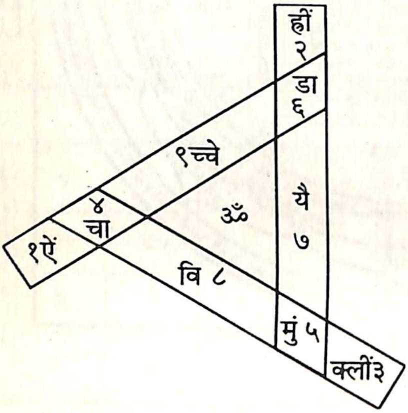
(३९)



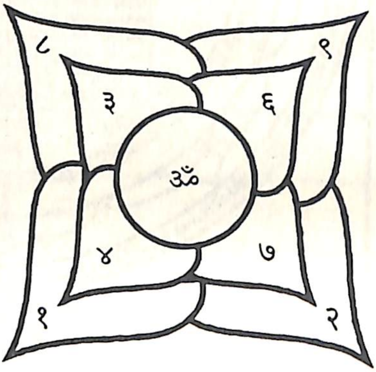
(४०)



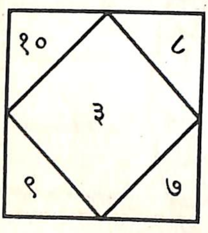
(४१)



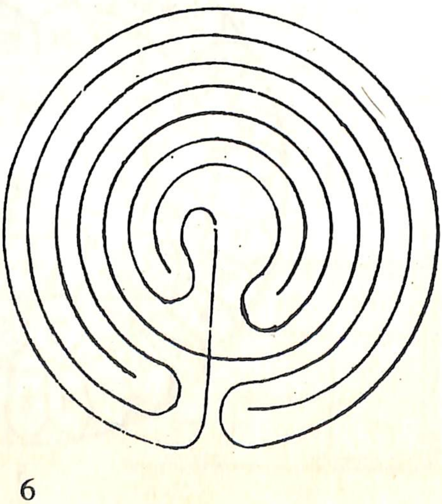
(४३)

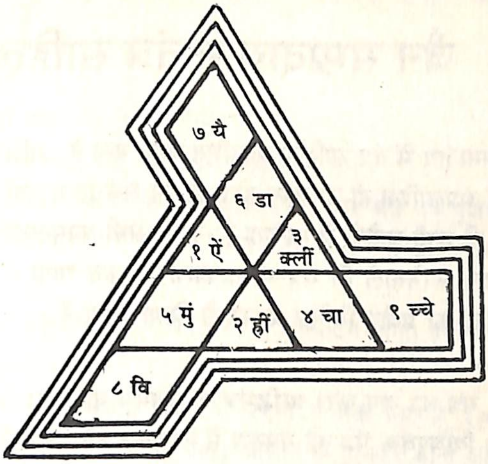


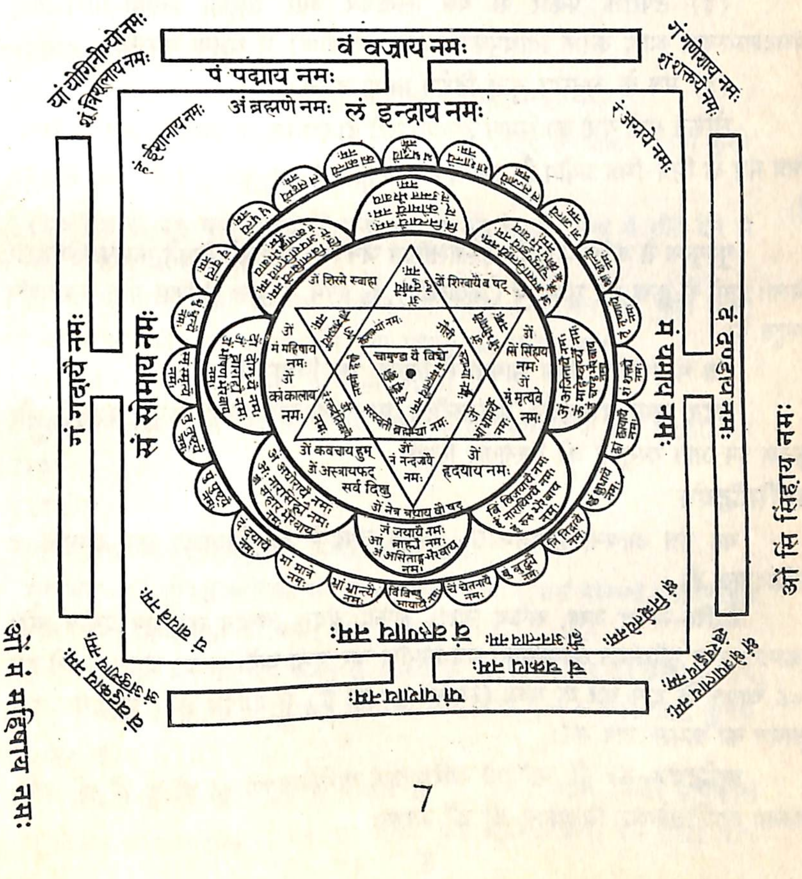
(४२)



(४४)




७ यै
६ डा
१ ऐं
३ क्लीं
५ मुं
२ ह्रीं
४ चा
९ च्चे
८ वि


यां योगिनीभ्यो नमः
शं त्रिशूलाय नमः
वं वज्राय नमः
पं पद्माय नमः
गं गणेशाय नमः
शं शक्त्यै नमः
अं ब्रह्मणे नमः
लं इन्द्राय नमः
ईं ईशानाय नमः
अं अग्नये नमः
गं गदायै नमः
सं सोमाय नमः
मं यमाय नमः
दं दण्डाय नमः
ओं सिं सिंहाय नमः
ओं मं महिषाय नमः
ओं शिरसे स्वाहा
ओं शिखायै वषट्
चामुण्डायै विच्चे
ओं कवचाय हुम्
ओं अस्त्राय फट्
ओं हृदयाय नमः

जैन सम्प्रदाय में तंत्र साहित्य

जैन सम्प्रदाय में तंत्र साहित्य प्रकाशित बहुत कम है, अधिकांश साहित्य प्राचीन हस्तलिपियों में अप्रकाशित ही उपलब्ध होता है, जो सर्वसुलभ नहीं है। यहाँ पर भगवान 'अरिहन्त' की ही सभी प्रयोगों में मान्यता है, वे ही सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाले तथा सिद्धि प्रदान करनेवाले हैं। मंत्र भी तत्कालीन प्राकृत भाषा में ही हैं।

इन मंत्रों का प्रयोग विभिन्न प्रकार से किया जाता है,

यथा—

(अ) मंत्र का जप कर। ऋद्धिमंत्र व मूलमंत्र का जप।

(आ) विधिपूर्वक मंत्र को यंत्ररूप में लिखकर और उसकी प्रतिष्ठा-प्राणप्रतिष्ठा, पंचदशसंस्कार करके यंत्र को उपासना स्थल पर रखकर यंत्र की नियमित पूजा करके।

(इ) उपरोक्त प्रकार से यंत्र लिखकर और उसकी प्रतिष्ठा-प्राणप्रतिष्ठा, पंचदशसंस्कार आदि करके विधिपूर्वक कवच (ताबीज) में धारण करके।

(ई) मंत्र के अनुसार कुछ विशेष क्रिया करके।

लेकिन सभी मंत्रों का समान उपयोग नहीं है। कामना या कार्य के अनुसार भिन्न-भिन्न मंत्र के भिन्न-भिन्न प्रयोग हैं। इस प्रकार जैनतंत्र में तंत्र-मंत्र-यंत्र तीन का समावेश है।

गुरुकृपा से कतिपय दुर्लभ हस्तलिखित जैन तंत्र ग्रंथों को देखने का मुझे अवसर मिला। इनमें से कुछ मेरे संग्रह में (प्रतिलिपि) हैं, इनमें से कुछ विशिष्ट मंत्रों का वर्णन प्रस्तुत है।

यंत्र भोजपत्र पर निम्न सामग्री से लिखने का विधान है

चंदन, अगर, रक्तचंदन, छालछरीला, बालछड़, नागरमोथा, कपूर, कस्तूरी और कुनरू इन आठ वस्तुओं को मिलाकर लिखें।

सर्वसिद्धियंत्र

यह यंत्र अत्यन्त प्रभावकारी, समस्त उपद्रवों का निवारण कर सम्पत्ति व सिद्धिदायक है।

विधि-सफेद वस्त्र, सफेद माला, सफेद चंदन, चन्दन का धूप प्रयोग करें। एकान्तवास व भूमिशयन आवश्यक। यंत्र निर्माण कर पूजा करें। सफेद चंदन में रंगे हुए १०८ चावल के दाने यंत्र के मध्य (जिसमें १४ ह्रीं हैं) में अर्पित करें। ऋद्धिमंत्र तथा मूलमंत्र का क्रमशः जप करें।

ऋद्धिमंत्र-ॐ ह्रीं अर्हंणमो अरिहन्ताणं णमोजिणाणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आऊसा अप्रतिचक्रेफट् विचक्राय क्रौं क्रौं स्वाहा।

मूलमंत्र–ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं श्रीं क्लीं क्रौं ॐ ह्रीं नमः।

यंत्र का पूजन, जपानुष्ठान व यंत्र धारण—तीनों में कोई एक या तीनों कर सकते हैं देखें—यंत्र सं० १/१।

कुमति निवारण-शत्रुबंध

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो नुहिजिणाणं।

मूलमंत्र–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं व्लूं नमः सकलार्थसिद्धिं नमः।

यंत्र निर्माण कर प्रतिष्ठा-प्राणप्रतिष्ठा, पंचदशसंस्कार कर यंत्र का पूजन करें।

(अ) उपरोक्त ऋद्धिमंत्र तथा मूलमंत्र का जप करने से कुमति का निवारणपूर्वक सुमति प्राप्त होगी।

(आ) शत्रुबंध—(पराजय एवं बन्धन) होगा, उच्चाटन होगा। इस प्रकार इस मंत्र के दो प्रयोग हैं।

विधि–डंडासन लगाकर काली माला से २१ दिन तक निरन्तर १०८ बार, पूर्वाभिमुख होकर जप करें। कालावस्त्र पहने, काला आसान हो, एकान्त होना आवश्यक। सफेद धूप व सफेद पुष्प का प्रयोग करें। सात दिन तक प्रतिदिन एक हजार आहुति नमक से हवन करें। यंत्र संख्या २/२।

शत्रु पराजय-सर्वजन वश

(अ) निम्न मंत्र का जप करने से, यंत्र निर्माण कर पूजन से,

(आ) अथवा विधिपूर्वक यंत्र निर्माणकर प्रतिष्ठा आदि करवाकर धारण करने से शत्रुपराजय होगा, शत्रु की नजर न लगेगी।

(इ) मंत्र से २१ बार चुल्लू में पानी भरकर मंत्र पढ़कर मुख में छींटे देने से सर्वजन वश में तथा मंगल होगा।

विधि–ऋद्धिमंत्र और मूलमंत्र ७ दिन तक नित्य १०८ बार जप करें। माला कमलगट्टे या कमल की, धूप दशांग और पुष्प गुलाब का प्रयोग करें।

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो परमोहिजिणाणं।

मूलमंत्र–ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं क्लीं सिद्धभ्यो सर्वसिद्धि दायकेभ्यो नमः स्वाहा। यंत्र संख्या ३/३।

नेत्ररोग शान्ति

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो अणंतोहि जिणाणं।

मूलमंत्र–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं क्रौं सर्वसंकट निवारणेभ्यः सुपार्श्व यक्षेभ्यो नमः स्वाहा।

(अ) यंत्र निर्माणकर विधिवत् धारण करने से।

(आ) अथवा मंत्र का जप करने से आखों के समस्त विकार दूर होंगे। ७ दिन तक नित्य १०८ बार ऋद्धिमंत्र व मूलमंत्र का जप करें। पीले पुष्प व पीले वस्त्र, कुनरू का धूप प्रयोग करें।

(इ) जिस व्यक्ति के आँखों में विकार हो पूरे दिन उपवास रक्खें। सायंकाल उपरोक्त ऋद्धिमंत्र और मूलमंत्र से २१ बार मंत्रित कर बतासा खावे। यंत्र संख्या ४/५

विद्यालाभ-परीक्षा में सफलता

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो कुद्धवुद्धिणं।

मूलमंत्र–ॐ ह्रीं श्रीं श्रौं श्रूं हं सं घं घं घं ठः ठः सरस्वती भगवती विद्याप्रसादं कुरु कुरु स्वाहा।

(अ) १४ दिनों तक निरन्तर उपरोक्त ऋद्धिमंत्र व मूलमंत्र का जप करें, न्यूनतम १०८ बार अथवा १००० बार। पूजन में लाल वस्त्र, लालपुष्प, कुनरू का धूप प्रयोग करें।

(आ) विधिपूर्वक यंत्र निर्माण कर प्रतिष्ठा आदि करवाकर धारण करें। यंत्र संख्या ५/६।

विषभय शान्ति

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो बीज बुद्धिणं।

मूलमंत्र–ॐ ह्रीं हं सौं श्रां श्रीं क्रौं क्लीं सर्वदुरित संकट क्षुद्रोपद्रव कष्ट निवारणं कुरु कुरु स्वाहा।

(अ) उपरोक्त ऋद्धिमंत्र व मूलमंत्र का जप करने से सर्पविष, समस्त स्थावर व जंगम विष से रक्षा एवं शान्ति होगी। २१ दिन तक नित्य १०८ बार जप। लोहबान की धूप प्रयोग करें।

(आ) यंत्र निर्माण कर प्रतिष्ठा आदि करके गले में बाँधने से भी यही प्रभाव होगा।

(इ) विषाक्त स्थानपर (१०८ कंकरी पत्थर की) १०८ बार मंत्र कर (उपरोक्त मंत्र से) परखकर डाल दें। यंत्र संख्या ६/७।

कुत्ते का विषभय शान्ति

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो सयंबुद्धिणं जनमस्यां ध्यानतो जपतो वा मनोत्कर्ष धृता वा वादिनो यानार्क्षाना वा भवेयु प्रशान्ताश्चाधेपते कादिबुद्धिन्मनोस्तात्।

मूलमंत्र–ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः श्रीं श्रीं श्रूं श्रः सिद्धि बुद्ध कृतार्थे भव भव वषट सम्पूर्ण स्वाहा।

(अ) उपरोक्त मंत्रों का जप करने से।

(आ) उपरोक्त यंत्र निर्माणकर प्रतिष्ठादि करके पूजन करने से।

(इ) अथवा उपरोक्त यंत्र प्रतिष्ठादि करके धारण करने से कुत्ते का विषभय नहीं होगा। कुत्ते के काटने का विष प्रभावी नहीं होगा।

(ई) अथवा नमक की ७ कंकर उपरोक्त मंत्रों से १०८ बार मंत्र कर चाट लें। यंत्र संख्या ७/१०।

आकर्षण

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमोपत्तये बुद्धिणं।

मूलमंत्र–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं श्रां श्रीं कुमति निवारिण्यै महामायायै नमः स्वाहा।

(अ) उपरोक्त मंत्रों का जप करने से (जिसका नाम लेकर जप किया जाय उसका आकर्षण हो) जिसे चाहें बुला सकते हैं। यंत्र निर्माणकर यंत्र का पूजन करें। स्नान आदि द्वारा शुद्ध होकर, शुद्ध सफेद वस्त्र पहन कर, सफेद माला से जप करें। धूप, दीप, नैवेद्य

व फल अर्पित करें। नित्य १०८ बार जप करें। यंत्र संख्या ८/११।

चोरी का भय न हो

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो उर्जमदिणं।

मूलमंत्र–ॐ ह्रीं श्रीं हं स: सौं रौं ह्रां ह्रीं ह्रां ह्रीं ह्रौं ह्र: मोहनि सर्ववश्यं कुरु कुरु स्वाहा।

प्रयोग–

(अ) विधिपूर्वक यंत्र निर्माणकर प्रतिष्ठादि करके धारण करने से चोरी का भय, रास्ते में लूटपाट का भय नहीं होगा।

(आ) यंत्र निर्माणकर नियमित पूजन और उपरोक्त मंत्रों का जप करने से भी उपरोक्त प्रभाव होगा।

(इ) उपरोक्त मंत्रों से ७ पत्थर (कंकर) १०८ बार मंत्रित करके अपने घर या दूकान आदि के चारों ओर घुमाकर घर या दुकान में रख देने से चोरी होने का डर नहीं होगा। यंत्र संख्या ९/१३।

धनप्राप्ति सम्पन्नता-आँधी से रक्षा

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो विउबुद्धीणं।

मूलमंत्र–ॐ नमो भगवती महामानसी स्वाहा:।

प्रयोग–

(अ) उपरोक्त मंत्रों का विधिवत् जप करने से, विधिवत् यंत्र बनाकर प्रतिष्ठादि करके नियमित पूजा करने से, अथवा यंत्र धारण करने से धन की प्राप्ति व सम्पन्नता होती है। आँधी से भी भय नहीं होता।

(आ) आँधी आ रही हो तो ७ कंकर उपरोक्त मंत्रों से २१ बार मंत्रितकर चारों दिशाओं में फेंक देने से आँधी टल जायगी। यंत्र संख्या १०/१४।

राजद्वार न्यायालय में जय-बंदी छूट जाय

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो चतुदश पुव्वीणं।

मूलमंत्र–ॐ नमो सुमंगला सुसीमा नाम देवी सर्व समीहितार्थं सर्ववज्र श्रृंखला कुरु कुरु स्वाहा।

प्रयोग–

(अ) विधिवत् यंत्र निर्माण कर यंत्र का पूजन करने से,

(आ) यंत्र धारण करने से,

(इ) उपरोक्त मंत्रों को १०८ बार जपकर राजदरबार में जाने से,

(ई) उपरोक्त मंत्रों का जप करने से—शत्रु झूठा समझा जायगा, राजद्वार व न्यायालय में विजय, शत्रु पराजय, कारागार आदि बंधनों से मुक्ति होगी। यंत्र संख्या ११/१६।

उदरपीड़ा शान्ति

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो अट्ठंग महाणिमित्त कुशलाणं।

मूलमंत्र–ॐ णमोणमिउण अट्टे मट्टे क्षुद्रविघट्टे क्षुद्रपीड जठरपीडां भंजय भंजय सर्व पीड़ा निवारय निवारय सर्वरोग निवारणं कुरु कुरु स्वाहा।

प्रयोग–

(अ) इस यंत्र का निर्माणकर पूजन करने से,

(आ) यंत्र धारण करने से,

(इ) उपरोक्त मंत्रों का जप करने से पेट के समस्त रोग, पेट की पीड़ा शान्त होगी।

अछूता पानी (जिसे किसी ने स्पर्श न किया हो) उपरोक्त मंत्रों से २१ बार मंत्रित कर पीने से भी पेट की पीड़ा समस्त रोग शान्त होंगे। यंत्र संख्या १२/१७।

सन्तान सुख-सन्तान प्राप्ति

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो चारणाणं।

मूलमंत्र–ॐ श्रां श्रीं श्रूं श्रः ठः ठः स्वाहा।

प्रयोग–

(अ) उपरोक्त मंत्रों के जप करने से,

(आ) यंत्र निर्माणकर यंत्र पूजन से,

(इ) यंत्र धारण करने से सन्तान की प्राप्ति व सन्तान सुख प्राप्त होगा। साथ ही राजद्वार में जय, सुख, सौभाग्य तथा धन-सम्पत्ति में भी वृद्धि होगी। यंत्र संख्या १३/२०।

सर्वजन वशीकरण-सर्वजन प्रिय

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो यंध समणाणं।

मूलमंत्र–ॐ नमो भगवते शत्रुभय निवारणाय नमः। ॐ नमः श्री माणिभद्र जयविजय अपराजिते सर्व सौभाग्यं सर्वसौख्यं कुरु कुरु स्वाहा।

प्रयोग–

(अ) उपरोक्त मंत्रों का नित्यप्रति १०८ जप करने से,

(आ) यंत्र निर्माणकर प्रातः, मध्याह्न, सायं त्रिकाल यंत्र का पूजन करने से,

(इ) अथवा यंत्र धारण करने से सर्वजन प्रिय हो, सर्वजन वशीभूत हों। यंत्र संख्या १४/२१।

भूतप्रेतादि बाधा शान्ति

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो आकाश गामिणं।

मूलमंत्र–ॐ नमः श्री वीरेहि, जृंभय जृंभय मोहय मोहय स्थंभय स्थंभय अवधारणं कुरु कुरु स्वाहा।

प्रयोग–

(अ) यंत्र निर्माणकर प्रतिष्ठादि करके गले में धारण करने से,

(आ) उपरोक्त मंत्र पढ़कर १०८ बार झाड़ देने से (मोरपंख से), भूत-प्रेत, डाकिनी, शाकिनी आदि जिन्हें लगा हो, ठीक होगा, तथा भूत-प्रेतादि लगने का भय नहीं होगा। यंत्र संख्या १५/२२।

शत्रुनाश

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमोवभ्य तवाणं।

मूलमंत्र–ॐ नमो चक्रेश्वरी देवी चक्रधारिणी चक्रेण अनुकूलं साधय साधय शत्रुं उन्मूलय उन्मूलय स्वाहा।

प्रयोग–

उपरोक्त मंत्रों के जप से तथा यंत्र धारण करने से, यंत्र पूजन से शत्रुओं का नाश होगा। यंत्र संख्या १६/२७।

शासक वशीकरण-शासन में प्रतिष्ठा प्राप्ति

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो घोर गुण पराक्रमाणं।

मूलमंत्र–ॐ उव संगहरं या सं या सम्वदामि कम्म घण मुक्कं विसहरविसनिन्नासं मंगल कल्लाण आवासं ॐ ह्रीं नम: स्वाहा।

प्रयोग–

उपरोक्त मंत्रों के जप से अथवा उपरोक्त यंत्र धारण करने से राजा (शासक) वश में हो, राजद्वार में प्रतिष्ठा मिले। यंत्र संख्या १७/३१।

उदर रोग-संग्रहणी नाशक

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो घोरगुणवंभयारीणं।

मूलमंत्र–ॐ नमो ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्र: सर्वदोष निवारणं सर्व सिद्धि ऋद्धि वांछा कुरु कुरु स्वाहा।

प्रयोग–

(अ) उपरोक्त मंत्रों के जप तथा यंत्र निर्माणकर यंत्र की पूजा करने से,

(आ) अथवा यंत्र को धारण करने से उदर पीड़ा संग्रहणी आदि ठीक हो। कुवाँरी कन्या के द्वारा काते गये सूत से यंत्र को बाँधकर तथा उपरोक्त मंत्रों से १०८ बार मंत्रित कर कमर में बाँधे। यंत्र १८/३२।

गर्भपात न हो

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो खेलोसहिपत्ताणं।

मूलमंत्र–ॐ नमो ह्रीं श्रीं क्लीं रौं सौं पद्मावत्यै देव्यै नमोनम: स्वाहा।

प्रयोग–

उपरोक्त मंत्र का जप करने, यंत्र निर्माणकर यंत्र का पूजन करने से गर्भपात का भय नहीं होता। जिन महिलाओं को गर्भपात होता है।

अथवा यंत्र निर्माणकर प्रतिष्ठादि करके उपरोक्त मंत्रों से २१ बार मंत्रित कर गूगल की धूप दें और यंत्र को कमर में बाँधे। यंत्र संख्या १९/३४।

ज्वर शान्ति

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो सव्वोसहिपत्ताणं।

मूलमंत्र–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लूं ध्यानसिद्ध परमयोगीश्वराय नमो नम: स्वाहा।

प्रयोग–

(अ) यंत्र निर्माण कर यंत्र का पूजन,

(आ) उपरोक्त मंत्रों का जप,

(इ) अथवा यंत्र की प्रतिष्ठादि करके कुवाँरी कन्या के हाथ से काता गया सूत से यंत्र को गले में बाँधने से,

(ई) अथवा उपरोक्त मंत्रों से २१ बार रोगी को झाड़ देने से एकान्तरा आदि समस्त ज्वर शान्त होगा। यंत्र संख्या २०/३३।

दुर्भिक्ष, महामारी, राजभय से रक्षा

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो जघ्ग्रो सहिपत्ताणं।

मूलमंत्र–ॐ नमो जये विजये अपराजिते महालक्ष्मी अमृत वर्षिणी अमृत श्रावणी अमृत भव भव वषट सुधा स्वाहा।

प्रयोग–

उपरोक्त मंत्रों के जप से, यंत्र निर्माण कर यंत्र का पूजन, प्रतिष्ठादि करके यंत्र धारण करने से दुभिक्ष, महामारी, (प्लेग, हैजा आदि) तथा राजभय से रक्षा होगी। यंत्र २१/३५।

इच्छापूर्ण, राजद्वार में जय, सर्पविष निवारण

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमोक्षीरसवाणं।

मूलमंत्र–ॐ नमो श्रां श्रीं श्रूं श्रः जलदेवी कमलपद्म ह्रद निवासिनी पद्मोपरि संस्थिते सिद्धिं देहि मनोवांछित कुरु कुरु स्वाहा।

प्रयोग–

यह मंत्र बहु उद्देशीय है। यंत्र निर्माण कर यंत्र का पूजन करने से, अथवा उपरोक्त मंत्रों के जप से, अथवा प्रतिष्ठापित यंत्र धारण करने से इच्छापूर्ण व राजद्वार में विजय प्राप्त होती है।

उपरोक्त मंत्रों से २१ बार झाड़ देने से साँप का काटा व्यक्ति भी ठीक होगा, विष उतर जायगा। यंत्र २२/४१।

महाभयानक भय मिटै, सर्वरोग शान्ति

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो अरकीण महाणसाणं।

मूलमंत्र–ॐ नमो भगवति क्षुद्रोपद्रव शान्तिकारिणी रोग कष्ट ज्वर उपशमन शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।

प्रयोग–

उपरोक्त मंत्रों के जप करने से, अथवा यंत्र पूजन करने से, अथवा प्रतिष्ठित यंत्र धारण करने से भयानक से भयानक भय, कष्ट व रोग की शान्ति होगी। यंत्र संख्या २३/४५।

बंधन मोचन-राजभय से रक्षा

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो सिद्धाय दयाणं।

मूलमंत्र–ॐ नमो ह्रां श्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः ठः ठः ठः जः जः श्रां श्रीं श्रूं श्रः क्षयो स्वाहा।

प्रयोग–

उपरोक्त मंत्रों को नित्य १०८ बार जपें और यंत्र निर्माणकर प्रतिष्ठादि करके प्रातः, मध्याह्न व सायं नित्य तीन बार यंत्र का पूजन करने से राजद्वार से भय नहीं होगा। कैदी कैद से शीघ्र छूट जायगा। यंत्र संख्या २४/४६।

युद्ध में जय-शस्त्रभय से रक्षा

ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो वर्धमाणाणं।

मूलमंत्र–ॐ नमो ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः यः क्षः श्रीं फट् फट् स्वाहा।

प्रयोग–

उपरोक्त मंत्रों के जप से, अथवा यंत्र निर्माण कर प्रतिष्ठादि कर पूजा करने से, अथवा यंत्र निर्माण कर प्रतिष्ठा करके १०८ बार मंत्रित कर धारण करने से युद्ध या मुकदमे आदि में विजय व शत्रु वश में होगा।

अपने को शस्त्र से भय नहीं होगा। घाव आदि नहीं होगा।

रक्षाकर्मियों के निमित्त यह यंत्र उपयोगी है। यंत्र संख्या २५/४७।

कार्यसिद्धि-वशीकरण

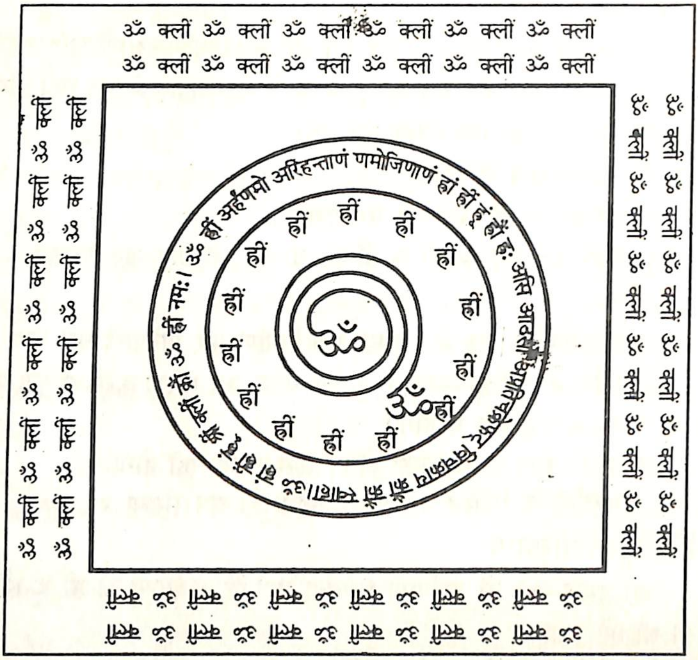
ऋद्धिमंत्र–ॐ ह्रीं अर्हंणमो भयवंदो महावीर वर्द्धमाण ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असि आउसा ध्रौं श्रौं स्वाहा।

मूलमंत्र–ॐ नमो वंभचेर धारिणस्स अट्ठारसहस्त्र सीलांग रथ धारिभ्यो नमः स्वाहा।

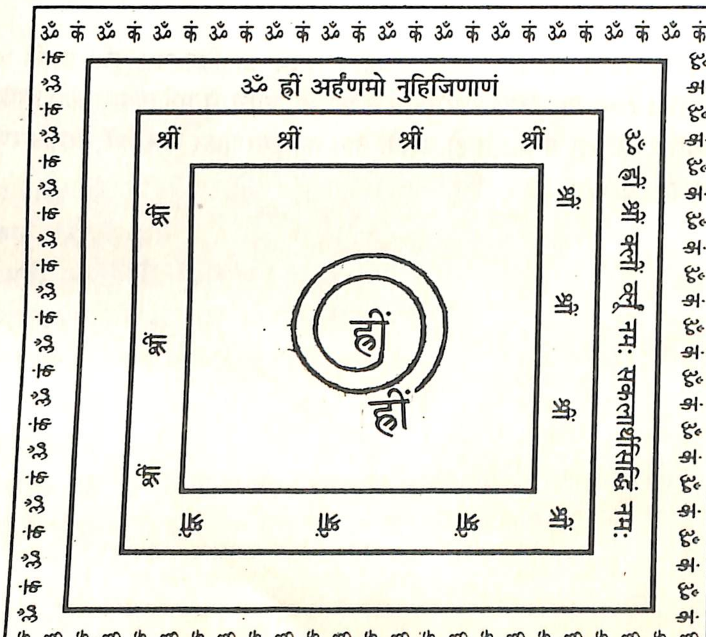
प्रयोग–

इस यंत्र का निर्माण करके प्रतिष्ठादि करके प्रतिदिन यंत्र पूजा करके ४९ दिन तक नियमित १०८ बार नित्य उपरोक्त मंत्रों का जप करने से मनोवांछित कार्यसिद्धि होगा। जिस व्यक्ति को वश में करना हो उसके नाम का स्मरणकर जप करें, वशीकरण होगा। यंत्र संख्या २६/४८।

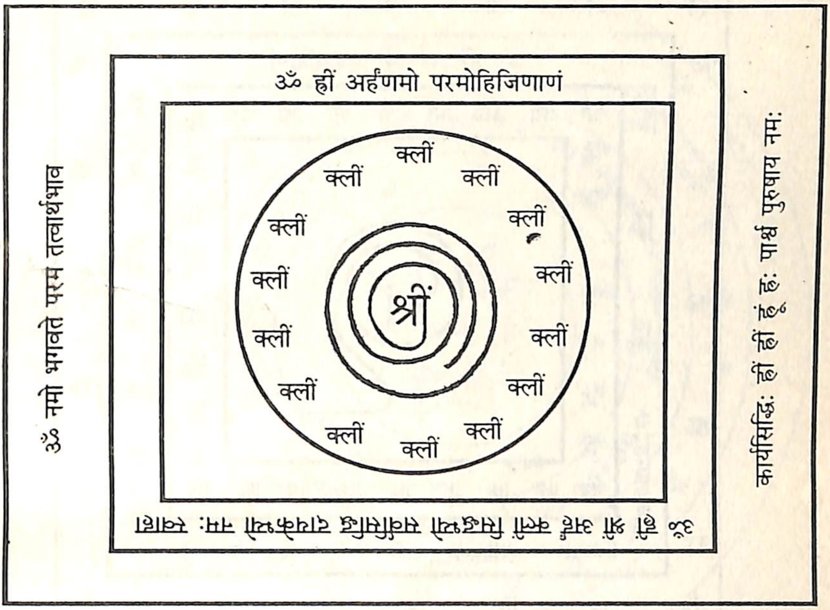
(१/१)



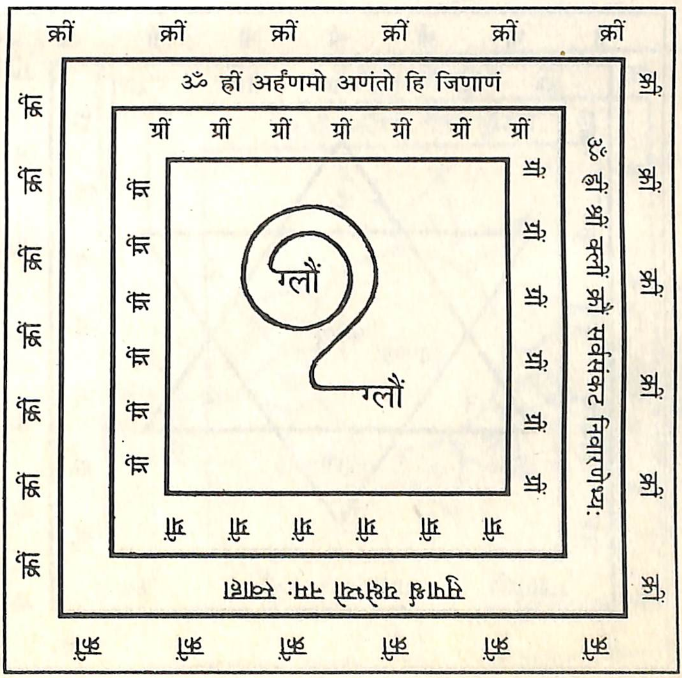
(२/२)



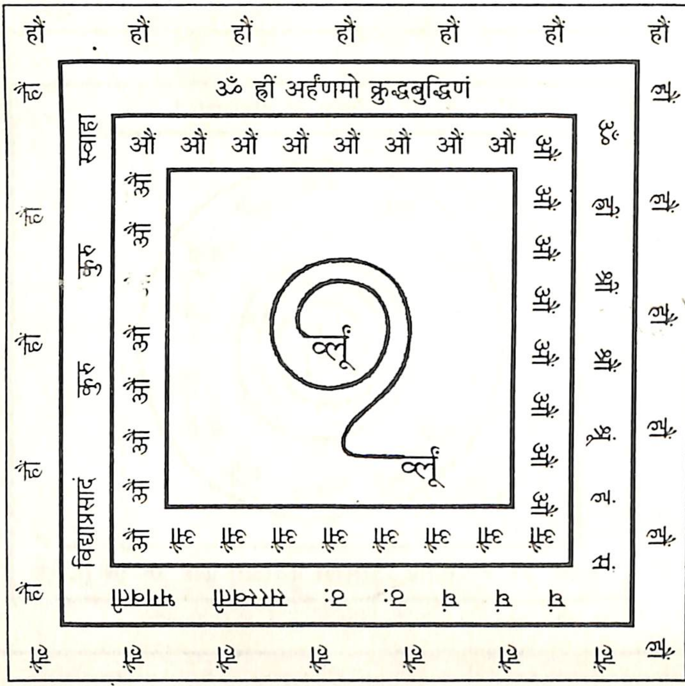
(३/३)


ॐ ह्रीं अर्हंणमो परमोहिजिणाणं
ॐ नमो भगवते परम तत्वार्थभाव
कार्यसिद्धि: ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्र: पार्श्व पुरुषाय नम:
क्लीं
श्रीं

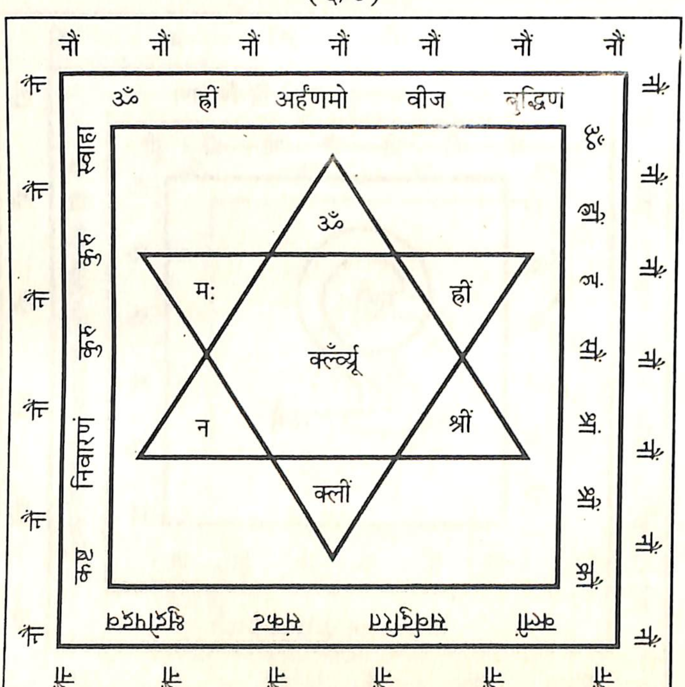
(४/५)


ॐ ह्रीं अर्हंणमो अणंतो हि जिणाणं
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं क्रौं सर्वसंकट निवारणेभ्य:
क्रीं
ग्रीं
ग्लौं

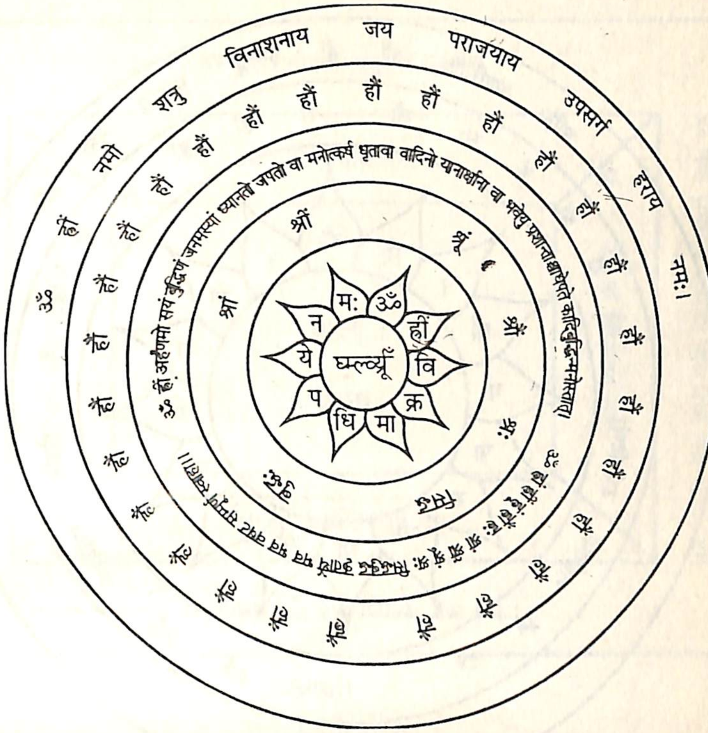
(५/६)


हौं हौं हौं हौं हौं हौं हौं
ॐ ह्रीं अर्हंणमो क्रुद्धबुद्धिणं
औं औं औं औं औं औं औं औं
व्लूं
व्लूं
विद्याप्रसादं कुरु कुरु स्वाहा

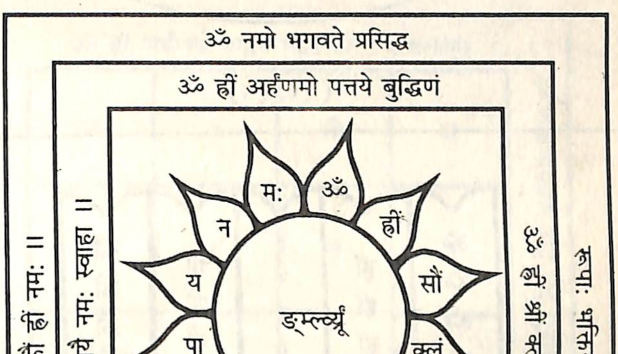
(६/७)


नौं नौं नौं नौं नौं नौं नौं
ॐ ह्रीं अर्हंणमो वीज बुद्धिण
ॐ
ह्रीं
म:
श्रीं
न
क्लीं
कष्ट निवारणं कुरु कुरु स्वाहा

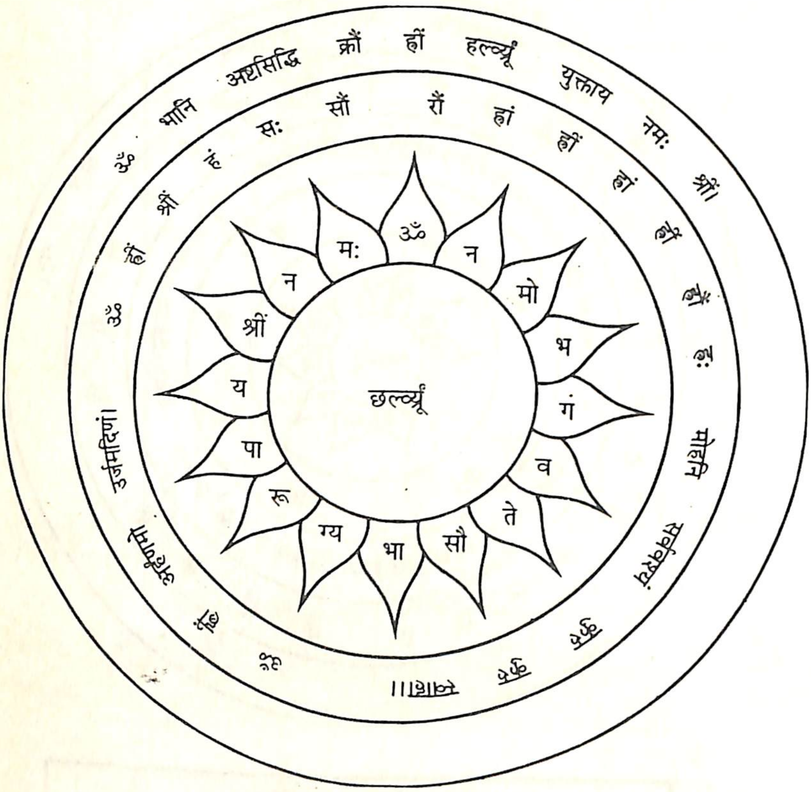
(७/१०)


ॐ ह्रीं नमो शत्रु विनाशनाय जय पराजयाय उपसर्ग हराय नमः।
घ्म्ल्व्र्यूं
ॐ
ह्रीं
वि
क्र
मा
धि
प
ये
न
मः

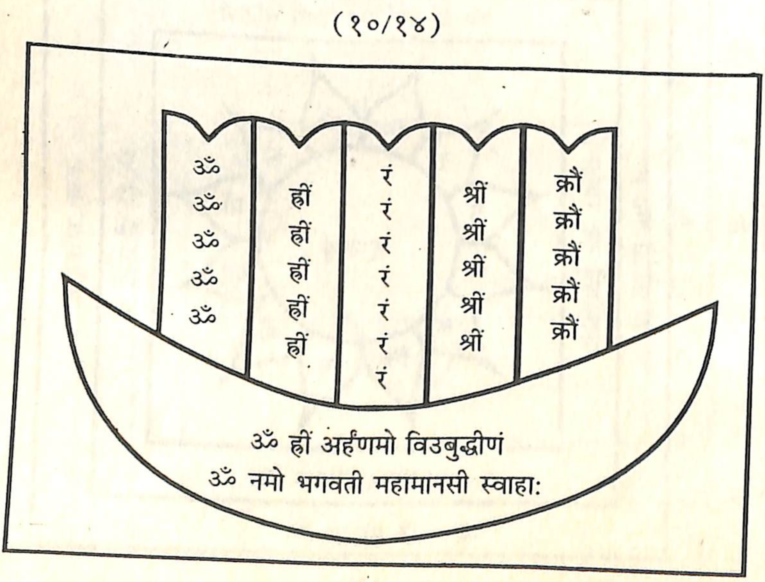
(८/११)


ॐ नमो भगवते प्रसिद्ध
ॐ ह्रीं अर्हंणमो पत्तये बुद्धिणं
रूपाः भक्तियुक्त
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं श्रां
महामायायै नमः स्वाहा ।।
ह्रौं क्रौं ह्रौं ह्रां नमः ।।
ङ्म्ल्व्र्यूं
ॐ
ह्रीं
सौं
क्लूं
श्रीं
भ
क्ति
रू
पा
य
न
मः

(९/१३)


छल्व्र्यूं
ॐ
न
मो
भ
गं
व
ते
सौ
भा
ग्य
रू
पा
य
श्रीं
न
मः

(१०/१४)


ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं
रं रं रं रं रं रं रं
श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं
क्रौं क्रौं क्रौं क्रौं क्रौं
ॐ ह्रीं अर्हंणमो विउबुद्धीणं
ॐ नमो भगवती महामानसी स्वाहा:

(११/१६)

ॐ ह्रीं अर्हंणमो चतुदश पुव्वीणं

ॐ नमो सुमंगला सुसीमा नाम देवी सर्व समीहितार्थ वज्र श्रृंखलां कुरु कुरु स्वाहा ॥

ॐ ह्रीं जयाय नमः

ॐ ह्रीं विजयाय नमः

ॐ ह्रीं अपराजिताय नमः

ॐ ग्लौं मणिभद्राय नमः

म्ल्व्र्यूं

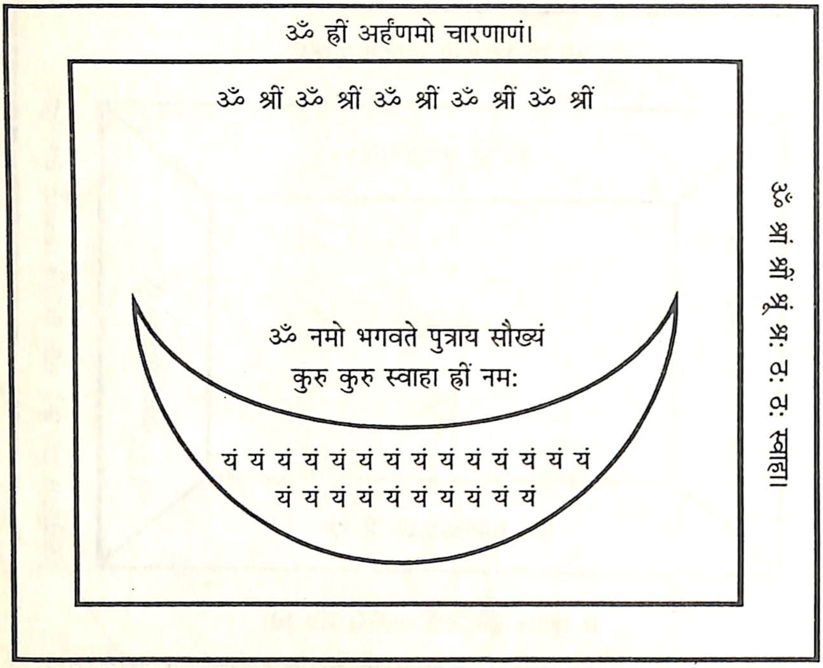
(१२/१७)

ॐ ह्रीं अर्हंणमो अट्ठंग महाणिमित्त कुशलाणं।

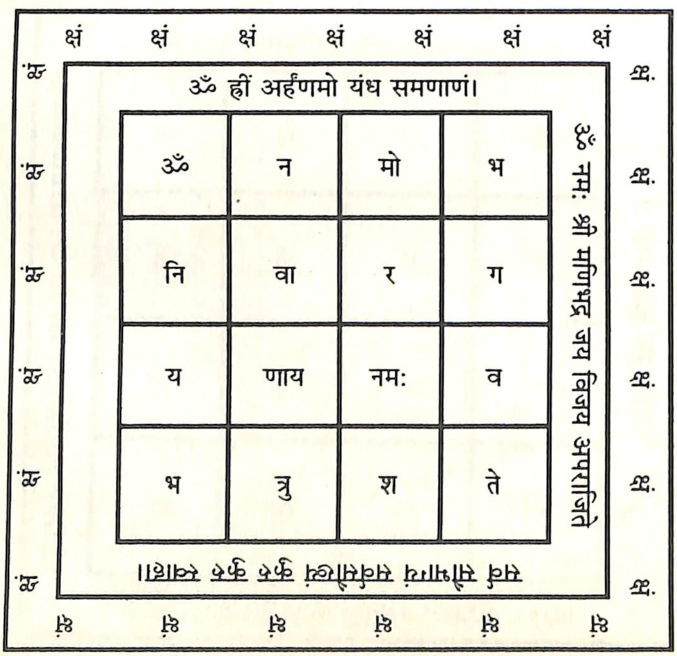
ॐ णमोणमिऊण अट्टे मट्टे क्षुद्रविघट्टे क्षुद्रपीड जठरपीडां भंजय भंजय सर्व पीडां निवारय निवारय सर्वरोग निवारणं कुरु कुरु स्वाहा ॥

ॐ	न	मो	अ
जि	त	श	त्रु
प	रा	ज	य
कुरु	कुरु	स्वा	हाः

(१३/२०)

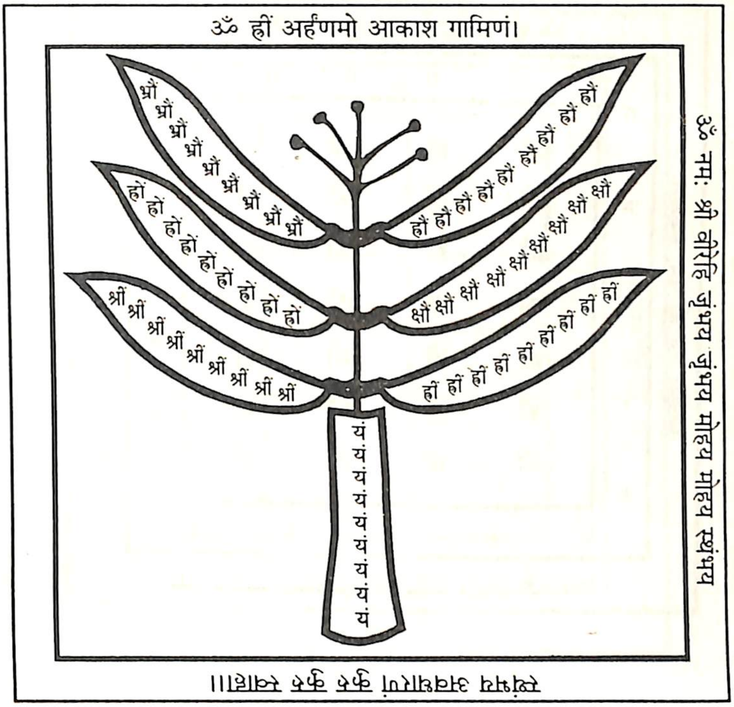


(१४/२१)

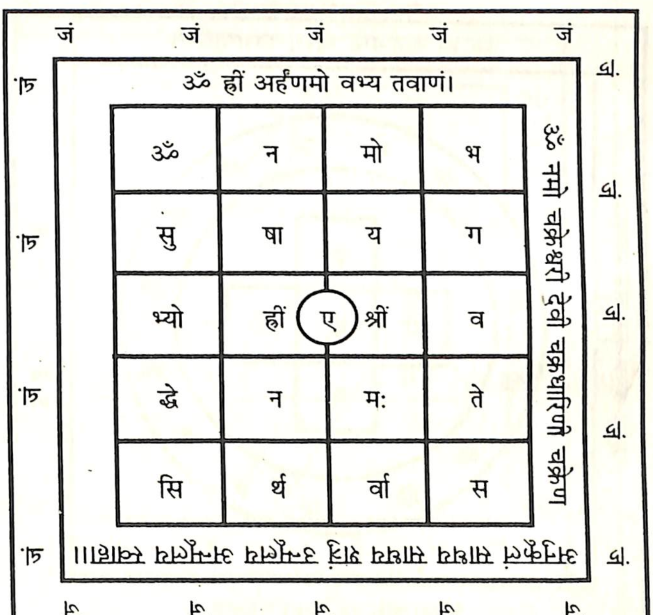


ॐ	न	मो	भ
नि	वा	र	ग
य	णाय	नम:	व
भ	त्रु	श	ते

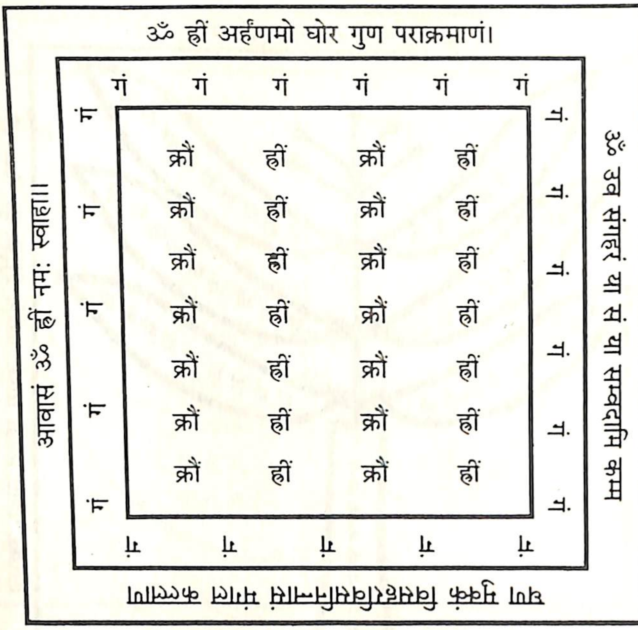
(१५/२२)


ॐ ह्रीं अर्हंणमो आकाश गामिणं।
ॐ नमः श्री वीरेहि जृंभय जृंभय मोहय मोहय स्थंभय
स्तंभय अवधारणां कुरु कुरु स्वाहा।।
भ्रौं भ्रौं भ्रौं भ्रौं भ्रौं भ्रौं भ्रौं भ्रौं भ्रौं भ्रौं
हों हों हों हों हों हों हों हों हों
श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं
हौं हौं हौं हौं हौं हौं हौं हौं हौं हौं
क्षौं क्षौं क्षौं क्षौं क्षौं क्षौं क्षौं क्षौं क्षौं क्षौं
हीं हीं हीं हीं हीं हीं हीं हीं हीं हीं
यं यं यं यं यं यं यं यं यं यं

(१६/२७)

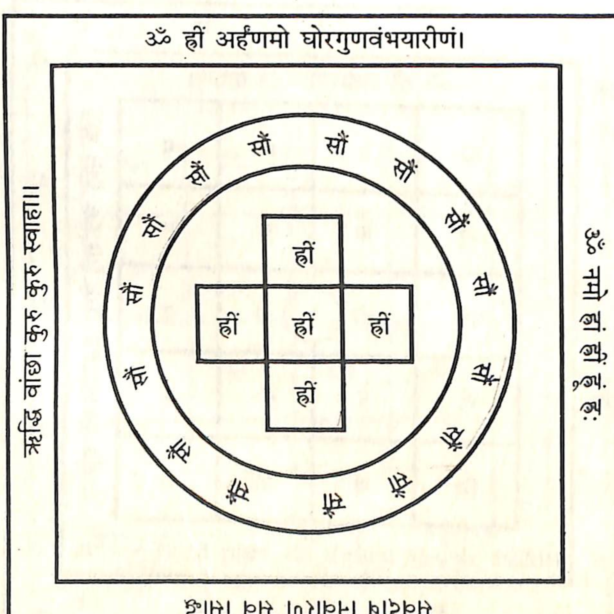

जं जं जं जं जं
ॐ ह्रीं अर्हंणमो वभ्य तवाणं।
ॐ नमो चक्रेश्वरी देवी चक्रधारिणी चक्रेण
अनुकूलं साधय साधय हृदयं उन्मूलय उन्मूलय स्वाहा।।
ॐ न मो भ
सु षा य ग
भ्यो ह्रीं ए श्रीं व
द्धे न मः ते
सि र्थ र्वा स
जः जः जः जः जः

(१७/३१)



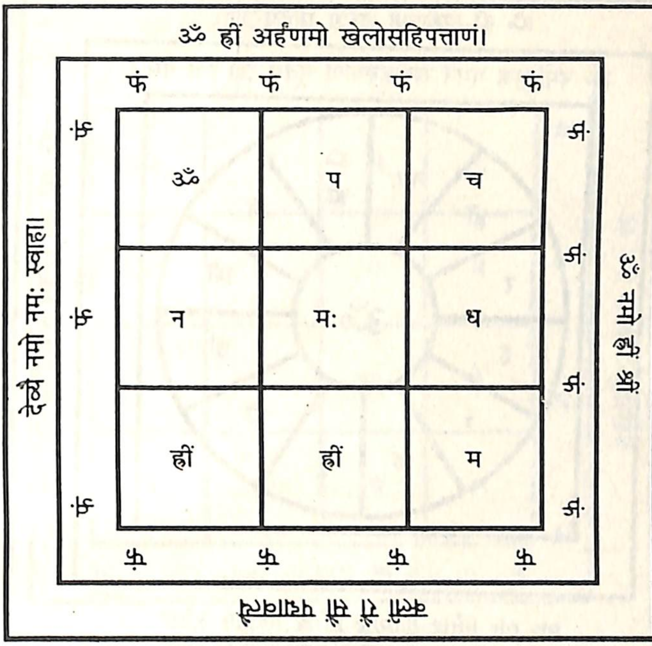
ॐ ह्रीं अर्हंणमो घोर गुण पराक्रमाणं।
ॐ उव संगहरं पा सं पा सव्वदामि कम्म
घण मुक्कं विसहरविसणिण्णासं मंगल कल्लाण
आवासं ॐ ह्रीं नमः स्वाहा।।
गं
क्रौं
ह्रीं

(१८/३२)

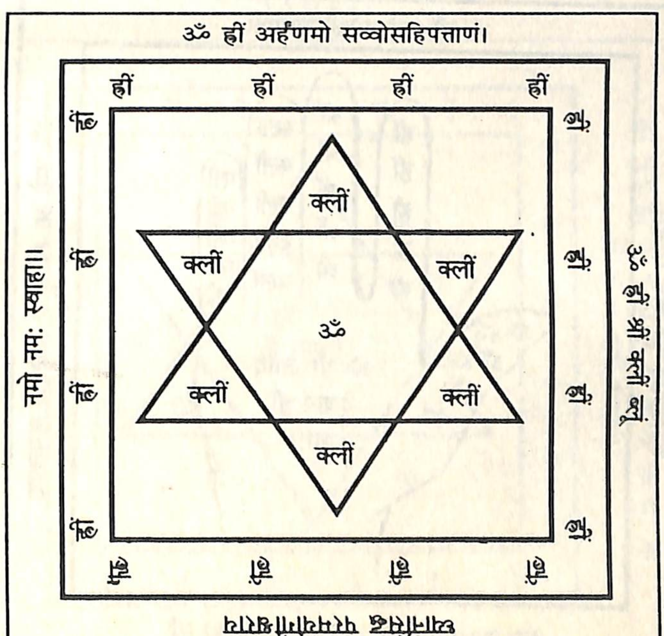


ॐ ह्रीं अर्हंणमो घोरगुणवंभयारीणं।
ॐ नमो ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रः
सर्वरोग निवारणं सर्व सिद्धि
ऋद्धि वांछा कुरु कुरु स्वाहा।।
सौं
ह्रीं

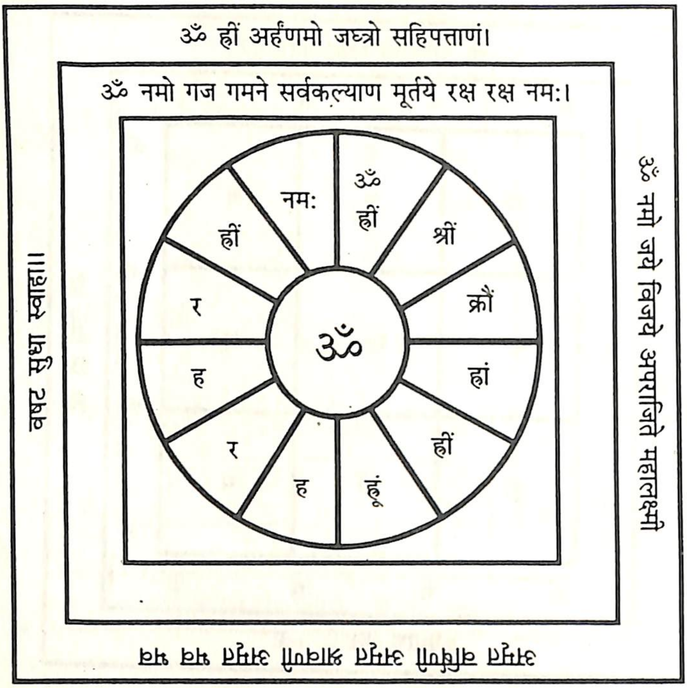
(१९/३४)


ॐ ह्रीं अर्हंणमो खेलोसहिपत्ताणं।
ॐ नमो ह्रीं श्रीं
क्लीं ऐं ह्रौं पद्मावत्यै
देव्यै नमो नमः स्वाहा।
फं
ॐ
प
च
न
मः
ध
ह्रीं
ह्रीं
म

(२०/३३)

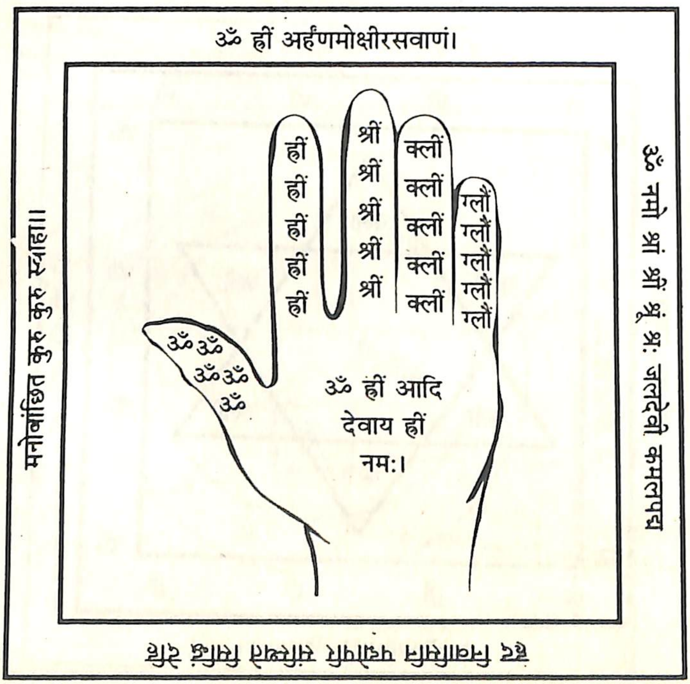

ॐ ह्रीं अर्हंणमो सव्वोसहिपत्ताणं।
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लूं
नमो नमः स्वाहा।।
ह्रीं
क्लीं
ॐ

(२१/३५)



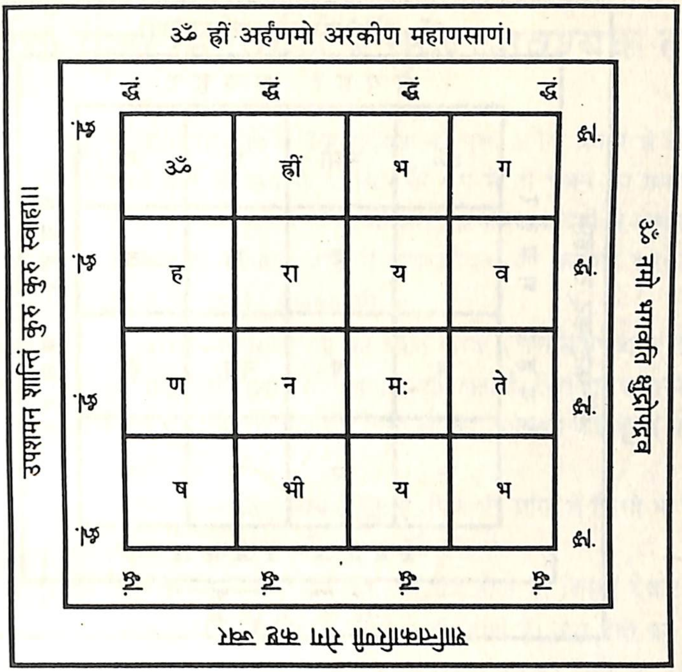
ॐ ह्रीं अर्हंणमो जघ्न्रो सहिपत्ताणं।
ॐ नमो गज गमने सर्वकल्याण मूर्तये रक्ष रक्ष नमः।
ॐ नमो जये विजये अपराजिते महालक्ष्मी
अमृत वर्षिणी अमृत श्रावणी अमृत भव भव
वषट सुधा स्वाहा।।
ॐ
ॐ ह्रीं
श्रीं
क्रौं
ह्रां
ह्रीं
हूं
ह
र
ह
र
ह्रीं
नमः

(२२/४१)

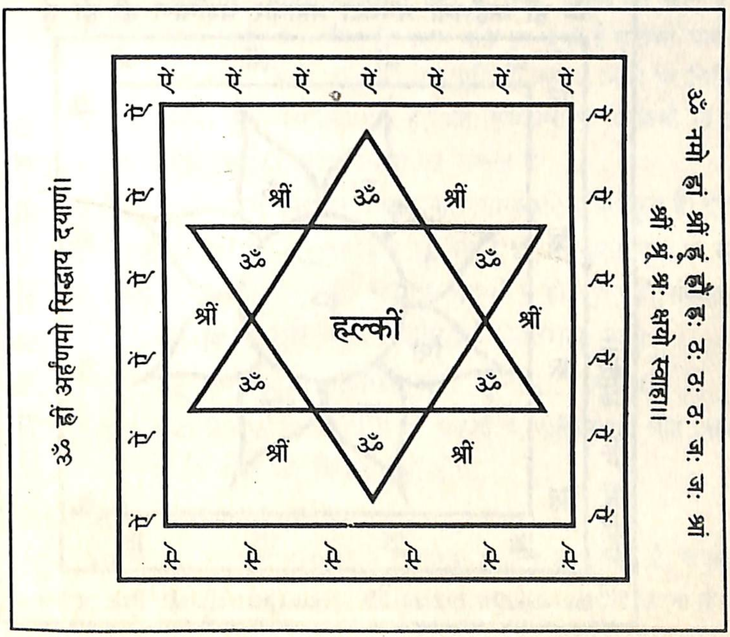


ॐ ह्रीं अर्हंणमोक्षीरसवाणं।
ॐ नमो श्रां श्रीं श्रूं श्रः जलदेवी कमलपद्म
हृद निवासिनि पद्मोपरि संस्थिते सिद्धिं देहि
मनोवांछित कुरु कुरु स्वाहा।।
ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं
श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं
क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं क्लीं
ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं ग्लौं
ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ
ॐ ह्रीं आदि देवाय ह्रीं नमः।

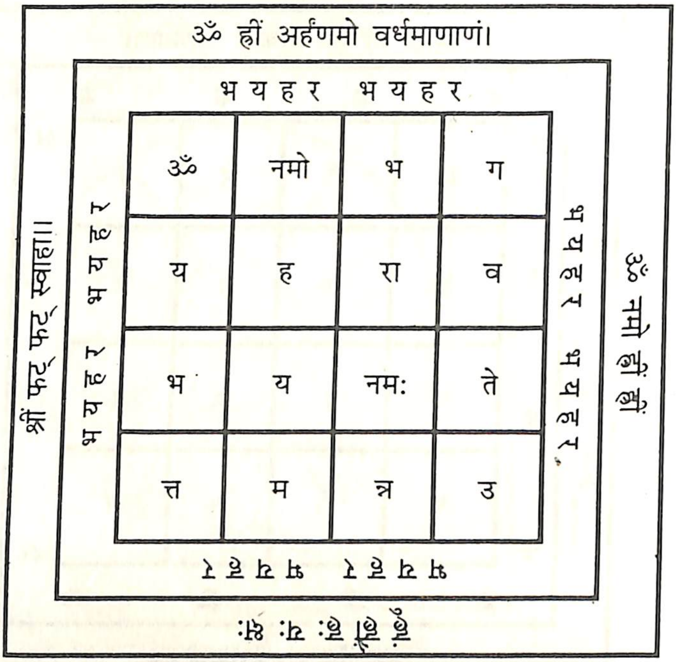
(२३/४५)


ॐ ह्रीं अर्हंणमो अरकीण महाणसाणं।
ॐ नमो भगवति क्षुद्रोपद्रव
शान्तिकारिणी रोग कष्ट ज्वर
उपशमन शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।।
ॐ ह्रीं भ ग
ह रा य व
ण न मः ते
ष भी य भ

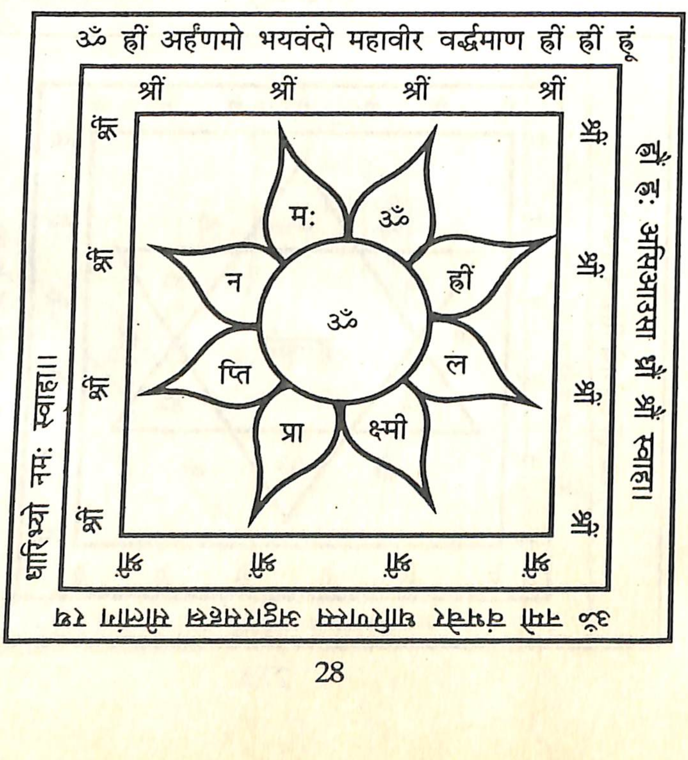
(२४/४६)


ॐ नमो ह्रां श्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः ठः ठः ठः जः जः श्रां
श्रीं श्रूं श्रः क्षयो स्वाहा।।
ॐ ह्रीं अर्हंणमो सिद्धाय दयाणं।
ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं ऐं
श्रीं ॐ श्रीं
हल्की

(२५/४७)


ॐ ह्रीं अर्हंणमो वर्धमाणाणं।
भ य ह र भ य ह र
ॐ
नमो
भ
ग
य
ह
रा
व
भ
य
नमः
ते
त्त
म
न्न
उ
ॐ नमो ह्रीं ह्रीं
श्रीं फट् फट् स्वाहा।।

(२६/४८)


ॐ ह्रीं अर्हंणमो भयवंदो महावीर वर्द्धमाण ह्रीं ह्रीं ह्रूं
ह्रौं ह्रः असिआउसा ध्रौं ध्रौं स्वाहा।
धारिभ्यो नमः स्वाहा।।
मः
ॐ
ह्रीं
ल
क्ष्मी
प्रा
प्ति
न
ॐ

देव-पूजा के विषय में कुछ आवश्यक तथ्य

(अ) भारतीय संस्कृति में उपास्यदेवता की पूजा अनेक प्रकार से की जाती है। यथा मूर्ति के रूप में या चित्र के रूप में तो पूजन का प्राधान्य है ही। यदि मूर्ति या चित्र न हो तो भी आटे या गोबर या दही से अथवा पूगीफल में कलावा बाँधकर उसी में उपास्यदेवता की कल्पना करके पूजा की जाती है। इसके अलावा भी—

(१) हृदय में—उपास्यदेवता का ध्यान करके (मानसिकपूजा व तांत्रिकपूजा में प्राय: इसी पद्धति को ग्रहण किया जाता है। निराकार उपासना में भी)।

(२) जल में—कलश आदि में देवताओं का आवाहन कर पूजन का प्रचलन सर्वत्र है।

(३) अग्नि में—अग्नि स्वयं देवता है, फिर भी अग्नि में किसी भी देवता की कल्पना कर पूजा की जा सकती है।

(४) यंत्र में—प्रत्येक देवता का एक यंत्र होता है, जिसमें देवता की कोई आकृति न होकर कुछ रेखायें आदि होती हैं। जैसे देवी का दुर्गा यंत्र, लक्ष्मीजी का श्रीयंत्र, सूर्ययंत्र आदि। इस यंत्र को देवता का रूप मानकर इसमें भी पूजा होती है! तंत्रशास्त्र में हमेशा पूजन यंत्र में ही होता है।

(५) स्थण्डिल—वेदी में अर्थात् वेदी के ऊपर देवता की कल्पना करे।

(६) प्रतिमा आदि में—जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है मृतिका-पत्थर-धातु-अन्न आदि किसी वस्तु की बनी मूर्ति या कागज आदि पर चित्रित चित्र।

क्योंकि समस्त सृष्टि पंचतत्वात्मक है, अत: पंचतत्वों में से किसी भी एक तत्व को 'ईश्वर' का प्रतीक मानकर पूजन किया जा सकता है।

उपरोक्त ६ प्रकार से पूजा का विधान भारतीयसंस्कृति में स्वीकृत है। देश, काल, पात्र एवं उपलब्ध साधनों के अनुसार जैसी भी स्थिति हो, तदनुसार पूजा हो सकती है। यथा यात्रा आदि में उपरोक्त (१) के अनुसार 'हृदय' में ही पूजन हो सकता है—

अप्स्वग्नौहृदये सूर्ये स्थण्डिले प्रतिमसु च।
षट् स्वेतेषुहरे: सम्यगर्चनं मुनिभि: स्मृतै ॥

(आ) पूजा विस्तृत या संक्षेप में हो सकती है, लेकिन यह बात आवश्यकीय है कि पूजा का विधान सही हो।

संकल्प विधि/प्रारम्भिक कर्तव्य

समस्त जप, साधना, अनुष्ठान में सर्वप्रथम संकल्प आवश्यक है। जपकर्ता स्वयं संकल्प करे। यदि अपने यजमान आदि के निमित्त जप-अनुष्ठान आदि करना हो तो उसके

गोत्र, राशि, नाम का उल्लेख कर उस यजमान के निमित्त जप करने का उल्लेख करे।

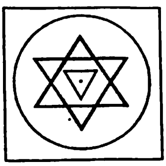
किसी भी पूजा या अनुष्ठान में सर्वप्रथम सामग्री सम्पादित कर दीप प्रज्वलित करे और ऐसी व्यवस्था करे कि दीप अनुष्ठान की समाप्ति तक अखण्ड रूप से जलता रहे।

नया या धुला हुआ, वगैरसिला, शुद्ध वस्त्र पहने। जिस देवी या देवता की पूजा-उपासना करनी है उसी देवी-देवता के अनुरूप रूप धारण करे—(यथा चन्दन, रुद्राक्ष, त्रिपुण्ड, भस्म, वस्त्र पहने) उत्तरीय उपवस्त्र, यज्ञोपवीत पहने, शिखाबन्धन करे, सुखदायक आसन में पूर्व या उत्तरमुख होकर बैठे। आचमन करके हाथ में पुष्प लेकर देवी देवताओं की प्रार्थना करे—

ॐ सूर्याय नमः, ॐ गणपतये नमः, ॐ देव्यै नमः, ॐ शिवाय नमः, ॐ विष्णवे नमः, ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः+।

विनायकं गुरुं भानुं ब्रह्म विष्णु महेश्वरान्।
सरस्वतीं प्रणम्यादौ सर्व कामार्थ सिद्धये ।।

फूल चढ़ाकर जमीन को कनिष्ठिका से छुवें।



भूरसि भूमिरस्य दितिरसि विश्वधाया विश्वस्य, भुवनस्य धर्त्री, पृथिवीं यच्छ पृथिवींदृꣳह पृथिवीं माहिꣳसीः।

जमीन के ऊपर गन्ध से त्रिकोण-षट्कोण-गोल, चौकोर बनाकर फूल रखें, उसके ऊपर अर्घा रख पवित्र डालें।

ॐ पवित्रेस्थौ वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः। तस्य ते पवित्र पते पवित्र पूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयं

अर्घा में जल डाले

ॐ शन्नोदेवी रभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये शंयोरभिस्रवन्तुनः ।
ॐ भूर्भवः स्वः वरुणदेव इहागच्छ इहतिष्ठ ।

अर्घ में गन्धअक्षतादि डालकर अपने अंग व पूजा सामग्री को पवित्र से अर्घ के पानी के छींटे दे, इसके बाद प्राणायाम करके पुण्डरीकाक्षाय नमः ३ बार कहे। सूर्य के रूप का ध्यान करे।

ॐ अरुणोऽरुण पंकजे निषण्णः, कमले भीतिवरौ करैर्दधानः ।
स्वरुचाहित मंडलस्त्रिनेत्रो, रविराकल्पशताकुलोवतान्नः ।।

पुनः अर्घे में जलअक्षतादि देकर सूर्य को अर्घ्य दें।

एहि सूर्य सहस्रांशो तेजोराशे जगत्पते।

\+ आदित्यं गणनाथं च देवीं रुद्र च केशवं।
पंच दैवतमित्युक्तं सर्वकर्मसु पूजयेत्।।

अनुकम्पय मां भक्त्या गृहाणार्घ्यं दिवाकर।। (क)

सूर्य की गन्ध अक्षत फूल से पूजा करे।

ॐ आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।।

अक्षत व सरसों लेकर चारों दिशाओं को फेंकें; रात्रि में यह न करें।

अपसर्पन्तुते भूता ये भूता भूवि संस्थिता।
ये भूता विघ्नकर्तारस्तेनश्यन्तु शिवाज्ञया।।
अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतोदिशम्।
सर्वेषामविरोधेन पूजा कर्म समारभे।।

"(यह क्रिया महिलाएँ न करें। इसके बाद चम्मच से जल लेकर छोड़ दें)।"

पृथ्वीत्वीति मेरुपृष्ठ ऋषिः सुतलंछन्द कूर्मोदेवता आसनोपवेशने विनियोगः (हाथ जोड़ दें)

पृत्वी त्वया धृतालोका देवित्वं विष्णुनाधृता।
त्वं च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरुचासनम्।।

गन्धाक्षत से अपने आसन की पूजा करें।

पृथिव्यै नमः, वाराह्यै नमः वाराहाय०, कूर्माय०, कमलासनाय०, विमलासनाय०, मध्ये परमसुखासनाय०, आत्मासनाय नमः।।*

श्री भैरवदेवता का प्रणाम करे—"ॐ भैरवाय नमः।"

इसके अनन्तर-पहले की तरह-त्रिकोणादि बनाकर पुनः अर्घ्य स्थापन करें, प्राणायाम करके निम्न मंत्र से पूजा की सामग्री व अपने ऊपर छींटे दें।

अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा,
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स वाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।
सर्वंपवित्रमेवच ॐ पुण्डरीकाक्षाय नमः ३ ।।

संकल्प—(हाथ में पवित्र जल, अक्षत लेकर)

"ॐ विष्णुः ३ अद्येह (क) ····नाम सम्वत्सरे, ····· (ख) ····मासे, ······ (ग) ·········पक्षे, ········ (घ) ········तिथौ, ········· (ङ) ·······वासरे, ········ (च) ·····गोत्रोत्पन्नः, ······ (छ) ······राशी, ······ (ज) ·······नाम्राऽहं, ······

(क) प्रत्येक कर्म में सूर्य को अर्घ्य देना आवश्यक है।।गंधर्वतंत्र।।

* जो साधक भूतशुद्धि आदि करना चाहें, इसी अवसर पर करें, विस्तृत भूतशुद्धि व न्यास तंत्र ग्रंथों में देखें। सामान्य रूप से "ॐ ह्रौं" का १०८ बार उच्चारण से भूतशुद्धि हो जाती है।

(झ) ····कामनया,····· (ञ) ····देवस्य/देव्यायाः,····· (ट) ····मंत्रस्य जपं/ पुरश्चरणं करिष्ये।*

विस्तृत विधान में जप या पुरश्चरण से पहले गणपति पूजन, मातृका पूजन, पुण्याहवाचन, आभ्युदपिक श्राद्ध, कलशस्थापन, नवग्रहस्थापन-पूजन आदि पंचांगकर्म करके पुरश्चरण प्रारंभ करें। इसी प्रकार पुरश्चरण की समाप्ति पर हवन हेतु किसी कर्मकाण्डी विद्वान का सहयोग लें।

प्रतिष्ठा-प्राणप्रतिष्ठा विधि

नव निर्मित मूर्ति की प्रतिष्ठा-प्राणप्रतिष्ठा व अग्न्युत्तारण क्रिया आवश्यक है। जब तक उसमें देवी या देवता के तत्व की प्रतिष्ठा नहीं होती तब तक वह मिट्टी, धातु या पाषाण का ही रूप कहा जायगा। अतः नवीन प्रतिमा में प्राणप्रतिष्ठा आदि आवश्यक है। केवल नर्मदेश्वर लिंग तथा शालिग्राम एवं चक्र में प्रतिष्ठादि संस्कार नहीं होते क्योंकि वे प्राकृतिक रूप से स्वयं देवरूप हैं। इससे भिन्न पाषाणप्रतिमाओं, धातुनिर्मित प्रतिमा में अग्न्युत्तारण भी अनिवार्य है जबकि पट्टलिखित, भित्तिचित्रित, मृतिका या गोमय आदि निर्मित में केवल प्रतिष्ठा, प्राणप्रतिष्ठा का ही विधान है—

घर में पूजनार्थ प्रतिमायें बारह अंगुल से बड़ी होना शुभ नहीं है। इसके विपरीत मन्दिरों में स्थापित प्रतिमायें बारह अंगुल से ऊपर ही होनी चाहिए।

(अ) सर्वप्रथम अग्न्युत्तारण

सबसे पहले निम्न मंत्र का पाठ करते हुए मूर्ति को अग्नि में तपायें—

ॐ हिमस्यत्वा जरायुराग्ने परिव्ययामसि ।
पावकोऽअस्मभ्य ँ शिवोभव ।।

दूध से प्रतिमा को स्नान करायें—ॐ पयः०।
फिर शुद्ध जल से—ॐ आपोहिष्ठा०।
दही से स्नान—ॐ दधिक्राब्णो०।
फिर शुद्ध जल से—ॐ आपोहिष्ठा०।
घी से स्नान—ॐ घृतवती०।
फिर शुद्ध जल से—ॐ आपोहिष्ठा०।
शहद से स्नान—ॐ मधुश्च०।
पुनः शुद्ध जल से—ॐ आपोहिष्ठा०।

---

* (क) प्रचलित सम्वत्सर का नाम लें। (ख) प्रचलित माह का नाम लें। (ग) प्रचलित पक्ष का नाम लें।(घ) वर्तमान तिथि का नाम लें ।(ङ) वर्तमान वार का नाम लें। (च) अपने गोत्र का नाम लें। (छ) अपनी राशि का नाम लें। (ज) अपने नाम को कहें। (झ) जिस कामना से जप कर रहे हों—उस कामना को कहें। (ञ) किस देवी/देवता का वह मंत्र है—उसका नाम लें। (ट) जिस मंत्र का जप करना है वह पूरा मंत्र पढें।

नोट—जहाँ कोई चीज ज्ञात न हो वहाँ "अमुक" कहें।

शक्कर से स्नान—ॐ आप्यायस्व०।

अन्त में पुन: शुद्धोदक से—ॐ आपो०।⊕

(आ) प्रतिष्ठा-प्राणप्रतिष्ठा-पंचदश संस्कार

मूर्ति, प्रतिमा या चित्र पर चावल छोड़ें—

ॐ एतन्ते देव सवितुर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे। तेन यज्ञमवतेन यज्ञपतिंतेन मामव। मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनो त्वरिष्टं यज्ञ ँ समिमं दधातु। विश्वेदेवास इहमादयन्तामों ३ प्रतिष्ठ। ॐ भूर्भुव: स्व: (+) देव सांग-सपरिवार इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठितो वरदो भव। (बहुत देवता हों तो—)

"सांगा: सपरिवारा: इहागच्छन्तु इहतिष्ठन्तु सुप्रतिष्ठिता:वरदा भवन्तु" कहें।।⊙

हाथ में जल लेकर छोड़ें।

अस्य प्राणप्रतिष्ठामंत्रस्य ब्रह्मविष्णुशिवा ऋषय: ऋग्यजु: सामानि छन्दांसि एतत्प्राण:रूपा: प्राणशक्तयो: देवता प्राणप्रतिष्ठापने विनियोग:। (हाथ से स्पर्श करें।) ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं स: ॐ सोऽहं प्राणा: इह प्राणा:। ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं स: जीव इहस्थित:।— ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं स:। (देवी हो तो—'देव्या:' कहें) 'देवस्य' सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक् चक्षु: श्रोत्रं जिह्वाघ्राण पाणिपादपायूपस्थानीहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

प्राणप्रतिष्ठा के अनन्तर १५ वार प्रणव (ॐ) को जपै—

अनेन अस्या प्रतिमाया गर्भाधानादिपंचदशसंस्कारान्सम्पादयामि।

फिर जल लेकर छोड़ दें—

ॐ अस्य मातृकान्यासस्य ब्रह्माऋषि: गायत्रीछन्द: श्रीसृष्टिमातृका सरस्वती देवता-हलो बीजानि स्वरा: शक्तय: मात्रिका न्यासे विनियोग:—

हाथ से शरीर को स्पर्श करें (शिर, मुख, हृदय, नाभि व पैर)—

ॐ ब्रह्मर्षये नम: शिरसि:; गायत्रीछन्दसे नम: मुखे; सृष्टिकर्त्री मातृका सरस्वत्यै देवतायै नम: हृदि, ॐ हलो बीजानिभ्यो नम: नाभौ, ॐ स्वरेभ्य: शक्तिभ्यो नम: पादयो:।

⊕ यह पूरे मंत्र 'पंचामृत निर्माण विधि' में देखें।

(+) यहाँ पर उस देवता या देवी का नाम लें जिसकी मूर्ति या चित्र है।

⊙ यदि मूर्ति किसी देवी (स्त्रीलिंग) की हो तो—"ॐ भूभुर्व: स्व: (+) देवी सांगा: सपरिवारा: इहागच्छ इहतिष्ठ सुप्रतिष्ठिता वरदाभव" कहा जायगा।

इसके बाद दाहिने नाक से सांस लेकर बायें से छोड़ें फिर बायें से सांस लेकर दायें से छोड़ दें। इस तरह पूरक, कुम्भक, रेचक प्राणायाम करें। इसके बाद निम्न बीज मंत्रों से अपने अंग को स्पर्श करें।

ॐ अं कं खं गं घं ङं आं अंगुष्ठाभ्यां नमः (दोनों हाथों से अंगुष्ठ को स्पर्श करे।)

ॐ इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां नमः (तर्जनी को अंगुष्ठ से स्पर्श करे।)

ॐ उं टं ठं डं ढं णं ॐ मध्यमाभ्यां नमः (मध्यमा को स्पर्श करे।)

ॐ एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां नमः (अनामिका को स्पर्श करे।)

ॐ ओं पं पं बं भं मं औं कनिष्ठिकाभ्यां नमः (कनिष्ठिका को स्पर्श करे।)

ॐ अं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं अः करतल करपृष्ठाभ्यां नमः।

ॐ अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः (हृदय को स्पर्श करे।)

ॐ इं चं छं जं झं ञं ईं शिरसे स्वाहा (सिर को स्पर्श करे।)

ॐ उं टं ठं डं ढं णं ॐ शिखायै वषट् (शिखा को स्पर्श करे।)

ॐ एं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुम् (दोनों स्कंध को स्पर्श करे।)

ॐ ओं पं फं बं भं मं औं नेत्रत्रयाय वौषट् (आँखों को स्पर्श करे।)

ॐ अं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं अः अस्त्राय फट् (हाथ में फट् करें।)

इसके अनन्तर सरस्वती वाग्देवी का स्वरूप स्मरण करें।

बलिदान

तांत्रिक उपासना में इष्ट देवी-देवता के प्रसन्नतार्थ बलिदान का भी विधान है। वामाचार में पशु को बलि रूप में देने का विधान है, इसकी विस्तृत विधि अन्य ग्रंथों में देखें।

दक्षिणाचारी सात्विक उपासना में पशु के स्थान पर नारियल या पेठे (कूष्माण्ड) को बलिरूप में देने की परम्परा है—

नारिकेल वा कूष्माण्डबलिदानम्

स यजमानो पूजनान्ते संकल्पं कुर्यात् विशेषतो देवस्य बलिदानपूर्वकं उत्तरपूजनं करिष्ये। संक्षिप्तविधिनास्वेष्टदेवं (देवीं) वा सम्पूज्य। ततो शुद्ध नारिकेलं कूष्माण्डं वा गृहीत्वा तं सम्पूज्य तत्र जीवन्यासादिक[१] प्राणप्रतिष्ठा प्रतिष्ठां च कृत्वा वस्त्रैराच्छाद्यं 'देवप्रार्थयेत्'

---

१. जीवन्यासादिकं—वामहस्तेन धृत्वा कुशेन त्रिषां सम्प्रोक्ष्य ॐ वाक् मन श्रोत्रत्वक् चक्षुः प्राणः रसनाः घ्राणः हस्तपादयोः मेढ्रः मांसः रुधिरमेदोस्थितः मज्जा शुक्रः नाडीचक्रः रोमः पुच्छः शृंगः ॐ सर्वांगानि आप्यायतां ॐ मस्तक आप्यायतां ॐ वाक् आप्याय०, ॐ प्राणस्ते आप्या०, ॐ चक्षुस्ते आप्या०, ॐ श्रोत्रंते आप्या०, येते क्रूरं यदास्थितेन आप्या०, औषधे त्रायस्व स्वधिते मैनꣳहिꣳसीः। ॐ वाचं ते शुन्धामि, प्राणन्ते शुन्धामि, चक्षुस्ते शुन्धामि, श्रोत्रन्ते शुन्धामि, नाभिन्ते शुन्धामि, मेढ्रन्ते शुन्धामि, पायुन्ते शुन्धामि, चरित्रास्ते शुन्धामि, यानि ते क्रूराणि समहोभ्यः प्रोक्षन्तु स्वाहा।।गायत्र्या च।। (बायें हाथ से स्पर्श कर दायें हाथ से कुशा से जल छिड़कें)

दीनबन्धु ! जगन्नाथ ! कर्मकामप्रदायक:।
ददामि नारिकेल (कूष्मांड) बलि:प्रसीद वरदोभव।।

देव्याबलिदाने—ॐ महामाये ! जगन्मात: ! सर्वकामप्रदायिनी।
ददामि नारिकेल (कूष्मांड) बलि:प्रसीद वरदोभव।।

तं छेदयित्वा अर्द्धभागं देव्यग्रे संस्थाप्य पुन: ॐ प्राणाय स्वाहा। ॐ अपानाय स्वाहा, ॐ उदानाय स्वाहा, ॐ व्यानाय स्वाहा, ॐ समानाय स्वाहा। एभिर्मन्त्रै: पंचाहुतिं अग्नौजुर्हुयात्।

संक्षिप्त होमरहितपूजने पंचग्रासमुद्रां प्रदर्शयेत्।

षोडशोपचार पूजन के मंत्र

समय और साधनों को देखते हुए पूजन संक्षेप में पंचोपचार (केवल गंध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य) से भी हो सकता है। षोडशोपचार (आवाहन, आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान, वस्त्र, यज्ञोपवीत, गन्धाक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, प्रदक्षिणा, नमस्कार, पुष्पांजलि) पूजन उत्तम है। विस्तार से पीठपूजा, अंगपूजा, अष्टोत्तर, सहस्रनाम आदि जितना चाहें उतना विस्तार हो सकता है।

मंत्र पढ़ना कोई आवश्यक नहीं है, देवी-देवता तो केवल भावना पर प्रसन्न होते हैं—'भावमिच्छन्ति देवता:' अत: मन में भावना लेकर बिना मंत्रोच्चारण के भी क्रमश: पूजा कर सकते हैं। मंत्रों का उच्चारण सही कर सकें तो मंत्रोच्चारण पूर्वक पूजा कर सकते हैं।

यदि किसी देवता (पुरुष लिंग) की पूजा करनी हो तो 'देवपूजा' के निम्न मंत्रों से किसी भी देवता की पूजा कर सकते हैं।

यदि किसी देवी (स्त्री लिंग) की पूजा करनी हो तो 'देवीपूजा' मंत्रों से किसी भी देवी की पूजा कर सकते हैं।

सर्वदेव पूजा मंत्र

(सर्वप्रथम देवता के स्वरूप का ध्यान करें)

देवता को सन्मुख उपस्थित मानकर उनका स्वागत करें—

आवाहन— आगच्छ भगवन्देव स्थाने चात्र स्थिरो भव।
यावत्पूजां करिष्यामि तावत्त्वं सन्निधौ भव।।

बैठने को आसन दें (आसन)—रम्यं सुशोभनं दिव्यं सर्वसौख्यकरं शुभम्। आसनञ्च मया दत्तं गृहाण परमेश्वर।।

पैर धोयें (पाद्य)—उष्णोदकं निर्मलं च सर्वसौगन्ध्यसंयुतम्। पादप्रक्षालनार्थाय दत्तं ते प्रतिगृह्यताम्।।

अर्घ्य के जल से हाथ धुलायें (अर्घ्य)—अर्घ्यं गृहाण देवेश

गन्धपुष्पाक्षतैः सह। करुणां कुरु मे देव गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तुते।।

आचमन करायें (आचमन)—सर्वतीर्थसमायुक्तं सुगन्धि निर्मलं जलम्। आचम्यतां मया दत्तं गृहीत्वा परमेश्वर।।

स्नान करायें (स्नान)—गङ्गासरस्वतीरेवा पयोष्णीनर्मदाजलैः। स्नापितोऽसि मया देव तथा शांतिं कुरुष्व मे।।

वस्त्र पहनायें (वस्त्र)—सर्वभूषाधिके सौम्ये लोकलज्जानिवारणे। मयोपपादिते तुभ्यं वाससी प्रतिगृह्यताम्।।

जनेऊ या उत्तरीय वस्त्र (यज्ञोपवीत)—नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्। उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर।।

गन्धाक्षत—(चन्दन, रोली, कुमकुम आदि व चावल)—

श्रीखण्डचन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ।।
अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुंकुमाक्ताः सुशोभिताः ।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ।।

फूल अर्पित करें (पुष्प)—सुगन्धीनि सुपुष्पाणि देशकालोद्भवानि च। पूजार्थं नीयते तुभ्यं पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम्।।

धूप जलाकर सुगंध करें (धूप)—वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः। आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्।।

दीप जलाकर प्रकाश करें (दीप)—आज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया। दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापह।।

भोजन अर्पित करें (नैवेद्य)—शर्कराघृतसंयुक्त मधुरं स्वादु चोत्तमम्। उपहारसमायुक्तं नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्।।

परिक्रमा करें (प्रदक्षिणा)—यानि कानि च पापानि जन्मान्तर कृतानि च। तानि तानि विनश्यन्तु प्रदक्षिण पदे-पदे।।

पुष्प लेकर प्रार्थना करें (नमस्कार)—आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनं। पूजा चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वरः।

पुष्प लेकर अर्पित करें (पुष्पाञ्जलि)—नानासुगन्धिपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च। पुष्पाञ्जलिर्मया दत्तो गृहाण परमेश्वर।।

सर्वदेवी पूजा मंत्र

(इष्ट देवी का ध्यान करने के उपरान्त, पूर्ववत्)

आवाहन— आगच्छेह महादेवि सर्वसम्पत् प्रदायिनी।
यावत् पूजां करिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरोभव।।

आसन— अनेकरत्नसंयुक्तं नानामणिगणान्वितम्।
कार्तस्वरमयं दिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम्।।

पाद्य— गङ्गादिसर्वतीर्थेभ्यो मया प्रार्थनयाहृतम्।
तोयमेतत्सुखस्पर्शं पाद्यार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

अर्घ्य— गन्धपुष्पाक्षतैर्युक्तमर्घ्यं सम्पादितं मया।
गृहाण त्वं महादेवि प्रसन्ना भव सर्वदा।।

आचमन— आचम्यतां त्वया देवि ! भक्तिं मे ह्यचलां कुरु।
ईप्सितं मे वरं देहि परत्र च परांगतिम्।।

स्नान— जाह्नवीतोयमानीतं शुभं कर्पूरसंयुतम्।
स्नापयामि सुरश्रेष्ठे त्वां पुत्रादिफलप्रदाम्।।

वस्त्र— वस्त्रञ्च सोमदैवत्यं लज्जायास्तु निवारणम्।
मया निवेदितं भक्त्या गृहाण परमेश्वरि।।

उपवस्त्र— ॐ यामाश्रित्य महामाया जगत्सम्मोहिनी सदा।
तस्यै ते परमेशायै कल्पयाम्युत्तरीयकम्।।

गन्ध (रोली, कुंकुम, सिन्दूर व अक्षत चावल)—
परमानन्दसौभाग्यपरिपूर्णदिगन्तरे ।
गृहाण परमंगन्धं कृपया परमेश्वरि ।।
कुंकुमं कान्तिदं दिव्यं कामिनीकामसम्भवम् ।
कुंकुमेनार्चिते देवि प्रसीद परमेश्वरि ।।
सिन्दूरमरुणाभासं जपाकुसुमसन्निभम् ।
पूजितासि मया देवि ! प्रसीद परमेश्वरि ।।
रञ्जिताः कुङ्कमौघेन अक्षताश्चातिशोभनाः ।
ममैषां देवि दानेन प्रसन्ना भव शोभने ।।

पुष्प— मन्दारपारिजातादि पाटलीकेतकानि च।
जातीचम्पकपुष्पाणि गृहाणेमानि शोभने।।

धूप— दशांगगुग्गुलं धूपं चन्दनागरुसंयुतम्।
समर्पितं मयाभक्त्या महादेवि! प्रगृह्यताम्।।

दीप— घृतवर्तिसमायुक्तं महातेजो महोज्ज्वलम्।

दीपं दास्यामि देवेशि ! सुप्रीता भव सर्वदा।।

नैवेद्य— अन्नं चतुर्विधं स्वादु रसैः षड्भिः समन्वितम्।
नैवेद्यं गृह्यतां देवि ! भक्तिं मे ह्यचलां कुरु।

प्रदक्षिणा— पदे पदे या परिपूज्यकेभ्यः।
सद्योश्वमेधादि फलं ददाति।
तां सर्वभूतक्षय हेतु भूतां प्रदक्षिणां तां प्रणतः करोमि।।

नमस्कार— नमः सर्वहितार्थायै जगदाधारहेतवे।
साष्टांगोऽयं प्रणामस्ते प्रयत्नेन मयाकृतः।।

पुष्पांजलि— मंत्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरी।
यत्पूजिता मयादेवि प्रसन्ना भव सर्वदा।।*

पंचगव्य विधि

१. गोमूत्र नीले रंग की गाय का हो—एक भाग।
२. गोबर काले रंग की गाय का—आधा भाग।
३. दूध लाल रंग की गाय का—सात भाग।
४. दही सफेद रंग की गाय का—तीन भाग।
५. घी कपिल (पीले) रंग की गाय का—एक भाग।

तथा एक भाग कुशा का जल।

इतने रंगों की गाय उपलब्ध न होने पर पाँचों वस्तुयें कपिला गाय की ही ले सकते हैं।

यह कायाकल्प कारी दिव्य रसायन, कीटाणु व विषाणु नाशक, रोगहर, शारीरिक व मानसिक शुद्धि कारक है। प्रत्येक पुरश्चरण/अनुष्ठान में साधक को पहले पंचगव्य का सेवन करना अनिवार्य कहा गया है, शारीरिक व आत्मिक शुद्धि के बाद ही साधक पुरश्चरण का अधिकारी होता है। उपासन स्थल को भी पंचगव्य छिड़क कर शुद्ध किया जाता है। सर्वप्रथम—

---

* १. गन्धाक्षत के बाद काजल, आभूषण, सुगन्ध तैल, सौभाग्य द्रव्य (चूड़ी, चरेऊ, मंगलसूत्र आदि)। पुष्प के बाद तुलसी पत्र (गणेश जी को छोड़कर) विल्वपत्र, दूब (देवी को छोड़कर) माला इत्यादि।

भोजन अर्थात् नैवेद्य के बाद फल, ताम्बूल, पूगी फल, दक्षिणा-द्रव्य आदि अर्पित कर सकते हैं। आरती भी करें।

२. शालिग्राम जी में अक्षत नहीं चढ़ते।

३. देवी की एक, सूर्य की सात, गणेश जी की तीन, विष्णु जी की चार और शिव जी की डेढ़ (अर्घा नहीं लाँघा जाता) परिक्रमा-प्रदक्षिणा की जानी चाहिए।

४. स्नान के बाद पंचामृत स्नान व शुद्ध जल से स्नान करायें।

गोमूत्र लेकर गायत्री मंत्र का पाठ करते हुए शुद्धपात्र में स्थापित करे। तदनन्तर—मंत्रोच्चार करते हुए क्रमशः गोबर, दूध, दही, घी और कुशोदक उसमें मिलायें।

गोबर— ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहो पह्वये श्रियम्।।

दूध— आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम्।
भवा वाजस्य संङ्गथे।।

दही— दधिक्राब्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः।
सुरभिनो मुखा करत्प्रणऽआयुषिँतारिषत्।।

घी— तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि धामनामासि।
प्रियं देवानामनाधृष्टं देव यजनमसि।।

कुशोदक— देवस्य़त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णोहस्ताभ्याम् ।।
आपोहिष्ठामयोभुवस्तानउर्जेदधातनः महेरणायचक्षसे।
योवः शिवतमोरसस्तस्यभाजयतेहनः।
उषतीरिवमातरः तस्माअरंगमामवोयस्यक्षयाय
जिन्वथ आपोजन यथाचनः।।

पंचामृत विधि

पंचगव्य की भाँति ही पंचामृत (पाँच अमृत) भी एक कायाकल्पकारी पौष्टिक रसायन है। उपासना में पंचामृत से अभीष्ट देवी-देवता को स्नान कराया जाता है और पेय रूप में अर्पित किया जाता है। मानव जाति के निमित्त भी यह उत्तम पौष्टिक पेय है।

नवीन प्रतिमा के शुद्धीकरण में भी पंचामृत वांछित है। इसके घटक द्रव्य दूध, दही, घी, शहद तथा शक्कर हैं। निम्न पाँच मंत्रों से क्रमशः दूध, दही, घी, शहद को लेकर समिश्रण तैयार करे—

मंत्राः—ॐ पयः पृथिव्याम्पय ओषधीषु पयोदिव्यन्तरिक्षे पयोधाः पयस्वतीः प्रदिशः सन्तुमह्यम्।।१।। ॐ दधिक्राब्णोऽकारिषञ्जिष्णो रश्वस्य वाजिनः सुरभिनो मुखा करत् प्रण आयुषितारिषत्।।२।। ॐ घृतवती भुवनानामभिश्रियोर्विपृथिवी मधुदुधे सुपेशसा द्यावा पृथ्वी वरुणस्य धर्मणा विष्कंभिते अजिरे भूरि रेतसा।।३।। ॐ मधुश्च माधवश्च वासन्तिका वृत अग्नेरन्तस्तेजोषि कल्पताम्, द्यावा पृथिवी कल्पतामाप ओषधयः कल्पन्तामग्नयः। पृथङ्ममज्यैष्ठ्याय सुव्रताः ये अग्नयः सुमनसोन्तरा द्यावा पृथिवी इमे वासंतिका वृत अभिकल्पमाना इन्द्रमिव देवा अभिसंविसन्तु तया

देवतयाङ्गिरसध्रुवा-सीदतम्।।४।। ॐ आप्यायस्व समेतुते विश्वत: सोमवृष्ण्यम् भवा वाजस्य संगथे।।५।।

दूध एक भाग।

दही दस भाग।

घी सौ भाग।

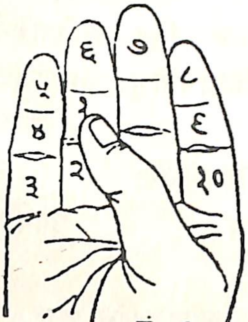
शहद हजार भाग।

और शक्कर दस हजार भाग हो। ऐसा भी वर्णन मिलता है। अन्यथा यथाशक्ति समिश्रण करें।

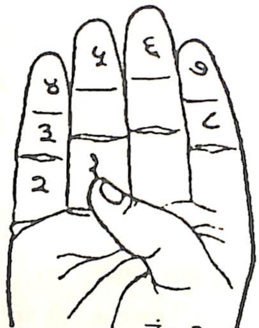
करमाला का सामान्य रूप

अंगुली के अग्रभाग (नख के पास) तथा पर्वकी लकीर पर और सुमेरु का उल्लङ्घन कर किया हुआ जप निष्फल होता है।

चित्र नं० १ के अनुसार अङ्क १ से आरम्भ करके १० अङ्क तक अंगूठे से जप करने से एक करमाला होती है।



नं० १

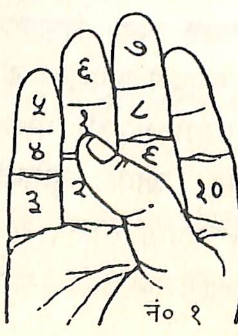


नं० २

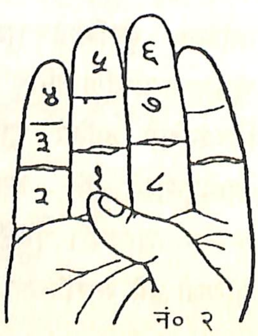
मध्यमा अंगुली का मध्य तथा मूल पर्व सुमेरु है। दोबारा जपते समय सुमेरु के नीचे से अंगूठा ले जाय। इसी प्रकार दश करमाला जपते समय बायें हाथ की कनिष्ठिका की जड़ की लकीर से आरम्भ कर, तर्जनी की जड़ की लकीर तक दस गिनकर पश्चात् चित्र नं० २ के अनुसार अङ्क १ से आरम्भ कर ८ अङ्क तक जप करने से १०८ की एक माला होती है।

शक्ति (देवी) मंत्र जपने के निमित्त करमाला

चित्र नं० १ के अनुसार अङ्क १ से आरम्भ करके १० अङ्क तक अंगूठे से जप करने से एक करमाला होती है। तर्जनी का मध्य तथा अग्रपर्व सुमेरु है। इसी प्रकार दश करमाला जपते समय बायें हाथ की कनिष्ठिका की जड़ की



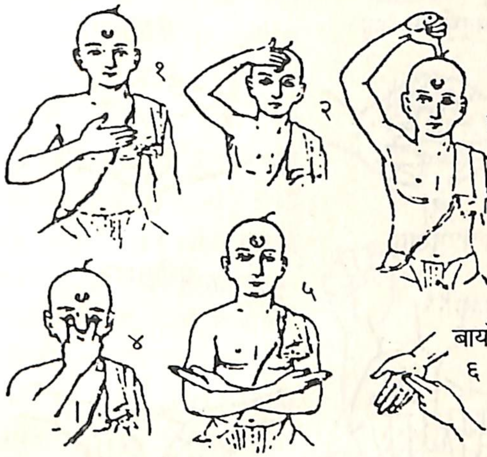
नं० १



नं० २

लकीर से आरम्भ कर, तर्जनी की जड़ की लकीर तक दस गिनकर पश्चात् चित्र नं० २ के अनुसार अङ्क १ से आरम्भ कर अङ्क ८ तक जप करने से १०८ की एक माला होती है।

षडंगन्यास विधि



अर्घ्य देने की विधि



विभिन्न मुद्रायें

दक्षिणामार्गी उपासना में मुद्रा प्रदर्शन आवश्यक नहीं है, पहले बता चुके हैं।

जप या अनुष्ठान करने से पहले निम्नांकित २४ मुद्रायें प्रदर्शित करने का विधान है—

सुमुखम्–दोनों हाथों की अंगुलियों को मोड़ कर हाथ परस्पर मिलावे।।१।। **सम्पुटम्**–दोनों हाथों को फुला कर मिलावे।।२।। **विततम्**–दोनों हाथों की हथेली परस्पर सामने करे।।३।। **विस्तृतम्**–दोनों हाथों की अंगुलियां खोलकर हाथों को कुछ अधिक अलग करे।।४।। **द्विमुखम्**–दोनों हाथों की कनिष्ठा से कनिष्ठा तथा अनामिका से अनामिका,



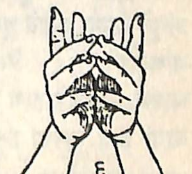
१
सुमुखम्



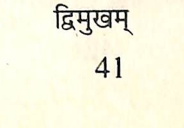
२
सम्पुटम्



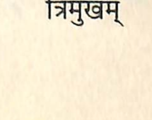
३
विततम्



४
विस्तृतम्



५
द्विमुखम्



६
त्रिमुखम्

मिलावे।।५।। **त्रिमुखम्**–दोनों मध्यमा भी और मिलावे।।६।।

चतुर्मुखम्–दोनों तर्जनी भी और मिलावे।।७।। **पंचमुखम्**–दोनों अंगूठे भी और मिलावे।।८।। **षण्मुखम्**–हाथ वैसे ही रखते हुए दोनों कनिष्ठा खोले।।९।। **अधोमुखम्**–उलटे हाथों की अंगुलियों को मोड़ें तथा मिलाकर नीचे की ओर करे।।१०।। **व्यापकाञ्जलिकम्**–वैसे ही मिले हुए हाथों को शरीर की तरफ से घुमाकर सीधा करे।।११।। **शकटम्**–दोनों हाथों को उलटा कर अंगूठे से अंगूठा मिला तर्जनियों को सीधी रखते हुए मुट्ठी बाँधे।।१२।।



७ चतुर्मुखम्



८ पञ्चमुखम्



९ षण्मुखम्



१० अधोमुखम्



११ व्यापकञ्जलिकम्

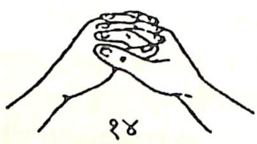


१२ शकटम्

यमपाशम्–तर्जनी से तर्जनी बांधकर, दोनों मुट्ठी बांधे।।१३।। **ग्रन्थितम्**–दोनों हाथों की अंगुलियों को, परस्पर गूंथे।।१४।। **उन्मुखोन्मुखम्**–हाथों की पांचों अंगुलियों को, मिला कर प्रथम बाएं पर दाहिना फिर दाहिने पर बायां, हाथ रखे।।१५।। **प्रलम्बम्**–अंगुलियों को कुछ मोड़ दोनों हाथों को, उलटा कर नीचे की ओर करे।।१६।। **मुष्टिकम्**–दोनों अंगूठे, ऊपर रखते हुए दोनों मुट्ठी बांधकर मिलावे।।१७।। **मत्स्यः**–दाहिने हाथ की पीठ पर बायां हाथ उलटा रखकर, दोनों अंगूठे हिलावे।।१८।।



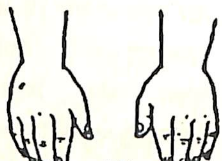
१३ यमपाशम्



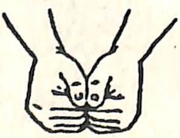
१४ ग्रन्थितम्



१५ उन्मुखोन्मुखम्



१६ प्रलम्बम्

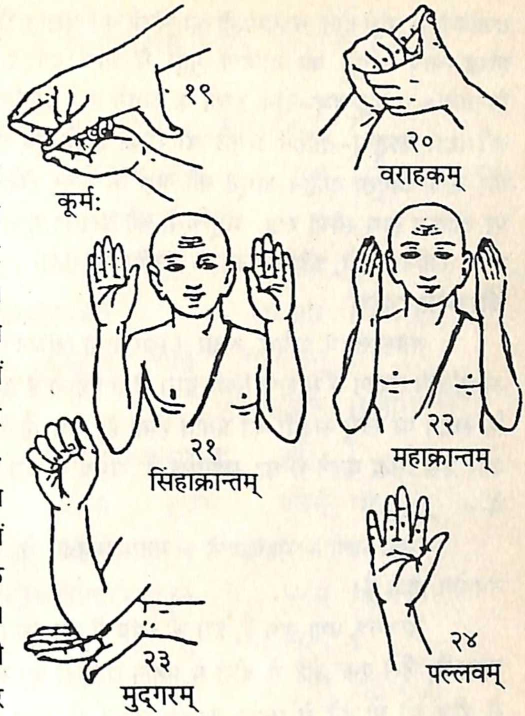


मुष्टिकम्



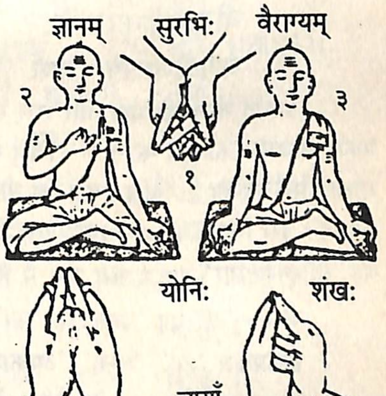
१८ मत्स्यः

कूर्म–सीधे बायें हाथ की मध्यमा, अनामिका तथा कनिष्ठा, मोड़कर उलटे दाहिने हाथ की मध्यमा अनामिका को उन तीनों अंगुलियों के नीचे देकर बायीं तर्जनी पर, दाहिनी कनिष्ठा और बायें अंगूठे पर दाहिनी तर्जनी रखे।।१९।। **वराहकम्**–दाहिनी तर्जनी को बायें अंगूठे से मिला, दोनों हाथों की, अंगुलियों को परस्पर बांधे।।२०।। **सिंहाक्रान्तम्**–दोनों हाथों को, कानों के समीप करे।।२१।। **महाक्रान्तम्**–दोनों हाथों की, अंगुलियों को कानों के समीप करे।।२२।। **मुद्गरम्**–मुट्ठी बांध, दाहिनी कुहनी बायीं हथेली पर रखे।।२३।। **पल्लवम्**–दाहिने हाथ की, अंगुलियों को मुख के सम्मुख हिलावे।।२४।।



जप समाप्ति के बाद निम्न आठ मुद्रायें प्रदर्शित करने का विधान है—

सुरभि–दोनों हाथों की अंगुलियां गूंथकर बायें हाथ की तर्जनी से, दाहिने हाथ की मध्यमा, मध्यमा से तर्जनी, अनामिका से कनिष्ठा और कनिष्ठा से, अनामिका अंगुली मिलावे।।१।। **ज्ञानम्**–दाहिने हाथ की तर्जनी से अंगूठा, मिलाकर हृदय में तथा इसी प्रकार बायां हाथ बायें गोड़े पर सीधा रखे।।२।। **वैराग्यम्**–दोनों तर्जनियों से, अंगूठा मिलाकर गोड़ों पर सीधा रखे।।३।। **योनि**–दोनों मध्यमाओं के नीचे से बायीं तर्जनी के ऊपर दाहिनी अनामिका और दाहिनी तर्जनी पर बायीं अनामिका रख दोनों



तर्जनियों से बांध दोनों मध्यमाओं को सीधी करे पश्चात् दोनों अंगुठे मध्यमाओं पर रखे।।४।। **शंख**–बायें अंगूठे को दाहिनी मुट्ठी में बांध दाहिने अंगूठे से, बायीं अंगुलियों को मिलावे।।५।। **पङ्कजम्**–दोनों हाथों के अंगूठे तथा अंगुलियों को, मिला कर ऊपर की ओर करे।।६।। **लिङ्गम्**–दाहिने अंगूठे को सीधा रखते हुए दोनों हाथों की, अंगुलियों को गूंथ कर बायां अंगूठा दाहिने अंगूठे की जड़ के ऊपर रखे।।७।। **निर्वाणम्**–उल्टे बायें हाथ पर दाहिना हाथ सीधा रख, अंगुलियों को परस्पर गूथ, दोनों हाथ अपनी तरफ से घुमा, दोनों तर्जनियों को, सीधी कान के समीप करे।।८।।

बीजमंत्र रहस्य

तंत्रशास्त्र में प्रत्येक अक्षर (स्वर तथा व्यंजन) का विशद अर्थ है, जिस प्रकार आशुलिपि लेखन में संक्षिप्त लिपि द्वारा लेखन होता है उसी प्रकार तंत्रशास्त्र में लम्बे शब्दों के स्थान पर लघु अक्षरों का प्रयोग होता है। एक तो यह गुप्तलिपि है दूसरा मंत्र जपने और उसे सिद्ध करने में यह सहायक है, समय व श्रम कम लगता है। उदाहरण के रूप में—

'महाकाली + महालक्ष्मी + महासरस्वती' के स्थान पर 'ऐं + ह्रीं + क्लीं' का उपयोग होता है।

बीजमंत्र.यथा नाम है, इस बीजमंत्र में मंत्र का विशद रूप सूक्ष्म रूप में विद्यमान रहता है, जैसे एक छोटे से बीज में महान वटवृक्ष का रूप छिपा रहता है और उस छोटे से बीज को बो देने से महान वटवृक्ष प्रकट हो जाता है। इसी लिये कहा है—

बीजाद्यथांकुरोपत्तिः सेचनेनप्रजायते ।
वर्णबीजादपि तथा देवः साक्षाज्जपाभवेत् ।।

अर्थात् बीज को बोने और उसे सींचने पर साक्षात् वृक्ष प्रकट हो जाता है उसी प्रकार बीजमंत्र का जप करने से (जिस देवता का बीजमंत्र जपा जाय) वह देवता भी साक्षात् प्रकट होता है। किस देवता का बीजमंत्र क्या है? किस स्वर या वर्ण का प्रयोजन क्या है? इस विषय पर माँ त्रिपुरा-सुन्दरी द्वारा दक्षिणामूर्ति को जो ज्ञान दिया गया था वह 'बीजकोशसार' नामक ग्रंथ रूप में है। उसका सार संक्षेप यहाँ प्रस्तुत है।

जैसे—'अ' यह 'ब्रह्मा' या 'मन' का सूचक है।

इसीप्रकार 'आ', 'शून्य', 'आकाश' तथा 'विष्णु' का सूचक है।

कुछ संयुक्त बीजमंत्र हैं। जैसे 'श्री' का अर्थ 'लक्ष्मी', 'स्वाहा' का अर्थ 'जल', 'ह्रां' का अर्थ 'स्कंद' अर्थात् कार्तिकेय, 'ठः' का अर्थ 'कमल', 'गं' का अर्थ 'शिव' इत्यादि है।

एक-एक स्वर या व्यंजन के एक से अधिक अर्थ भी होते हैं। इसी प्रकार एक व्यंजन के ही, विभिन्न स्वरों (मात्राओं) के संयोग से अनेक अर्थ हो जाते हैं। जैसे 'ड' के—ड, डा, डि, डी, डु, डू, डे, डै, डो, डौ, डं, डः —प्रत्येक का भिन्न-भिन्न अर्थ प्रदर्शित है।

इन बीजमंत्रों के आधार पर ही तंत्रशास्त्रों में मंत्रों का सृजन होता है।

अक्षर बीज

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि मंत्रकोशं सुविस्तरम् ।
मुनीनां सूचितो यश्च दक्षिमामूर्तिना पुरा ।।ईश्वर उवाच।।
आत्मबीजमकारं च स्वान्तहृद्बीजमेव च ।
मानसं च मनोबीजं पैतामहमिति स्मृतम् ।।
अपरमनृतं ज्ञेयमकारस्य सुरेश्वरि ।।अ।।१।।
शून्यं खमंबरं व्योम वैष्णवं चेति भाषितम् ।
आकारस्यानृतमन्यदुक्तं भैरवतंत्रके ।।आ।।२।।
इंद्रबीजं तथा जिष्णुर्मरुत्वान्मघवा हरि: ।
शैवं चेकारवर्णस्य कृत्रिमं त्वपरं वदेत् ।।इ।।३।।
बुद्धिबीजं तथा मेधा धीबीजं च मतिस्तथा ।
ऐंद्रं तथैव विज्ञेयमीकारस्यानृतं परम् ।।ई।।४।।
रुतिबीजं तथा नंदा वामनं वा तु बीजकम् ।
सौर्यमुकारबीजानि कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।उ।।५।।
कचवीजं तथा केशं मूर्द्धजं च शिरोरुहम् ।
ऐंदवं त्वनृतं चान्यदूकारस्य सुरेश्वरि ।।ऊ।।६।।
पाप्मबीजं तथा पापं किल्बिपं कल्मपं तथा ।
किंकरी बीजमेतच्च मंगलं त्वनृतं परम् ।।
ऋकारस्य रहस्येऽस्मिन्काल्या: प्रोक्तं सुरेश्वरि ।ऋ।।७।।
कृपाबीजं दयाबीजं करुणा कार्षिकं तथा ।
ऋकारस्यानृतं चान्यद्भाषितं विश्वयामले ।।ॠ।।८।।
विश्वबीजद्वयं ज्ञेयं ऌकारं च नम इति ।
व्यक्तबीजं जगद्बीजं गौर्वं प्रोक्तं मया शिवे ।।
ऌकारस्यानृतं वान्यत्तदुक्तं रुद्रयामले ।।ऌ।।९।।
गंगाबीजं स्वर्द्धुनी च नाकवापी च स्वर्णदी ।
शक्रमन्यदसत्यं च ॡकारस्य मयोदितम् ।।ॡ।।१०।।
एकादशी मातृका च लताबीजं तथैव च ।
वल्लीबीजं च वाराकी तदन्यदनृतं मतम् ।।
अपरञ्च मया ख्यातमेकारस्य सुरेश्वरि ।

कुलचूडामणो ग्रंथे रचिते मांत्रिकोत्तमैः ।।ए।।११।।
वाग्भवमूर्द्धबीजं च चारणं चंडिकेश्वरः ।
चंद्रोऽपि चर्मवसनं वासनाऽपि तथैव च ।।
चार्वग्यपि च चर्माणं मात्रां द्वादशकामथ ।
रोहूं ख्यातं मया देवि एकारस्यानृतं परम् ।।ऐं।।१२।।
प्रणवं च तथा तारं त्र्यक्षं तोमापि त्र्यंबिका ।
त्रासस्तारय ईशानि कैतवं च मया स्मृतम् ।।ओं।।१३।।
मोक्षबीजं तथा मुक्तिर्ज्ञानं निर्वाणबीजकम् ।
आगस्त्यं च मया ख्यातं ग्रंथे भैरवतंत्रके ।।औं।।१४।।
अंबीजं वृक्षबीजं च पादपं च धरारुहम् ।
भूरुहञ्च मयाख्यातमनृतं त्वपरं वदेत् ।।अं।।१५।।
नागबीजं भूधरञ्च भाग्यबीजं च भानवम् ।
ध्रौवं ख्यातं मया देवि अःशब्दस्यानृतं परम् ।।अः।।१६।।
ककारं च शिरोबीजं मृर्द्धबीजं च वारुणम् ।
वेधोबीजं विधिर्ब्रह्मा स्वयंभूबीजमेव च ।।
ककारस्य मयाख्यातमनृतं चापरं वदेत् ।।कं।।१७।।
नभोबीजं पुष्करं च द्योबीजं चक्रवालकम् ।
वैष्टरश्रवसं चैव प्रोक्तं त्रिपुरया स्वयम् ।।खं।।१८।।
शिवबीजं शंभुबीजं शर्वश्च शंकरस्तथा ।
गकारस्यानृतं चान्यद्भाषितं हि मया प्रिये ।।गं।।१९।।
जिनबीजं षडभिज्ञं च मारजिद्बीजमेव च ।
मायात्मजोऽर्कबंधुश्च गौतमं त्वनृतं परम् ।।
घकारस्य मयाख्यातं ग्रंथे वै रुद्रयामले ।।घं।।२०।।
षडाननः शरजन्मा स्कंदः कुमारबीजकम् ।
शांभवः शालिगीबीजं त्वनृतं चापरं मतम् ।।ङं।।२१।।
नाट्यबीजं च नटनं तांडवं नृत्तबीजकम् ।
चकारस्य मयाख्यातं ग्रंथे भैरवतंत्रके ।।चं।।२२।।
शनिबीजमर्कजं च पंगुबीजं तथैव च ।
कालं च सौरबीजं च सूतिसुंदरबीजकम् ।।
छम्बीजं च मया प्रोक्तं ग्रंथे कामेश्वरे शिव ।।छं।।२३।।

शनिबीजे द्वे छ ए ।।
स्तनबीजं कुचं चैवमुरोजो हृज्जमेव च ।।
जकारस्य मयाख्यातमतोन्यदनृतं स्मृतम् ।।जं।।२४।।
इच्छाबीजं स्पृहा कांक्षा लिप्सा बीजचतुष्टयम् ।
झकारस्य मयाख्यातमसत्यमपरं स्मृतम् ।।झं।।२५।।
यमबीजं कालबीजं कृतान्तं समवर्तिकम् ।।
कीनाशं मृत्युबीजं च ञकारस्य मयोदितम् ।।ञं।।२६।।
गर्जितं स्वनबीजं च स्तनितं रसितं तथा ।।
टकारस्य मयाख्यातं स्वतंत्रे देववंदिते ।।टं।।२७।।
पयोजं पंकजं पद्मं नीरजं चाम्बुजं तथा ।।
ठबीजानीह पंचैव कृत्रिमाण्यपराणि वै ।।ठं।।२८।।
सिंहिका सरसीबीजं रेणुकाबीजमेव च ।
अंजनीबीजकं ख्यातं डकारस्य मया शिवे ।।डं।।२९।।
वायुबीजं चानिलं च मरुद्बीजं समीरणम् ।
समीरश्चाशुगं ज्ञेयं वातं श्वसनबीजकम् ।।
ढकारस्य मयाख्यातमसत्यं यदतः परम् ।।ढं।।३०।।
भैरवतंत्रेयमपि वायुबीजमुक्तम् ।।
आशुगबीजे द्वे णं ढं च ।।
मार्गणं बाणबीजं च पत्रिणं चाशुगं तथा ।
णकारस्यानृतं चान्यत्प्रोक्तं भैरवतंत्रके ।।णं।।३१।।
रात्रिबीजं तमोबीजं तामसीबीजमेव च ।
क्षपा च क्षणदाबीजमसत्यं यदतः परम् ।।
कुब्जासर्वस्वके ग्रंथे तकारस्य स्मृतं शिवे ।।तं।।३२।।
बिलबीजं च विवरं सुपिरं नागलोककम् ।
थकारस्य मयाख्यातं तंत्रे वै कुब्जिकार्णवे ।।थं।।३३।।
चक्रिबीजं व्यालबीजं सर्पः काकोदरोरगौ ।
भोगिबीजं भुजंगं च भुजंगममिति स्मृतम् ।।
दकारस्याष्टबीजानि ह्यनृतान्यपराणि तु ।।दं।।३४।।
पुष्पबीजं प्रसूनं च प्रसूतिः सुप्रजास्तथा ।।
धकारस्यानृतं चान्यत्त्रिपुरातिलके स्मृतम् ।।धं।।३५।।

क्षारबीजं च लवणं सैंधवं सूकरं तथा ।।
वाराहञ्च नकारस्य शिरो१मणौ मयोदितम् ।।नं।।३६।।
मत्स्यबीजं मीनबीजं शफरीबीजमेव च ।
झषबीजं मयाख्यातं यस्यच्छिन्नाशिरोमणो ।।पं।।३७।।
कूर्म बीजञ्च कमठं कर्कटोऽपि कुलीरकम् ।
कच्छपं च फकारस्य शारदापटलोदितम् ।।फं।।३८।।
ऊर्मिर्वीचिस्तरंगश्च बकारस्य त्रयं मतम् ।
बीजमन्यदतोऽसत्यं मया प्रोक्तं सुरेश्वरि ।।बं।।३९।।
भद्रिका भास्वती भीमा भकारस्यानृतं परम् ।
तंत्रेहि मुंडमालाख्ये मया प्रोक्तं महेश्वरि ।।भं।।४०।।
डुलीबीजं शिलीबीजं मंडूकं दर्दुरं तथा ।
भेकीबीजं मकारस्य मयाख्यातं सुरेश्वरि ।।मं।।४१।।
वायुबीजं तथा वाग्मि वाचालं वश्यबीजकम् ।
वीरबीजं तथा वापी यकारस्य मयोदितम् ।।यं।।४२।।
अग्नी रेफश्च वह्निश्च हुतभुग्हव्यवाहन: ।
रकारस्य मयाख्यातं श्यामातंत्रे सुरेश्वरि ।।रं।।४३।।
तमोबीजं तथा ध्वांतं मोहं तिमिरमेव च ।
लकारस्य मया प्रोक्तं स्वतंत्रे मुनिनिर्मिते ।।लं।।४४।।
भूबीजं धरणीबीजं वकारं ब्रह्मणोदितम् ।
अभ्रबीजं च जीमूतमंबुभृदंबुदंघनम् ।।
वकारस्य मया प्रोक्तं तंत्रे हि वामकेश्वरे ।।वं।।४५।।
कल्याणं चैव शर्मापि शंशुभं च चतुष्टयम् ।
शकारस्य मयाख्यातं तंत्रे भैरवसंज्ञके ।।शं।।४६।।
शंपाबीजं तडिद्बीजं विद्युच्छतह्रदा तथा ।
ह्लादिनीबीजकं षस्य मया प्रोक्तं स्वयामले ।।षं।।४७।।
शक्ति: शर्मापि विज्ञेयं शरच्छंके तथैव च ।
सकारस्य मयाख्यातं ग्रंथे छिन्नशिरोमणौ ।।सं।।४८।।
छविबीजं कांतिबीजं शोभापि सुषमा तथा ।
आकाशञ्च हकारस्य सिद्धसारस्वतोदितम् ।।हं।।४९।।

१. त्रिपुरा शिरोमणौ।

देवबीजं निर्जरं च त्रिदिशं त्रिदिवेशकम् ।
सुरबीजं च गीर्वाणं लैखममरबीजकम् ।।
क्षकारस्य मया प्रोक्तं कुलचूडामणौ प्रिये ।।क्षं।।
वर्णानां देवदेवेशि कोशः प्रोक्तो मयाशुभे ।।
नानामंत्रयुतो देवि सर्वांगमसुनिश्चित ।
दक्षिणामूर्त्तिमुनिना वर्णितोयं पुरातन इति ।।

संयुक्ताक्षर बीज

पद्मा लक्ष्मीर्हरिणाक्षी सरोरुहनिवासिनी ।
कमला रुक्मिणी चैव नारायणप्रियाऽपि च ।।
लक्ष्मीबीजानि सप्तैव कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।श्रीं।।१।।
परा भूतिस्तथा लज्जा मायापि सकला कृशा ।
समस्तापि तथा क्षामा कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।ह्रीं।।२।।
कामः पञ्चेषुरेवं च मदनो मन्मथस्तथा ।
मारः प्रद्युम्नकंदर्पावनृतान्यपराणि तु ।।क्लीं।।३।।
वाग्भवं मूर्द्धबीजं च चारणं चंडकेश्वरः ।
चंद्रोपि चर्मवसनं वासनापि तथैवच ।।
चार्वग्यपि चर्माणमसत्यान्यपराणि तु ।।ऐं।।४।।
शक्तिः शर्माऽपि विज्ञेयं शरच्छंके तथैव च ।
शक्तिबीजानि चत्वारि कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।सः।।५।।
प्रणवं च तथा तारं त्र्यक्षंतोमापि त्र्यंबकः ।
त्रासतारव एतानि बीजानि प्रणवस्य च ।।ओं।।६।।
नमो विश्वं तथा स्तंभमौष्मकं चाश्मरी तथा ।
अन्यानि कृत्रिमाण्येव सुरासुरनमस्कृते ।।नमः।।७।।
स्कन्दं व्योपं च डिंबं च संयोज्य हरमित्यतः ।
ह्रां बीजोद्धारमेतद्धि ततोऽन्यदनृतं वदेत् ।।ह्रां।।८।।
कान्ता च कमलाक्षी च प्रियापि परमापिच ।
लंभापि ललना लाजा असत्यान्यपराणि तु ।।स्त्रीं।।९।।
आपो वनं तथा नीरं ठद्वयं च पयस्तथा ।
जलबीजानि पंचैव ह्यसत्यान्यपराणि तु ।।स्वाहा।।१०।।
फट् पुरं तुरंग चान्यदसत्यं तु सुरेश्वरि ।।फट्।।११।।

मंत्रो मनुर्हरश्चैव हनुर्वालं विदुर्बुधाः ।
बीजान्येतानि मंत्रस्य कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।
मंत्रबीजे द्वे मंत्रः फट् च ।।फट्।।१२।।
काली कुंती रसज्ञापि जिह्वापि रसना तथा ।
क्रींबीजानि तथैतानि कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।क्रीं।।१३।।
वागुरा वायुपूज्यापि वातंदास्यत्रिबीजकम् ।
प्रींबीजानि तु प्रोक्तानि कृत्रिमाण्यपराणि वै ।।प्रीं।।१४।।
चारुकं चैव चार्वंगी चारुतोच्छूनबीजकम् ।
चतुष्टयं तु छ्रींबीजमसत्यान्यपराणि च ।।
चार्वंगीबीजे द्वे छ्रीं ऐं च ।।छ्रीं, ऐं।।१५।।
पयोजं पंकजं पद्ममंबुजं नीरजं तथा ।।
ठकारे पंचबीजानि ह्यसत्यान्यपराणि च ।।ठः।।१६।।
शून्यं खमंबरं व्योम आंबीजं च चतुष्टयम् ।
हकारश्चैव विज्ञेयमुक्तं तद्रुद्रयामले ।।हंआंद्वे ।।हं, आं।।१७।।
कल्याणं चैव शर्मापि शं शुभं च चतुष्टयम् ।
अपरं त्वनृतं ज्ञेयममृतेश्वरनंदिनि ।।
शर्मबीजे द्वे सौः शञ्च ।।सौः, शं।।१८।।
अग्नी रेफश्च वह्निश्च हुतभुग्घव्यवाहनः ।
रंबीजोद्धारणं चैव कृत्रिमं चापरं मतम् ।।रं।।१९।।
सिन्धुरं तटजं घोणा हस्तश्च द्विरदं तथा ।
ह्रांबीजानि च चत्वारि कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।ह्रां।।२०।।
भद्रका भास्वती भीमा भैंबीजत्रयमुत्तमम् ।।भैं।।२१।।
बाह्लीकं रामठं चैव हिंगुबीजं मुनीश्वराः ।
ग्लौंबीजोद्धार एवैष कृत्रिमस्त्वपरो मतः ।।ग्लौं।।२२।।
तमोबीजं तथा ध्वांतं मोहस्तिमिरमेव च ।
लंबीजोद्धार एवैष कृत्रिम स्त्वपरो मतः ।।लं।।२३।।
चंद्रः शीतांशुरिन्दुश्च शर्वरीषतिरेव च ।
ताराधिपः सुधारश्मिः कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।
चंद्रबीजे द्वे ऐं द्रां च ।।ऐं, द्रां।।२४।।
ऊर्मिर्वीचिस्तरंगश्च वंबीजोद्धार इष्यते ।वं।।२५।।

स्तनबीजं कुचं चैवनुरोजो हृज्जमेव च ।
जंबीजानि च चत्वारि कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।जं।।२६।।
शिवबीजं शंभुबीजं शर्वः शंकर एव च ।
गंबीजानि च चत्वारि कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।गं।।२७।।
इच्छाबीजं स्पृहा कांक्षा लिप्साबीजं चतुर्थकम् ।
झंबीजान्येव ज्ञेयानि कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।झं।।२८।।
नर्तकीबीजमत्युग्रं वेश्यापि गणिकापि च ।
पण्यस्त्री पंचबीजानि खमिति तत्स्फुटं त्विह ।।खं।।२९।।
छविबीजं कांतिबीजं शोभापि सुषमा तथा ।
हांबीजान्येव चत्वारि कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।हां।।३०।।
शुक्रबीजं तथा काव्यो भार्गवः कविबीजकम् ।
दैत्यामात्यो महेशानि सुरासुरनमस्कृते ।।
ब्रोबीजपंचकं चैव कृत्रिमाण्यपराणि तु ।
शुक्रबीजे द्वे व्रों लञ्च ।।ब्रों, लं।।३१।।
अभ्रबीज च जीमूतमंबुदं जलदं पनम् ।
वींबीजानि च पंचैव कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।वीं।।३२।।
अब्धिबीजं तथा सिंधुः सांबरं सागरस्तथा ।
रुंबीजानि च पंचैव कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।रुं।।
रंकाररुंकारयोर्भेदेन रमग्निबीजं रुमब्धिबीजं च ।।३३।।
कल्पबीजं च संवर्तं प्रलयं क्षयबीजकम् ।
क्षामिकं क्षुरकं क्षौद्रं तथा कल्पांतबीजकम् ।।ध्रुं।।३४।।
शतघ्नी श्यालिका श्याला शाद्वला शुष्कला तथा ।
घ्नींबीजानि च पंचैव कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।घ्नीं।।३५।।
अंबरं वस्त्रबीजं च शून्यं शक्तिरिति द्वयम् ।
हरितं हरिणीबीजं हरिद्राबीजमेव च ।।
ह्यौंबीजानि च पड् देवी कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।ह्यौं।।
अंबरबीजे आम् ह्सौः च ।।आं,ह्सौः३६।।
स्कंदः कुमारबीजं च शरजन्मा षडाननः ।
शांभवः शालिगीबीजं तथा षण्मुखबीजकम् ।।
टंबीजानि च सप्तैव कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।टं।।३७।।

नाट्यबीजं च नटनं तांडवं नृत्तबीजकम् ।
चंबीजानि च चत्वारि कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।चं।।३८।।
वेधोबीजं विधिर्ब्रह्मा स्वयंभूबीजमेव च ।
कंबीजानि च चत्वारि कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।कं।।३९।।
गर्जितं स्वनबीजं च स्तनितं रसितं तथा ।
ठंबीजानि च चत्वारि कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।ठं।।४०।।
वृष्टिबीजं च करकं वर्षोपलस्तु वार्षिकः ।
क्रूंबीजानि च चत्वारि कृत्रिमाण्यपराणि तु ।।क्रूं।।४१।।
मृद्बीजं चैव ह्लींबीजं मृत्सा मृत्स्ना च मृत्तिका ।।ह्लीं।।४२।।
प्रस्थबीजं सानुबीजं शिखरं पुष्करं तथा ।
म्लौंबीजोद्धार एषैवैतदन्यः कृत्रिमः स्फुटः ।।म्लौं।।४२।।

डडाडिडीडुडूडेडैडोडौडंडः

डःपूज्यो बहुमूल्योऽर्थो डा क्ष्मा च सरमा रमा ।।
डिर्गौरी डीः शिवा धात्री डुश्चंद्रो डूः कलापवान् ।।
डेर्दमो डैर्वृषः कर्णो डोः पापी पुरुषादकः ।।
डौर्धेनुश्च करो जारो डं च नेत्रं पयस्तथा ।।
डः प्रागुक्तोऽपि डयने भये चैव भयानके ।।

आचार्य भास्करानन्द लोहनी द्वारा लिखित ज्ञानवर्धक पुस्तकें ।

(वर्तमान मूल्य सूची)

१—वार्षिक व्रतोत्सव पूजा विधानम्		रु० ३०/-
२—ज्यौतिष मकरन्द (भाग १)		रु० ५०/-
३—ज्यौतिष मकरन्द (भाग २)		रु० ५०/-
४—ज्यौतिष मकरन्द (भाग ३)	पुरस्कार प्राप्त	रु० ५०/-
५—भारतीय लोक संस्कृति एवं लोकोत्सव		रु० १३०/-
६—सूतक निर्णय		रु० १/-
७—स्वप्न विवेचन		रु० २५/-
८ अंक विज्ञान एवं अंक संहिता (नम्बरोलॉजी)		रु० ५०/-
९—गोचर तथा अष्टक वर्ग		रु० ५०/-
१०—सचित्र सामुद्रिक नवनीत (पुरस्कार प्राप्त)		रु० १००/-
११—ज्यौतिष नवनीत होरा गणित पूर्व खण्ड		रु० १००/-
१२—ज्यौतिष नवनीत होरा गणित उत्तरखण्ड (पुरस्कार प्राप्त।		रु० १००/-
१३—रत्न विवेचन (पुरस्कार प्राप्त)		रु० ५०/-
१४—ज्यौतिष संहिता (फलित का अद्भुत ग्रंथ) पुरस्कृत		रु० १२५/-
१५—कुमाऊँ (कुमाऊँ का सर्वांगीण परिचय व इतिहास)		रु० १४०/-
१६—पुराण मंथन (अष्टादश महापुराणों का तुलनात्मक अध्ययन (पुरस्कार प्राप्त)		रु० १२५/-
१७—दशाफल विवेचन (दशाओं का शुभाशुभ फल जानने हेतु महत्वपूर्ण ग्रंथ) (पुरस्कार प्राप्त)		रु० १००/-
१८—मंत्र शास्त्र साधना तथा सिद्धियां		रु० ३००/-
१९—गीता का तात्विक विवेचन (द्वितीय संस्करण)	छप रही है	
२०—भारतीय संस्कृतिः गौतम से गांधी तक	समाप्त है	
२१—ब्रह्माण्ड तथा अन्तरिक्ष विज्ञान	समाप्त है	
२२—भारतीय ऋतु विज्ञान	समाप्त है	
२३—दुनियाँ सैकड़ों वर्ष पहले	समाप्त है	
२४—पौराणिक साहित्य और संस्कृति	समाप्त है	
२५—परिवार पुराण	समाप्त है	
२६—सचित्र हिमालय	समाप्त है	
२७—ज्योतिर्विज्ञानः ब्रह्माण्ड परिचय	समाप्त है	
२८—वैदिक साहित्य और संस्कृति	समाप्त है	

आग्रहायण प्रकाशन, १५ चाँदगंज गार्डन लखनऊ-२२६०२४